A COMPARATIVE STUDY OF THE MAIN TRENDS OF MODERN SWACHANDATAVAD IN THE POETRY OF HINDI AND TAMIL

"हिन्दी और तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ" तुलनात्मक अध्ययन

THESIS SUBMITTED TO
THE UNIVERSITY OF COCHIN FOR THE DEGREE OF

DOCTOR OF PHILOSOPHY

Supervisor:
Dr. N. RAMAN NAIR,
M. A. (Hindi), M. A. (English),
M. A. (Malayalam), Ph. D.,
Professor and Head of
the Department of Hindi
Dean. Faculty of Humanities,,
University of Cochin,
Cochin-682 022.

Research Scholar :
M. S. THOLASI RAMAN,
M. A. (Hindi), M. A. (History),
B.Ed., Sahitya Ratna.

DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF COCHIN
COCHIN - 682 022

1982

"हिन्दी और तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ"

तुलनात्मक अध्ययन

-०-

कोचिन विश्वविद्यालय के
हिन्दी विभाग में
पी-अेच.डी. की उपाधि के लिये
प्रस्तुत शोध प्रबंध

निर्देशक:
डॉ० अेन. रामन नायर,
अेम.अे. (हिन्दी); अेम.अे. (अंग्रेज़ी);
अेम.अे. (मलयाळम्); पी-अेच.डी.,
आचार्य अेवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
कोचिन विश्वविद्यालय,
कोचिन-६८२ ०२२.

प्रस्तुतकर्ता:
अेम.अेस. तुलसीरामन,
अेम.अे. (हिन्दी);
अेम.अे. (इतिहास);
बी.अेड.;
साहित्यरत्न.

C E R T I F I C A T E

This is to certify that this Thesis is a bonafide record of work carried out by M.S. THOLASI RAMAN under my supervision for Ph.D., and no part of this has hitherto been submitted for a Degree in any University.

SUPERVISOR

Dr. N. Raman Nair,
M.A. (Hindi); M.A. (English)
M.A. (Malayalam); Ph.D.
Professor and Head of the Department
of Hindi,
UNIVERSITY OF COCHIN,
COCHIN - 682022.

PROFESSOR AND HEAD OF THE DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF COCHIN.

DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF COCHIN
COCHIN-682022.

UNIVERSITY OF COCHIN
COCHIN-22.
DATE
DEPARTMENT OF HINDI

हिन्दी टंकण-यंत्र : संकेत अक्षरों की सूची

देवनागरी लिपि		टंकित रूप
ए	-	अे या ये
ऐ	-	अै
क्ष	-	क्ष
त्र	-	त्र

तमिल लिपि		
[illegible]	-	ळ
[illegible]	-	ऴ या ऴ
[illegible]	-	ऱ
[illegible]	-	ऎ
[illegible]	-	ऒ

टंकण यंत्र : ऑलिवेत्ति
अेवं
गोदरेज

-o-

आत्म निवेदन

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में तमिल और हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालते हुये, दोनों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस शोध कार्य के पूर्व तमिल नाडु के हिन्दी अनुसंधाताओं ने तमिल और हिन्दी साहित्य में उपलब्ध भक्तिगत प्रवृत्तियों और कवियों को लेकर तुलना की है। आधुनिक तमिल और हिन्दी काव्य-क्षेत्र में तमिल कवि सुब्रह्मण्य भारती और हिन्दी कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी"निराला" के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन हुआ है। हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में कई अनुसंधाताओं ने विभिन्न प्रकार से स्वच्छन्दतावाद का अध्ययन किया है और अपने अपने विचारों को प्रकट किया है। लेकिन स्वच्छन्दतावादी काव्य की विभिन्न प्रवृत्तियों को लेकर सोदाहरण विस्तृत विश्लेषण बहुत कम हुआ है। मेरी दृष्टि में तमिल और हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन अब तक किसी अनुसंधाता ने प्रस्तुत नहीं किया है। इस दृष्टि से यह एक मौलिक प्रयास है। दोनों भाषाओं के काव्य में प्राप्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुये मैंने सन् १८९० से लेकर सन् १९६५ तक की दीर्घ कालावधि को अपने विवेचन में समेटने का प्रयत्न किया है। इस प्रबन्ध में प्रमुख कवियों और उनकी काव्य कृतियों का क्रम इतिहास प्रस्तुत न करके, काव्य में प्राप्त प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया गया है।

इस शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की व्याख्या और व्याप्ति का विश्लेषण करते हुये पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों की विविध परिभाषाओं एवं विचारों का उल्लेख करके मैंने अपनी परिभाषा प्रस्तुत की है। स्वच्छन्दतावाद, परम्परावाद और यथार्थवाद का पारस्परिक सम्बन्ध विश्लेषित करते हुये मैंने स्वच्छन्दतावाद

के मूल स्रोत पर अपना मत प्रकट किया है। यहाँ पर मैंने यूरोपीय स्वच्छन्दतावाद के विकास में इंग्लैण्ड के योगदान पर प्रकाश डाला है। साथ ही साथ भारतीय साहित्य में स्वच्छन्दतावाद के उदय पर अपना विचार प्रकट किया है। तमिल और हिन्दी साहित्य के पूर्व स्वच्छन्दता-वादी रूपों को दिखाते हुये दोनों की तुलना भी इस अध्याय में प्रस्तुत है। स्वच्छन्दतावाद की प्रमुख भावगत प्रवृत्तियाँ जैसे -- वैयक्तिकता की प्रधानता, अनुभूति की तीव्रता, कल्पना का अतिरेक, प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति, विद्रोह, मानवतावाद -- इन सबका विवेचन किया गया है। स्वच्छन्दतावाद की शिल्पगत प्रवृत्तियों का संक्षिप्त विश्लेषण भी इस अध्याय में हुआ है।

<u>द्वितीय अध्याय</u> में आधुनिक भारतीय साहित्य की स्वच्छन्द युगीन परिस्थितियों का विवेचन है। इस शोध प्रबन्ध का सम्बन्ध तमिल से होने के कारण, इसमें तमिलनाडु की तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का एक सामान्य परिचय दिया गया है। युगीन परिस्थितियों से स्वच्छन्दतावादी कवियों का सम्बन्ध दिखाते हुये, बंगला और अंग्रेजी के रोमान्टिक कवियों से ये कवि कहाँ तक प्रभावित हैं, इस पर विचार किया गया है। इसके बाद दोनों की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर सन् १८९० से सन् १९६५ तक के काल को तीन उत्थानों में विभाजित करके मैंने उनका अध्ययन निम्न प्रकार से किया है --

(i) प्रथम उत्थान : १८९०-१९२० वृन्त काल;
(ii) द्वितीय उत्थान : १९२१-१९५० विकास काल;
(iii) तृतीय उत्थान : १९५१-१९६५ अद्यतन काल।

उपरोक्त प्रथम उत्थान में आधुनिक तमिल और हिन्दी काव्य में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की स्थिति वृन्त के रूप में थी। १९२० के बाद

वही वृन्त विकसित हो गया। १९५० के उपरान्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ अत्याधुनिक की ओर उन्मुख दीखती हैं। अतएव द्वितीय उत्थान को "विकास काल" और तृतीय उत्थान को "अद्यतन काल" का नामकरण सार्थक लगता है। इस आधार पर तमिल और हिन्दी काव्य के विकास क्रमों को दिखाते हुये दोनों की तुलना की गयी है।

तृतीय अध्याय में तमिल के आधुनिक काव्य में उपलब्ध प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का विश्लेषण उद्धरण सहित प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में आधुनिक हिन्दी काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का विवेचन है।

पंचम अध्याय में दोनों काव्यों में प्राप्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। दोनों में दृष्टिगत समानताओं और असमानताओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

षष्ठ अध्याय में तमिल और हिन्दी के प्रमुख कवियों तथा उनकी काव्य कृतियों की तुलना प्रस्तुत है।

सप्तम अध्याय "निष्कर्ष और मूल्यांकन" का है। इसमें राजनैतिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में स्वच्छन्दतावादी काव्य का जो प्रभाव पड़ा है, उसका विश्लेषण है। साथ ही साथ इसमें परवर्ती काव्यधाराओं पर स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रभाव भी विवेचित हुआ है। तदुपरान्त तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की संपूर्ण उपलब्धियों पर विचार किया गया है।

कोचिन विश्वविद्यालय, हिन्दी विभाग के आचार्य व अध्यक्ष, मेरे आदरणीय गुरुवर और निर्देशक डॉ० अेन. रामन नायर जी को मैं किन शब्दों में कृतज्ञता ज्ञापित करूँ? उनके वात्सल्यमय स्नेह, प्रेम, प्रोत्साहन और निर्देशन के बिना यह शोध कार्य संभव नहीं होता। उनके प्रति कृतज्ञता

शब्दों में अभिव्यक्त करके मैं उसे हल्का करना नहीं चाहता। मैं उनका चिर ऋणी रहूँगा। हिन्दी विभाग के गुरुतुल्य डॉ० पी.वी. विजयन, डॉ० रामचन्द्र देव और विभाग के अन्य मित्रों को मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी प्रेरणा मुझे हमेशा मिलती रही। मद्रास विश्व-विद्यालय हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ० गणेशन जी ने मुझे पत्र लिखकर बधाइयाँ दी थीं। उनको इस अवसर पर मैं अपना आभार सप्रेम प्रस्तुत करता हूँ। कोचिन विश्वविद्यालय में प्रवेश देने और विषय के चुनाव में भूतपूर्व हिन्दी विभाग के आचार्य व अध्यक्ष डॉ० अेन.ई. विश्वनाथ अय्यर जी का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। अतः इस शोध कार्य के सिलसिले में उनको मैं अपनी कृतज्ञता सादर समर्पित करता हूँ। इस शोध कार्य में मुझे तमिल के आचार्य डॉ० मु. वरदराजन और डॉ० अेन. सुब्रह्मण्यियन के ग्रन्थों से सहायता मिली है। अतः विशेष रूप से उनके प्रति मैं कृतज्ञ हूँ। जिन तमिल कवियों की कविताओं से मैंने उद्धरण लिया है उन सबको मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। मेरी इस शोध-साधना की सफलपूर्ति में मुझे देवी महाशक्ति और महावीर हनुमान जी का जो वरदान प्राप्त हुआ है तदर्थ मैं उनके समक्ष नतमस्तक हूँ।

विनीत,

तुलसीरामन.

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

प्रथम अध्याय : विषय प्रवेश 1

क. स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ - व्याख्या और व्याप्ति ... 1

(अ) स्वच्छन्दतावाद की परिभाषा -
(i) पाश्चात्य विद्वानों का विचार 8
(ii) भारतीय विद्वानों का विचार - 9
(iii) निष्कर्ष (हिन्दी और तमिल) 12

(आ) स्वच्छन्दतावाद, परम्परावाद और यथार्थवाद ... 13

(इ) मूल स्रोत ... 15

ख. पाश्चात्य साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का प्रारंभ ... 18

(अ) यूरोपीय स्वच्छन्द-धारा और इंगलैण्ड का योगदान ... 20
(१) विलियम ब्लेक, (२) कॉलरिज,
(३) विलियम् वर्डस्वर्थ, (४) शेली,
(५) कीट्स, (६) बायरन,
(७) नव-स्वच्छन्दधारा।

(आ) भारतीय साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का प्रारंभ ... 27

(इ) तमिल साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का पूर्व रूप ... 29
(१) संघम् युग, (२) नीति युग,
(३) भक्ति युग, (४) मिश्रित ग्रन्थों का युग, (५) धार्मिक ग्रन्थों का युग

(ई) हिन्दी साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का पूर्व रूप ... 35
(१) वीरगाथा काल
(२) भक्ति काल
(३) रीति काल

पृष्ठ संख्या

(उ) तमिल और हिन्दी साहित्य के पूर्व स्वच्छन्दतावादी रूपों की तुलना -- (१) समानतायें, (२) असमानतायें ... 39

ग. प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ - विश्लेषण

(अ) भावगत प्रवृत्तियाँ - १. व्यक्तिवाद, २. अनुभूति, ३. कल्पना, ४. प्रेम, ५. सौन्दर्य, ६. प्रकृति, ७. विद्रोह, ८. मानवतावाद। ... 41

(आ) कलागत प्रवृत्तियाँ - १. काव्य के रूप, २. भाषा व शैली, ३. मानवीकरण, ४. विशेषण विपर्यय और ध्वन्यर्थ व्यंजना, ५. स्वच्छन्द या मुक्त छन्द (हिन्दी और तमिल)। ... 59

(इ) निष्कर्ष ... 63

द्वितीय अध्याय : परिवेश 64

(अ) आधुनिक भारतीय साहित्य की स्वच्छन्द-युगीन परिस्थितियाँ ... 64

१. राजनैतिक ... 66

२. सामाजिक ... 69

३. धार्मिक ... 71

४. आर्थिक ... 73

५. सामान्य विश्लेषण ... 74

(आ) तमिलनाडु की विभिन्न परिस्थितियाँ: 74

(क) राजनैतिक परिस्थितियाँ - अेक अैतिहासिक आलोक ... 74

१. तमिलनाडु और ईस्ट इण्डिया कंपनी सन् १८०१-५७. ... 75

२. तमिलनाडु और ब्रिटिश सत्ता सन् १८५८-१९४७ ... 76

(ख) तमिलनाडु का सामाजिक पक्ष : जातीयता का संघर्ष ... 80

(ग) आर्थिक परिस्थितियाँ ... 84

पृष्ठ संख्या

(इ) युगीन परिस्थितियाँ और स्वच्छन्दतावादी कवि ... 84
(i) तमिल ... 84
(ii) हिन्दी ... 87

(ई) प्रभाव ग्रहण - प्रेरणा स्रोत : सामान्य विश्लेषण ... 89
(i) अंग्रेजी की रोमान्टिक काव्यधारा से 89
(ii) बंगला साहित्य से ... 92

(उ) स्वच्छन्दतावादी काव्य का विकास-क्रम 100
(१) वृन्त काल - प्रथम उत्थान : (१८९०-१९२०)
(२) विकास काल - द्वितीय उत्थान : (१९२१-१९५०)
(३) अद्यतन काल - तृतीय उत्थान : (१९५१-१९६५)

(क) तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य का विकास क्रम ... 100
(ख) हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य का विकास क्रम ... 111
(ग) तुलनात्मक अध्ययन --
(i) समानतायें ... 120
(ii) असमानतायें ... 121

तृतीय अध्याय : तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ ... 125

(अ) भावगत प्रवृत्तियाँ ... 125

प्रकृति चित्रण ... 125
जल और केंचुआ, नक्षत्र, वर्षा, उजाला और अन्धेरा, सूरज और सन्ध्या, उषा, शक्ति, सागर, गगन, अन्धेरा, सूर्यकान्ति फूल, बिजली का नृत्य, सुबह, बदली, कालिकुमरी (कन्याकुमरी), इन्द्र धनुष, वानमपाडि.

			पृष्ठ संख्या
प्रेम :	(i) अलौकिक प्रेम	...	145
	(ii) लौकिक प्रेम	...	152
	(iii) तमिल भाषा प्रेम	...	159
सौन्दर्य		...	163
	(i) सौन्दर्य का देवता रूप	...	164
	(ii) प्राकृतिक सौन्दर्य	...	169
	(iii) नारी का सौन्दर्य	...	174
कल्पना		...	182
अनुभूति पक्ष		...	192
व्यक्तिवाद		...	202
अन्य प्रवृत्तियाँ : नवीनता, विद्रोह, और मानववाद		...	208
(आ) कलागत प्रवृत्तियाँ		...	215
काव्यरूप, विशेष अलंकार --			
	(i) मानवीकरण	...	216
	(ii) विशेषण विपर्यय	...	220
	(iii) ध्वन्यर्थ व्यंजना	...	221
भाषा व शैली और छन्द		...	222
चतुर्थ अध्याय : हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ		...	224
(अ) भावगत प्रवृत्तियाँ		...	224
१. प्रकृति चित्रण : काश्मीर सुषमा, व्योम बाला, फूल, उषा और चपला, प्राची की महा-क्रीड़ा, जलविहारिणी, दलित कुमुदिनी, किरण, सागर, उषा, मधुकरी, नक्षत्र, बादल, उषा और संध्या, जुगनू, यमुना और तरंग, ओस की बूँद, और पंकज कली, पत्थर, गजरे तारोंवाले, कली, चाँदनी, मिट्टी और अन्य चित्र।			225

पृष्ठ संख्या

२. प्रेम : (i) प्रेम का अलौकिक रूप ... 247
(ii) प्रेम का उदात्त रूप ... 254
(iii) प्रेम का लौकिक रूप ... 264

३. सौन्दर्य : (i) प्राकृतिक सौन्दर्य ... 271
(ii) नारी का सौन्दर्य ... 280

४. कल्पना ... 288
५. अनुभूति ... 299
६. व्यक्तिवाद ... 310

अन्य प्रवृत्तियाँ : नवीनता, विद्रोह और मानववाद 323

(आ) कलागत प्रवृत्तियाँ ... 332

काव्य-रूप, भाषा व शैली और छन्द ... 332
विशेष अलंकार : १. मानवीकरण ... 334
२. विशेषण विपर्यय ... 337
३. ध्वन्यर्थ व्यंजना ... 339

पंचम अध्याय : प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन ... 341

(अ) तुलना के मानदण्ड ... 341

(आ) साम्य प्रवृत्तियाँ : वस्तुगत अेवं भावगत 342
१. प्रकृति : १. नक्षत्र और विण्मीन (नक्षत्र) 342
२. मुरझाया फूल और वाडिय मलर् 344
३. उषा और उष 347
४. सरोज और सेन्तामरै 348
५. मध्यान्ह और पकलवान 351
६. चींटी और अेरुम्बिन तवम् 352
७. चाँदनी और वेण्णिला 353
८. बादल और मुकिल 356
९. उषा और सन्ध्या का आगमन 359

पृष्ठ संख्या

२. प्रेम ... 361
३. सौन्दर्य ... 364
४. कल्पना ... 372
५. अनुभूति ... 376
६. व्यक्तिवाद ... 378
७. नवीनता, विद्रोह और मानवतावाद ... 380

(इ) कला संबन्धी प्रवृत्तियाँ ... 385

(ई) निष्कर्ष ... 389

षष्ठ अध्याय : प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों एवं कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन 400

(अ) तुलना की आवश्यकता ... 400

(आ) सुब्रह्मण्य भारती और सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" ... 401
१. जीवन और व्यक्तित्व
२. कृतित्व
३. स्वच्छन्द धारणायें
४. स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ
५. "शक्ति" संबन्धित कवितायें
६. असमानतायें

(इ) जयशंकर प्रसाद और भारतीदासन 411
१. जीवन और व्यक्तित्व
२. कृतित्व
३. समानतायें
४. असमानतायें

(ई) सुमित्रानन्दन पंत और नामक्कल्दासन् 420
१. जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व
२. प्रकृति
३. प्रेम और सौन्दर्य
४. कल्पना
५. अनुभूति

पृष्ठ संख्या

(उ) प्रमुख काव्य कृतियों की तुलना ... 430
१. "कानन कुसुम" और "अळकिन् सिरिप्पु"
२. "झरना" और "तेनरुवि" .

सप्तम अध्याय : निष्कर्ष और मूल्यांकन ... 436

(अ) स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रभाव और योगदान ... 436
१. स्वच्छन्दतावादी कवि और भारतीय स्वतंत्रता-आन्दोलन ... 437
२. सामाजिक अन्धविश्वास और स्वच्छन्दतावादी कवि ... 443
३. साहित्यिक क्षेत्र ... 445
(क) स्वच्छन्दतावाद - छायावाद के रूप में ... 445
(ख) विशेष दिशाओं से प्राप्त साहित्यिक मान्यतायें - 450
१. स्वतंत्रता की लालसा
२. व्यक्तिवादी दृष्टिकोण
३. प्रेम और सौन्दर्य के प्रति स्वच्छन्दतावादी कवियों की मान्यतायें
४. कल्पना सम्बन्धी मान्यतायें

(आ) स्वच्छन्दतावादी काव्य (तमिल और हिन्दी) का परवर्ती काव्यधाराओं पर प्रभाव और उसकी अनुस्यूति ... 454

(इ) आधुनिक तमिल और हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी काव्य की उपलब्धियाँ ... 459

(ई) निष्कर्ष ... 462

परिशिष्ट : सहायक ग्रन्थों की सूची --
(i) हिन्दी (ii) तमिल (iii) अंग्रेजी एवं पत्र-पत्रिकायें ... 463-474.

-०-

प्रथम अध्याय

विषय प्रवेश

(क) स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ - व्याख्या और व्याप्ति

भारतीय वाङ्मय का उद्गम स्थान ऋग्वेद है। प्राचीन काल से कविता का तात्पर्य साहित्य से ही रहा। कविता ही विश्व के संपूर्ण साहित्य का द्योतक रही और दर्शन, ज्ञान तथा विज्ञान की पूर्वजा भी है। साहित्य शास्त्र में काव्यानन्द को ब्रह्मानंद का सहोदर कहा गया है और "कविर्मनीषी परिभूः स्वयंभूः" श्रुति भी प्रचलित है। अतः कविता का स्थान साहित्य में शीर्षस्थ है। यह भी सर्वमान्य तथ्य है कि विश्व में प्रचलित सभी भाषाओं के साहित्य का आविर्भाव कविता के द्वारा ही हुआ। इसलिये कविता, साहित्य का अग्रदूत है। तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि सुब्रमण्य भारती के लिये कविता करना ही अपना धन्धा है और उनके अनुसार कविता का सा आश्चर्य भू पर नहीं है।[१] वस्तुतः भू लोक की कविता कभी नहीं मरती।[२]

---

१. "कवितै नमक्कुत् तोळिल्" - भारतीयार कवितैयें - संस्करण ।। - १९७८ - पूम्पुकार प्रसुरम्, मद्रास-१३. - पृ. ९९.
"पाट्टिनैप्पोल आश्चर्यम् पारिनमिसै इल्लैयड़ा" - वही, पृ. ४०७.

२. John Keats - 'The Poetry of earth is never dead.' - ON THE GRASS HOPPER AND CRICKET LINE-1.

कविता का सम्बन्ध अनुभूति से है और बिना अनुभूति के कविता की कल्पना भी असम्भव है। अनुभूति मानव के अन्तर्जगत की प्रधान प्रवृत्ति है। कविता का प्रधान विषय मानव और प्रकृति है। मानव से प्रेम जुड़ा हुआ है। मानव की समृद्धि जैसे प्रेम पर निर्भर रहता है, वैसे कविता में सरसता तथा रमणीयता प्रेम, सौन्दर्य पर निर्भर है। इसी अनुभूति, प्रकृति-प्रेम और सौन्दर्य को लेकर मानव की प्रतिभा अर्थात् कल्पना स्वच्छन्द प्रवृत्ति की ओर मुड़ती है। इन सबका अस्तित्व मानव की वैयक्तिकता पर आधारित है। इस व्यक्तिवादी चेतना का आधार मानव के "अहं" की वृत्ति है जिसका सम्बन्ध चेतन मन से है। प्रकृति के सिवा इन सब वृत्तियों का केन्द्र-स्थान मानव का हृदय है। अलावा इनके, निराशा होने पर वेदना, क्रुद्ध होने पर विद्रोह व क्रान्ति की भावनायें, मानव का उपजीव्य रही हैं। अतः चेतन मन से संबंधित ये स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ पुरातन अेवं सनातन हैं जो परिस्थितियों के अनुरूप नदी के प्रवाह के समान बहती आ रही हैं और सदा बहती रहेंगी। ये प्रवृत्तियाँ भूत, वर्तमान, भविष्यत् की कृत्रिम बाधा से विमुक्त होकर, विश्व प्रिया बनकर चिरन्तन रूप से तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप नवीन प्रभा को लेकर समाज में साहित्य के रूप में अभिव्यक्त हुआ करती हैं। क्योंकि साहित्यकार नये सत्य की खोज नहीं निकालता, वह केवल सनातन-सत्य को ही अेक विशेष और नवीन दृष्टिकोण से देखकर दूसरों के लिये सुलभ करता है[1] और "स्वच्छन्दतावाद" तो पुराना शब्द भी माना जाता है।[2]

यूरोप में - अंग्रेजी साहित्य में अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम दो दशकों से, और हिन्दी साहित्य में श्रीधर पाठक के आगमन से -

---

१. शान्ति प्रिय द्विवेदी - कवि और काव्य - तीसरा संस्करण १९४९ नवम्बर - इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद - पृ. ८.
२. नंददुलारे वाजपेयी - आधुनिक काव्य रचना और विचार - साथी प्रकाशन, सागर - चतुर्थ संस्करण - १९६६ - पृ. १६.

स्वच्छन्दतावाद की चर्चा होती आ रही है। इसका अेक मात्र कारण है -सामाजिक परिस्थितियाँ। इस से मानव की भावनायें, अनुभूतियाँ और कल्पनायें बदला करती हैं। अतः मानव का दृष्टिकोण प्रकृति और काव्य के प्रति बदलना स्वाभाविक है। समाज में निहित मानव की समूयता के अनुसार प्रत्येक युग में रीति-रिवाज, आचार-विचार बदला करते हैं और तदनुसार साहित्य नया रूप धारण कर लेता है। अतः आज का स्वच्छन्दतावादी कवि तिमिर के बन्धन को काटकर नव स्पन्दन, नव पल्लव, नवजीवन की आशा, नव जल, नव किरण, नव कमल की कल्पना अत्यन्त सरस ढंग से करता है। फ्रान्सीसी राज्य क्रान्ति से प्रभावित यूरोपीय रोमांटिक साहित्य में यह बात सत्य सिद्ध होती है। परंपरागत, शास्त्रसम्मत नियमों को तोड़कर स्वच्छन्द धारणा को लेकर हिन्दी के पन्त और निराला तथा तमिल के भारती और भारतीदासन जैसे कवियों ने समय की माँग को स्वीकार किये हैं। शैली की दृष्टि से भारती की "पाँचाली शपथम्" की भूमिका[1] और निराला की परिमल की भूमिका[2] इस युगीन प्रभाव को स्पष्ट करती हैं।

स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ न केवल साहित्य में बल्कि राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में भी व्याप्त हैं। राजनीति और समाज के क्षेत्रों में नियमों का पालन, परम्परा का सम्मान और तदनुसार पदों की नियुक्ति, रीति-रिवाजों का कटु पालन इत्यादि परम्परागत वृत्तियाँ हैं। योग्यता के अनुसार पदों की नियुक्ति, उदारता की भावना, सहानुभूति, मौलिकता, व्यक्तित्व का सम्मान आदि स्वच्छन्द वृत्तियाँ हैं। हिन्दु परम्परा के अनुसार, विवाह, हिन्दुओं में तत्संबंधित जातियों

---

१. भारतीयार कवितायें - पाँचाली शपथम् भूमिका - दूसरा संस्करण १९७८ पूम्बुकार प्रसुरम्, मद्रास-१३. - पृ. ११३.
२. निराला - परिमल भूमिका - प्रथम बार प्रकाशित १९७८ दिसम्बर - राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-२ - पृ. ५.

के अनुरूप, करना रस्म-रिवाज का द्योतक है। लेकिन चन्द्रगुप्त मौर्य ने (ई.पू. ३२५ - ई.पू. ३०१) यवनों सहित वैवाहिक सन्धि[1] करके राजनैतिक और सामाजिक धरातल पर स्वच्छन्द मार्ग को अपनाया। प्रसाद के चन्द्रगुप्त नाटक में चन्द्रगुप्त मौर्य और कार्नेलिया के पाणिग्रहण बन्धन का उल्लेख है।[2] इतिहास इस बात का निरूपण करता है। मध्य-कालीन भारत में मुगल सम्राट अकबर ने राजपूतों से मिल-जुलकर, हिन्दु कन्याओं से विवाह करके अपनी मौलिकता और उदारता को प्रकट किया। अकबर का यह कार्य अेक प्रकार से क्रमशः राजनीति और सामाजिक क्षेत्रों में परम्परा के विरूद्ध स्वच्छन्द प्रवृत्ति का द्योतक है। धार्मिक क्षेत्र में परम्परागत पूजा पद्धति, धार्मिक असहिष्णुता और अन्धविश्वास शास्त्रीयता का प्रतीक है। पूजा पद्धति में स्वतंत्र चिन्तन-स्वतंत्रता, अन्धविश्वासों को तोड़ना इत्यादि स्वच्छन्द प्रवृत्ति के लक्षण हैं। "दीन इलाही" नामक अेक स्वतंत्र धर्म की स्थापना करके अकबर ने धार्मिक क्षेत्र में सहिष्णुता का परिचय दिया। अकबर की ये प्रवृत्तियाँ संपूर्ण रूप से स्वच्छन्दता का परिचायक हैं। इसे स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती। उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ सभी क्षेत्रों में व्याप्त हैं।

स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ काल की परिस्थितियों के अनुसार नवीनता धारण करती हैं। चाहे तमिल साहित्य के संघ काल हो या आधुनिक काल, हिन्दी साहित्य के आदि काल हो या अर्वाचीन काल - उनकी अभिव्यक्ति, उनके रूपों में भले ही अंतर हो, किन्तु मूलतः प्रवृत्तियाँ अेक ही हैं। पुराने विषयों को तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप नवीन दृष्टिकोण से देखा जा रहा है। नया रंग - नया कलेवर प्रदान किया जा रहा है। वाल्मीकि, तुलसी जैसे उत्कृष्ट कवियों ने पुराने जीवन सचि में

---

१. R. Sathyanatha Iyer - Political and Cultural History of India - Vol.No.I - P.117 - 1972. S. Viswanathan (Printers & Publishers) Madras-31. Treaty Date 305 B.C.
२. प्रसाद - चन्द्रगुप्त - चतुर्थ अंक - १२वाँ संस्करण - स.२०१७ वि. भारती भण्डार - पृ. १९४. प्रसाद भी सन्धि दिनांक ई.पू. 305 मानते हैं। - वही - पृ. 33

-५-

नये रामकृष्ण को नहीं, नये जीवन साँचे में पुराने रामकृष्ण को ढालना चाहा और ढाल भी दिया।[1] भारती के काव्य पांचाली शपथम् में द्रौपदी का चीर हरण, भारत माता के चीर हरण का प्रतीक है।[2] तुलसी के पंचवटी प्रसंग, गुप्तजी के पंचवटी-प्रसंग और निराला के पंचवटी-प्रसंग में अन्तर है। प्रथम परम्परागत प्रवृत्ति का परिचायक है, द्वितीय में प्राकृतिक धरातल पर स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद है और तृतीय में सच्ची स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति पायी जाती है। इसमें शूर्पणखा को राक्षसी रूप न देकर, परम्परा के विरुद्ध नारी का रूप दिया गया है। शैली के क्षेत्र में स्वच्छन्द अतुकान्त मुक्त छन्द का भी प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार बिहारीलाल के "यमुना वर्णन"[3] भारतेन्दु के "यमुना छवि वर्णन",[4] निराला के "यमुना के प्रति"[5] में क्रमश: नवीनता और स्वच्छन्दता को आँका जा सकता है। तमिल काव्य परम्परा में "तिरुप्पळ्ळि अेळुच्चि" अेक गीत है, जो सामान्य रूप से ईश्वर को जगाने के लिये गाया जाता है। तोण्डरडिप्पोडि आऴ्वार ने अपने "तिरुप्पळ्ळि अेळुच्चि" में

---

१. नंददुलारे वाजपेयी - आधुनिक साहित्य - पाँचवाँ संस्करण, सं० २०३१ वि. - भारती भण्डार, लीडर प्रेस - पृ. ११-१२.
२. Dr. K. Meenakshi Sundaram - A Study on the Poetical works of Subramanya Bharathi - P.11. - Pari Nilayam, Madras-1. I Edn. 1965.
Bharathi wants to sing in praise of Draupathi whose wrath is nothing, but the wrath of India thundering against her own servitude.

३. सघन कुंज छाया सुखद, सीतल सुरभि समीर।
मन है जात अजौं वहै, वा जमुना के तीर।।
४. प्राचीन पद्य संग्रह - सं० श्री रामानंद शर्मा - द.भा.हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास - मई १९६३ - दूसरा पुनर्मुद्रण - पृ. ८१.
५. निराला - परिमल - राजकमल १९७८ - पृ. ३३.

प्रकृति के सुन्दर दृश्य और उसकी विभिन्न पृष्ठभूमियों का वर्णन किया है। माणिक्कवाचकर के इन गीतों में भक्ति तथा संगीतात्मकता की गुंजाइश है। रामलिंग स्वामी ने इस गीत पद्धति में अज्ञान को दूर करके मानव मन के विकास पक्ष पर जोर दिया है। भारती ने अपने तिरुप्पळ्ळि ऍळुच्चि में में राष्ट्रीयता की जागृति का गान किया है।[१] अतः हम देखते हैं कि भारती तक आते आते इस गीत पद्धति में नवीनता और स्वच्छन्दता के गूंज आ गये हैं।

स्वच्छन्द भावना कालजयी होकर सभी कालों में विराजमान है। कबीरदास की कविताओं का अध्ययन करने से विदित होता है कि वे सामाजिक धार्मिक क्षेत्रों में स्वच्छन्दतावादी रहे। जनता की भाषा अर्थात् सरल अवधी का प्रयोग अपने "मानस" में करने की दृष्टि से तुलसी भी स्वच्छन्दतावादी ठहरते हैं। इस सत्य को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। नौवीं शताब्दी में कंबन के पूर्व तमिल कवि तिरुत्तक्कत् देवर ने अपना महाकाव्य "सीवक चिन्तामणि" में[२] प्रथम बार वृत्तम् छन्द[३] का प्रयोग करके अपनी स्वच्छन्द भावना का परिचय दिया। तमिल साहित्य के इतिहास में यह अेक नवीन घटना समझी जाती है। क्योंकि महाकाव्य के क्षेत्र में परम्परागत छन्दों का प्रयोग होता रहा। तमिल के कवि शिरोमणि कंबन ने अपने रामायण में "हिरण्य वध" उपसर्ग जोडकर अपनी स्वच्छन्दता

---

१. Dr. K. Meenakshisundaram - A study on the poetical works of Subramanya Bharathi, P.2. I Edn. - 1965. तोण्डरडिप्पोडि आऴ्वार और माणिक्कवाचकर भक्ति युग के कवि हैं। (सन् ६००-९०० तक) रामलिंगस्वामी (१८२३-१८७४) उन्नीसवीं शती के तमिल कवि हैं।

२. शिलप्पदिकारम्, मणिमेकलै, सीवक चिन्तामणि, वळैयापति, कुण्डलकेशी तमिल के पंच महाकाव्य हैं।

३. "वृत्तम्" शब्द संस्कृत होते हुये भी इसका कोई सम्बन्ध संस्कृत के काव्य सिद्धान्तों से नहीं है। यह वृत्तम् तमिल में ही पल्लवित, पुष्पित अेक सुन्दर छन्द है। डॉ० मु. वरदराजन, तमिल साहित्य का इतिहास - पृ. २२,२३. - चतुर्थ सं० - १९८० - साहित्य अकादमी, नई दिल्ली.

का परिचय दिया है। वाल्मीकि रामायण में हिरण्य कथा का उल्लेख नहीं है। इस स्वच्छन्द भावना के कारण अपने रामायण को मान्यता प्राप्त कराने में कंबन को दिल तोड़ प्रयत्न करना पड़ा। कहा जाता है कि श्रीरंगम मन्दिर[१] में विराजमान श्री नरसिंहमूर्ति ने स्वयं मुस्कुराकर इस सर्ग का स्वागत किया था। उसी के बाद कम्बन के रामायण को मान्यता मिली।[२]

तुलसी कृत मानस में इस हिरण्य कथा का आभास काव्य के आरंभ में ही मिल जाता है।[३] अतः प्रत्येक कवि अपनी वैयक्तिक भावना के अनुरूप स्वच्छन्द या परंपरित काव्य की रचना करता है। यूरोप के वाङ्मय से भी इसके लिये उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है। डॉ० प्रियर्सन[४] का विश्वास है कि यूरोप के वाङ्मय के प्रारंभिक तीन चरणों में स्वच्छन्द धारा उपलब्ध होती है। प्रथम का श्रीगणेश यूरिपिडस के दुःखवादी ग्रंथों से तथा अफलातून के वार्तालापों से, द्वितीय का बारहवीं, तेरहवीं शताब्दी से और तृतीय का आरंभ अठारहवीं शती से होता है, जिसे हम सामान्य रूप से रोमान्टिसिज़्म कहते हैं। अतः स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ शाश्वत हैं, उन्हें किसी काल या युग से बाँधना या सीमित करना कठिन है। जब समाज की रुचि-जनता की चित्तवृत्ति बदलती है तब साहित्यकार का बदल जाना

---

१. तमिलनाडु में तिरुच्चिराप्पल्ली के पास पाँच किलोमीटर की दूरी पर है। मूल स्थान में श्रीरंगनाथन् सर्प-सेज पर लेटे हुये हैं।
२. डॉ० ऍस.वी. सुब्रमण्यम् - इलक्किय उर्वुगळ् - प्रथम संस्करण १९७८ - तमिल पदिप्पकम्, मद्रास-२०. - पृ. ८७.
३. राम नाम नरकेसरी कनक कसिपु कलिकाल।
जापक जन प्रहलाद जिमि पालिहि दलि सुरसाल।। दोहा संख्या २७.
रामचरित मानस - पृ. ५९. तेरहवाँ संस्करण - सं० २०२० वि. गीता प्रेस, गोरखपुर.
४. Mario Praz : The Romantic Agony - P.8. - Oxford University Press - Reprinted 1978.

स्वाभाविक है। स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ चाहे यूरोप की हो, चाहे तमिल या हिन्दी की, लोक रुचि के अनुसार नवीनता रूपी कल्पना को लेकर साहित्य में अभि० व्यक्त हुआ करती हैं।

(अ) स्वच्छन्दतावाद की परिभाषा

पाश्चात्य विद्वानों का विचार:-

शुक्लजी स्वच्छन्दतावाद[१] को अंग्रेजी के रोमाण्टिसिज़्म शब्द का पर्याय मानते हैं। रोमाण्टिसिज़्म के लिये विभिन्न पाश्चात्य विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से परिभाषायें प्रस्तुत की हैं। प्रमुख परिभाषायें यहाँ प्रस्तुत की जाती हैं।

"रोमाण्टिक" शब्द का प्रयोग प्रकारांतर से किया गया है और उसे किसी अेक अर्थ में प्रस्तुत करना असम्भव है। अब तक किसी ने नई परिभाषा प्रस्तुत करने का प्रयत्न कम ही किया है। अंग्रेजी का० यधारा में सन् १७८९ के ब्लैक के "सॉंग्स आफ इन्नोसेन्स" से लेकर कीट्स-शेली की मृत्यु तक की का० यधारा को रोमाण्टिक का० य कहा गया है और रोमाण्टिकों के लिये कल्पना ही आधार है और इनका विचार है कि कल्पना के बिना कविता असम्भव है।[२] डी.जी. रोसिट्टी ने इसे "प्रेम के द्वारा सौन्दर्य का दर्शन" कहा है।[३] अेक अन्य विद्वान ने इसके दो अंग मानकर विश्लेषण किया है;

---

१. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - नागरी प्रचारिणी सभा, काशी - संशोधित, प्रवर्धित १८-वाँ पुनर्मुद्रण सं० २०३५ वि.-पृ.४०९.

२. C.M. Bowra - The Romantic Imagination, Oxford, 8th impression 1978 - P. 271 & 1.

The word 'Romantic has been used so often and for so many purposes, that it is impossible to confine it to any single meaning, still less to attempt a new definition of it. Let it suffice that it is applied to a phase of English Poetry which began in 1789 with Blake's Songs of Innocence and ended with the deaths of Keats and Shelley.

But for the Romantics Imagination is fundamental, because they think that without it poetry is impossible.

३. Dante Gabriel Rossetti ....defined it as beauty sought it through love.

- The Romantic Imagination - P.271.

एक बहिरंग रोमान्टिसिज़्म, जिसका सम्बन्ध ललित कल्पना से है, दूसरा अंतरंग जो कल्पना की उत्पत्ति है।[१] अनुशासनीय नियमों का विनाश या भंग को रोमान्टिसिज़्म की संज्ञा दी गई है।[२] और कुछ लोगों ने प्रकृति को ही रोमान्टिक माना है।[३] स्टेण्डल के लिये रोमान्टिसिज़्म प्रगति, स्वतंत्रता, मौलिकता और भविष्य कल्पना का प्रतीक है। साहित्य में उदारता हा रोमान्टिसिज़्म बताया गया है।[४] इस प्रकार पाश्चात्य विद्वानों ने रोमान्टिसिज़्म में कल्पना, प्रेम , सौन्दर्य, स्वतंत्रता, प्रकृति - जैसी सबल प्रवृत्तियों का दर्शन किया है।

भारतीय विद्वानों का विचार

हिन्दी के मूर्धन्य आलोचक रामचन्द्र शुक्ल ने अनुभूति की सच्ची नैसर्गिक स्वच्छन्दता को ही रोमान्टिसिज़्म की संज्ञा प्रदान की है,

---

१. M. Deutschbein has tried to make use of the two terms in order to distinguish between external Romanticism, to be associated with fancy and inner Romanticism the product of imagination.
- Mario Praz - The Romantic Agony - P.17. Oxford University Press - Reprinted 1978.

२. वही, पृ. १८. For Babbit Romanticism is a return to a hypothetical spontaneity of nature conceived as essentially good, an emancipation of (mainly sexual) impulses a cult of emotional intensity by getting rid of rules of discipline .....
- Mario Praz - The Romantic Agony Oxford University Press - Reprinted 1978.

३. L.P. Smith observes, Nature described as Romantic. P.13. - Mario Praz - Romantic Agony - Oxford. Reprinted 1978.

४. Romanticism is liberalism in Literature - Victor Hugo. Studies in Poetry - P. 154 by A.G. George. - Heine Mann Educational Books Ltd., New Delhi-16.

प्रियका मूल आधार प्राकृतिक समझा है। अलावा इसके इन्होंने स्वच्छन्द प्रवृत्ति के लिये शिष्ट समुदाय लोक-भाषा का समर्थन किया है।[१] स्वातंत्र्य की लालसा और बन्धनों का त्याग रोमान्टिक धारा के मूल में व्याप्त है कहकर फ्रान्स की राज्य क्रांति को ही स्वच्छन्दतावाद का आधार स्तंभ माना गया है।[२] एक अन्य हिन्दी आलोचक ने रोमान्टिक कवियों में निराशा, अकेलापन, कुंठा, घुटन, जन-साधारण के प्रति सहानुभूति, प्रकृति प्रेम, क्रान्ति के लिये आकांक्षा, जीवन के प्रति उल्लास पर्याप्त मात्रा में पाया है और रोमान्टिसिज़्म को "शुद्ध कलावाद" की संज्ञा भी दी है।[३] कल्पना का अविरल प्रवाह और निविड़ आवेग को स्वच्छन्दतावाद की प्रधान जननी कहा गया है।[४] सामाजिक बन्धनों को तोड़कर जीवन को स्वच्छन्द भूमि में विचरण करने की लालसा ही रोमान्टिक का अर्थ बतलाया गया है। एक आधुनिक आलोचक ने स्वच्छन्दतावाद को काव्य का एक तत्व माना है और उनके अनुसार स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति एक शाश्वत प्रवृत्ति है जो किसी भी काल या देश के साहित्य में अभिव्यक्त होती है।[५] यह एक

---

१. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - १८वाँ संशोधित प्रवर्धित सं: २०३५ वि० - नागरी प्रचारिणी सभा, काशी - पृ. ४०९.
२. नंददुलारे वाजपेयी - आधुनिक साहित्य - पाँचवां संस्करण - सं. २०११ वि. - भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद - पृ. ३७३.
३. डॉ० रामविलास शर्मा - आस्था और सौन्दर्य - पृ. १२७. और ३९. प्रथम आवृत्ति १८८३ शकाब्द - किताब महल, इलाहाबाद.
४. हजारी प्रसाद द्विवेदी का विचार - डॉ० त्रिभुवन सिंह के द्वारा उद्धृत। आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्दधारा - पृ. २८ - द्वितीय संस्करण १९७९ - हिन्दी प्रचारक प्रतिष्ठान, वाराणसी.
५. डॉ० हरिवंश लाल का प्राक्कथन - आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ - डॉ० अजब सिंह का शोध - प्रथम संस्करण १९७५ - विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी - पृ. ५.

मुक्त आत्मा की चेष्टा है और व्यक्तिवाद भी है।[१] रोमाण्टिक भावना विद्रोही होती है और वह स्थापित समाज की आत्मरक्षापरक दकियानूस प्रवृत्तियों को तोड़कर नया समाज लाना चाहती है।[२] डॉ० केसरी नारायण शुक्ल जी ने हिन्दी साहित्य को ध्यान में रखकर स्वच्छन्दतावाद के लिये अेक समष्टिगत परिभाषा प्रस्तुत की है। द्विवेदी युग की आलोचनात्मक और विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति के विरोध से कल्पना और अनुभूति को उत्तेजना मिली, यही स्वच्छन्दतावाद है। यह प्रधानतया कल्पनात्मक मनोदृष्टि है। स्वातंत्र्य, प्रेम-काव्य में वृत्तों और छन्दों का नूतन प्रयोग; स्वच्छन्दतावाद के दो प्रधान लक्षण हैं - जिज्ञासा और सौन्दर्य-प्रेम - वर्तमान काव्य में वर्तमान हैं।[३] मनुष्य की निजी आजादी, व्यक्तित्व की छूट, सौन्दर्य की अेक अपनी दुनिया और वैयक्तिक अनुभूति से लेकर राष्ट्रीय सांस्कृतिक संदर्भों तक को स्वच्छन्दतावाद के अन्तर्गत माना गया है।[४]

हिन्दी काव्य अथवा आलोचनात्मक क्षेत्रों में जितना विवेचन स्वच्छन्दतावाद को लेकर हुआ है उतना तमिल साहित्यिक क्षेत्र में नहीं हुआ। इसका तात्पर्य यह नहीं समझना चाहिये कि तमिल में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का विश्लेषण ही नहीं हुआ है। प्रकृति, प्रेम, सौन्दर्य, विद्रोह व क्रान्ति जैसी प्रमुख प्रवृत्तियों पर पृथक रूप से विश्लेषण किया गया है। तमिल के आधुनिक आलोचक डॉ० अेम. वरदराजन अपने शोध प्रबन्ध में प्रकृतिवाद और स्वच्छन्दतावाद को संघ कालीन साहित्य की प्रमुख विशेषतायें बताते हैं।[५]

---

१. डॉ० सुधीन्द्र - हिन्दी कविता में युगान्तर - दूसरा संस्करण १९५७ - पृ. ३७ व २ - प्रकाशक: आत्माराम अेण्ड संस, दिल्ली.

२. दिनकर - काव्य की भूमिका । - १९५८ जून - उदयाचल, पटना - पृ.३४.

३. आधुनिक काव्यधारा - डॉ० केसरीनारायण शुक्ल - चौथा आवृत्ति १९६१ नन्दकिशोर, वारणासी - पृ. १३८.

४. डॉ० प्रेम शंकर - हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - अपनी ओर से - पृ. ९. प्रथम संस्करण १९७४ - मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल.

५. डॉ० मु. वरदराजन - पऴन्तमिऴ इलक्कियत्तिल् इयर्कै (प्राचीन तमिल साहित्य में प्रकृति) - पारि निलैयम, मद्रास - द्वितीय संस्करण १९७९ - पृ.१०.

और इन्हीं विशेषताओं का उल्लेख उन्होंने अन्यत्र भी किया है।[१] तमिल में प्रकृतिवाद के लिये "इयर्कै इयल्" और स्वच्छन्दतावाद अर्थात् रोमान्टिसिज़्म के लिये "विरुन्दियल" शब्दों का प्रयोग किया गया है। इयर्कै इयल् का सम्बन्ध प्रकृतिवाद से है, जिसका तात्पर्य प्रकृति वर्णन से है। "विरुन्दियल" का अर्थ है - मन को लुभानेवाला या मन को सन्तोष प्रदान करनेवाला। इन दोनों शब्दों का प्रयोग संघकालीन साहित्य के सन्दर्भ में किया गया है। अतः यहाँ "विरुन्दियल" का तात्पर्य प्रेम से भी माना जा सकता है। क्योंकि "प्रेम" संघम युग की प्रमुख प्रवृत्ति है। तमिल साहित्य में रोमान्टिसिज़्म के लिये "पुनैवियल" शब्द भी प्रयुक्त होता है। इसका अर्थ है - कल्पित कर अपने विचारों को अभिव्यक्त करना। "पुनैदल" का अर्थ है अभिव्यक्ति अथवा "कहना" जिसका आधार कल्पना होती है। अर्थात् कल्पना की उत्पत्ति है अभिव्यक्ति। यहाँ भी कल्पना पर जोर दिया गया है। अतः तमिल साहित्य में भी स्वच्छन्दतावाद का तात्पर्य कल्पना, प्रेम और प्रकृति से है। स्वच्छन्दतावादी साहित्य में अति कल्पना और अनुभूति मात्र उपलब्ध होती है।[२]

इस प्रकार पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों ने प्रमुख रूप से स्वच्छन्दतावाद का सम्बन्ध कल्पना से माना है। उपर्युक्त विभिन्न परिभाषाओं तथा विश्लेषणों के आधार पर स्वच्छन्दतावाद की परिभाषा निम्न प्रकार से दी जा सकती है।

(III) <u>निष्कर्ष</u>

भावुक मानव के मन में प्रेम और सौन्दर्य, प्रकृति के प्रति आकर्षण, अनुभूति, वैयक्तिकता, कल्पना, विद्रोह जैसी सबल प्रवृत्तियाँ और साधारण मानव में निराशा, अकेलापन, कुंठा, घुटन जैसी निर्बल प्रवृत्तियाँ शाश्वत

---

१. भारतीय वाङ्मय - सं० डॉ० नगेन्द्र - डॉ० मु.व. का तमिल लेख - साहित्य सदन, झाँसी - प्रथम संस्करण सं० २०१५ वि. - पृ. ८.
२. डॉ० मु. वरदराजन - इलक्किय मरबु - पृ. ४१-४२. - तायकम् प्रकाशन, १९७९ - पारि निलैयम, मद्रास-१.

रूप से विद्यमान है जो स्थिति के अनुरूप (चाहे परिस्थिति सामाजिक हो धार्मिक अथवा राजनैतिक) स्वच्छन्द पद्धति के द्वारा जब सृजन के रूप में साहित्य में अभि०यक्त होती है तब उसे स्वच्छन्दतावाद की संज्ञा दी जा सकती है।

(आ) स्वच्छन्दतावाद, परम्परावाद और यथार्थवाद

स्वच्छन्दतावाद की परिभाषायें और ०याख्यायें तब तक पूर्ण नहीं कही जा सकतीं जब तक परम्परावाद का अेक सामान्य विश्लेषण न हो। क्योंकि परम्परावाद की प्रतिक्रिया में ही स्वच्छन्दतावाद का आविर्भाव हुआ करता है। इन दोनों के साथ यथार्थवाद का सम्बन्ध जोड़कर विश्लेषण करने से विषय और भी स्पष्ट हो सकता है।

परम्परावाद का तात्पर्य नियमित पद्धति, संयम, संतुलन और अनुशासन से है। इस के लिये अंग्रेजी में क्लैसिज़्म शब्द का प्रयोग हुआ करता है। इसका अर्थ है - का०य में रूप और विषय को प्रमुखता देना, कल्पना और विचार में संतुलन, नियमों का पालन करना, उदात्त अेवं महान की संभावना। अतः परम्परावादी का०य ०यक्तिनिष्ठ न होकर वस्तुनिष्ठ या विषय प्रधान होता है। हीगेल ने क्लैसिकल शब्द का ०यवहार करते हुये रूप और विषय वस्तु के सामंजस्यवाला अर्थ ग्रहण किया है। कोई भी साहित्य क्लैसिक हो सकता है जिसमें निश्चित संतुलित प्रवाहों में समाज की अभि०यक्ति हो।[१] इस प्रकार परम्परावादी का०य नियमित, निश्चित, संतुलित प्रवाहों का प्रतिनिधि है। साहित्य में जब इन प्रवृत्तियों की अति स्थिति हो जाती है तब परम्परावादी विचारों का विनाश हो जाता है और स्वयं साहित्य नयी कल्पना, नयी अनुभूति की आवश्यकता को महसूस

---

१. Grierson - 'Classic' any literature which is the expression of Society which has attained a perfect balance of forces.
- Mario Praz - Romantic Agony - P.7. Oxford Reprinted 1978.

करके समाज से जब नई अभिव्यक्ति की माँग करता है तब प्राकृतिक रूप से स्वच्छन्दतावाद का उदय होता है। परम्परावादी काव्य प्राचीनता, शान्ति, काव्य की प्रबन्धात्मकता पर जोर देता है। लेकिन स्वच्छन्दतावादी काव्य नवीनता, विद्रोह व क्रान्ति, काव्य के क्षेत्र में मुक्तक, गीत, प्रगीतों की ओर आकृष्ट होता है। अेक का अस्तित्व बन्धन में है तो दूसरे का स्वतंत्रता में। अगर अेक की तुलना सोने के पिंजड़े में बन्ध तोते से की जाये तो दूसरे की खुली हवा में स्वतंत्रतापूर्वक उड़नेवाली कोयला से की जा सकती है। अगर हम काव्य के इतिहास को ध्यानपूर्वक अनुशीलन करें तो हमें परंपरागत और स्वच्छन्द प्रवृत्तियों का उदय और अस्त का पता चलेगा। अेक युग में शास्त्रीयता की आवश्यकता पर जोर दिया जाता है दूसरे युग में स्वच्छन्दता की। इसमें कोई भी प्रवृत्ति लुप्त नहीं होती बल्कि अेक प्रधान, दूसरा गौण बन जाती है। कवि की वैयक्तिक अनुभूति के अनुरूप कविता परम्परागत या स्वच्छन्द बन जाती है। रोमान्टिसिज़्म और क्लैसिज़्म की अति चर्चा होने की वजह से अेक पाश्चात्य आलोचक ने इन्हें साहित्यिक राजनीति कहा है।[1]

स्वच्छन्दतावाद और यथार्थवाद का वही संबन्ध है जो काल्पनिक और यथार्थ जीवन का। अेक साहित्य में काल्पनिक पक्ष पर जोर देता है, दूसरा जीवन के व्यावहारिक पक्ष पर। अेक में लेखक की वैयक्तिक अनुभूति को प्रधानता दी जाती है और दूसरे में वस्तु-विषय से सम्बन्धित विचारों को प्रमुखता दी जाती है। यथार्थवाद का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। वह स्वच्छन्दतावाद के अेक अंश को लेकर मानवता की सीमा के अनुरूप ग्रहण करने की अेक शक्ति मात्र है। स्वच्छन्दतावाद के कोमल पक्ष को यथार्थवाद का कठोरपक्ष कसता है। अेक शब्द में यथार्थवाद स्वच्छन्दतावाद की कसौटी है।[2]

---

१. टी.अेस. इलियट - दिनकर - काव्य की भूमिका में उद्धृत - पृ. ३७. उदयाचल, पटना - ४. प्रथम संस्करण - १९५८.

२. शान्तिप्रिय द्विवेदी - युग और साहित्य - तृतीय संस्करण १९५८ मार्च - इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद - पृ. २४४.

स्वच्छन्दतावाद वैयक्तिक अनुभूति को प्रधान मानकर साहित्य को कल्पनामय देखता है तो परम्परावाद साहित्य को अपने बन्धन में रखता है और यथार्थवादी साहित्य मानव तथा वस्तुओं के विविध पक्षों का नग्न वर्णन प्रस्तुत करता है। अेक जीवन को भावनामय देखता है, दूसरा जीवन को वैसा देखता है जैसे उसे होना चाहिये और तीसरा जीवन को ज्यों का त्यों देखता है।[१]

(इ) मूल स्रोत

प्रेम और सौन्दर्य स्वच्छन्दतावाद की प्रधान प्रवृत्तियाँ हैं। प्रेम मानव जीवन की मूल वृत्ति है। आधुनिक साहित्य में प्रेम के विविध पक्षों का वर्णन मिलता है, जैसे गृह-प्रेम, देश-प्रेम, विश्व-प्रेम, प्रकृति-प्रेम और नारी-प्रेम अर्थात् लौकिक प्रेम। प्रागैतिहासिक काल में प्रेम का अर्थ नारी से ही रहा। वेदों में भी प्रेम का प्रतीक काम ही रहा।[२] ईसाई धर्म का आदम-ईव का प्रेम काम अर्थात् लौकिक शारीरिक प्रेम ही रहा। लौकिकता के आवरण में नारी और सौन्दर्य अभिन्न है। नारी के सौन्दर्य के कारण पुरुष उसकी ओर आकृष्ट होता है और यह आकर्षण प्रेम का रूप धारण कर लेता है। अतः सभ्यता के प्रारंभिक काल में नारी का सौन्दर्य और प्रेम अेक दूसरे का पूरक समझा गया। ग्रीकों की भी यह धारणा रही कि आकृति का सौन्दर्य आत्मा का ही सौन्दर्य है। आदि वाङ्मय में इस आकृति का तात्पर्य नारी की शारीरिक आकृति से रहा।

सभ्यता के इतिहास का अनुशीलन करने से पता चलता है कि ई० पू० ३७०० से ९०० तक का साहित्य उपलब्ध है। मिस्र देश के "स्वर्गवासियों का ग्रंथ"[३] का रचना काल ४२६६ ई.पू. से ३००० ई.पू. तक माना जाता है।

---

१. लीलाधर गुप्त - पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धान्त - द्वितीय संशोधित संस्करण - १९६७, हिन्दुस्तानी अेकाडमी, इलाहाबाद-पृ. १८१.
२. "अयमात्मा परानंद: पर प्रेमास्पदं हियंतु" वैदिक काम का पौराणिक पर्याय प्रेम बना। - प्रसाद संगीत - पृ. ४-५ द्वि.सं. १९७२. भारती भंडार.
३. The Book of the dead. - A Sacred literature of Egyptians. इसकी कुछ प्रतियाँ बर्लिन के रायल म्यूजियम में उपलब्ध होती हैं।

इस ग्रन्थ में रोमान्टिक प्रेम की कई सुन्दर कवितायें मिलती हैं। अेक कविता का भावानुवाद नीचे प्रस्तुत है। यहाँ का रोमान्टिक प्रेम, लौकिक प्रेम ही है। यहाँ नारी का सौन्दर्यांकन आधुनिक रोमान्टिक कवियों की तरह किया गया है। यहाँ का प्रेम नारी-केन्द्रित है।

"हंसों की पाँति में आनेवाली,
प्रेम दृष्टि डाल दिल को लुभानेवाली,
तेरे केशों को सजाते हैं कोमल फूल,
तेरे शशिमुख हरती वेदना - शूल,
मधुर मधुर मुस्कुराहट से, नयनों से,
प्रेम के अति रोग को मिटानेवाली।"[1]

आशय यह हुआ कि सिवा नारी के लौकिक प्रेम के रोग को कोई भी नहीं मिटा सकता।[2] प्रेम की टीस को यहाँ अनुभव किया जा सकता है।

प्रकृति और मानव का सम्बन्ध अटूट है। प्रकृति प्रेम स्वच्छन्दतावादी काव्य की आत्मा है। अनादि काल से मानव प्रकृति का रसास्वादन करता आ रहा है। भारतीय काव्य का मूलस्रोत ऋग्वेद[3] है। इसमें उषा, सूर्य, मारुत, इन्द्र आदि का वर्णन मिलता है। मानवेतर उषा को नारी के रूप में भी दिखाया गया है। पर्वत, आकाश, पृथ्वी, सागर इत्यादि का उल्लेख भी है। मानवतावादी भावना अर्वाचीन लगते हुये भी सर्वथा प्राचीन है। प्राचीन मानव भावना शान्तिदायक और कल्याणकारी रही। "वसुधैव कुटुंबकम्" मानवतावादी भावना के निकट है और सत्यं, शिवं, सुन्दरम् में

---

१. प्रोफसर अेस. वैयापुरि पिल्लै - इलक्किय उदयम् - प्रथम भाग - पृ. ७७. चतुर्थ संस्करण १९६५ मार्च - तमिल पुस्तकालयम, मद्रास-५.

२. "कादल नोयै मन्दिरंगळ् तीर्पदिल्लै, मौ तीर्पाळ्" प्रेम (लौकिक) के रोग को मंत्र नहीं दूर करते, बल्कि नारी दूर करती है। सुरदा-तेनमळै (मधुवर्षा) चतुर्थ संस्करण, १९७७ अगस्त, सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास-७८- पृ.४७. सुरदा तमिल के आधुनिक रोमांटिक कवि माने जाते हैं।

३. सम्पादक मैक्समुल्लर ने इसका अनुमान संभवतः १९०० ई.पू. माना है।

शिवम् कल्याणकारी का प्रतीक है। आदि ऋषि मुनियों ने भी मानव को ही श्रेष्ठ बताया है।[१]

लोक गीतों की गणना स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों में की जाती है। आदि भावुक मानव की कविता लोक गीतों के द्वारा ही प्रस्फुटित हुई थी। लोक गीतों का काल संबंधी अनुमान कठिन है। क्योंकि इनका सम्बन्ध मानव के मन से है। स्वर्गीय पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने इन लोक गीतों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है - "इन गीतों की मूल बोली या भाषा का पता लगाना कठिन ही नहीं, असंभव सा है। क्योंकि गीत उत्पन्न होकर भाषा के प्रवाह में तैरते चलते हैं। मनुष्य के कण्ठ ही इसके घाट हैं। उपयुक्त कण्ठ पाकर कोई कहीं बसेरा ले लेता है, कोई नहीं। यहाँ ज्ञातव्य बात यह है कि लोरी गीत लोक गीतों की पूर्वजा है। तमिल से अेक दृष्टान्त यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

"निला निला वा वा ....
निल्लामल ओडि वा ....
मलै मेले अेरि वा ....
मल्लिगैप्पू कोण्डु वा ...."

<u>अर्थात्</u>

चन्दा चन्दा आ आ ...
बिना रुके दौड़े आ ....
पर्वत ऊँचा चढ़के आ ....
फूल मल्लि लेके आ .....

पता नहीं, इन गीतों को किसने गाया? कब गाया? तमिलनाडु के हर बच्चे के दिल में, असंख्य माताओं के हृदय में ये आज भी गूँज रहे हैं। इनकी

---

१. "गुह्यं ब्रह्मा तदिदं वो ब्रवीमि न मानुष्याच्छ्रेष्टतरं हि किंचित्"
डॉ० पी. आदेश्वरराव - द्वारा उद्धृत - स्वच्छन्दतावादी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन - प्रगति प्रकाशन, आगरा - प्रथम संस्करण, १९७१. - पृ. २८.

रचना कब हुई? कब तक ये चलेंगे? इनका उत्तर देना नामुमकिन है।

मुक्त या स्वच्छन्द छन्दों का प्रयोग प्रमुख तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने किया है। हिन्दी काव्य क्षेत्र में इस स्वच्छन्द छन्द की वजह से स्वयं निराला को कटु आलोचना सहनी पड़ी। इसका मूल स्रोत वैदिक कवियों की कविताओं में खोजा जा सकता है। वैदिक युग के "गायत्री" छन्द में यह गुण था।[१]

(ख) पाश्चात्य साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का प्रारंभ

इतिहास और साहित्य का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है। साहित्य और इतिहास दोनों जुड़वाँ बहिनें हैं, अलग नहीं होती। ऐतिहासिक ज्ञान से ही साहित्य का आनन्द संभव है।[२] अतः पाश्चात्य साहित्य में स्वच्छन्दतावाद के प्रारंभ के सम्बन्ध में समुचित ज्ञान प्राप्त करने के लिये अठारहवीं शती के अन्तिम दशकों की यूरोप और फ्रान्स की राज्य क्रान्ति का परिचय आवश्यक है।

यूरोप के सभी राजा अपनी मर्जी से राज करते थे। प्रभु गण साधारण और निम्न वर्ग जनता पर अत्याचार करना ही अपना कर्तव्य समझते थे। राजा की इच्छा ही नियम थी। प्रत्येक राजा दूसरे के राज्य पर अपना अधिकार जमाना चाहता था। अतः राज्य वृद्धि उनका लक्ष्य था।

धार्मिक सहिष्णुता गायब हो गयी थी। यूरोप के समाज ने पूर्ण रूप से असन्तोष और अतृप्ति का अनुभव किया। जनता स्वतंत्र नहीं थी, सुरक्षा की संभावना नहीं थी, और मानव का विकास सभी ओर से बंद था।[३] किसानों

---

१. निराला - परिमल की भूमिका - पृ. ९. प्रथम बार प्रकाशित १९७८ दिसम्बर - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

२. Literature and History are twin sisters, inseparable. The enjoyment of literature is enhanced by the knowledge of History. - G.M. Travelyan.

३. The great structure of European Society was unhappy, unfree, unprotected, undeveloped mass of human beings, to whom opportunity for growth and improvement was closed on every side. - Hasen, Modern Europe, P.62. - IV Edn. Chand & Co., New Delhi.

की आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय थी। कई प्रकार के कर उनको ही देने पड़ते थे। प्रभु लोग किसानों के रक्त को चूसा करते थे।

इधर फ्रान्स "दैवी अधिकार का सिद्धान्त" (डिवाइन राइट) पर विश्वास करता था। फ्रान्स का राजा अपने को ईश्वर का प्रतिनिधि समझता था। वह केवल ईश्वर के लिये जिम्मेदारी था, जनता के लिये नहीं। संपूर्ण देश को, उसके नियम का पालन करना पड़ता था। राजा अपनी इच्छा के अनुसार नियम बनाता था, कर वसूल करता था और व्यय भी करता था। वह युद्ध घोषित किया करता था और सन्धि भी कर लेता था। अेक ही शब्द में राजा स्वयं सबकुछ था। वेरसाइल्स की आडम्बर पूर्ण राज-सभा राष्ट्र का कब्रिस्तान बन गयी। राजा के महल्ले में अठारह हजार लोग काम करते थे और उनमें सोलह हजार लोग राजा तथा उसके कुटुंब के लिये काम करते थे।[1] फ्रान्सीसी सरकार पूर्ण रूप से दुर्बल और अवैज्ञानिक थी। आय से बढ़कर व्यय की मात्रा अधिक थी। प्रभुओं को कर देने से छूट दी गयी थी। ९०% लोग फ्रान्स में किसान वर्ग के थे। कर वसूल करने का अधिकार कंपनी के पास रहता था जो निर्धारित धन सरकार को अदाकर, किसानों तथा गरीबों के रक्त को चूस चूसकर कर वसूल किया करते थे। असल में किसान ही फ्रान्स की रीढ़ की हड्डी था। उनकी स्थिति बहुत दयनीय थी। "वर्ष" फ्रान्स के अन्तर्गत अेक छोटे शासक था जिससे सरकार की स्थिति डाँवाडोल हो जाती थी। किसी ने समता का अनुभव नहीं किया, धार्मिक स्वतंत्रता मिट गई। राजनैतिक स्वतंत्रता का नामोनिशान तक नहीं था। भ्रातृत्व की भावना नहीं थी। इसलिये "समता, स्वतन्त्रता और भ्रातृत्व" क्रान्ति के मूल स्वर बन गये। फ्रान्स की राज्य क्रान्ति प्रस्फुटित होने में दार्शनिक लोग जैसे माण्टेस्क्यू (१६८९-१७५५), वाल्टेयर (१६९४-१७७८) और रूसो (१७१२-१७७८) अद्वितीय काम कर रहे थे।

---

१. Hazen - Modern Europe - P.67 ; IV Edn. Chand & Co., New Delhi.

रूसो के "सोशियल कान्ट्रेक्ट" की प्रथम पंक्तियाँ सारे देश में नारे जैसे गूँज उठीं। "मानव जन्म से स्वतंत्र है, फिर भी सर्वत्र वह श्रृंखलाओं में जकड़ा हुआ है। मानव सर्वथा निर्दोष है और प्रत्येक दोष अधिकारियों के द्वारा होता है।[१] लूइस सोलह का चरित्र और राज्य के कार्यों में मरिये अन्टोइनेट्टे का प्रतिरोध भी फ्रान्स की राज्य क्रान्ति के कारण बन गये। इन कारणों से फ्रान्स में सन् १७८९ जून २० दिनांक को क्रान्ति आग की तरह प्रज्वलित हो उठी।

फ्रान्स की राज्य क्रान्ति से यूरोप ही नहीं बल्कि समस्त विश्व भी प्रभावित हुआ। राष्ट्रीयता, समता, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व की भावनायें इसकी प्रमुख देन हैं। इसके फलस्वरूप यूरोप में दो प्रमुख आन्दोलन उठ खड़े हुये। अेक आर्थिक क्षेत्र में औद्योगिक क्रान्ति, दूसरा साहित्यिक आन्दोलन जो रोमान्टिसिज़्म के नाम से विख्यात है। इस रोमान्टिसिज़्म ने विश्व की प्राय: सभी आधुनिक भाषाओं के साहित्य को प्रभावित किया है।

(अ) यूरोपीय स्वच्छन्दधारा और इंग्लैण्ड का योगदान

फ्रान्स की राज्य क्रान्ति के मूल स्वर समता, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व की पृष्ठभूमि पर आधुनिक स्वच्छन्दतावाद का आरम्भ हुआ। साहित्यिक क्षेत्र में इसका प्रभाव बहुत गहरा था। रूसो के प्रकृतिवादी सिद्धान्त - "प्रकृति की ओर चलो और प्रकृति का अनुकरण करके शिक्षा ग्रहण करो"- का प्रभाव स्वच्छन्दतावादी कवियों पर पड़ा। अतः प्रकृति के प्रति उनका विशेष अनुराग रहा। इंग्लैण्ड से पूर्व जर्मन और फ्रान्स में स्वच्छन्दतावाद का विकास हुआ। जर्मन साहित्यकार गेटे (१७४९-१८३२) की कृतियों में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का आभास मिलता है। इस दृष्टि से उनके

---

१. Man is boon free and yet every where he is in chains Man is infallible and all wrong is done by the authority.

जीवन की प्रारंभिक कृति "सॉरोज ऑफ वर्थर" नामक उपन्यास उल्लेखनीय है, जिसमें दुखान्त प्रेम कथा का वर्णन है। वास्तव में गेटे स्वच्छन्दतावादी कलाकार नहीं हैं। उन्होंने स्वच्छन्दतावाद को रोग और क्लैसिक प्रवृत्ति को स्वास्थ्य कहा है। श्लेगिल बन्धु फ्रेडरिक (१७५९-१८०५) तथा आगॅस्ट विल्हेम (१७६७-१८४५) को जर्मन स्वच्छन्दतावाद का आरम्भ कर्ता कहा जाता है।[1] जर्मन स्वच्छन्दतावाद ने दार्शनिक क्षेत्र को भी प्रभावित किया है। फ्रान्स के स्वच्छन्दतावादी युग को दो भागों में विभाजित किया जाता है। प्रथम युग १७६०-१८२० तक और द्वितीय युग १८२०-१८५० तक है। प्रथम युग का श्रीगणेश रूसो ने किया था। प्रकृति के प्रति उनका नवीन दृष्टिकोण और उनकी मानवतावादी भावनायें स्वच्छन्दता के प्रतीक हैं। द्वितीय युग के मुख्य स्वच्छन्दतावादी साहित्यकार विक्टर ह्यूगो (१८०२-१८८२) माने जाते हैं जो रूसो से प्रभावित थे। इन्होंने फ्रान्स के स्वच्छन्दतावादी साहित्य का नेतृत्व किया। इनकी कृतियों में कल्पना, गीतात्मकता और स्वतंत्रता की भावना मिलती है। फ्रान्स के अन्य स्वच्छन्दतावादी लेखकों में लैमर्तीन, विग्नी, मूसेत, स्टेण्डहल, बालज़ाक प्रमुख हैं। सेन्ट बूव की गणना स्वच्छन्दतावादी समीक्षकों में की जाती है। फ्रान्स के साहित्यिक स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन ने इतिहास, दर्शन, राजनीति, धर्म - जैसे क्षेत्रों को भी प्रभावित किया है।

इंग्लैण्ड में स्वच्छन्दतावाद का प्रारंभ जर्मन और फ्रान्स के बाद हुआ था। ऐतिहासिक दृष्टि से सन् १७८९ पूर्व भी इंग्लैण्ड के साहित्य में किसी न किसी रूप में रूमानी भावनायें यत्र-तत्र मिलती हैं तो भी समस्त प्रवृत्तियों का संघात केवल नवीनता ब्लैक के "सॉंग्स आफ इन्नोसेंस" के बाद के साहित्य

---

१. हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - डॉ० प्रेमशंकर - पृ. ९९.
मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल - प्रथम संस्करण - १९७४.

में परिलक्षित होती है। यूरोपीय स्वच्छन्द धारा में इंग्लैण्ड के योगदान को समझने के लिये अंग्रेजी के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवि और कृतियों की विशेषताओं का संक्षिप्त परिचय देना आवश्यक है। क्योंकि भारतीय भाषाओं के आधुनिक साहित्यकारों ने वर्ड्स्वर्थ, शेली, कीट्स, बायरन से जितना प्रभाव ग्रहण किया है उतना जर्मन और फ्रान्स के साहित्यकारों से नहीं।

(१) विलियम ब्लेक (सन् १७५७-१८२७)

इनकी कृति "सांग्स आफ इन्नोसेन्स" से अंग्रेजी साहित्य में रोमाण्टिक युग का श्रीगणेश माना जाता है। कल्पना को इन्होंने अधिक महत्व दिया है। इनके अनुसार कल्पना ही ऐक ऐसी शक्ति है जो कवि को बनाती है।

सन् १७८९ में अर्थात् फ्रान्स की राज्य क्रान्ति के उसी वर्ष में इन्होंने "सांग्स आफ इन्नोसेन्स" को प्रकाशित किया और सन् १७९४ में "सांग्स आफ ऐक्स्पीरियन्स" को प्रकाशित किया। उल्लिखित प्रथम में कल्पना की स्थापना की गई है और द्वितीय, गीतात्मकता के लिये अंग्रेजी काव्य परम्परा में बहुत प्रसिद्ध है। इसमें रहस्यात्मकता की स्पष्ट छाप है। इसमें प्रयुक्त प्रतीकों को इन्होंने प्रायः बैबिल से ग्रहण किया है। "दि सिक् रोज" अर्थात् "अस्वस्थ गुलाब" और "हा! सन् फ्लावर" अर्थात् " सूरजमुखी फूल" नामक कविताओं में बहुत कम शब्दों में प्रकृति और कल्पना का सुन्दर सम्मिश्रण उपलब्ध होताहै। इसके अनुसार मानव से बढ़कर कोई ईश्वर नहीं है। मानवतावादी भावना, नूतनता,[१] गीतात्मकता, अनुभूति की तीव्रता आदि इनकी कृतियों की प्रमुख विशेषतायें हैं। इस प्रकार विलियम ब्लेक अंग्रेजी साहित्य के रोमाण्टिक युग के आरम्भकर्ता और सच्चे रोमाण्टिक माने जाते हैं।

---

१. Blake's religion denied the existence of God, apart from man, the idea of God has no meaning. I must create a system or be enslaved by another Man's. I will not reason and compare;
My business is to create - Blake C.M. Bowra R.I. Oxford 8th 1978 - Page No.23 & 34.

(२) <u>कॉलरिज</u> (सन् १७७२-१८३४)

इन्होंने अपने काव्य सम्बन्धित विचारों अेवं सिद्धान्तों को "बैयोग्रफिया लिट्रेरिया" नामक ग्रंथ में प्रस्तुत किया है। यह ग्रन्थ काव्य के विषय पर चौदह साल की तपस्या का फल है।[१] इन्होंने रोमान्टिक समीक्षा को नयी गति प्रदान की है। इन्होंने कविता को द्वितीय अर्थात् गौण कल्पना की संज्ञा प्रदान की है। कल्पना के तीन विविध रूपों में इन्होंने विभाजित किया है। अेक - प्रमुख कल्पना जो मानवीय ज्ञान और जीवन से संबंधित है; दूसरा - प्रमुख कल्पना की प्रतिध्वनि है और तीसरा - फेन्सी अर्थात् ललित कल्पना है। इनकी कुबलाखाँ, क्रिस्टाबेल, अेन्सियंट मेरिनार आदि कविताओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। "डिजेक्शन" इनका अेक संबोध गीत है जिसमें निराशा और वैयक्तिक अनुभूतियाँ प्राप्त होती हैं।

सन् १७९८ में "लिरिकल बेलड्स" के प्रकाश में वेर्डसवर्थ के साथ काम करके इन्होंने रोमांटिक क्षेत्र में अेक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। "लिरिकल बेलड्स" रोमान्टिक मेनिफेस्टो अर्थात् स्वच्छन्दतावाद का घोषणा पत्र है।

(३) <u>विलियम वेर्डसवर्थ</u> (सन् १७७०-१८५०)

अंग्रेजी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में हैं। ये प्रकृति के सबसे बड़े कवि माने जाते हैं। रूसो से प्रभावित होकर कविता क्षेत्र में आये। ये मानवतावादी भावना के अग्रदूत रहे।[२] अंग्रेजी स्वच्छन्दतावादी काव्य का घोषणा पत्र लिरिकल बेलड्स के लेखक हैं। यह पत्र अंग्रेजी साहित्य में नया प्राण माना जाता है। कविता के क्षेत्र में परम्परावादी प्रवृत्तियों को तोड़कर

---

१. Was the fruit of some fourteen years of meditation on the topic. - M.H. ABRAMS - The Mirror and the Lamp. P. 116. - Oxford - Reprint 1979.
२. Poets do not write for Poet's alone, but for men. Poetry must please human nature as it has been and ever will be. - The Mirror and the Lamp. - P.108 & 109.

साधारण मानव जीवन को आधार बनाकर कविता लिखने की प्रवृत्ति का आरंभ इन्हीं से हुआ। कविता की भाषा को सुधारा अेवं संवारा। शक्तिमयी भावनाओं के प्रबल प्रवाह को वेर्ड्सवर्थ ने कविता कही है। इन्टिमेशन टु इम्मोरटलिटी, डेफोडिल्स, सिम रोज, सॉलिटरी रीपर, टिन्टर्न अबे, प्रिल्युड जैसी कविताओं में रोमान्टिक प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं। उनको अन्तिम दिनों में इंग्लैण्ड के राजकवि (पोयट लरिट) का गौरव मिला था। मानव और प्रकृति उनके काव्य की दो आँखें हैं।

(४) शेली (सन् १७९२-१८२२)

ये अंग्रेजी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में अधिक सशक्त कवि हैं। इंग्लैण्ड के अद्वितीय प्रगीत कवि माने जाते हैं। इनकी कविताओं में आदर्शवादी अेवं क्रान्तिकारी भावनायें मिलती हैं। नर-नारी की स्वतंत्रता पर इन्होंने जोर दिया है। जीवन के प्रारंभ में अपनी नास्तिकता के कारण इन्हें विश्वविद्यालय को छोड़ना पड़ा। इनकी कविताओं में वैयक्तिता की भावना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। प्रोमिथियस अनबौण्ड (१८१९) ओड टु दि वेस्ट विण्ड (१८१९), दि क्लाउड (१८२०) टु अे स्काई लार्क (१८२०), अडोनिइस (१८२१) इनकी प्रमुख कवितायें हैं। "अडोनिइस" अेक शोक गीत है जो कीट्स की मृत्यु पर गाया गया। स्काइ लार्क, दि क्लाउड सुन्दर प्रगीत हैं। इनकी कविताओं में प्रकृति, प्रेम, कल्पना, मानवतावादी भावना जैसी स्वच्छन्द प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं। डिफेन्स आफ पोयट्री (१८२१) में इन्होंने अपने काव्य संबंधित विचारों को व्यक्त किया है। इनके अनुसार कविता कल्पना की अभिव्यक्ति है।[१] शेली ने अफलातून के ज्ञान सिद्धान्त को अपनाया और उसे अपने काव्यगत सौन्दर्य को बढ़ाने के लिये उन्हें आवेदित किया। अंग्रेजी के रोमान्टिक

---

१. Poetry is the expression of Imagination
Poetry is the language of Imagination. - Shelley.

कवियों में मानवतावादी भावना के कट्टर पक्षपाति समझे जाते हैं। टेनिसन जैसे नव-स्वच्छंदतावादी कवियों को इनसे प्रेरणा मिली।

(५) कीट्स (सन् १७९५-१८२१)

ये अंग्रेजी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में सबसे अधिक सौन्दर्य के उपासक थे। उनके प्रगीतों में कल्पना और सौन्दर्य का सुन्दर समन्वय मिलता है। उनकी कथात्मक कविताओं में संवेदना और मूल स्थानी प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं। पेड़ से पत्ते जिस प्रकार गिर पड़ते हैं उसी प्रकार इनकी भावनायें भी कविता के रूप में अभिव्यक्त होती थीं। १८१९ अप्रैल व मई महीने कीट्स के जीवन में महत्वपूर्ण माने जाते हैं। क्योंकि इसी काल में "ला बेल्ले डेम सेन्स मेरसी" ओड टु सैके, ओड टु नैट्टिंगेल, "ओड टु ग्रिसियन उर्न" जैसी स्वच्छन्द कविताओं की रचना हुई। अन्तिम उल्लिखित कविता इनकी ललित कल्पना की उपज है।[१] "दि ऑटम्" "ओड" इनकी स्वच्छन्द प्रवृत्ति का प्रतीक है। "प्रगीतात्मकता" इनकी कविताओं की प्रमुख विशेषता है। पुरानी धाराओं का सबसे अधिक विरोध कीट्स ने किया था। इनकी प्रसिद्ध पंक्तियाँ "सौन्दर्य ही सत्य है और सत्य सौन्दर्य" भारतीय काव्य परम्परा के सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् के अधिक निकट प्रतीत होते हैं।

(६) बायरन (सन् १७८८-१८२४)

ये पोप की परम्परा को आगे बढ़ानेवाले साहित्यकार और परम्परा-वाद तथा स्वच्छन्दतावाद के बीच अेक पुल के समान थे। फ्रान्स क्रान्ति का प्रभाव इन पर स्पष्ट रूप से पड़ा। प्रकृति प्रेम, प्रेम भावना, सौन्दर्य, स्वतंत्रता की प्रवृत्ति आदि इनकी कविताओं में मिलती हैं। "डॉन जुअॅन" में इन्होंने अपनी वैयक्तिक भावनाओं को बहुत स्वतंत्रता से प्रकट किया है। सोलह काण्डों में बद्ध यह अेक महाकाव्य है जिसमें प्रणय और शौर्य का प्रतिपादन किया

---

१. The Urn of his ode must in some sense be an invention of his fancy. - C.M. Bowra - R.I. Page-129. 8th Impression 1978 - Oxford.

गया है। अंग्य की भावना इसमें प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है। प्रकृति की ओर इनकी दृष्टि अन्य रोमाण्टिक कवियों से भिन्न थी। ये अकेले में प्रकृति के साथ संतोष का अनुभव किया करते थे। "डॉन जुअन" में हेडी को प्रकृति की बच्ची के रूप में इन्होंने दिखाया है। ग्रीक द्वीप में "प्राकृतिक धरातल पर जुअन और हेडी का प्रेम" वर्ड्सवर्थ अथवा कीट्स की प्रेम कविताओं से बढ़कर, सच्चे रूप में रोमाण्टिक है।[१] ड्राइडन और पोप की परम्परा का पालन करते हुये भी ये स्की के विचारों से निकट प्रतीत होते हैं। ये सिर्फ इंगलैण्ड के नहीं बल्कि समस्त यूरोप के कवि माने जाते हैं। इतना होते हुये भी इनको रोमाण्टिक कल्पना पर विश्वास नहीं था।

(७) नव-स्वच्छन्द धारा

सी.एम. बौरा के अनुसार प्रमुख स्वच्छन्दतावादी युग की इतिश्री शेली की मृत्यु (१८२२) के साथ हो जाती है। फिर भी भावी अंग्रेजी कवियों में भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। इन्हें "नव-रोमाण्टिक कवि" की संज्ञा दी जाती है। टेनिसन (१८०९-१८९२), डी.जी. रोसेट्टी (१८२८-१८८२), सी. रोसेट्टी (१८३०-१८९४) और स्विन बर्न (१८३७-१९०९) की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक रूप से उपलब्ध होती है। डब्ल्यू.बी. ईट्स (१८६५-१९३९) ने अपने को अन्तिम रोमाण्टिक कहा है। प्रमुख रूप से ये रहस्यवादी कवि हैं। इनकी कविता "बैजान्टियम्" (१९२९) अतीत प्रेम और कल्पना का उत्कृष्ट उदाहरण है।

उपरोक्त संक्षिप्त परिचय से स्पष्ट है कि सभी अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवियों में प्रकृति प्रेम, मानवतावादी भावना, स्वतंत्रता की भावना, प्रेम भावना, अतीत प्रेम, वैयक्तिकता, नवीनता जैसी प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ दीख पड़ती हैं।

---

१. It is more truely Romantic than any love poetry written by Wordsworth or Keats. - C.M. Bowra - R.I. P.168 - 8th Impression 1978 - Oxford.

(आ) मारतीय साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का प्रारंभ

डॉ० ग्रियर्सन महोदय ने यूरोपीय साहित्य में तीन रोमाण्टिक आन्दोलनों पर विश्वास किया है। प्रथम का आरम्भ यूरिपडेस के दुःखात्मक साहित्यों तथा प्लाटो के वार्तालापों से होता है; द्वितीय १२, १३-वीं शती से १७८९ तक और तृतीय १७८९ से आरम्भ होता है। ऐसा काल-विभाजन भारतीय साहित्य के इतिहास में नहीं है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि भारतीय साहित्य में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ नहीं मिलतीं। भारतीय साहित्य में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का आभास भारत की प्राचीन संस्कृत और तमिल साहित्य में स्वाभाविक रूप में मिलता है। भारत की अन्य भाषाओं का साहित्य उतना प्राचीन नहीं जितना संस्कृत और तमिल। क्योंकि तेलुगु साहित्य का आरम्भ सन् १०२२ से[१], कन्नड़ का ९-वीं शती से[२], मलयालम का १०-वीं शती से[३], मराठी का १०-वीं शती से[४], गुजराती का सन् ११५० से[५], बंगला का ८-वीं शती से[६], असमिया का १३-वीं शती के अन्त से[७], उड़िया का ८, ९-वीं शताब्दी के आसपास,[८] पंजाबी का सन् ९०० अर्थात् राजपूत काल से,[९] उर्दू का १०-वीं शती से[१०] और हिन्दी का संवत् १०५० वि. से[११] माना जाता है। संस्कृत साहित्य के इतिहास में कब रोमाण्टिक युग का आरंभ हुआ, यह कहना कठिन है। वैसे तो कुछ स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ ऋग्वेद में भी मिलती हैं, जिसका उल्लेख किया जा चुका है। तमिल साहित्य के विषय में भी यही बात कही जा सकती है। क्योंकि तमिल का साहित्य अत्यन्त प्राचीन है। "तोलकाप्पियम्" नामक प्राचीन तमिल ग्रन्थ

---

१. भारतीय वाङ्मय - प्रधान संपादक डॉ० नगेन्द्र - साहित्य सदन (चिरगाँव) झाँसी, प्रथम संस्करण - वि. संवत् २०१५ - पृ. ४३.
२. वही, पृ. १२३.
३. वही, पृ. १५९.
४. वही, पृ. १९३.
५. वही, पृ. २४७.
६. वही, पृ. ३१२.
७. वही, पृ. ३६७.
८. वही, पृ. ४०१.
९. वही, पृ. ४६३.
१०. वही, पृ. ४९४.
११. वही, पृ. ५३५

में व्याकरण के साथ साथ, उसके तृतीय भाग १५० सूत्रों से निर्मित "पोरुळ् अधिकारम्" में साहित्य के सिद्धान्तों का विश्लेषण हुआ है।[१] उसमें कल्पना से सम्बन्धित तत्वों की टिप्पणी भी मिलती है।[२] संस्कृत काव्य में कालिदास कृत मेघदूत से रोमाण्टिक युग का श्रीगणेश माना जाता है[३] और कालिदास को "विश्व के प्रथम रोमाण्टिक कवि" पद से विभूषित किया जाता है।[४] अतः प्राप्त आधारों पर संस्कृत में कालिदास से और तमिल में संघम् युग से रोमाण्टिक प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। तमिल की संघम युगीन स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का उल्लेख यथास्थान किया जायगा। यहाँ संस्कृत के प्रसिद्ध कविकुल गुरु कालिदास के साहित्य में प्राप्त रोमाण्टिक प्रवृत्तियों का उल्लेख संक्षेप में किया जाता है।

कालिदास ने अपने रघुवंश के युद्ध-प्रसंग में कल्पना का चमत्कार दिखाया है। यक्ष घर की वापी में स्वर्ण कमल खिलाकर कल्पना की अतिशयता का परिचय दिया है। राजाओं के वैभव वर्णन में उन्होंने प्रायः प्रकृति और कल्पना का सहारा लिया है। प्राकृतिक धरातल पर दुष्यन्त और शकुन्तला तथा शिव और पार्वती का प्रेम पलता है। "इन्दुमति और अज" तथा "शकुन्तला और दुष्यन्त" दोनों में प्रेम का उदय प्रथम दर्शन में ही होता है। इन्दुमति अपनी इच्छा के अनुसार अज को चुनती है और माला पहनाती है। स्पष्ट रूप से यह स्वच्छन्द प्रवृत्ति का द्योतक है। कालिदास ने अपने काव्य में नारी के शारीरिक

---

१. ई.पू. २००० - (I) क.सु. पिल्लै - तमिल साहित्य का इतिहास - प्रथम भाग - पृ. ४८. शासिरियर नूल पदिप्पुक् कळकम् - ७ संस्करण जून १९७९, मद्रास-१. (II) डॉ० मु. वरदराजन - तमिल साहित्य का इतिहास - चतुर्थ संस्करण १९८० - साहित्य अकादमी, नई दिल्ली - पृ. १४.
२. वही, पृ. १३-१४. (II)
३. It may stand to proclaim the inauguration of a romantic era in Sanskrit Poetry. - India in Kalidasa - P.285. By भगवतशरण उपाध्याय - डॉ० रामविलास शर्मा द्वारा आस्था और सौन्दर्य पृ. ६५-६६ में उद्धृत. - प्रथम, १८८३ शकाब्द, किताब महल, इलाहाबाद.
४. वही, पृ. ६६.

सौन्दर्य के साथ मानसिक सौन्दर्य का भी अंकन किया है। कवि ने "रघुवंश" में प्रकृति के कण-कण में रघु का दर्शन कराया है। शकुन्तला प्रकृति की कन्या ही है। "शकुन्तलम्" में उपवन, नदी के तट, कोकिला, प्रभात-साँझ इत्यादि का वर्णन मिलता है। हरिणी, मोर शकुन्तला के सहचर हैं। उसकी विदाई के समय प्रकृति का जो अद्वितीय चित्र है उसे प्रस्तुत किया गया है। प्रकृति में नारीगत भावनाओं का आरोप करने की प्रवृत्ति और उनकी देश भक्ति में मानवतावादी भावनायें उनकी कृतियों में स्वाभाविक रूप से दीख पड़ती हैं।

(इ) तमिल साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का पूर्व रूप

(१) संघम युग (५०० ई.पू. - १०० ई.पू. तक)

प्रणय, शौर्य और प्रकृति प्रेम तमिल साहित्य की जन्मजात प्रवृत्तियाँ हैं। तोलकाप्पियम् में "साहित्य में प्रकृति की आवश्यकता" पर संकेत किया गया है।[१] तमिल के संघम् साहित्य में इन प्रवृत्तियों का स्वाभाविक वर्णन मिलता है। संघम साहित्य का तात्पर्य "एट्टुत्तोकै और पत्तुप्पाट्टु" से है जो कुल मिलाकर २३८१मुक्तक कविताओं का संग्रह है। इसके "अगम्" अर्थात् अंतरंग की कविताओं में प्रेम और कल्पना और "पुरम्" अर्थात् बहिरंग की कविताओं में वीरता, दान जैसी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। प्रथम में काल्पनिकता और द्वितीय में यथार्थता मिलती है। प्रेममय जीवन ही तमिल समाज का मुख्य ध्येय रहा और उसकी अभिव्यक्ति साहित्य में स्पष्ट रूप से हुई है। "एट्टुत्तोकै" में संकलित "कलित्तोकै", "कलिप्पा" नामक गीतात्मक छन्दों में रचित १५० गीतों का संग्रह है। इन सभी कविताओं में प्रेम और कल्पना का वर्णन मिलता है। "परिपाडल" नामक कविता-संग्रह में ७० गीत हैं जो प्रेम और भक्ति से संबंधित हैं।

---

१. अ.पु. परमशिवानन्दम् - कवितैयुम वाड़क्कैयुम् (कविता और जीवन) - पृ. ११. तोलकाप्पियम् सूत्र ५८२ - तमिल कलैपु पदिप्पकम्, मद्रास-३० - तृतीय संस्करण - १९७७ दिसम्बर.

यद्यपि संघम साहित्य में प्रेम से सम्बन्धित कवितायें १८६२ हैं, फिर भी नारी का शारीरिक वर्णन अधिक नहीं है। इसमें काम-वासना की भावनायें बहुत कम हैं। इसमें केवल प्रेमिकाओं की आंतरिक अनुभूतियों की अभि०यक्ति हुई है। इसके प्रेम में पवित्रता और आत्म समर्पण की भावनायें मिलती हैं। अपने प्रियतम की प्रतीक्षा करते करते ऐक नायिका अपने जीवन की आशा खो बैठती है। प्रियतम के दर्शन के अभाव में अपनी मृत्यु की संभावना पर वह बहुत रोती है। इस स्थिति में नायिका अपनी सखी से कहती है - हे सखी। मैं मृत्यु के लिये नहीं डर रही हूं। मैं इसलिये भयभीत हूं कि मेरे मरणोपरान्त, अगर मेरा अगला जन्म होगा तो, कहीं उस पुनर्जन्म में मेरे प्रियतम को भूल न जाऊं।[1] अर्थात् नायिका अपने पुनर्जन्म में भी पूर्वजन्म के प्रियतम को याद करना चाहती है। तन में प्राण सम प्रेम, प्राण तन से अलग हो जाय तो मरण है।

संघम युगीन प्रेम, प्रकृति के कण कण में पनपता है। प्रकृति पर प्रेम का साम्राज्य है। संघम का नायक प्रकृति के प्रत्येक कण में प्रेम का ही अनुभव करता है। ऐक नायक अपनी प्रेमिका से कहता है -- "मोरनी के हाव-भाव (सायल) में तुम्हारा साम्य अनुभव किया, कुन्द-फूल में तुम्हारे केशों की सुगन्ध को सूंघा; हरिणी की आंखों में तुम्हारे सौन्दर्य को देखा; मोरनी, कुन्द, हरिणी - ये तीनों मेरे लिये, वे नहीं थे - तुम ही थे।

---

१. "सादल् अंजेन् अंजुवल् सायेन् ; पिरिप्पुप्पिरिदु आगुवदायिन् मरक्कुवेन् कोल् ऐन् कादलन् ऐनवे।" - नट्रिणै
डॉ० मु. वरदराजन, तमिल साहित्य का इतिहास - पृ. ३५
चतुर्थ संस्करण - १९८० - साहित्य अकादमी, नई दिल्ली.

इसी सिद्धान्त को भारती ने भी कुयिल् पाट्टु (कोकिला-गीत) में व्यक्त किया है।

कादल कादल कादल		प्रेम प्रेम प्रेम
कादल पोइन्	अर्थात्	प्रेम जाय
सादल सादल सादल।		मरण मरण मरण।

- भारतीयार कवितायें - पृ. ३९७. पूंबुकार प्रसुरम्, मद्रास. द्वितीय संस्करण १९७८.

रास्ते की सभी प्राकृतिक वस्तुओं में तुम्हारा अनुभव अेवं दर्शन करते करते मेघ से भी अधिक वेग से आ पहुँचा।[१] इस प्रकार नायक दूसरी ओर ध्यान न देकर, प्राकृतिक वस्तुओं में नायिका के प्रेम का स्मरण करते करते उसके पास अति शीघ्र आ पहुँचता है। संघम युग के प्रत्येक प्रेम की कविता में नायक-नायिका के सरस चित्र हैं। इन कविताओं में १७२७ प्रेममय चित्र हैं जिनका अनुभव उनके रसास्वादन से हम कर सकते हैं।[२]

प्राचीन तमिल लोगों ने प्रकृति के भौगोलिक आधार पर पाँच विभाग किये हैं - कुरिंजी (पर्वत), मुल्लै (वन), मरुदम् (खेत), नेय्दल (सागर) और पालै (मरुभूमि)। प्रकृति का अैसा वर्गीकरण किसी भी भाषा के साहित्य में नहीं हुआ है। संघम् युगीन कवियों ने प्रकृति को, प्रकृति के लिये, प्राकृतिक रूप से प्रेम नहीं किया; प्रकृति की सुन्दरता में, हँसी में, रोदन में मग्न नहीं हुये, बल्कि प्रकृति उनके लिये मानव की भावनाओं को व्यक्त करने का साधन मात्र रही। पर्वत, सागर, हरिणी, मीन , प्रभात, साँझ, श्याम, पेड़, वन लता - इन सबको किसी न किसी विशेष उद्देश्य से कवियों ने देखा है। संघम साहित्य का निर्माण पाँच सौ कवियों के द्वारा हुआ है। फिर भी कोई भी कवि प्रकृति का कवि नहीं था। वर्डस्वर्थ, पंत और भारतीदासन् की तरह उन्होंने स्वतंत्र प्रकृति चित्रण प्रस्तुत नहीं किया। अतः संघम साहित्य में स्वतंत्र प्रकृति चित्रण की अेक कविता भी नहीं है और "प्रकृति" (इयर्कै) शब्द या इससे सम्बन्धित

---

१. "निन्नै पोलुम् मँगै आलनिन्
नन्नुदल बारम् मुल्लै मलर
निन्नै पोल मा मरुण्डु नोक्क
निन्नै युळ्ळि वन्दनन्
नन्नुदल अरिवै कारिनुम् विरैन्दे।" - अँग कुरुनूर - ४९२.
तमिल कादल - पृ. २०८, डॉ० व.सुप. माणिक्कम् - पारिनिलैयम - तृतीय संस्करण - १९८०.

२. वही, पृ. ५०८.

किसी अन्य शब्द का प्रयोग अेक स्थान पर भी नहीं किया गया है।[१]

अपने प्रेम के व्यापकत्व को व्यक्त करने के लिये अेक नायिका अपने प्रेम की तुलना "सागर" से करती है। उसका कथन है - "सागर सबसे विस्तृत है, लेकिन उससे विस्तृत है मेरा प्रेम।"[२] अन्य अेक नायिका का कथन है -- प्रियतम के निकट रहने से कठोर कानन भी उसके लिये कोमल और मीठा है।[३] स्वाभाविक रूप से कानन कठोर है, जंगल में मंगल नहीं है। लेकिन वन की भयंकरता भी प्रियतम के साथ रहने से कोमल और स्वर्ग बन जाती है। संघम् साहित्य में प्रकृति के कोमल अेवं कठोर रूप भी मिलते हैं। इस प्रकार संघम साहित्य में प्रेम, प्रकृति कल्पना और अनुभूति का सुन्दर समन्वय मिलता है।

(२) <u>नीति (नीति ग्रंथों का) युग : सन् १०० से ५०० तक</u>

पदिनेण्कीळ् क्कणक्कु (अठारह ग्रंथ) इस युग की रचना है। इनमें पाँच रचनायें प्रेम से सम्बन्धित हैं। विश्व प्रसिद्ध तिरुक्कुरळ इसके अन्तर्गत है। इसे १३३० (कुरळों) द्विपदों में "धर्म, अर्थ, काम" तीन भागों में विभाजित किया गया है। तृतीय भाग में उच्चतम प्रेम का वर्णन, कल्पना के द्वारा २५० द्विपदों में तिरुवळ्ळुवर् ने प्रस्तुत किया है। जाति-पाँति के बन्धन में बंधा हुआ उस समाज में "सभी अेक है" कहकर उन्होंने अपनी मानवतावादी भावना

---

१. डॉ॰ मु.व. - पळम् तमिळ इलक्कियत्तिल् इयर्कै - पृ. १०३ व ११. द्वितीय संस्करण - १९७९ - पारि निलैयम्, मद्रास-१.

२. कुरुन्तोकै[?] पेरिदु अेमक्कु अवळॊडे नट्पे - अेग कुरुनूर - १८४ - पृ. ७१.

३. कानमुम् इनियवाम् नुम्मोडु वरिने - कुरुन्दोकै - ३८८ - पृ. १२९. डॉ॰ मु.व. पळम् तमिळ इलक्कियत्तिल् इयर्कै - द्वितीय संस्करण - १९७९ - पारिनिलैयम्, मद्रास.
साकेत में भी इस प्रकार का वर्णन है --
"सीता ने सोचा वन में
स्वर्ग बनेगा अब वन में।" - चतुर्थ सर्ग - पृ.१०५,सं० २०२८.
साहित्य सदन (चिरगाँव), झाँसी.

का परिचय दिया। "शराब बन्दी" की आवाज़ उठाकर अपनी सामाजिक विद्रोहात्मक भावना को तिरुवळ्ळुवर ने प्रकट किया। इसी युग में "इळंगो अडिगळ" ने अपने "शिलप्पदिकारम्" नामक महाकाव्य में राजपरम्परा में जन्म लिये हुये किसी को नायक-नायिका न बनाकर साधारण कुटुम्ब के कण्णकी और कोवलन को स्थान देकर, प्रबन्ध काव्य के क्षेत्र में अपने स्वच्छन्द विचारों का प्रतिपादन किया है। वेश्या परिवार की माधवी की पुत्री मणिमेखलै[1] को महाकाव्य की नायिका बनाकर कूलवाणिकन् सात्तनार् ने अपनी विद्रोही भावना को घोषित किया। मणिमेखलै ने अन्धे, लंगड़े, रोगी आदि सभी लोगों को समान मानकर अमुतसुरभि[2] द्वारा भोजन खिलाकर अपनी मानवतावादी भावना का परिचय दिया है।

(३) भक्ति युग : सन् ६०० से ९०० तक

इस युग का प्रेम भक्ति के रूप में परिवर्तित हो गया। तिरुनावुक्करसर्, तिरुज्ञान सम्बन्धर्, माणिक्कवाचकर्, सुन्दरर् इस काल के "चतुष्टय" नाम से विख्यात थे। तिरुनावुक्करसर् ने "हम किसी की भी प्रजा नहीं हैं" (नाम् आर्क्कुम् कुडियल्लोम्) घोषित कर अपनी वैयक्तिक भावना को प्रकट किया। सुन्दरर् के गीतों में प्रचुर मात्रा में प्रकृति वर्णन मिलता है। भगवान शिव के पास भौरों को दूत भेजकर तिरुज्ञान सम्बन्धर् ने अपने अलौकिक प्रेम को व्यक्त किया। माणिक्क वाचकर ने संघकालीन काव्य परम्परा का अनुसरण करते हुये प्रेम के विविध रूपों को "तिरुक्कोवैयार" नामक काव्य ग्रंथ में प्रकट किया है। अपने को नायिका और शिव को नायक बनाकर चार सौ गीतों में

---

१. कोवलन् अपनी धर्मपत्नी कण्णकी को छोड़कर वेश्या कुल में उत्पन्न माधवी के साथ रहने लगा। उन दोनों की पुत्री है मणिमेखलै।
२. यह एक पात्र है जो कभी सूखता नहीं, भोजन सदा उसमें भरा रहता है। उससे निकालने पर भी कम नहीं होता।

अपने अलौकिक प्रेम को व्यक्त किया है। "तिरुवाचकम्" इनकी दूसरी काव्य कृति है, जिसमें अनुभूति की तीव्रता है। क्योंकि "तिरुवाचकत्तिर्कु उरुगार् और वाचकत्तिर्कुम् उरुगार्" अर्थात् "माणिक्कवाचकर कृत तिरुवाचकम् पढ़कर जो पिघलता नहीं वह दूसरा काव्य पढ़कर नहीं पिघलेगा।" ये सारे पहले भक्त थे और पीछे कवि। पहुँचे हुये भक्त होने की वजह से ये श्रेष्ठ गीत गाकर श्रेष्ठ कवि भी सिद्ध हुये।

आळ्वारों के गीतों से प्रेममयी भक्ति टपकती है। सूर की तरह पेरियाळ्वार् ने कृष्ण के विविध अंगों की सुन्दरता का वर्णन किया है। आण्डाळ् का प्रेम लौकिक दीखते हुये भी सर्वथा अलौकिक है। आण्डाळ् कृत "तिरुप्पावै", माणिक्कवाचकर कृत "तिरुवेंपावै" प्रकृति वर्णन की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। नम्माळ्वार् ने अपने को नायिका और विष्णु को नायक के रूप में वर्णन करके प्रकृति के कण-कण में प्रेममयी भक्ति का अनुभव किया है। सागर, अग्नि, पवन, वर्षा, सर्प, मुरली की ध्वनि, तुलसी, श्याम आदि में तिरुमाल अर्थात् विष्णु के विविध रूपों को देखकर, भक्ति रस से भीगे हुये शब्दों में अपने अलौकिक प्रेमको व्यक्त किया है। इन्होंने प्रेम की मस्ती में हंस पक्षी को तिरुमाल के पास दूत बनाकर भेजा है। इस प्रकार इस युग के कवियों ने अपने अलौकिक प्रेम को व्यक्त करके प्रकृति में परमात्मा का अनुभव किया है। इनके गीतों में भक्ति की सरसता और अनुभूति की तीव्रता विद्यमान है।

(४) <u>मिश्रित ग्रन्थों का युग : सन् ७०० से १९०० तक</u>

इस युग के "नंदिक्कलम्बकम्" नामक काव्य ग्रंथ तमिल साहित्य में नवीनता प्रस्तुत करता है। क्योंकि अभिव्यक्ति में नवीनता, सरल शैली, कल्पना का वैभव आदि इनकी प्रधान विशेषतायें हैं। "कोवै" काव्य ग्रंथ में प्रेम के प्रथम दर्शन से लेकर शिशु के पैदा होने तक का वर्णन क्रमिक रूप से व्यक्त हुआ है।

परणी काव्य में श्रेष्ठ कलिंगत्तुप्परणी में जयम् कोण्डार् ने मूर्तो की नवीन कल्पना की है। तीवक चिन्तामणि में वृत्तम् छन्दों का प्रयोग, सूळामणि[१] में प्रेम और प्रकृति, सेक्किळार् कृत पेरियपुराणम् में प्रकृति में भक्ति का अनुभव, कंबन कृत रामायणम् में प्रकृति कल्पना और नवीनता आदि इस युग के काव्य की प्रधान विशेषतायें हैं।

(५) धार्मिक ग्रंथों का युग (सन् ११००-१७००)

इस युग में जीवन और प्रकृति के यथार्थ वर्णन कम करके अत्युक्तिपूर्ण कल्पनाओं का आश्रय लिया गया। कल्पना रूपी पक्षी पृथ्वी छोड़कर आकाश की ओर उड़कर उस पार भी जाने लगी। कुमर गुरुपरर् जैसे नैसर्गिक सिद्ध भक्त कवि भी इस काल्पनिक मोह को नहीं छोड़ सके।[२]

इस प्रकार तमिल काव्य क्षेत्र में उन्नीसवीं शती के पूर्व प्रेम, प्रकृति, कल्पना, मानवतावादी भावना, वैयक्तिकता, शैली और छन्दों के प्रयोग में स्वच्छन्दता, विचारों में स्वच्छन्द भावना जैसी प्रवृत्तियाँ तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप साहित्य में अभिव्यक्त हुई हैं।

(६) हिन्दी साहित्य में स्वच्छन्दतावाद का पूर्व रूप

प्रमुख साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर हिन्दी साहित्य के आदि काल को वीरगाथा काल की संज्ञा दी गयी है। इस काल में प्रेम का रूप लौकिक था। सौन्दर्य का तात्पर्य नारी के शारीरिक आकृति से था। रूपवती स्त्री के पीछे वीरता और प्रेम की भावना पनपती थी। आश्रयदाता राजाओं की वीरता का अत्युक्तिपूर्ण वर्णन के लिये कवियों ने कल्पनायें कीं। जगनिक के "आल्हाखण्ड" वीरगीतों का सुन्दर उदाहरण है। इस काल की प्रधान प्रवृत्ति

---

१. पंच महाकाव्य की भाँति सूळामणि, नीलकेशी, उदयणकुमार काव्य, यशोधरा काव्य, नागकुमार काव्य "पाँच लघु काव्य" नाम से तमिल साहित्य में प्रसिद्ध हैं।
२. डॉ० मु.व.-तमिल साहित्य का इतिहास - पृ. २११. चतुर्थ संस्करण १९८०. साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली.

वीरता थी। अतः काव्य में प्रकृति वर्णन विरले ही मिलता है। मानवीय भावनाओं को व्यक्त करने के लिये प्रायः प्रकृति का प्रयोग किया गया है। पृष्ठभूमि, उद्दीपन, उपमान जैसे रूपों में प्रकृति-वर्णन इस काल में मिलता है। प्रकृति का आलंबनात्मक रूप इस काल में नितान्त अभाव रहा। अतः प्रकृति सदा गौण रही।

भक्ति काल में जनता की चित्तवृत्ति बदल गयी। भक्त कवियों ने भगवान की आराधना करके उसके प्रति अपने अलौकिक प्रेम को समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया। अतः प्रेम का स्वरूप भी बदल गया। कवियों की वाणी को स्वतंत्रता मिली। इनकी प्रेम भावना श्रद्धा के साथ मिलकर भक्ति के रूप में परिणत हो गयी। कबीरदास ने अपने को आत्मा अर्थात् पत्नी और परमात्मा को पति के रूप में दर्शन करके अपने अलौकिक प्रेम को व्यक्त किया है। इनके काव्य में मादकता, संगीतात्मकता, रहस्यात्मकता, उल्लास के साथ संयोग और वियोग के चित्र भी हैं। इन्होंने प्रेम की चरम परिणति को रहस्यवाद में अनुभव किया है।

"लाली मेरे लाल की जित देखौं तित लाल।
लाली देखन मैं गयी, मैं भी हो गई लाल।।"

ईश्वर की खोज के लिये प्रेम की आवश्यकता है। अतः मन्दिर और मस्जिद उनि की आवश्यकता नहीं है।

"पूरब दिसा हरि का बासा पछिम अलह मुकामा।
दिल ही खोजि दिले दिल भीतरि इहां राम रहमाना।।"

इनकी ध्वनि भक्ति के क्षेत्र में स्वच्छन्दतावादी है। "माया महा ठगिनी मैं जानी" वैयक्तिकता पूर्ण इन शब्दों में आध्यात्मिक विद्रोह है। पुरानी परम्पराओं पर कठोर आघात इन्होंने सामाजिक क्षेत्र में किया है। कबीर सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक क्रान्तिकारी थे। अतः इन्हें स्वच्छन्दतावादी कवि मानने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती। इन्होंने अपने अलौकिक प्रेम की

अनन्यता को दिखाने के लिये प्रकृति को दृष्टान्त के रूप में प्रस्तुत किया है। जैसे मृग, चातक, मीन इत्यादि। प्रकृति में ब्रह्म की व्याप्ति का अनुभव इन्होंने किया और प्रकृति को अन्योक्ति, उद्दीपन तथा उपदेश का माध्यम बनाया। निर्गुण के प्रेमाश्रयी शाखा के कवियों ने लौकिक आवरण में अलौकिक प्रेम का अनुभव किया है और इन्होंने आत्मा को पति और परमात्मा को पत्नी मानकरअपने प्रेम को अभिव्यक्त किया है। इनके काव्य में कल्पना और इतिहास का समन्वय मिलता है। इन कवियों ने प्रकृति में परमतत्व का आभास देखा है। इनमें मानव भावनाओं के अनुरूप प्रकृति को देखने की प्रवृत्ति पायी जाती है। प्रकृति में मानवीय भावनाओं का आरोप भी कहीं कहीं इनके काव्य में मिलता है। नागमती के विरह वर्णन में जायसी को प्रकृति व्यथित प्रतीत हुई। उनकी पद्मावती और रत्नसेन के विवाह प्रसंग में प्रकृति आनन्दमयी, उल्लासमयी दीख पड़ी।

सगुण कृष्ण भक्त कवियों का प्रेम वात्सल्य और दाम्पत्य के रूप में प्रायः अभिव्यक्त हुआ है। इनके समस्त पदों में अनुभूति की तीव्रता है। इन कवियों ने कृष्ण और गोपिकाओं के साथ प्रकृति का सम्बन्ध स्थापित किया है। यहाँ भी मानवीय भावनायें प्रधानता रखती हैं और प्रकृति सर्वथा गौण। प्रकृति के प्रत्येक कण में गोपिकायें कृष्ण को देखा करती हैं; जैसे मेघ, भ्रमर, कोकिल, इन्द्रधनुष, विद्युत आदि में। यमुना, कछार, कालिन्दी तट इत्यादि का वर्णन प्रायः मिलता है। प्रकृति का उद्दीपनात्मक और अलंकारात्मक रूप प्रायः प्राप्त है। स्वतंत्र प्रकृति चित्रण और मानवीकरण की पद्धति का इनके काव्य में अभाव है। राम भक्त कवियों का प्रेम आदर्शोन्मुख रहा। क्योंकि प्रेम और शृंगार का ऐसा वर्णन जो बिना किसी लज्जा और संकोच सबके सामने पढ़ा जा सके गोस्वामी जी का ही है।[१] "सबै मानिये राम के नाते"

---

१. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ. १०१ - १८वाँ पुनर्मुद्रण - नागरी प्रचारिणी सभा, काशी - सं० २०३५.

के अनुसार प्रकृति भी राम के लिये। अतः प्रकृति का कोमल या कठोर रूप इनके काव्य में नहीं मिलता। राम भक्ति काव्य में प्रकृति गौण है। मानवीय भावनायें प्रधान हैं। तुलसी के काव्य में प्रकृति सदा राम से सम्बन्धित रहती है और राम की सम्बन्ध-भावना से इन्होंने प्रकृति को सुखद अथवा दुखद अर्थात् भव्य एवं विकराल के रूप में देखा है, अतः राम का स्थान सदा विशिष्ट रहा है और प्रकृति को गौण स्थान ही मिला है।[1] उपमान, उद्दीपन और उपदेशात्मक के रूप में इन्होंने प्रकृति का वर्णन किया है।

मीरा ने अपने अलौकिक प्रेम को व्यक्त करने के लिये प्रकृति का प्रयोग किया है। इस प्रकार भक्तिकालीन कविताओं में प्रकृति का परम्परागत वर्णन मिलता है।

<u>रीतिकाल</u> अथवा शृंगार काल में प्रेम का अर्थ काम बन गया। लौकिक प्रेम के आवरण में राधा और कृष्ण को फँसाया गया। कविता में कल्पना की उड़ानें थीं। प्रकृति के प्रति इनका कोई विशेष अनुराग नहीं था। लौकिक प्रेम के उद्दीपनार्थ प्रकृति को कविताओं में स्थान दिया गया। लेकिन रीतिकाल में कुछ ऐसे भी कवि रहे, जिन्होंने रीति से मुक्त होकर कविता-रचना की। इस रीति मुक्त या स्वच्छन्द कवियों में घनानन्द प्रमुख हैं जिनका लौकिक प्रेम आगे चलकर कृष्ण के प्रेम में परिवर्तित हो जाता है। उनके स्वच्छन्द प्रेम में न करवटें बदलना है, न सेज का आग की तरह तपना है, न उछल उछलकर भागना है। उनकी "मौनमधि पुकार" है।[2] प्रेम की तीव्र अनुभूति और विरह-वेदना इनकी कविता की प्रमुख विशेषतायें हैं। इनकी कविताओं में प्रकृति का आन्तरिक सौन्दर्य और प्रकृति में मानवीय भावों का आरोप पाये जाते हैं। परम्परागत षड् ऋतु वर्णन, बारह मासे का वर्णन आदि इनकी कविताओं में

---

१. डॉ० किरणकुमारी गुप्त : हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण - पृ. १२३. द्वितीय संस्करण - संवत् २०१४ - साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
२. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ. ३३३. - १८-वाँ पुनर्मुद्रण - ना.प्र. सभा, काशी - सं० २०३५.

अनुपलब्ध हैं। यदि घनानन्द ने खड़ी बोली में लिखा होता तो सरलता से वे छायावाद के पूर्व पुरुष मान लिये गये होते।[1] ठाकुर, आलम्, बोधा इस वर्ग के अन्य कवि हैं।

इस प्रकार वीरगाथा काल और रीतिकाल का प्रेम सर्वथा लौकिक रहा। भक्तिकाल के निर्गुण कवियों ने प्रेम को अलौकिक रूप दे दिया और सगुण-वादियों का प्रेम भक्ति के रूप में पुष्पित हो गया। अतः आधुनिक काल के पूर्व प्रेम का अर्थ सीमित रहा। प्रकृति इन तीनों काल में मानवीय भावनाओं की कठपुतली रही। अतः प्रकृति सदा गौण रही है। तीनों कालों में रसोद्दीपन, दृष्टान्त और उक्ति चमत्कार के रूप में प्रकृति का प्रयोग किया गया है। अतः प्रकृति के आलम्बनात्मक चित्रण का नितान्त अभाव रहा। इस के लिये हमें हिन्दी साहित्य में श्रीधर पाठक की प्रतीक्षा करनी पड़ी है।

(उ) तमिल और हिन्दी साहित्य के पूर्व स्वच्छन्दतावादी रूपों की तुलना

तमिल और हिन्दी साहित्य के पूर्व स्वच्छन्दतावादी रूपों की तुलना करने से कुछ महत्वपूर्ण समानतायें और असमानतायें दृष्टिगत होती हैं।

(१) समानतायें

१. आधुनिक युग के पूर्व दोनों भाषाओं के साहित्य में "प्रेम" और "प्रकृति" का वर्णन ही प्रमुख है।

२. प्राचीन काल में दोनों का प्रेम लौकिक रहा।

३. तमिल के आदि संघम-साहित्य में वीरता और प्रेम का वर्णन मिलता है। हिन्दी के वीरगाथा काल में भी ये प्रवृत्तियाँ मिलती हैं।

४. भक्ति युग में दोनों साहित्यिकों का प्रेम श्रद्धा के साथ मिलकर भक्ति के रूप में परिणत हो गया। दोनों का प्रेम अलौकिक था। अनुभूति की तीव्रता दोनों में उपलब्ध होती है।

---

१. दिनकर - का०य की भूमिका - पृ. २४. (छायावाद की भूमिका लेख से) प्रथम संस्करण १९५८ - उदयाचल प्रकाशन, आर्य कुमार रोड, पटना-४.

५. दोनों भाषाओं की कविताओं में मानवीय भावनाओं को प्रधानता दी गयी। उन्हें व्यक्त करने के लिये प्रकृति का प्रयोग किया गया। दोनों में प्रकृति का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रहा। अतः दोनों में प्रकृति को गौण स्थान ही मिला है।

६. दोनों में प्रकृति वर्णन प्रेम को उद्दीप्त करता है।

७. दोनों की प्रकृति में मानवीय भावनाओं का रूपक मिलता है। यह मानवीकरण-सा लगने पर भी असल में मानवीकरण नहीं है।

८. दोनों भाषाओं के कवियों ने प्रेम और प्रकृति के वर्णन में कल्पना का प्रयोग किया है।

९. दोनों के काव्य में प्रकृति के आलम्बनात्मक चित्रों का अभाव है।

१०. दोनों भाषाओं के कलाकारों ने अपनी-अपनी वैयक्तिक भावनाओं को समय समय पर व्यक्त किया है।

(ii) <u>असमानतायें</u>

१. हिन्दी के प्रबन्ध काव्यों में इन प्रवृत्तियों का स्वाभाविक वर्णन मिलता है, जब कि तमिल में मुक्तक कविताओं में। (क्रमशः वीरगाथा काल और संघम युग में)

२. तमिल के महाकाव्य "शिलप्पदिकारम्" में साधारण परिवार के लोगों को नायक-नायिका का पद दिया गया है। वेश्या परिवार में पैदा होने पर भी उच्च सुशील एवं मानवतावादी गुणों के कारण "मणिमेखलै" महाकाव्य की नायिका बन गयी। उल्लिखित दोनों नारी केन्द्रित महाकाव्य है जिनमें नारी को प्रधानता दी गयी है। ये प्रवृत्तियाँ तत्कालीन तमिल कवियों की स्वतंत्रता और नवीनता को सूचित करती हैं। लेकिन हिन्दी काव्य-क्षेत्र में परम्परागत राजाओं को ही नायक का पद दिया गया है। आधुनिक युग के पूर्व नारी केन्द्रित काव्य का हिन्दी में अभाव है।

३. प्रकृति का वर्गीकरण जैसे तमिल साहित्य परम्परा में है, उस प्रकार हिन्दी में नहीं है।

४. संघम युग में मरुभूमि (पालै निलम्) का प्राकृतिक वर्णन अत्यन्त भयंकर रूप में किया गया है। हिन्दी में इस प्रकार का वर्णन अपेक्षाकृत कम है।

५. तमिल के प्राचीन संघम काल में प्रकृति के कण कण में प्रेम का अनुभव किया गया है। हिन्दी के आदि काल में इस प्रकार का वर्णन कम प्रतीत होता है।

६. संघम युगीन प्रेम में आत्म-समर्पण की भावना मिलती है। लेकिन हिन्दी के आदि काल में प्रेम की ऐसी भावनायें नहीं हैं।

७. आदि तमिल साहित्य का प्रेम व प्रकृति, जीवन के व्यावहारिक पक्ष पर हिन्दी से कहीं अधिक जोर देते हैं।

(ग) प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ - विश्लेषण

विशेष रूप से स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मानव की आन्तरिक अनुभूतियों से संबन्धित हैं। कल्पना के द्वारा साहित्य में इनकी अभिव्यक्ति हुआ करती है। विषय को आसानी से परखने के लिये इन प्रमुख प्रवृत्तियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। जैसे -- १. भावगत प्रवृत्तियाँ, २. कलागत प्रवृत्तियाँ।

इनकी प्रकृति, विशेषतायें और काव्य में इनकी आवश्यकता पर एक विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

(अ) भावगत प्रवृत्तियाँ

१. व्यक्तिवाद:- व्यक्तिवाद में व्यक्तित्व की प्रधानता रहती है और आन्तरिक वृत्तियों को प्रमुखता दी जाती है। मानव के "अहम्" की

भावना इसी व्यक्तिवाद से सम्बन्धित है। जिस प्रकार पूँजीवाद में व्यक्ति की स्वतंत्रता होती है उसी प्रकार साहित्य में जब वैयक्तिक भावनाओं की अभिव्यक्ति अधिक मात्रा में होती है तब स्वच्छन्दतावाद का जन्म होता है। अतः स्वच्छन्दतावाद को व्यक्तिवाद भी कहा जाता है। सामाजिक क्षेत्र में इसकी उत्पत्ति, अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यूरोप के अति एवं कठोर शासन की प्रतिक्रिया के रूप में समझी जाती है। लेकिन साहित्यिक क्षेत्र में व्यक्तिवादी भावना उतना ही पुरातन है जितना स्वयं साहित्य। क्योंकि कविता, कवि की कल्पना की उत्पत्ति है। कल्पना का मूल आधार कवि की अनुभूतियाँ हैं जो वैयक्तिक हुआ करती हैं। अतः अनुभूति और कल्पना शीलता वैयक्तिकता के दो पहलू हैं।[1] व्यक्तिवाद में कवि की वे भावनायें जो स्वच्छन्द रूप से समाज में व्यक्त नहीं की जा सकती हैं, प्रकृति और कल्पनाओं के साथ साहित्य में व्यक्त होती हैं।[2] काव्य के क्षेत्र में चिरकालीन धारणा यह है कि काव्य कवि के आत्म प्रकाशन का साधन भी है। यहाँ इस आत्म प्रकाशन का तात्पर्य व्यक्तिवाद से है। कवि की निजी भावनाओं, उसकी आकांक्षाओं आदि की अभिव्यक्ति इस प्रकार की कविताओं में होती है। अतः साहित्यिक क्षेत्र में यह एक महत्वपूर्ण विचारधारा है, जो सभी कालों में, सभी साहित्यों में अभिव्यक्त हुआ करती है।

आचार्य कुन्तक ने "स्वभावो मूर्ध्नि वर्तते" अर्थात् काव्य में कवि के स्वभाव को प्रमुख स्थान प्रदान किया है। क्योंकि कविता के अच्छे या बुरे विषय नहीं होते, केवल अच्छे बुरे कवि होते हैं।[3] अतः साहित्यकार के व्यक्तित्व के अनुसार काव्य के विषय भी होते हैं। आधुनिक तमिल और

---

१. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - पृ. १३८ - प्रथम सं. २०२८ वि. ना.प्र. सभा, काशी.
२. डॉ० प्रेमनारायण शुक्ल, हिन्दी साहित्य में विविधवाद - पृ. ४१२. द्वितीय संस्करण १९७० - लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद -१.
३. विक्टर ह्यूगो.

हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में यह व्यक्तिवादी स्वर सबसे प्रबल है। लेकिन यह भावना उन्नीसवीं शती के पूर्व भी मिलती है। कबीरदास की पंक्तियाँ "मैं राम की बहुरिया" और "नारी हम भी करी" में "मैं और हम" में, तुलसी के "स्वान्त सुखाय" और "हरि व्यापक सर्वत्र समाना, प्रेम से प्रकट होय मैं जाना" में वैयक्तिकता का स्वर है। तमिल साहित्य में भक्ति काल के पेरियाळ्वार और आण्डाळ् की भक्ति में वैयक्तिकता की भावना निहित है। अतः व्यक्तिवादी प्रवृत्ति स्वच्छन्दतावादी कविता का मूल स्वर ठहरती है। क्योंकि अनुभूति, कल्पनाशीलता, स्वतंत्रता की भावना और मानवतावादी दृष्टिकोण इसी वैयक्तिक भावना पर निर्भर हैं। यह प्रवृत्ति स्वच्छन्दतावादी काव्य का अेक क्रियाशील स्वरूप है।

(२) अनुभूति:- मानव की आन्तरिक प्रवृत्तियों में अनुभूति सबसे सबल कही जा सकती है। यह अेक सात्विक गुण है, जिससे कविता की उत्पत्ति होती है। क्रोचे ने उसी को अनुभूति माना है जो काव्य या कला के रूप में अभिव्यक्त होती है; अर्थात् अनुभूति ही अभिव्यक्ति है और अभिव्यक्ति ही कविता है। बिना अनुभूति के कविता लंगी पड़ जायगी। अतः यह कविता की आत्मा ठहरती है। इसलिये कविता को अेक अत्यन्त पवित्र अनुभूति के रूप में समझा जाता है[१] और इसे आत्मानुभूति की मौलिक अभिव्यक्ति की संज्ञा भी प्रदान की गयी है।[२] यह कवि की वैयक्तिक भावनाओं के अनुसार बदलती है।

"सन्ध्या" को पंत और निराला ने विभिन्न रूपों में अनुभव करके वर्णन किया है। अेक ने सन्ध्या को "रूपसि" के रूप में देखा है, दूसरे ने "सुन्दरी" के रूप में। भारती और भारतीदासन् - दोनों ने "प्रभात" का

---

१. रामकुमार वर्मा - आधुनिक कवि-४, शक १८८४, पृ.७ - सम्मेलन, प्रयाग.
२. प्रसाद - काव्य कला तथा अन्य निबन्ध - पृ.४१. - सं.२०१२ - सातवाँ संस्करण - भारती भण्डार.

वर्णन किया है, लेकिन दोनों ने अपनी अपनी वैयक्तिक अनुभूति के रूप में उसे निहारा है। अनुभूति के दो पक्ष हैं - अेक भावानुभूति और दूसरा रसानुभूति। सौन्दर्य अेक भावानुभूति है, प्रेम उसकी रसानुभूति।[१] कल्पना के विविध अंगों और भावना छवियों का नियमन और अेकान्वय करने की शक्ति इसमें है।[२] अनुभूति के कार्यकलापों का वर्णन करते हुये पंत लिखते हैं --

"तुम आती हो
नव अंगों का शाश्वत मधु विभव, लुटाती हो।"

उसके अन्य कार्य हैं - शोभा ज्वाला लिपटाना, स्वप्नों के मुकुल खिलाना, प्राणों में ज्वार उठाना, सौन्दर्य रस बहाना और स्वर मधुर व्यथा भर जाना।[३] अनुभूति की सफल अभिव्यक्ति के लिये सरलभाषा की आवश्यकता पड़ती है। स्वच्छन्दतावादी काव्य में सर्वत्र अनुभूति की तीव्रता हम देख सकते हैं। क्योंकि स्वच्छन्दतावादी काव्य आन्तरिक अनुभूतियों से सम्बन्ध स्थापित करता है। तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रेम, प्रकृति, मानव के प्रति अपनी अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को व्यक्त किया है। अनुभूति का पूर्ण तादात्म्य होने की वजह से तमिल और हिन्दी के कवियों को अभिव्यक्ति में पूर्ण सफलता मिली है।

(३) <u>कल्पना</u>:- "जहाँ न जाये रवि, तहाँ जाये कवि" यह कल्पना द्वारा ही संभव है। कल्पना शब्द की उत्पत्ति "कल्प" धातु से हुई है, जिसका अर्थ है सृजन करना। यह वही धातु है जो कल्प वृक्ष में है। कल्प वृक्ष के नीचे बैठकर मन चाही वस्तु उपस्थित हो जाती है। नवीनता के लिये कल्पना ही आधार स्तम्भ है। यह इच्छा की सेवा करती है और

---

१. शान्ति प्रिय द्विवेदी - साकल्य प्रथम - पृ. २५०. सं० १९५५ - हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस.
२. वाजपेयी - नया साहित्य - नये प्रश्न - तृतीय.सं.पृ. १४७. - १९६१. विद्या मंदिर, वाराणसी.
३. पंत - उत्तरा - अनुभूति - पृ. १३-१४. द्वितीय संस्करण - २०१२ वि. संवत् - भारती भण्डार.

समस्त विश्व पर राज करती है।[१] यह चेतन मन की शक्ति है और इससे मन के चित्र मूर्त और स्पष्ट हो जाते हैं। अचेतन मन से इसका कोई संबंध नहीं है। मनोविज्ञानिक शास्त्र में कल्पना का विश्लेषण बहुत हुआ है। इसके अनुसार कल्पना वह मानसिक अनुभव है जो प्रतिमा के आधार पर नवीनता का निर्माण करती है और जिसका सम्बन्ध किसी काल विशेष से नहीं होता। "कल्पना" को और भी स्पष्ट करने के लिये स्मृति से इसका संबंध स्थापित किया जाता है। स्मृति किसी भी अनुभव को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करती है, कल्पना पुराने अनुभव को नवीनता के साथ प्रस्तुत करती है। जब प्रथम का सम्बन्ध अतीत से है, दूसरे का अतीत, वर्तमान, भविष्य से है और प्रथम के लिये प्रत्यय की आवश्यकता है दूसरे के लिये प्रतिमा की।

पाश्चात्य ऐवं भारतीय विद्वानों ने कल्पना की परिभाषा ऐवं व्याख्या प्रकारान्तर से प्रयुक्त की है। इसे प्रतिमा-निर्मायक शक्ति[२] और उच्चतर शक्ति[३] की संज्ञा दी गयी है। कॉलरिज ने अपने कल्पना-सिद्धान्त में सृजनात्मक अंश पर जोर दिया है और जिसके द्वारा विभिन्न तत्वों का ऐकीकरण होता है। वर्तमान अंग्रेजी साहित्य के प्रसिद्ध आलोचक आइ.ऐ. रिचर्ड्स ने कल्पना के छ अर्थ प्रस्तुत किये हैं।[४] वे हैं —

१. कल्पना चाक्षुष सुस्पष्ट प्रतिमाओं की उत्पादक है।
२. कल्पना सालंकार भाषा के प्रयोग से संबद्ध है।
३. वह लेखक अथवा पाठक कल्पनाशील कहलाता है जो दूसरे मनुष्यों की चित्तावस्थाओं को, विशेषतया दूसरों के मनोवेगों को सहानुभूति पूर्वक प्रस्तुत कर सकता है।
४. कल्पना युक्ति कौशल की द्योतक है।

---

१. Napoleon Bona Parte - Imagination rules the world.

२. लौंगिनुस
३. फिलोस्ट्रेटस
४. डॉ० लीलाधर गुप्त - पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धान्त - पृ.५३. हिन्दुस्तानी ऐकेडमी - द्वितीय संस्करण - १९१७.

५. कल्पना का अर्थ वैज्ञानिक है।
६. कल्पना वह मायिक और संयोगिक शक्ति है जो विपरीत और विस्वर गुणों के संतुलन में प्रकट होती है।

हिन्दी के अेक प्रमुख विद्वान ने कल्पना को अनुभूति का क्रियाशील स्वरूप माना है[१] और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा गृहीत प्रभावों को मिलाकर, अेकरस करके नवीन-निर्माण-कार्य करनेवाली शक्ति को इमेजिनेशन अर्थात् कल्पना की संज्ञा दी गयी है।[२] कल्पना को कला का अंतःकरण मानकर भावों का सूक्ष्म शरीर भी कहा गया है।[३] कवि प्रसाद "कल्पना" की अभ्यर्थना किस प्रकार करते हैं सो देखिये —

"हे कल्पना सुख दान;　　तुम मनुज जीवन-प्रान।
तुम विशद व्योम समान; तव अन्त नर नहिं जान।
तव शक्ति लहि अनमोल, कवि करत अद्भुत खेल
लहि तुम सबिन्दु तुषार, गुहि देत मुक्ता हार।।"[४]

कल्पना को कानन की रानी[५] और कल्पना के सत्य को सबसे बड़ा सत्य मानकर उसे ईश्वरीय प्रतिमा का अंश भी स्वीकृत किया गया है।[६]

---

१. वाजपेयी - नया साहित्य : नये प्रश्न - पृ.१४६, तृतीय आवृत्ति - १९६३ (संशोधित) विद्या मंदिर, ब्रह्मनाल, वाराणसी.
२. डॉ० राम अवध द्विवेदी - साहित्य रूप - पृ. २७६ - द्वितीय सं. २०२३ - भारती भण्डार.
३. शान्ति प्रिय द्विवेदी - कवि और काव्य - पृ. १९. - इण्डियन प्रेस - तृतीय संस्करण - १९४९ नवम्बर.
४. इन्दु, किरण-५, सं. १९६९ - पृ.७७ - "कल्पना सुख" नामक कविता से उद्धृत - डॉ० केदारनाथ सिंह. आधुनिक हिन्दी कविता में बिंब विधान पृ. १७५ - प्रथम सं. १९७१ जुलाई - भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली-६.
५. निराला - गीतिका - पृ. ९६ - आठवाँ सं. २०३० - भारती भण्डार.
६. आधुनिक कवि पंत पर्यालोचन - पृ.३३ - ११वीं आवृत्ति - साहित्य सम्मेलन.

तमिल के आलोचनात्मक क्षेत्र में कल्पना की महत्ता को स्पष्ट करने के लिये अेक सुन्दर कहानी की कल्पना की गयी है जो स्वयं अेक सुन्दर कल्पना है। ईश्वरीय कृतियों अर्थात् मानव और पक्षी-दोनों में आपसी मतभेद की वजह से पक्षियों ने ईश्वर से उड़ने की शक्ति माँगी। मानव ने भी ईश्वर से इसी शक्ति की प्रार्थना की। दोनों को पंख लगा देने से पुनः दोनों में झगड़े की संभावना होगी यह सोचकर ईश्वर ने पक्षियों को बाह्य पंख और मानव को आंतरिक पंख प्रदान किये। इस आंतरिक पंख का अर्थ है कल्पना, जिससे जहाँ कहीं भी अपनी इच्छा के अनुसार मानव उड़ सकता है। इस प्रकार मानव के आन्तरिक पंखों को ही कल्पना के नाम से संबोधन किया गया है। अतः कल्पना मानव द्वारा अन्वेषित आभूषण नहीं, बल्कि बालवस्था में निहित सौन्दर्य के समान है।[१]

कल्पना कविता की वह शक्ति है जिसके बिना कविता नीरस बन जायगी। कवि प्रतिभा संपन्न है। इसी के बल पर वह उत्तम काव्य की सृष्टि करता है और अन्य पात्रों के साथ संबंध या तादात्म्य स्थापित करता है। इस प्रतिभा का दूसरा नाम कल्पना ही है। भारतीय काव्य शास्त्र में भट्ट नायक ने इस शक्ति को "भावकत्व" नाम से अभिहित किया है। उनके मत से भावकत्व वह शक्ति है जिसके द्वारा विशेष की निर्विशेष रूप में अनुभूति होती है। इसी भावकत्व शक्ति को ही आधुनिक आलोचना में "प्राइमरी इमैजिनेशन" के नाम से पुकारा जाता है।[२] व्यापक अेवं महत्वपूर्ण अनुभूति को यह साकार बनाती है। कविता में शील, सौन्दर्य, शक्ति अेवं अपूर्व वस्तु निर्माण क्षमता इसके द्वारा ही संभव है। अतः कल्पनात्मक आवेग का नाम कविता[३], कविता

---

१. डॉ० अेम. वरदराजन - इलक्कियत् तिरन् - पृ. १२९ व १८७ - तायकम् प्रकाशन - प्रथम संस्करण १९७९ - जनवरी - पारि निलैयम्, मद्रास-१.
२. अरस्तु का काव्य शास्त्र - पृ. ५८-५९ - तृतीय संस्करण - संवत् २०३१. भारती भण्डार - अनुवादक:डॉ० नगेन्द्र और महेन्द्र चतुर्वेदी.
३. ली हंट.

कल्पना की बच्ची[1], कविता कल्पना की अभिव्यक्ति[2] कही जाती है। यह कल्पना शक्ति स्वच्छन्दतावादी काव्य का वरदान है और इसके बिना, स्वच्छन्दतावादी काव्य का अस्तित्व ही टूट जायगा। अतः यह स्वच्छन्दतावादी काव्य का एक प्रमुख तत्व है।

(४) प्रेम:- प्रेम शब्द की व्युत्पत्ति "प्रिय" शब्द से हुई है; यथा -- "प्रियस्य भावः इमनिच् प्रत्यय प्रादेशः"। इस शब्द का अर्थ है जो प्रीति या अनन्त आनन्द या तृप्ति प्रदान करता हो। यह रागात्मिका वृत्ति की भावात्मक अभिव्यंजना है। इस शब्द का अभिप्राय साधारणतः उस मनोवृत्ति से लिया जाता है जो किसी व्यक्ति की, दूसरे के सम्बन्ध में, उसके रूप,गुण, स्वभाव, सान्निध्य आदि के कारण उत्पन्न कोई सुखद अनुभूति सूचित करती हो तथा जिसमें उस दूसरे के हित की कामना भी बनी रहती हो।[3] अगर प्रेम का अर्थ प्रीति प्रदान करना माना जाय तो प्रीति के विभिन्न स्वरूपों और उनके अर्थों को समझ लेना आवश्यक है। एक-सी अवस्थावालों में होनेवाली प्रीति प्रेम है। बड़ों की छोटों के प्रति होनेवाली प्रीति स्नेह; छोटों की बड़ों के प्रति होनेवाली प्रीति भक्ति; पति-पत्नी अथवा प्रेमी-प्रेयसी में होनेवाली प्रीति प्रणय; समझा जाता है। अतः प्रेम का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है जो मानव जीवन की चेतना है, निधि है और सब कुछ है। प्रेम में तन, मन और आत्मा की प्यास को बुझाने की शक्ति है। प्रेम शब्द के लिये प्रायः तमिल में "कादल्" और "अन्बु" नामक दो शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

---

१. Poetry is the child of Imagination; 'The Imagination' of which poetry is the product and expression, is the mental organ. For intuiting those forms which are common to Universal nature and existence itself.
- M.H. ABRAMS - Mirror and the Lamp - P.105 & 130. Oxford - Reprint 1979.

२. Shelley.

३. परशुराम चतुर्वेदी - हिन्दी काव्य धारा में प्रेम प्रवाह - पृ.८-९. साहित्य सन्देश - जुलाई-अगस्त १९५८ - साधना विशेषांक में उद्धृत - पृ. ८-९.

"कादल्" का तात्पर्य सामान्य रूप से लौकिक प्रेम अर्थात् "प्रेमी-प्रेयसी का प्रणय" माना जाता है। साहित्यिक क्षेत्र में भी यही अर्थ समझा जाता है। "कादल्" शब्द का अर्थ आन्तरिक प्रेम को स्पष्ट करना होता है जिसका दर्शन नर और नारी के शारीरिक सम्बन्ध में किया जाता है। अतः कादल की प्रकृति शारीरिक सम्बन्ध ही है।[1] तमिल के क्षेत्र में कादल पर्वत से ऊँचा और सागर से विस्तृत समझा गया है और इससे बड़ा सुख कोई नहीं है। दूसरा शब्द "अन्बु" जो कादल से व्यापक है। "कादल्" में लौकिकता और "अन्बु" में पवित्रता है। "अन्बु" की महत्ता को प्राचीन कवि तिरुवळ्ळुवर ने "अन्बुडमै" नामक शीर्षक में स्पष्ट किया है।

> "अन्बिन् वलियदु उयिरनिलै अहदिलार्क्कु
> ऍन्बुतोल् पोर्त्त उडम्बु"[2]

अर्थात् "अन्बु" के द्वारा ही तन में प्राण संभव है, बिना अन्बु के तन सिर्फ मांस-हड्डियों का होगा अर्थात् निर्जीव होगा। अतः अन्बु (प्रेम) मानव जीवन का मूल है और सर्वस्व है।

"अन्बु" की शक्ति को कोई नहीं जान सकता। अन्बु की नीचता ही इच्छा है; अन्बु की पवित्रता कादल है; अन्बु का घोर रूप ही काम है; अन्बु की व्यापकता में "अरुळ्" नामक फूल खिलता है।[3] अन्बु अर्थात् प्रेम ही ईश्वर, मानव का गुण, मानव की संस्कृति तथा जीवन का लक्षण है।[4] यह ऐक

---

१. डॉ० व. सुप. माणिक्कम् - तमिल कादल - पृ.४९२-४९३. - तृतीय सं० पारि निलैयम्, मद्रास-१.
२. तिरुक्कुरळ् - कुरळ्-८०.
३. अन्बिन् तिरंगळ् यारे अरिवार।
अन्बिन् सिरुमैये आसै ऍन्बदाम्; अन्बिन् पॆरुमैतान् कादल् आवतुम्
अन्बिन् विकारमे काममाय अलर्वताम्, अन्बिन विरिवु तान् "अरुळाय्"
मलर्वतु। "अरुळ्" शब्द का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। यह ऐक अनन्य प्रेम भावना है जिसमें कपट की छाया रहती है न विरोध न क्रोध की भावना। सहानुभूति इसकी प्रमुख विशेषता है। - नामक्कल् कविञर् की कवितायें - पृ. ४११ - प्रथम सं. १९६० - लिफ्को, मद्रास-१७. संपादक: तमिळे उलकनाथन्.
४. शुद्धानंद भारती - पुतुमैप् पाडल् - पृ.१२ - प्रथम, १९७७. शुद्धानंद पुस्तकालय, मद्रास-२०.

विचित्र वस्तु है, न इसमें कपट की छाया होती है, न क्रोध व विरोध की भावना रहती है। यह लिंग भेद से परे है - भगवान् की भाँति; क्योंकि वह अनिर्वचनीय प्रेम स्वरूप कहे गये हैं।[1] यह मानव हृदय का आलोक और जीवन की प्रेरक शक्ति है। जीवन का सारतत्त्व है, शाश्वत एवं चिरन्तन है और इसके बिना मानव जीवन फीका है।[2] यह प्रकृति के कण-कण में व्याप्त होकर विश्व की समस्त वस्तुओं पर शासन करता है। अतः निस्सन्देह प्रेम काव्य के सभी सिद्धान्तों में सच्चा एवं पवित्र है। यह प्रेम भावना स्वच्छन्दतावादी काव्य का सारांश एवं मेरुदण्ड है और स्वच्छन्दतावादी कवियों की साँस है। इसके प्रति कवि निराला ने अपनी भावनाओं को निम्नांकित शब्दों में व्यक्त किया है।

"प्रेम, सदा ही तुम असूत्र हो
उर-उर के हीरों के हार
गूँथे हुये प्राणियों को भी
गूँथे न कभी, सदा ही सार।"[3]

तमिल और हिन्दी के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपने प्रेम को, प्रमुख रूप से नारी और प्रकृति पर आरोपित किया है। क्योंकि रोमांस का अर्थ ही प्रेम लीला है।[4] चाहे फ्रायड का सिद्धान्त हो या अलौकिक आध्यात्मिक भक्ति; सभी क्षेत्रों में प्रेम की महत्ता को स्वीकारा गया है।

---

१. "वाच्य वाचक भेदेन मवानेव जगन्मयः"
"औ, मेरे प्रेम बता दे तू स्त्री है या कि पुरुष है?
दोनों ही पूछ रहे हैं, कोमल है या कि परुष है।" - प्रसाद - आँसू अध्ययन संस्करण - सर्वप्रथम १९७१ - पृ. ८४. - प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी.
२. गंध विहीन फूल है जैसे चन्द्र-चन्द्रिका हीन
यों ही फीका है मनुष्य का जीवन प्रेम विहीन। मिलन से - रामनरेश त्रिपाठी.
३. निराला - अनामिका - पृ. १२. ९-वाँ सन् १९७९. भारती भण्डार.
४. दिनकर - काव्य की भूमिका - पृ. ११. प्रथम संस्करण - १९५८ जून, उदयाचल, पटना-४.

(५) सौन्दर्य:- "सौन्दर्य" शब्द की व्युत्पत्ति सामान्य रूप से "सुन्द राति इति सुन्दरम् तस्य भाव: सौन्दर्यम्" से मानी जाती है। यह शब्द भाववाचक संज्ञा है। इसका प्रयोग सुन्दर होने का भाव या धर्म के अर्थ में किया जाता है। "सुन्दरता" सौन्दर्य का पर्यायवाची शब्द है। ये दोनों शब्द "सुन्दर" शब्द से संबन्धित रहते हैं। "सुन्दर" एक विशेषणवाचक शब्द है, जिसका अर्थ सामान्यतया अच्छा या बढ़िया होता है। अत: सुन्दर, सुन्दरता और सौन्दर्य - ये तीनों शब्द किसी भाव या धर्म या गुणको सूचित करते हैं। साहित्यिक तमिल में "सौन्दर्य" शब्द के लिये प्राय: "अऴगु"[१], "मुरुगु"[२] और "सोक्कु"[३] शब्दों का प्रयोग किया जाता है। सौन्दर्य को किसी भी परिभाषा के बन्धन में बाँधना अत्यन्त कठिन है। क्योंकि —

"समै समै सुन्दर सबै, रूप, कुरूप न कोय।
जो जैसी जाकी रुचि, तित तैसो सुन्दर होय।।"[४]

सौन्दर्य-बोध भी गतिशील है। यह देश, काल, वैयक्तिक अनुभूति, विचार और भावनाओं के अनुरूप सदैव परिवर्तित होता है। अत: नित्य प्रति नवीनता धारण करनेवाली वस्तु को ही सौन्दर्य का रूप माना गया है।[५] सौन्दर्य की परिभाषा को पाश्चात्य एवम् भारतीय विद्वानों में विभिन्न रूप से प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। एक पाश्चात्य विद्वानने कहा है कि

---

१. अऴगु का सीधा अर्थ सुन्दर होता है।
२. "मुरुगु- मुरुगन्" को सौन्दर्य की संज्ञा दी गयी है। "मुरुगन्" तमिल लोगों के लिये ईश्वर है। उनकी आराधना बहुत प्राचीन काल से होती आ रही है। मुरुगन् का अर्थ है - सुन्दरम्। तमिलनाडु में पऴनि, तिरुच्चेन्दूर, पऴमुदिरसोलै, तिरुत्तणि आदि में मुरुगन के मन्दिर हैं।
३. "सोक्कु" का अर्थ है "पेरऴगु" अर्थात् "अति सुन्दरम्"। ईश्वर को प्राचीन तमिल लोगों ने "आलवाय् सोक्कन्" नाम से अभिहित किया है।
४. बिहारीलाल.
५. दिने दिने यन्न वतामुपैति तदैव रूपं रमणीयताया:
- कविवर माघ.

जब अनन्त परिमित हो जाता है तो वही सौन्दर्य है।[१] अन्य विद्वान ने संबंधों के विचार को ही सुन्दर कहा है।[२] जब आत्मा किसी रूप या दशा में चमकने लगती है तो वही सुन्दर हो जाती है।[३] जिससे आनन्द मिले वही सुन्दर है।[४] सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् - को परमेश्वर की भिन्न दशायें[५] और गुण[६] भी कहा गया है। अेकता, अनेकता में अेकता, समानता और क्रमिकता में सौन्दर्य का अनुभव किया गया है।[७] पाश्चात्य आचार्यों ने काव्य के क्षेत्र में सफल अभिव्यक्ति, उचित स्थान, विन्यास, लय और संजीवता और अनुपात को सौन्दर्य माना है।

भारतीय सिद्धान्तों के अनुसार सौन्दर्य को ईश्वरीय रूप दिया गया है। अर्थात् सत्य ही शिवम् है और शिव ही सुन्दरम् है। तमिलनाडु में मुरुगन् अर्थात् सुन्दरम् की आराधना तोल्काप्पियर के पूर्व से प्रचलित है। कलाओं के अभ्यास से ही सौन्दर्य विकसित होता हैऔर वस्तुओं में निहित सौन्दर्य का अनुभव वैयक्तिक अनुभूति करती है। बिना वैयक्तिक अनुभूति के वस्तुओं में निहित सौन्दर्य का कोई अलग अस्तित्व नहीं है।[८] अेक संगति, अन्विति और परिणति की समष्टि में सौन्दर्य का दर्शन किया गया है। जहाँ इस सामंजस्य का अभाव होता है वहाँ विक्षिप्तता आ जाती है। यह केवल रक्त माँस का रूप-रंग नहीं है, वह तो मनुष्य के "फ़ेस कट्" (मुखाकृतियों की बनावट) का परिचायक है, चेतना का दर्पण है।[९]

---

१. हर्बट स्पेन्सर
२. डिटरोट
३. प्लाटिनस
४. वेबर
५. इमर्सन
६. बामगार्टन

१ से ६ तक : डॉ० प्रेमनारायण शुक्ल द्वारा उद्धृत। हिन्दी साहित्य में विविध वाद - पृ.२७-२८. द्वितीय संस्करण - जुलाई १९७० - लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद.

७. तमिल कलैक्कळंजियम् - पृ. २३८ - प्रथम संस्करण, १९५४. तमिल वळर्च्चिक् कळकम्, मद्रास.

८. डॉ० मु. वरदराजन - इलक्कियत् तिरन् - पृ. ३९. तायकम् प्रकाशन - पारि निलैयम्, मद्रास-१. - जनवरी १९७९.

९. शान्तिप्रिय द्विवेदी - साकल्य - पृ. २४८, २५३. - हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस - प्रथम संस्करण १९५५.

इस प्रकार भिन्न-भिन्न परिभाषाओं के प्रस्तुत किये जाने पर भी अेक समष्टिगत व्याख्या इस के लिये कठिन प्रतीत होती है। क्योंकि इसका सम्बन्ध मानव की रागात्मक वृत्ति से है। मानव अपनी वैयक्तिक अनुभूति के अनुरूप वस्तुओं में निहित सौन्दर्य का रसास्वादन अेवं अनुभव करता है। इसके सिलसिले में अेक दृष्टान्त प्रस्तुत करना उचित प्रतीत होता है। इटली में बहुत दिनों से पर्वत के दृश्य में सौन्दर्य का अनुभव नहीं किया गया। उस जमाने में पर्वत को नफ़रत की दृष्टि से देखा गया। इटली में कलाओं के पुनर्जागरण के पश्चात् उसी पर्वत में सौन्दर्य का अनुभव किया गया। अतः सौन्दर्य वस्तुगत होते हुये भी, उसकी अनुभूति और आस्वादन पूर्ण रूप से व्यक्तिगत है।

सौन्दर्य का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। सूर्य, चन्द्र, आकाश, पेड़, पर्वत, सागर, लहलहाते हुये हरे भरे खेतों में, बहती हुई नदी की धारा में, बच्चों की हँसी में और प्रकृति के प्रत्येक कण में निहित सौन्दर्य को प्राकृतिक सौन्दर्य कहा जा सकता है। मानव इन पर तृप्त न होकर अपने कार्यकलापों से सुन्दरता का उत्पादन करता है। इसके फलस्वरूप कलाओं का आविर्भाव हुआ। अतः कलाओं को अप्राकृतिक सौन्दर्य के अन्तर्गत रखा जा सकता है। इस प्रकार प्राकृतिक सौन्दर्य और अप्राकृतिक सौन्दर्य को आस्वादन करते वक्त जो भावनायें सामान्य रूप से मानव के मन में उठती हैं वही सौन्दर्य की पृष्ठभूमि हो सकती है। अतः इसी को सौन्दर्य का आधारभूत सिद्धान्त माना जा सकता है। इस प्रकार सुन्दरता को अनुभव करते समय, मन में अेक प्रकार का भाव अथवा आनन्द या उल्लास उत्पन्न होता है। अतः प्रायः जहाँ सौन्दर्य है वहाँ अवश्य आनन्द होता है। लेकिन यही सौन्दर्य कविता, नाटक (दुखात्मक) और गीतों में दुख का अनुभव भी कराता है। अतः "सौन्दर्य की प्रकृति आनन्द प्रदान करना" मात्र नहीं है।[१]

सौन्दर्य की विवेचना को स्पष्ट करने के लिये कलाओं से इसका संबंध

---

१. तमिल कलैक्कळंजियम् - पृ. २३८ - प्रथम संस्करण १९५४ - तमिल वळर्च्चिक् कऴगम्, मद्रास.

स्थापित किया जाता है। यह सभी ललित कलाओं में निहित है। प्रत्येक कला का मूल सौन्दर्य है और सौन्दर्य के दर्शन में कलात्मकता का अनुभव निश्चित रूप से किया जा सकता है। जहाँ तक काव्य का सम्बन्ध है, सौन्दर्य उसका अेक अभिन्न अंग है और आवश्यक उपकरण भी है। तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने विशेष रूप से नारी और प्रकृति का सौन्दर्य वर्णन किया है। सौन्दर्यपूर्ण वस्तु इनके लिये सर्वदा सन्तोषप्रद प्रतीत होती है। इस प्रकार सौन्दर्य स्वच्छन्दतावादी काव्य का जीवन और मंच है। तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों का ध्येय सौन्दर्य का उन्मेष करना है। तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवि भारती ने सौन्दर्य को देवता के रूप में निहारा है[1] और अन्य तमिल कवि[2] ने भी इसी का अनुकरण किया है। हिन्दी में "प्रसाद" के लिये सौन्दर्य लाज भरा है और मौन बना रहता है।[3] स्वयं प्रिय दर्शन उनके लिये सौन्दर्य है।[4] पंत के लिये सौन्दर्य सरल, बड़े निष्ठुर और नादान है और आँखमिचौनी खेलकर हृदय में गहन घाव करता है।[5]

(१) प्रकृति:- सामान्य रूप से मानवेतर सभी वस्तुओं को प्रकृति की संज्ञा दी गयी है। पक्षी, फूल, सागर, गगन, भूमि, पेड़, झरना, पर्वत, सूर्य, नक्षत्र, चाँद आदि प्रकृति के अन्तर्गत माने जाते हैं। वेदान्तियों ने इसे "मायान्तु प्रकृति विद्यात्" अर्थात् "माया" कहा है। दार्शनिक रूप से मानव का तन व मन, ज्ञानेन्द्रिय, अहम् आदि प्रकृति मानी गयी है। रूप,

---

१. भारतीयार कवितायें - "अऴगु देवम्" -पृ. ५ - द्वितीय सं. - १९७८. अगस्त - पुहार प्रसुरम्, मद्रास-१३.
२. शुद्धानन्द भारती - कवि इन्बक् कनवुगळ् - पृ.४१ - १९७८ - शुद्धानंद पुस्तकालय, मद्रास-२०.
३. प्रसाद - प्रसाद संगीत - पृ.१२०. - द्वितीय - १९७२. भारती भण्डार.
४. प्रसाद - कानन कुसुम - पृ. ५६-५७ - आठवाँ सं. २०१३ वि. भारती भण्डार.
५. पंत - वीणा - ग्रंथि - पृष्ठ. १२९ - नवीन संस्करण १९७२ - राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-६.

रस, गंध, स्पर्श और श्रवण आदि द्वारा अनुभूत सभी विषय प्रकृति के अन्तर्गत समझा गया है[1] और ईश्वर तथा इस संसार के विविध जीवों के सम्बन्ध को प्रकृति कहा गया है।[2] प्रकृति और मानव का संबंध अटूट है। अनादि काल से मानव प्रकृति का आस्वादन करता आ रहा है। मानव विजित है लेकिन प्रकृति अजेय, अपेक्षाकृत मौन और शाश्वत है। प्रकृति पर आज का वैज्ञानिक मानव विजय पाने का असफल प्रयत्न करता है। प्रकृति के बिना मानव का कोई अस्तित्व नहीं है। क्योंकि इसी से वह सीखता है और आवश्यक वस्तुयें प्राप्त करता है। फिर भी, मानव के बिना प्रकृति का कोई महत्व नहीं है। आखिर मानव भी प्रकृति का ही अेक श्रेष्ठ अंग है। मनुष्य ने मनुष्येतर प्रकृति से सौन्दर्य ही नहीं, स्वर भी प्राप्त किया है। स,र,ग,म इसके साक्ष्य हैं। षड्ज की ध्वनि मोर से, ऋषभ की ध्वनि गाय से, गान्धार की ध्वनि अज से, पंचम की ध्वनि कोयल से, धैवत की ध्वनि अश्व से, निषाद की ध्वनि हाथी से संगृहीत है।[3]

साहित्यकार के लिये प्रकृति और मानव प्रधान विषय हैं, जिनके बिना साहित्य शून्य है। अरस्तु ने काव्य को भाषा के माध्यम से प्रकृति का अनुकरण कहा है। कलाकार यदि रचना करना चाहता है तो उसे प्रकृति को ही अपना गुरु मानना होगा और उसके निर्माण के सिद्धान्त समझने होंगे।[4] कवि सौन्दर्य का सरस अनुभव प्रायः प्राकृतिक वस्तुओं में करता है। साहित्यकार का संबन्ध सौन्दर्य से अधिक प्रकृति से है। क्योंकि उसके लिये प्रकृति सदा सुन्दरी है। प्रकृति साधारण मानव के लिये अचेतन प्रतीत होती है;

---

१. डॉ० किरणकुमारी गुप्त - हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण - पृ.८ - द्वितीय सं. २०१४ सम्मेलन.
२. डॉ० मु.व. - पण्डम तमिऴ इलक्कियत्तिल् इयर्कै - पृ.११. द्वितीय संस्करण १९७९ - पारि निलैयम, मद्रास.
३. शान्तिप्रिय द्विवेदी - कवि और काव्य - पृ.१४ - तृतीय सं० - १९४९ - इण्डियन प्रेस.
४. रामचन्द्र शुक्ल - आधुनिक चित्र कला का मूलाधार लेख से - सम्मेलन पत्रिका- पृ.१८३ - कला अंक शकाब्द १८८० - संपादक : राम प्रताप त्रिपाठी शास्त्री.

वही कवि के लिये सचेतन बन जाती है। आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि ने अपनी भावनाओं को प्रकृति पर मानव चेष्टाओं का आरोप करके मानवीकरण की पद्धति को अपनाया है। तमिल और हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति को स्वतंत्र रूप से रसास्वादन क्षम किया है और उसका स्वतंत्र चित्रण प्रस्तुत किया है। प्रकृति स्वच्छन्दतावादी कवियों की आत्मा है जिसके बिना, उनका प्रेम, सौन्दर्य और कल्पना का कोई महत्व नहीं है। अतः अंग्रेजी के रोमान्टिक कवि मनुष्य को कम प्यार नहीं करता, किन्तु प्रकृति उसे अधिक प्रिय लगती है[१] और प्रकृति ही उसके लिये सर्वस्व है।[२] प्रकृति चित्रण के लिये कवि को दिव्य दृष्टि, गहन अनुभूति और इसे सुन्दर शब्दों में अभिव्यक्त करने की क्षमता की अत्यन्त आवश्यकता है। ये तीनों गुण हिन्दी और तमिल के आधुनिक प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों में उपलब्ध होते हैं।

(७) <u>विद्रोह और (८) मानवतावाद</u> :- विद्रोह स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रमुख स्वर है। इसका अर्थ है परिवर्तन। पुरातनता के स्थान पर नवीनता की स्थापना, बिलकुल परिवर्तन, और परम्परागत रूढ़ियों को तोड़ना इसके मूल में निहित है। विद्रोह शब्द के लिये तमिल में "पुरट्चि" नामक शब्द प्रयुक्त होता है। इसका सीधा अर्थ है - "उलट फेट हो जाना" अथवा बिलकुल परिवर्तन हो जाना। तमिल के पुरट्चिक् कवि भारतीदासन ने पुरातनता को दूर फेंककर नवीन मार्ग का उद्घाटन करना[३] ही विद्रोह का मूल समझा है। नवीनता की आकांक्षा ही परिवर्तन का मूल है। अतः यही इस संसार का नियम और जीवन है। सामान्य रूप से विद्रोह का संबंध समाज से स्थापित

---

१. I love not man the less, but nature more. - Byron.

२. For nature then .... To me was all in all. - William Wordsworth. - Tintern Abbey.

३. डॉ० मा. सेल्वराजन - "भारतीदासनु और पुरट्चिक् कविञर" - पृ.१२ प्रथम संस्करण - वण्ण मलर् प्रकाशन, पारि निलैयम, मद्रास-१.

किया जाता है और इसमें होनेवाले परिवर्तन को ही विद्रोह कहा करते हैं। लेकिन इसका क्षेत्र व्यापक है। इसका अस्तित्व साहित्य, राजनीति, आर्थिक, धार्मिक क्षेत्रों में भी है। साहित्य में स्वच्छन्द शैली अेवम् विचारों का आगमन, राजनीति में राजा के स्थान पर प्रजा का शासन, आर्थिक क्षेत्र में अेक वर्ग, दूसरे वर्ग को नाश करने की नवीनतम पद्धति अर्थात् अराजकतापूर्ण कार्य और धार्मिक क्षेत्र में नवीनतम पूजा पद्धति तथा बहुदेव-वाद के स्थान पर अेकेश्वरवाद का सिद्धान्त विद्रोह के सूचक हैं। तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों में क्रमशः भारतीदासन् और निराला में यह भावना सबसे अधिक प्राप्त है।

"मानव से बढ़कर कोई ईश्वर नहीं है" का स्वर इस युग की नवीन देन है। "सुन्दर हैं विहग, सुमन सुन्दर, मानव तुम सबसे सुन्दरतम्"[1] जैसी पंक्तियाँ मानवतावादी भावना की उत्तुंगता सूचित करती हैं। स्वच्छन्दतावादी कवि की वैयक्तिक भावना पल्लवित होकर मानवतावादी भावना में परिणत हो गयी है। अतः व्यक्तिवाद और मानवतावाद स्वच्छन्दतावादी सिक्के के दो मुख हैं। भारतीय वाङ्मय में यह दृष्टिकोण कोई नया नहीं है। अन्यत्र भी इसकी ओर संकेत किया गया है। प्राचीन मानवतावाद में उदारता, भाग्य-वादी, सहानुभूति और अध्यात्मपरक भावनायें निहित रहीं। अर्वाचीन काल में आदर्शवादी मानवता के स्थान पर संघर्षशील विद्रोहात्मक भावनाओं को स्थान दिया गया है। यह ईश्वरत्व पर विश्वास नहीं करता बल्कि जीवित मानवत्व पर विश्वास करता है। मानवता की उपेक्षा करके कोई भी महत्वपूर्ण कार्य आधुनिक युग में नहीं किया जा सकता। अतः आज का स्वच्छन्दतावादी

---

१. पंत -पल्लविनि - पृ. ११९ - चतुर्थ संस्करण संवत् २०२० वि. - राजकमल प्रकाशन, दिल्ली.

कवि नये मनुष्य पर, मानव की चेतना पर विश्वास करता है। धर्म से मानवता को ही आकृष्ट बतलाता है। "साकेत" का राम ईश्वर के रूप में मानव है, मानव की तरह मानव के रूप में ईश्वर नहीं। "नूरजहाँ" महा काव्य में "भक्त" ने ऐतिहासिक मानव को नायिका का पद प्रदान किया है। क्योंकि कविता केवल कवि के लिये ही नहीं लिखी जाती, बल्कि मानव के लिये लिखी जाती है। यह भावना स्वच्छन्दतावादी कवियों में अन्तर्निहित है, जो उनकी कविताओं में विधवा, भिक्षुक, वह तोड़ती पत्थर और "पुदिय कोलंगी"[1] के रूप में प्रस्फुटित हुई है। यह भावना गाँधी के आगमन के पश्चात् गाँधीवाद के रूप में परिणत हो गयी है। गाँधीवाद को दार्शनिक शब्दावली में आध्यात्मिक मानववाद कहा गया है। सत्य और अहिंसा इसके दो मूल आधार हैं। गाँधीजी ईश्वर की और इसलिये मानवता की, नितान्त एकता में विश्वास करते हैं। वे मनुष्य की और इसलिये सभी जीवधारियों की परम आवश्यक एकता में विश्वास करते हैं।[2] गाँधीवाद रूपी मानवतावादी भावना तमिल के नामक्कल कवि रामलिंगम् पिल्लै में अधिक मुखर उठी है। तमिल के भारतीदासन् और हिन्दी के निराला में यह भावना तीव्र हैं। मानवतावाद ने तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों की प्रेरक शक्ति के रूप में काम किया है।

उपरोक्त प्रवृत्तियों के अलावा लोक साहित्य, अति वेदना, रहस्यात्मकता, अतीत प्रेम - जैसी प्रवृत्तियाँ भी स्वच्छन्दतावादी काव्य के अन्तर्गत रखी जाती हैं। हिन्दी और तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रमुख रूप से जो प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं उन्हीं का उल्लेख ऊपर किया गया है।

---

१. भारतीयार कवितायें - पृ. २११ - द्वितीय संस्करण - १९७८ अगस्त, पूंबुहार प्रसुरम्, मद्रास-१३.

२. "हरिजन" में प्रकाशित गाँधी के वक्तव्य - डॉ० नगेन्द्र द्वारा उद्धृत - आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ - पृ. ४० - पंचम संस्करण १९७१ नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली.

(आ) कलागत प्रवृत्तियाँ

सामान्य रूप से काव्य के क्षेत्र में कलापक्ष की जो विशेषतायें हैं, वे स्वच्छन्दतावादी काव्य में भी उपलब्ध होती हैं। लेकिन विशेष रूप से स्वच्छन्दतावादी काव्य में निम्नलिखित कलागत प्रवृत्तियाँ प्रमुख रूप से पायी जाती हैं। (१) काव्य के रूप, (२) भाषा व शैली, (३) मानवीकरण, (४) विशेषण विपर्यय, (५) स्वच्छन्द छन्द अथवा मुक्त छन्द।

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने महाकाव्य, खण्ड काव्य, मुक्तक काव्य की रचना की है। मुक्तक कविता ही स्वच्छन्दतावादी काव्य का विशेष रूप है। क्योंकि वैयक्तिकता प्रधान प्रगीत, और अन्तर्मुखी कविता के लिये मुक्तक ही उपयुक्त है। तमिल और हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रधान क्षेत्र मुक्तक ही है। तमिल में कथात्मक दीर्घ कविताओं की रचना विशेष रूप से की गयी है।[1] भाषा के क्षेत्र में सरल, सुबोध भाषा का प्रयोग किया गया है। हिन्दी के कवियों ने ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली का समर्थन किया। चित्र भाषा की आवश्यकता पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया। "पिय" शब्द के स्थान पर "प्रिय" शब्द का प्रयोग श्रेयस्कर समझा गया।[2] और खड़ी बोली में जिस उच्चारण संगीत के भीतर से जीवन की प्रतिष्ठा का स्वप्न देखा गया, उसे ब्रजभाषा में "नहीं" का अनुभव किया गया।[3] तमिल में इस प्रकार की कोई भाषा-समस्या नहीं उठी। मुख्यतया तमिल कवियों ने साधारण जनता की भाषा का प्रयोग किया है। युग की

---

१. उदा० भारतीदासन कृत "संजीवि मलैच्चारल्", "पुरट्चिक् कवि" इत्यादि.
२. पंत - पल्लव प्रवेश - पृ. १५ - आठवाँ संस्करण - १९७७ - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
३. निराला - गीतिका भूमिका - पृ. १८ - आठवाँ संस्करण - सं.२०३० वि. भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

माँग के अनुरूप साधारण पद, सरल शैली, सुबोध छन्दों की आवश्यकता पर जोर दी गयी।[1] ओज, प्रसाद और माधुर्य - तीनों गुण दोनों भाषाओं की रोमांटिक कविताओं में मिलते हैं। दोनों भाषाओं के कवि सरल शैली के प्रयोग में , दत्तचित्त रहे हैं।

अलंकार का अर्थ है आभूषण। "अलम्" शब्द का अर्थ है भूषण। अतः जो भूषित करे वही "अलंकार" कहलाता है। इनके प्रयोग से काव्य में सुन्दरता और रमणीयता आती है। शब्द, अर्थ, उभय जैसे परम्परागत अलंकारों का प्रयोग अपनी रुचि के अनुसार दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने किया है। हिन्दी में पाश्चात्य रोमाण्टिक प्रभाव के कारण मानवीकरण और विशेषण विपर्यय जैसे नवीन अलंकारों का प्रयोग मिलता है। तमिल क्षेत्र में मानवीकरण नाम से विशेष अलंकार का विवेचन विरले ही हुआ है। क्योंकि हिन्दी के आधुनिक कवियों ने जितना अंग्रेज़ी के रोमाण्टिक कवियों से प्रभाव ग्रहण किया है, उतना तमिल के आधुनिक कवियों ने नहीं किया। केवल भारती और कविमणि देशिक विनायकम् पिल्लै ने रोमाण्टिक कवियों के भावों एवं विचारों को ग्रहण किया है। लेकिन शैली के क्षेत्र में उनसे बहुत दूर प्रतीत होते हैं। भारतीदासन और नामक्कल कवि जैसे कवियों में पाश्चात्य की छाया बिलकुल नहीं है। ये दोनों कवि तमिल परम्परा का पालन करनेवाले थे। फिर भी मानवीकरण की प्रवृत्ति आधुनिक तमिल कवियों में पायी जाती है।

हिन्दी काव्य परम्परा में स्वच्छन्दतावादी युग के पूर्व मानवीकरण की पद्धति नहीं रही। रीति काल के देव जैसे कवियों में मानवीकरण का आभास मात्र मिलता है। एक अलग अलंकार के रूप में मानवीकरण स्वच्छन्दतावादी युग की देन है।

दौड़ती हुई सागर की लहरों में स्वच्छन्दतावादी कवि मानव के आनंद या उल्लास को आरोप करके उन्हें सचेतन बनाता है। पेड़ की छाया में "नारी

---

१. भारतीयार कवितायें - पौधाति शपथम् की भूमिका - पृ. ११३. - द्वितीय संस्करण - १९७८ - अगस्त , पूम्बुहार प्रसुरम्, मद्रास-१३.

के उदासीपन" को आरोप करके, दुख का अनुभव भी करता है। अतः प्रकृति के विभिन्न अंगों में मानवीय भावनाओं का आरोप करना "मानवीकरण" है। दो तत्वों को मिलाने से अेक का गुण दूसरे में आरोपित होने को "विशेषण विपर्यय" कहा जाता है। इसे "धर्म विपर्यय" नाम से भी अभिहित किया जाता है। यह बहुत सूक्ष्म है। इसे काव्य की भाषा को चित्रमय अेवं अर्थ व्यंजक बनाने की शक्ति है। काव्य में कलात्मकता और चित्रमय व्यंजना इसी से विकसित होती है। काव्य में संगीत की वृद्धि के लिये स्वच्छन्दतावादी कवियों ने ध्वन्यर्थ व्यंजना का भी प्रयोग किया है।

मानवीकरण, विशेषण विपर्यय और ध्वन्यर्थ व्यंजना के प्रयोग से काव्यों में चित्रमयता, ध्वनि व्यंजना और भाव व्यंजकता की वृद्धि होती है। ये तीनों क्रमशः प्रसाद, पंत और निराला के काव्य में विशेष रूप से प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इनके प्रयोग से स्वच्छन्दतावादी काव्य में अेक नवीनता और मौलिकता का उत्पादन हुआ है।

काव्य में नियमानुसार मात्रा, यति, गति और तुक आदि सिद्धान्तों का अनुकरण किया जाय तो उसे छन्द या वृत्त अथवा पिंगल की संज्ञा दी जाती है। आधुनिक हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने विशेष रूप से दो रूपों में काव्य की रचना की है। अेक गीतों के रूप में, जिनमें मात्राओं और वर्णों की समानता मिलती है। लय और गति का भी ध्यान दिया जाता है, किन्तु इसमें विविधता रहती है। उदाहरणार्थ - निराला की गीतिका। दूसरा - स्वच्छन्द या मुक्त छन्दों के रूप में। यह अेकदम स्वतंत्र, उन्मुक्त अेवं नवीन दिशा की ओर ले जाता है। इसमें लय और स्वर का ध्यान दिया जाता है। इसमें मात्राओं, वर्णों और तुकान्त का कोई नियम या प्रश्न नहीं है। कवि स्वतंत्र रूप से अपनी आकांक्षा के अनुसार पंक्तियों को बढ़ाता है या घटाता है। अतः मुक्त छन्द तो वह है जो छन्द की भूमि पर रहकर भी मुक्त है। उनमें नियम कोई नहीं। केवल प्रवाह कवित्त छन्द का सा जान पड़ता है।

कहीं कहीं अक्षर आप-ही-आप आ जाते हैं। मुक्त छन्द का सार्थक उसका प्रवाह ही है।[१]

हिन्दी के स्वच्छन्द छन्द की भाँति, आधुनिक तमिल काव्य में "चिन्दु"[२] नामक अेक स्वच्छन्द छन्द का प्रयोग मिलता है, जो लोक गीतों का अेक रूप है, व्याकरणिक बन्धनों से मुक्त है। इसमें लय, प्रवाह, स्वर पर विशेष ध्यान दिया जाता है। तीव्र वैयक्तिक अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिये चिन्दु का प्रयोग उचित समझा गया। यह जनता की शैली है।[३] इसके दो रूप होते हैं - अेक नोण्डिच्चिन्दु और दूसरा कावडि चिन्दु। भारती ने "पाँचालि शपथम्" में "नोण्डिच्चिन्दु" और राष्ट्रीय भावनाओं को व्यक्त करने के लिये कावडि चिन्दु[४] का प्रयोग किया है। अलावा चिन्दु के कण्णि, कुम्मि जैसे लोक गीतों के रूपों का भी प्रयोग मिलता है। तमिल के आधुनिक प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों ने परम्परागत छन्दों[५] का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया है। साथ ही साथ चिन्दु, कण्णि, कुम्मि जैसे लोक गीतों के रूपों को भी अपनाया है।

---

१. निराला - परिमल की भूमिका - पृ. १३ व १४. - प्रथम बार १९७८ दिसम्बर - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

२. १७-वीं शताब्दी में साधारण जनता के द्वारा गाये गये लोक गीतों को चिन्दु, कण्णि, कुम्मि कहा जाता है। कण्णि का प्रयोग साहित्य में तायुमानवर (१७०५-४२) के "पैंकिळि कण्णि" में मिलता है। यह भी लोक गीतों का अेक रूप है। इसके बाद रामलिंग स्वामी (१८२३-१८७४) चिन्दु, कण्णि, कुम्मि जैसे लोक गीत रूपों को काव्य में स्थान दिया। तदुपरान्त अण्णामलै रेड्डियार ने कावडिच्चिन्दु का सफल प्रयोग किया। इस क्षेत्र में ये सिद्धहस्त माने गये। पुनः आधुनिक युग में भारती ने इसी चिन्दु का प्रयोग नवीन ढंग से करके, इसमें नया रंग ला दिया। नवीन रूप प्रदान करने का श्रेय भारती को ही है। चिन्दु का सफल प्रयोग प्रायः भारती, भारतीदासन् और कविमणि ने किया है।

३. डॉ० मु. गोविन्दस्वामी - भारती कवित्तिरन् - पृ. ३७. - पंचम सं० १९७९ जून, पारि निलैयम्, मद्रास.

४. भारतीयार कवितायें - "अॅगळ् ताय्" (हमारी माता) - पृ. २७ द्वितीय प्रकाशन - १९७८ अगस्त - पूंबुहार प्रसुरम्, मद्रास-१३.

५. उदा० - आसिरियप्पा, कलिप्पा, वेण्पा, वृत्तप्पा आदि।

(इ) निष्कर्ष

स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का ध्यानपूर्वक अनुशीलन करने से पता चलता है कि ये मानव जीवन की समग्रता और जनता की चित्तवृत्तियों के अनुरूप अपने रूप-रंग को बदलकर आदि काल से आज तक साहित्य में अभिव्यक्त होती आ रही हैं। व्यक्तिवादी प्रवृत्ति, तीव्र अनुभूति, सजीव कल्पना, प्रेम, सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टिकोण, प्रकृति का स्वतंत्र-स्वच्छन्द आलम्बनात्मक चित्रण, विद्रोही स्वर, मानवतावादी भावना जैसी सबल प्रवृत्तियों का सुन्दर संपुजन ही आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य का रूप है। नवीन भाषा व शैली, विशेष अलंकारों एवं स्वतंत्र रूप से स्वच्छन्द छन्दों का प्रयोग किये जाने की वजह से आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य में नयी कलात्मकता, नयी दीप्ति और मौलिकता आ गयी है जो इसके पूर्व के काव्य में विरले ही मिलती है। स्वच्छन्दतावादी काव्य में अन्तर्निहित ये फूल कभी पुराने नहीं होंगे, कभी नहीं मुरझायेंगे और इन प्रवृत्तियों का तिरोभाव कभी नहीं होगा।

-०-

द्वितीय अध्याय

परिवेश

(अ) आधुनिक भारतीय साहित्य की स्वच्छन्दयुगीन परिस्थितियाँ

नव जागरण के पूर्व जो परिस्थितियाँ यूरोप में रहीं, लगभग वे ही परिस्थितियाँ उन्नीसवीं शती के अन्तिम दो दशकों के भारत में भी रहीं। यूरोप के लोगों के आगमन के पश्चात् पाश्चात्य प्रभाव के कारण सभी क्षेत्रों में नयी चेतना पैदा हुई। सन् १७१३ में तमिलनाडु के तंजाउर जिले में स्थित "तरंगम्बाडि" नामक स्थान में जर्मन लोगों के प्रयत्न के फलस्वरूप मुद्रण-कला का आविर्भाव हुआ। तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप साहित्यिक क्षेत्र में नवीन विचारों, नयी मान्यताओं का प्रतिपादन किया गया। भारतीय साहित्यकारों की अनुभूतियाँ एवं कल्पनायें बदलीं, दृष्टिकोण बदला। अतएव साहित्य की मान्यतायें भी एकदम बदल गयीं। इन्हीं परिस्थितियों में गोल्ड-स्मिथ कृत "हेरमिट" के आधार पर "एकान्तवासी योगी" (१८८६) और लार्ड लिट्टन कृत "सीक्रेट वे" का अनुसरण कर "मनोन्मणीयम्" (१८९१) काव्य-नाट्य की रचना क्रमशः हिन्दी के श्रीधर पाठक और तमिल के प्रो० सुन्दरम पिल्लै[1] के द्वारा की गयी। इन दोनों

---

१. टिप्पण अगले पृष्ठ पर देखें।

कृतियों में स्वच्छन्दवादिता का आभास, स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। साहित्यिक क्षेत्र में इस प्रकार के परिवर्तन लाने में तत्कालीन परिस्थितियाँ बहुत जोर से काम कर रही थीं।

समाज के बिना साहित्य का कोई मूल्य नहीं और साहित्य के बिना समाज का कोई महत्व नहीं है। समाज की उन्नति और अवनति राजनैतिक परिस्थितियों पर अवलंबित रहती है। स्वयं राजनैतिक परिस्थितियाँ आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विचारों से परिवर्तित होती हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि फ्रान्स की राज्य क्रान्ति के पीछे दार्शनिक विचारों का सबसे सबल हाथ रहा। भारतीय इतिहास में नवजागरण लाने में रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, गाँधीजी तथा श्रीमती बेसण्ट द्वारा निर्मित थियोसाफिकल सोसाइटी ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन सबका प्रभाव साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक है। अतः तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक परिस्थितियों को दृष्टिपात करने से समकालीन जनता की चित्त-वृत्तियों का परिचय मिलता है। क्योंकि जनता की चित्तवृत्तियों का प्रतिबिंब ही साहित्य के रूप में अवतरित होता है। यह भी निर्विवाद है कि भारत में आधुनिकता का समावेश सभी क्षेत्रों में अर्थात् राजनैतिक, साहित्यिक,

---

पिछला पृ.६४ का पाद-टिप्पणः

१. ये तिरुवनन्तपुरम (त्रिवेण्ड्रम) महाराजा कालेज में (सन् १८५५-९७) दर्शन के प्रोफेसर थे। इन्होंने तमिल साहित्यिक क्षेत्र में अनुसन्धान कार्य को आगे बढ़ाया। तमिल के इतिहास और उसकी विशेषताओं को स्पष्ट करते हुये इन्होंने कई शोध लेख अंग्रेजी और तमिल में लिखे हैं। इन्होंने अपने काव्य-नाट्य मनोन्मणीयम् में तमिल को देवता मानकर, उसकी वन्दना की है। उनका यह गीत "नीराडुम् कडलुडुत्त निलमडन्तैक्केळि लोळियुम्" आज भी तमिलनाडु में हरेक सभा का श्रीगणेश करते वक्त प्रार्थना गीत के रूप में यहीं गाया जाता है। यहाँ की प्रत्येक पाठशाला, कालेज, विश्वविद्यालय में यही प्रार्थनापरक गीत अब भी गाया जाता है। भावी तमिल साहित्य-कारों ने इनके साहित्य से अवश्य प्रेरणा ली है।

सामाजिक, धार्मिक अेवं आर्थिक क्षेत्रों में सन् १८५० के बाद ही हुआ था। अतः भारतीय इतिहास के १९-वीं शती का अन्त और २०-वीं शती का आरंभ अर्थात् १८८० से १९२० तक के काल को "स्वच्छन्दतावादी युग" नाम से विभूषित करना समीचीन लगता है।

१. <u>राजनैतिक परिस्थितियाँ</u>

इस आलोच्य काल में अंतर्राष्ट्रीय धरातल पर ब्रिटिश का हाथ विशेष रूप से, व्यापारिक अेवं राजनैतिक क्षेत्रोंमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, प्रबल रहा। यहाँ तक कहा गया कि ब्रिटिश राज्य में सूर्य कभी अस्त नहीं होगा। इसका अपवाद भारत नहीं रहा। सन् १८५० तक आते-आते ब्रिटिश सत्ता की नींव भारत में सुदृढ़ बन गयी। लार्ड डलहौसी (१८४८-५६) के प्रयत्न से भारत के प्रशासन में अेकसूत्रता आयी। लेकिन फिर भी उनकी "लाप्स" नीति से उत्तर भारत के विशेषकर सतारा, झाँसी, नागपुर की जनता असंतुष्ट हुई। इस प्रकार कई दृष्टियों से असंतुष्ट उत्तर भारत की जनता ने सन् १८५७ में ब्रिटिश के विरुद्ध क्रान्ति मचायी। अतः सन् १८५८ अगस्त में शासन की बागडोर ईस्ट इण्डिया कंपनी से सीधे ब्रिटिश पार्लियमेन्ट के हाथों में चली गयी। महारानी विक्टोरिया ने यह घोषणा की कि भारतीय जनता का कल्याण ही ब्रिटिश शासन का ध्येय होगा और उनका धार्मिक, सामाजिक स्वतंत्रता दी जायगी। लेकिन यह घोषणा केवल घोषणा मात्र रही। इसका पालन नहीं किया गया। लोगों का विश्वास कम होता गया। उनकी आशंका थी कि रेल, डाक, विज्ञान की प्रगति के द्वारा भारतीय संस्कृति का विनाश होने की संभावना है। चूँकि परम्परागत विचारों में पले भारतीय समाज ने विज्ञान की प्रगति पर विश्वास नहीं किया, अतअेव ब्रिटिश सत्ता पर भी विश्वास नहीं किया। जनता पुनः जागृत हुई। सन् १८८५ में बम्बई में राष्ट्रीय नवजागरण के लिये इण्डियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हुई। सन् १९०५ में तत्कालीन वाइसराय लार्ड कर्जन ने बंगाल को दो भागों में विभाजित कर बंग-भंग की घोषणा की। इससे जनता

के बीच ब्रिटिश सत्ता के प्रति विरोध व विद्रोह की ज्वाला धधक उठी। कांग्रेस ने कर्जन की इस नीति का कठोर विरोध किया। देश भर स्वदेशी आन्दोलन का आरम्भ हुआ और "वन्देमातरम्" की गूंज सर्वत्र उठने लगी। सन् १९०४-५ में रूसी-जापान युद्ध में जापान की विजय के कारण भारतीय जनता के बीच नयी स्फूर्ति आ गयी। सन् १९०५ में कलकत्ता के अधिवेशन में कांग्रेस "गरम अेवं नरम" दोदलों में विभक्त हो गयी। क्रमशः बाल गंगाधर तिलक और गोपालकृष्ण गोखले क्रमशः इन दलों के नेता चुने गये। अेक, कठोर, अति ध्वंस, हिंसात्मक प्रवृत्तियों पर विश्वास करता था; दूसरा राजनीति में, स्वतंत्रताप्राप्ति में नम्र व्यवहार पर जोर देता था। तिलक ने "स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार" घोषित किया। इधर सन् १९०६ में बंग-भंग की वजह से "मुस्लिम लीग" की स्थापना हुई। सन् १९१२ में भारत की राजधानी कलकत्ता से दिल्ली चली गयी। लार्ड हार्डिंग्स द्वितीय १९१०-१६ तक भारत के प्रतिनिधि रहे। भारतीय जनता के प्रति इनकी विशेष सहानुभूति थी। इनके काल में भारत की राजनीति में शान्ति का वातावरण छाया हुआ था। इनके प्रयत्न के फलस्वरूप पुनः बंगाल संगठित हुआ। सन् १९१६ में मदन मोहन मालवीय के द्वारा काशी हिन्दु विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। यह कार्य भारतीय जनता की जागृति का प्रतीक समझा जा सकता है। "मुस्लिम लीग" की स्थापना के पश्चात् कांग्रेस और लीग के बीच की खाई बढ़ती गयी। लेकिन राजनैतिक हलचलों के कारण इन दोनों का सम्मिलित अधिवेशन सन् १९१६ में लखनऊ में हुआ। १९१७ में अेनिबेसण्ट के द्वारा प्रवर्तित होम रूल आन्दोलन, तिलक के द्वारा चलाया गया आन्दोलन जिसको महात्मा गांधीजी ने अधिक व्यापक रूप दे दिया था तथा चंपारन सत्याग्रह - इन तीनों से राजनैतिक जागृति तूल पकड़ने लगी। सन् १९१८ में प्रथम विश्व युद्ध समाप्त हुआ। ब्रिटिश सरकार की विजय हुई। लेकिन उन्होंने भारतीय जनता को युद्ध के पूर्व जो वचन दिया था उसे निभाने में वे असमर्थ रहे।

सन् १९१९ में "माण्टेक्यु चेम्स फोर्ड सुधार पत्र" प्रस्तुत किया गया जिसके अनुसार भारतीयों को नाम के वास्ते कुछ सुविधायें दी गयीं। कांग्रेस ने इनका निराकरण कर दिया और देश भर में विद्रोह की ज्वाला फैल गयी। क्रान्तिकारियों को दमन करने के लिये "रौलट अेक्ट" पारित किया गया। गांधीजी ने इसका विरोध किया और जनता के बीच असन्तोष की भावना फैलती गयी। इसी वर्ष गांधी जी के नेतृत्व में जनता ने क्रान्ति मचायी। सन् १९१९ अप्रैल की पंजाब की जालियांवाला बाग घटना ने इस क्रान्ति को और भी भयंकर रूप दे दिया। सन् १९२० में कलकत्ता कांग्रेस में ब्रिटिशों के विरुद्ध आवाज़ बुलन्द हुई और महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन का प्रस्ताव पारित किया; तदनुसार स्कूल, कालेज अेवं दफ्तरों का त्याग, सरकारी उपाधियों का बहिष्कार, चरखे, खद्दर का प्रयोग आदि पर ज़ोर दिया गया। इस आन्दोलन में मुस्लिम लीग का सहयोग उल्लेखनीय विषय है। असहयोग आन्दोलन के इसी वर्ष (१९२०) तिलक का निधन हो गया। इनकी मृत्यु के पश्चात् भारत की राजनीति की बागडोर संपूर्ण रूप से गांधीजी के करों में आयी। अतः १९२० से गांधीजी की मृत्यु तक भारतीय राजनीति का इतिहास, स्वयं गांधी का इतिहास माना जा सकता है।

सन् १९२० के पश्चात्, खिलाफत आन्दोलन और सत्याग्रह अेवं असहयोग (१९२१); बारदोली सत्याग्रह (१९२३); झण्डा सत्याग्रह, नागपुर (१९२५); साइमन कमीशन (१९२९) आदि प्रमुख राजनैतिक घटनायें मानी जाती हैं। सन् १९२८ की कलकत्ता कांग्रेस अधिवेशन में राष्ट्र ने निर्णय किया कि हमारा लक्ष्य स्वाधीनता रहेगा। सन् १९३० को लाहौर कांग्रेस में राष्ट्र ने घोषणा की कि अपना लक्ष्य पूर्ण स्वाधीनता रहेगा। इस अधिवेशन के सभापति जवाहरलाल नेहरू थे। इसी वर्ष गांधीजी ने नमक कानून तोड़ने के लिये दंडी यात्रा की, जिसका प्रधान लक्ष्य स्वाधीनता रहा। इससे गांधीजी की

गिरफ़्तार किया गया और जनता का विद्रोह प्रबल हो उठा। सन् १९३१ में विद्रोही भगतसिंह और उनके दो साथियों को फाँसी देना, सन् १९३२ में सरकार द्वारा कांग्रेस को गैर कानूनी घोषित करना - जैसी घटनायें लोगों को अति क्रान्ति की ओर ले चलीं। कांग्रेस मंत्री मण्डलों की स्थापना और १९३९ में उनका पद-त्याग आलोच्यकालीन प्रमुख राजनैतिक घटनायें हैं।

१७ अक्टूबर १९४० का सत्याग्रह भाषण स्वातंत्र्य की माँग के रूप में आरम्भ हुआ। अगस्त १९४२ को कांग्रेस ने "भारत छोड़ो" की विद्रोहात्मक आवाज़ उठायी।

इस प्रकार भारतीय साहित्य की स्वच्छन्दतावादी युग की राजनैतिक परिस्थितियाँ प्रमुख रूप से विद्रोहात्मक रहीं। इसी स्वच्छन्द विद्रोह की भावनाओं और मानवतावादी गाँधी के अटल प्रयत्न से १५ अगस्त १९४७ को, कई शतियों से पराधीनता की जंजीरों में जकड़े हुये हमारे देश को स्वतंत्रता मिली।

२. सामाजिक परिस्थितियाँ

भारत में आधुनिकता का प्रारंभ अंग्रेजी शासन के संपर्क से हुआ था। भारतीय समाज में सुधारवादी भावनायें पनपने लगीं। राजनैतिक दृष्टि से विरोध करने पर भी हम सामाजिक, साहित्यिक क्षेत्रों में अंग्रेजों का ही अनुकरण कर रहे थे। सामाजिक क्षेत्र में अंधविश्वास, बहुविवाह, बालविवाह, नारी के प्रति निम्न धारणा, अनपढ़ों की समस्या - तत्कालीन उल्लेखनीय समस्यायें रहीं। समाज की इन कुरीतियों और परम्परागत मान्यताओं को तोड़ने के लिये नयी-नयी संस्थाओं की स्थापना की गयी। पाश्चात्य शिक्षा के कारण व्यक्तिवाद, उदारतावाद, मानवतावाद की भावनायें पल्लवित होने लगीं। अंग्रेज़ी शिक्षा का प्रादुर्भाव लार्ड मेकाले के परामर्श पर विलियम बेंटिंग के प्रयत्न से सन् १८३५ से हुआ। उसके पूर्व संस्कृत, अरबी तथा प्रान्तीय भाषाओं

के अध्यापन की ही व्यवस्था थी। सन् १८५७-८७ तक कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लाहौर, इलाहाबाद विश्वविद्यालयों की स्थापना, इंग्लैण्ड के विश्वविद्यालयों के अनुकरण पर की गयी। भारतीय विद्यार्थियों को विज्ञान, इतिहास, गणित, अंग्रेजी भाषा और साहित्य के अध्ययन की सुविधा प्राप्त हुई। मेकाले का विचार था कि अंग्रेजी के द्वारा ही भारत पर ब्रिटिश सत्ता की नींव सुदृढ़ बनेगी। पाश्चात्य इतिहास, साहित्य, राजनीति,जैसे विषयों का अध्ययन करने से अपने देश की यथार्थ स्थिति पर नवयुवक सचेत हो गये। जिस अंग्रेजी की सहायता से मेकाले भारत पर ब्रिटिश सत्ता को मजबूत कराना चाहते थे, उसी से तत्कालीन युवकों को नयी चेतना व प्रेरणा प्राप्त हुई। अतएव अपने देश की स्थितियों को सुधारने में वे उन्मुख हुये।

ब्रह्म, प्रार्थना और आर्य: समाजों की सेवायें

राजाराम मोहनराय भारत के प्राचीन विचारों के कट्टर पक्षपाती रहे। लेकिन अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव इन पर अवश्य पड़ा। तत्कालीन परिस्थितियों से खिन्न होकर उन्होंने जनता का पुनरुद्धार करना चाहा। इसलिये इन्होंने अगस्त २०, १८२८ को कलकत्ते में ब्रह्म समाज की स्थापना की और मूर्तिपूजा का खण्डन कर परमात्मा की एकता पर जोर दिया। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से पाश्चात्य का रंग इस पर अवश्य रहा। इसके उपदेशों का प्रचार "तत्व बोधिनी" नामक पत्रिका के द्वारा किया गया। कालान्तर में स्वयं ब्रह्म समाजी बनकर केशवचन्द्र सेन ने स्त्रियों को भी इसमें प्रवेश दिया। बाल विवाह, बहुपत्नी विवाह का विरोध करके विधवा विवाह को नियमानुसार वैधानिक अनुमति दिलवायी। इस समाज के सिद्धान्त ईसाई-धर्म के अधिक निकट रहे।

इसी प्रकार प्रार्थना समाज की स्थापना महाराष्ट्र में महादेव गोविन्द रानडे के द्वारा की गयी। जाति-पाँति का खंडन, विधवा विवाह का समर्थन,

अन्तर्जातीय विवाह आदि इस समाज के प्रधान लक्ष्य रहे। इसके उपरान्त दयानन्द सरस्वती (१८२४-८३) अेक स्वच्छन्द समाज सुधारक के रूप में तत्कालीन समाज के सम्मुख आये। सन् १८७५ में बम्बई में इन्होंने आर्य समाज की स्थापना की। प्राचीन भारतीय परम्परा पर इनका अटल विश्वास था। आर्य-समाज में जाति-पाँति की भेद-भावना को भूलकर सभी प्रकार के लोग आ सकते थे। जो लोग छुआछूत, धार्मिक कट्टरता आदि के शिकार बने थे वे इसमें शामिल हो सकते थे। सभी लोगों को शिक्षाका अधिकार प्राप्त था; हवन, वेद पाठ आदि की स्वतंत्रता थी। इस कारण साधारण लोग आर्य समाज की ओर अत्यन्त आकृष्ट हुये। यह अेक प्रकार से तत्कालीन समाज के लिये स्वच्छन्द विचारधारा प्रतीत हुई। देश भर में इसका प्रचार अेवं प्रसार खूब हुआ। इसने जाति-भेद. वर्ण भेद, मूर्ति पूजा का विरोध और बाल-विवाह का खण्डन किया। इसने दलित, पीडित, धार्मिक रूप से बहिष्कृत और परिस्थितिवश अन्य धर्म में गये हुये व्यक्तियों को पुनः हिन्दु धर्म में प्रवेश दिया। विधवा अेवं अनाथ आश्रमों की स्थापना करके इसने अपनी मानवतावादी भावना का परिचय दिया। शैक्षिक क्षेत्र में भारतीय ढंग की वैदिक शिक्षा प्रदान करने के लिये आर्य समाज ने गुरुकुलों की स्थापना की। सामाजिक क्षेत्र में आर्य समाज की सेवायें संपूर्ण रूप से स्वच्छन्द प्रवृत्ति को सूचित करती हैं। इस प्रकार आर्य समाज भारत के लिये सबसे बड़ा वरदान सिद्ध हुआ।

१. धार्मिक क्षेत्र

जिस प्रकार भारतीय लोगों के बीच, नव जागरण लाने में ब्रह्म, प्रार्थना, आर्य समाजों ने सेवा कीं उसी प्रकार धार्मिक अर्थात् आध्यात्मिक क्षेत्र में अेन्निबेसण्ट, रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण रहा। थियोसाफिकल सोसाइटी का जन्म न्यूयार्क में १८७५ में हुआ था। भारत में इसकी स्थापना, अेन्निबेसण्ट के द्वारा हुई। इसका प्रधान केन्द्र मद्रास में स्थित "अडयार" है। बेसंट प्रसिद्ध भाषणकर्ता अेवं संगाठिका थीं। कई पत्र-पत्रिकाओं

का संपादन भी इन्होंने किया था और "न्यू इण्डिया" नामक अेक पत्रिका भी चलायी। हिन्दु धर्म के सिद्धान्तों को भारत की अनेक भाषाओं में अनुवाद करके, उसकी महत्ता अेवं श्रेष्ठता को जनता के सम्मुख उन्होंने प्रस्तुत किया। वे भारतीय परम्परा की प्रेमिका रहीं। उनकी सोसाइटी का लक्ष्य प्राचीन धर्मों का पुनरुद्धार अेवं पोषण था। दक्षिण में इसकी सेवायें उल्लेखनीय रहीं।

रामकृष्ण परमहंस ने (१८३६-८६) पाण्डित्य के स्थान पर सच्ची अनुभूति और साधना की शक्ति पर जोर दिया। साधना के माध्यम से आत्मानुभूति प्राप्त कर ईश्वर से साक्षात्कार करने का उन्होंने उपदेश दिया और सभी धर्मों के प्रति उदारता दिखाकर अपने मानवतावादी दृष्टिकोण को स्पष्ट किया। कठोरता के स्थान पर कोमलता, उदारता; बुद्धि के स्थान पर अनुभूति को, तर्क की अपेक्षा विश्वास को श्रेष्ठ बताकर अपनी आध्यात्मिक क्रान्ति का उन्होंने परिचय दिया। रामकृष्ण परमहंस के सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप प्रदान करने का श्रेय स्वामी विवेकानन्द (१८६३-१९०२) को है। हिन्दू समाज में स्थित परम्परागत रूढ़ियों को तोड़कर, उसे नयी दिशा की ओर वे ले जाना चाहते थे। इन्होंने भी कर्मठता और साधना पर बल दिया। सन् १८९३ में शिकागो में अंतर्राष्ट्रीय सर्वधर्म सम्मेलन में भाग लेकर भारत की संस्कृति, सभ्यता, प्राचीनता और हिन्दू धर्म के महत्व को स्पष्ट किया। वेदान्त, धर्म, इतिहास का विवेचन स्वच्छन्द रूप से करके उनके महत्व को उन्होंने प्रमाणित किया और सभी धर्मों को सम्मानित कर अपनी धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया। इस प्रकार इन्होंने आध्यात्मिक अेवं सांस्कृतिक क्रान्ति मचाकर भारतीय नवजागरण में नयी स्फूर्ति ला दी। आधुनिक तमिल[1]

---

१. वर्णिमणि - मलरुम् मालैयुम् (फूल और माला) - पृ. १२९. कविता संख्या-७८, विवेकानन्द - पंद्रहवाँ संस्करण १९७७ - पारि निलैयम, मद्रास.

और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने इनके कवि हृदय से अवश्य प्रभाव ग्रहण किया है। इसलिये स्वामी विवेकानन्द को "भारतीय स्वच्छन्दतावाद का प्राण-स्रोत" और "हिन्दी स्वच्छन्दतावाद का मूल प्रवर्तक" भी माना गया है।[1] अन्य दार्शनिकों में अरविन्द का स्थान महत्वपूर्ण है। वे स्वयं, कवि, विद्वान एवं महान योगी रहे। मानवतावादी पक्ष को लेकर मानव का उद्धार करना वे अपना प्रधान लक्ष्य समझते थे। २०-वीं शताब्दी के महान दार्शनिकों में इनकी गणना की गयी है।

आर्थिक परिस्थितियाँ

आर्थिक दृष्टि से प्रस्तुत काल असफल एवं निराशा पूर्ण रहा। ब्रिटिश सत्ता की शोषण-नीति क्रमिक रूप से चलती रही। कृषि प्रधान इस देश की उन्नति के लिये कोई विशेष कार्यवाही प्रस्तुत नहीं की गयी। यहाँ के कच्चे मालों को ले जाने की प्रवृत्ति जारी रही। किसान की स्थिति दयनीय थी। नमक-कर, बेकारी आदि कारणों से भारत की आर्थिक परिस्थिति सदा उलझती रही। समाज के आर्थिक संकट को तत्कालीन हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवि[2] रामनरेश त्रिपाठी ने इस प्रकार व्यक्त किया है --

अन्न नहीं है, वस्त्र नहीं है, उद्यम कौन उपाय
वन भी नहीं और टिकने को, कहाँ जायें, क्या खायें।
लाखों नहीं, करोड़ों की है, सुख से हुई न भेंट,
मिलता नहीं जन्म भर, उनको खाने को भर-पेट।

तमिल कवि भारती ने भी "तनि ओरुवनुक्कु उणविल्लै येनिल जगत्तिनै अळित्तिडुवोम्"[3] अर्थात् "प्रत्येक मनुष्य को अगर खाना नहीं मिले तो इस जगत को नाश कर देंगे" कहकर तत्कालीन आर्थिक परिस्थिति की ओर संकेत किया है।

---

१. डॉ० नरेन्द्र देव वर्मा - हिन्दी स्वच्छन्दतावाद पुनर्मूल्यांकन - पृ. २७ व १५. साथी प्रकाशन, सागर - १९६८.
२. रामनरेश त्रिपाठी - मिलन (रचना काल १९१७).
३. भारतीयार कवितायें - "भारतीय समाज" कविता संख्या १७. पृ.४०-४१. पुंबुहार प्रसुरम - द्वितीय संस्करण - अगस्त १९७८ - मद्रास-१३.

५. सामान्य विश्लेषण

१. पाश्चात्य प्रभाव के कारण आधुनिकता का समावेश हुआ।

२. राजनैतिक क्षेत्र में विद्रोहात्मक नीति प्रधान रही।

३. स्वदेश-प्रेम अर्थात् राष्ट्र-प्रेम ने ब्रिटिश सत्ता का घोर विरोध किया।

४. शैक्षिक क्षेत्र का खूब विकास हुआ। अंग्रेजी का अध्ययन अेवं अध्यापन होने लगा। विश्व विद्यालयों की स्थापना की गयी।

५. समाज सुधारक विभिन्न प्रकार के क्रान्तिकारी सुधारों से समाज को स्वच्छन्दता की ओर ले चले।

६. दार्शनिकों ने प्राचीन भारत के आध्यात्मिक, सांस्कृतिक महत्व को स्पष्ट करके नवयुवकों के बीच अतीत-प्रेम को जगाया।

७. आर्थिक परिस्थितियाँ बहुत ही करुण रहीं।

८. परम्परागत प्रवृत्तियों के स्थान पर स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को महत्व दिया जाने लगा।

९. "मानव की सेवा ही ईश्वर की सेवा" मानी गयी। मानवतावादी भावना प्रमुख प्रवृत्ति बन गयी। तत्कालीन स्वच्छन्दतावादी कवि को इस प्रकार अेक नया मोड़ मिला।

१०. विभिन्न नवीन स्वच्छन्द, परिष्कृत भावनायें भारतीय नव जागरण में काम करने लगीं।

(आ) तमिलनाडु की विभिन्न परिस्थितियाँ

राजनैतिक परिस्थितियाँ - अेक अैतिहासिक आलोक

आलोच्यकालीन तमिलनाडु की राजनैतिक परिस्थितियों को आँकने के लिये उन्नीसवीं शती के प्रारंभ से गुजरना पड़ता है। उस समय तमिलनाडु को "मद्रास" ही कहा करते थे। सामान्य अेवं अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तमिलनाडु के राजनैतिक इतिहास को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(I) ईस्ट इण्डिया कंपनी द्वारा प्रशासित (१८०१-१८५७)

(II) ब्रिटिश पार्लिमेन्ट द्वारा प्रशासित (१८५८-१९४७)

<u>तमिल नाडु और ईस्ट इण्डिया कंपनी : सन् १८०१-१८५७</u>

अठारहवीं शताब्दी का अन्त तमिलनाडु के राजनैतिक क्षेत्र में अेक विशेष बिन्दु अथवा अेक युग का अन्त माना जा सकता है। क्योंकि सन् १८०१ में ब्रिटिश के व्यापारिक प्रतिनिधियों ने अेकत्रित होकर, दक्षिण के अेक बड़े भू-भाग को कमीशन के रूप में अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार समस्त तमिलनाडु के भू-भाग तथा तेलुगु और मलबार के कुछ जिलों को भी सम्मिलित करके "मद्रास प्रेसिडेन्सी" नाम से पुकारने लगे। गवर्नर अेक कौन्सिल द्वारा उसका प्रशासन चलाता था। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम वर्ष में मद्रास प्रान्त का संगठन हुआ। इस परिवर्तित परिस्थिति ने परम्परा, राजनीति, प्रशासन तथा समाज में अेकदम परिवर्तन खड़ा कर दिया और यह परिवर्तन अेक प्रकार से अेक विशेष युग को निर्धारित करता है।[१] ३० अगस्त, १८०३ को विलियम कारवेंडिस बेन्टिक मद्रास के गवर्नर नियुक्त किये गये। ये मानवतावादी थे। मद्रास को केन्द्र बनाकर तत्कालीन भारतीय समाज में स्थित कुरीतियों को दूरकर वे सामाजिक सुधार लाना चाहते थे। इसी कारण जब वे भविष्य में भारत के गवर्नर जनरल बने तब सती प्रथा को बन्द कराया और अंग्रेजी के माध्यम से यूरोप में प्रचलित शिक्षा पद्धति भी चलायी। तामस मन्रो ने (१८२०-२७) आर्थिक क्षेत्र में जिस नवीन पद्धति को अपनाया वह उस समय के लिये बुरी प्रतीत हुई, तो भी भविष्य के लिये लाभदायक सिद्ध हुई। इनके प्रयत्न के फलस्वरूप मद्रास के प्रशासनीय कार्मों में सुधार का आरंभ हुआ। सदा वे भारतीयों से सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने का सुझाव अंग्रेजों को दिया करते थे और इनमें प्रचलित अंधविश्वास और रूढ़िगत

---

१. The change was epoch-making for it bade goodbye to many a tradition, political, administrative and social. Page.194. Dr. N. Subramaniyan - History of Tamil Nadu, 1565-1956 A.D. (1977) Koodal Publishers, Madurai-1.

कुरीतियों को दूर करना चाहते थे। मद्रास के लिये इनकी सेवायें उल्लेखनीय रहीं। अतः मद्रास के लोग इन्हें "लोगों के पिता" कहा करते थे।

सन् १८२७ से १८५७ तक ईस्ट इण्डिया कंपनी समस्त भारत के लिये जो कार्यान्वित करती थी, वही मद्रास में भी लागू होती गयी। अन्य प्रान्तों की तरह यहाँ भी केन्द्र सत्ता की प्रधानता रही। पाश्चात्य शिक्षा का प्रचलन, सती और गुलामी प्रथाओं को बंद करने का कार्य आदि लार्ड डलहौसी (१८४८-५६) के द्वारा मद्रास में भी संपन्न हुआ। उन्होंने रेल्वे, डाक व तार का विभाग खोला और मद्रास विश्व विद्यालय की स्थापना की। इस प्रकार मद्रास भारत के अन्य प्रान्तों के समान स्वयं बदलगया और इसके लिये विशेष रूप से विधानीय या प्रशासनीय नियम नहीं बनाया गया। डलहौसी की "लाप्स नीति" के कारण तमिलनाडु के तंजाउर और आरकाडु[1] के शासक अपने स्वत्व खो बैठे और वे राज्य ब्रिटिश भारत के अन्तर्गत सम्मिलित किये गये।

सन् १८५७ में भारत में प्रथम स्वतंत्रता का संग्राम हुआ। उत्तर भारत के लिये यह क्रान्ति महत्वपूर्ण रही। लेकिन दक्षिण के लिये, विशेषकर तमिलनाडु के लिये इस क्रान्ति का कोई विशेष असर नहीं रहा। अतः ऐतिहासिक दृष्टि से इसको "भारतीय प्रथम स्वतन्त्रता का संग्राम" उचित नहीं समझा गया।[2] जहाँ तक मद्रास का सम्बन्ध है, वहाँ कोई भी दुर्घटना नहीं घटी, जो गंगा की घाटियों में घटित हुई थी। इतना तो कहा जा सकता है कि उस समय क्रान्ति को दमन करने के लिये मद्रास से सैनिक बंगाल भेजे जा रहे थे।

(ii) <u>तमिलनाडु और ब्रिटिश सत्ता</u> (१८५८-१९४७)

सन् १८५८ अगस्त में ब्रिटिश पार्लिमेन्ट ने ईस्ट इण्डिया कंपनी से भारत के प्रशासनीय काम को अपने हाथों में ले लिया। तब से १९४७ तक मद्रास की

---

१. तंजाउर और आरकाडु तमिलनाडु के दो जिले हैं। तंजाउर प्राचीन तमिल संस्कृति और सभ्यता के लिये प्रसिद्ध है। १५-९-१९८१ दिनांक को यहाँ तमिल विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है। आर्काडु अब उत्तर आरकाडु और दक्षिण आरकाडु नामक दो जिले बन गये हैं।

२. It was a misnomer to have called it the Indian Mutiny. P.204. Dr. N. Subramanian, History of Tamilnadu - 1565-1956 A.D. (1977) - Koodal Publishers, Madurai-1.

राजनैतिक परिस्थितियाँ वे ही रहीं, जो समग्र भारत की थीं। सन् १८८५ में बम्बई में संस्थापित अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस महासभा में तमिलनाडु के लोगों ने भी भाग लिया था। दिसम्बर १८८७ को तृतीय भारतीय कांग्रेस सम्मेलन मद्रास में संपन्न हुआ। इससे मद्रास की जनता राष्ट्रीयता के रास्ते में आने लगी।

बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में दो प्रमुख घटनाओं से तमिलनाडु बहुत ही प्रभावित हुआ। ये दोनों घटनायें मद्रास में नहीं घटित हुई थी। उनमें अेक थी बंग-भंग (१९०५) जिससे समग्र भारत डाँवाँडोल हो गया और तमिलनाडु के लोग भी कर्जन की इस नीति का घोर विरोध किया। अंग्रेजी और तमिल में प्रकाशित विविध लेखों में अंग्रेजी सरकार और कर्जन की नीति पर कटु व्यंग्य अंकित हुये। उन लोगों में सरकार की नीतियों की कटु आलोचना भी की गयी। दूसरी घटना थी १९०४-५ का रूसो-जापान युद्ध जिसमें छोटे राज्य जापान ने विशाल साम्राज्य रूस को जीत लिया। जापान की प्रशंसा करते हुये, उसकी जीत पर उत्सव भी मनाया गया। इस पर निबन्ध और कवितायें भी लिखी गयीं। तदुपरान्त १९०९ नवम्बर में अहमदाबाद में लार्ड मिण्टो और उनकी पत्नी की खून करने का जो प्रयत्न किया गया उससे तमिलनाडु के आतंकवादियों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। सन् १९०७-१९१२ के बीच विद्रोह की भयंकर ज्वाला धधक उठी। इन आतंकवादी क्रान्तिकारियों में वी.वी.सुब्रमण्य अय्यर, नीलकण्ठ ब्रह्मचारी, कवि सुब्रमण्य भारती, सुब्रमण्य शिवा, स्वदेशी पद्मनाभ अय्यंगार का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इसी बीच १९०८ में क्रान्तिकारी कवि भारती फ्रेंच-अधीन पाँडिच्चेरी भाग गये। वीवी. सुब्रह्मण्य अय्यर, सुब्रमण्य शिवा, नीलकण्ठ ब्रह्मचारी आदि पांडिच्चेरी में रहकर विद्रोह का कार्य करने लगे। सन् १९११ नवम्बर में वाँचि अय्यर ने "मणियाच्चि" नामक स्थान पर तिरुनेलवेलि जिले के जिलाधीश व न्यायाधीश

"अेश" को गोली चलाकर मार डाला।[1] तदुपरान्त स्वयं खूनी ने आत्महत्या कर ली। इस खून के पीछे आतंकवादियों का प्रभाव ही रहा है। यहाँ विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि उपरोक्त सभी आतंकवादी ब्राह्मण थे। अतः ब्रिटिश सरकार को यह सन्देह उत्पन्न हो गया कि ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध ब्राह्मणों का सबसे बड़ा हाथ है।

बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक में भारत के अन्य प्रान्तों के समान मद्रास ने भी भारत के राजनैतिक कार्यों में महत्वपूर्ण योगदान दिया। यहाँ भी कांग्रेस के गरम अेवं नरम दलों का काम क्रमिक रूप से चलता रहा। इस काल में मद्रास बेसण्ट द्वारा संचालित होम रूल आन्दोलन का केन्द्र रहा। मद्रास ने प्रथम विश्व युद्ध (१९१४-१८) में अंग्रेजों का साथ दिया। सन् १९१९ में त्यागराज चेट्टी और टी.अेम. नायर के द्वारा ब्राह्मणेतर आन्दोलन[2] चलाया गया। यह आन्दोलन सामाजिक होते हुये भी राजनैतिक क्षेत्र में भी हलचल मचाने में समर्थ रहा। इस आन्दोलन के कार्यकर्ता ब्रिटिश शासन को सहयोग दिया करते थे, ब्राह्मणों के विरुद्ध नारा करते थे और अल्प संख्यक वर्गों को वैधानिक रूप से संरक्षण चाहते थे।

---

१. In 1911 District Magistrate 'Ashe' of Tirunelveli was murdered (shot dead) at Maniyachi by Vanchi Iyer. This was the only instance of assassination committed by Tamil terrorist nationalists. The murderer committed suicide. - P.238. Dr. N. Subramanian - History of Tamil Nadu 1977 - Koodal Publishers, Madurai-625001.

२. इसी प्रकार ब्राह्मणों के विरुद्ध द्राविड आन्दोलन भी चलाया गया। इसके नेता इ.वी. रामस्वामी नायक्कर थे जो पीछे "पेरियार" नाम से तमिलनाडु में विख्यात हुये। इनके मरणोपरान्त भी यह आन्दोलन यहाँ आज भी चल रहा है।

सन् १९१९ को पूरे तमिलनाडु में चुनाव का आयोजन हुआ। कांग्रेस ने मॉटफोर्ड सुधारों की वजह से चुनाव में भाग लेना मना कर दिया। अतः आसानी से जस्टिस दल[1] की विजय हुई। कड्लूर के सुब्बुरायलु रेड्डियार सन् १९२० में मद्रास के प्रथम मुख्य मंत्री बने। १९२१-३६ तक तमिलनाडु के राजनैतिक दृश्य में तेलुगु लोगों का आधिपत्य रहा। इस समय डॉ० सुब्बुरायन के सिवा मंत्री परिषद के सभी सदस्य तेलुगु के रहे। तमिलनाडु में कांग्रेस ने प्रान्तीयता और राष्ट्रीयता के क्षेत्र में इस प्रकार अपना रोल अदा किया। सन् १९३१ के सत्याग्रह आन्दोलन में सी. राजगोपालाचारी मद्रास में वही काम कर रहे थे, जो गांधीजी उत्तर में कर रहे थे। सन् १९३६ के चुनाव में कांग्रेस को बहुमत मिला और सी. राजगोपालाचारी ने, जो भविष्य में राजाजी नाम से प्रख्यात हुये, १४ जुलाई १९३७ को मंत्री परिषद का संगठन किया और मुख्य मंत्री बने। उनकी मंत्री परिषद को प्रशासनीय एवं लोक कल्याण की दृष्टि से बहुत ही प्रसिद्धि मिली। प्रथम बार राजाजी ने वांछनीय रूप से स्कूलों में हिन्दी पढ़ाने का प्रबन्ध किया। इ.वी. रामस्वामी नायकर ने इसका विरोध किया, अतएव वे कैद किये गये। शराब-बंदी राजाजी का सिद्धान्त रही। भारतीयों के सुझाव के बिना भारत को द्वितीय महायुद्ध में शामिल किये जाने के कारण सन् १९३९ में राजाजी की मंत्री परिषद ने इस्तीफ़ा दे दी। अतः युद्ध के समय १९३९ से १९४६ मार्च तक गवर्नरों के निर्देशन में यहाँ का प्रशासनीय काम चलता रहा। १९४६ के चुनाव में पुनः कांग्रेस की जीत हुई। १९४६ अप्रैल में टी.एम. प्रकाशम् के नेतृत्व में मंत्री परिषद का संगठन हुआ। १९४७ अप्रैल में ओ.पी. रामस्वामी रेड्डियार मुख्य मंत्री बने

---

१. सन् १९१६ नवम्बर २० वीं तारीख को डॉ० टी.एम. नायर और त्यागराज चेट्टी दोनों ने मद्रास के विक्टोरिया पब्लिक हॉल में दक्षिण भारतीय लोक संघ (साउथ इण्डियन पीपल्स असोसियेशन) की स्थापना की, जो आगे चलकर जस्टिस दल (जस्टिस पार्टी) के रूप में पुष्पित हुआ। इसका प्रधान उद्देश्य ब्राह्मणों के विरुद्ध घोषणा और ब्रिटिश के पक्ष में रहना।
(Anti-Brahminism and Pro-British)

और १९४९ अप्रैल तक इनकी मंत्री परिषद कायम रही।

१५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ और २६ जनवरी १९५० से आज तक प्रजातंत्र शासन क्रमिक रूप से चलता आ रहा है।

(ख) तमिलनाडु का सामाजिक-पक्ष : जातीयता का संघर्ष

तमिलनाडु का समाज सदा राजनीति से संबद्ध रहता आया है। असल में सामाजिक स्थितियों के अनुरूप राजनीति के सिद्धान्त बदला करते हैं। तमिल साहित्य के संघम युग से लेकर आज तक वहाँ की राजनीति में तमिल भाषा एवं तमिल साहित्य की परम्परा प्रमुख स्थान रखती आ रही है। अतएव बिना तमिलत्व के न तमिलनाडु का समाज संभव है न कोई राजनैतिक सिद्धान्त। अतः तमिल भाषा व साहित्य, समाज और राजनीति यहाँ अन्योन्याश्रित समझा जा सकता है। उन्नीसवीं शती के अन्तिम दशक और बीसवीं शती के प्रारंभ के तमिलनाडु की सामाजिक स्थिति को समझने के लिये "ब्राह्मण-ब्राह्मणेतर" वातावरण पर प्रकाश डालना आवश्यक है, क्योंकि तमिल लोगों का अद्यतन सामाजिक इतिहास ब्राह्मण-ब्राह्मणेतर लोगों का संघर्ष ही है।[1] सामाजिक क्षेत्र में प्राचीन भारत में लोग ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर दो विभागों में विभक्त थे। परम्परा से ब्राह्मण पढ़े-लिखे रहे। अतएव उच्च पदों में इनकी नियुक्ति होती गयी।

तमिलनाडु के समाज में ब्राह्मणों के अलावा, ब्राह्मणेतर लोगों में हिन्दू, मुस्लिम और भारतीय ईसाई आते हैं। इनके अतिरिक्त आदि द्राविड़ लोग

---

१. A good part of the social life of recent Tamilian History is marked by conflicts arising out of the Brahmin and Non-Brahmin situation. To understand the recent and current social situation anywhere its historical antecedents must be understood. P.217.
- Dr. N. Subramanian, History of Tamilnadu - A.D.1565-1956. 1977 - Koodal Publishers, Madurai-1.

जो हरिजन नाम से पुकारे जाते हैं, यहाँ के समाज के प्रमुख अंग रहे। ब्राह्मणेतर हिन्दुओं में मुदलियार, पिल्लै, चेट्टियार प्रमुख जातियाँ रहीं। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में ही ब्राह्मणेतर लोगों ने यह अनुभव किया कि सरकारी सेवाओं में ब्राह्मणों को अधिक स्थान दिया जा रहा है। असल बात यह है कि अन्य जनों की तुलना में स्वयं ब्राह्मण अधिक पढ़े-लिखे रहे हैं और आसानी से सरकारी सेवा में नियुक्त किये जाते हैं। अपने प्रशासनीय काम को सुविधाजनक अेवं सुलभ बनाने के लिये ब्रिटिशों ने,पढ़े-लिखे होने के कारण, ब्राह्मणों को सरकार की सेवा में नियुक्त कर लिया। यहाँ तक कि भविष्य में ब्रिटिशों का प्रशासनीय काम प्राय: इन्हीं ब्राह्मणों पर अवलम्बित रहा। फिर भी ब्रिटिशों ने ब्राह्मणों को विद्रोही समझा। यही विश्वास किया जाता है कि १८५७ के वेल्लूर विद्रोह में ब्राह्मणों का ही हाथ रहा। कवि भारती स्वयं ब्राह्मण थे और उनकी राष्ट्रीय कवितायें और विविध लेख ब्रिटिशों के विरुद्ध काम कर रहे थे। यह अेक अैतिहासिक अेवं साहित्यिक सत्य है। यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि सन् १८७०-१९१८ के बीच ब्राह्मणों ने मद्रास विश्वविद्यालय से ७४% से ७१% उपाधियाँ उपलब्ध कर लीं और ब्राह्मणेतर उपाधिधारियों का प्रतिशत सिर्फ १८% से लेकर २९% तक रहा।[१] इससे ब्राह्मणेतर लोगों की बुरी स्थिति का अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है। इन्हीं परिस्थितियों से खिन्न होकर सन् १९१६ में ब्राह्मणेतर आन्दोलन शुरू हुआ, जस्टिस दल की स्थापना हुई और द्रविडियन पत्रिका चलायी गयी। इन सबका प्रधान उद्देश्य "ब्राह्मणों के प्रति विरोध उद्घोषित करना ही था।

बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक में तमिलनाडु में जस्टिस दल, होमरूल आन्दोलन, ब्राह्मणेतर आन्दोलन - इन तीनों के बीच संघर्ष सदा सर्वदा होता

---

१. History of Tamilnadu - A.D.1565-1956 - 1977 - Koodal publishers, Madurai-1. Dr. N. Subramanian - P.223.

रहा। असल में "होमरूल" भारत की स्वतंत्रता का प्रतिनिधि दल रहा। बेसण्ट के होम रूल आन्दोलन के पीछे कोई जाति-पाँति अथवा धार्मिक भावना नहीं रही। इस आन्दोलन ने समग्र भारत के लिये सामाजिक अेवं राजनैतिक आन्दोलन के रूप में काम किया। लेकिन मद्रास के जस्टिस दलवालों ने समझा कि होमरूल आन्दोलन ब्राह्मणों के पक्ष में और ब्राह्मणेतर लोगों के विरुद्ध काम कर रहा है। तत्कालीन प्रमुख ब्राह्मण लोग जैसे सर. सुब्रह्मण्य अय्यर, सर. सी.पी. रामस्वामी अय्यर, अेल.अे. गोविन्दराघव अय्यर आदि भी बेसण्ट के कार्यों से प्रभावित हुये बिना नहीं रह सके। अतः जस्टिस दल और ब्राह्मणेतर आन्दोलन ने किसी न किसी रूप में बेसण्ट और तमिलनाडु के ब्राह्मणों से संघर्ष करने का निश्चय कर लिया और पग पग पर इनका दमन करना भी चाहा।

इसी बीच ब्रिटिशों को होम रूल वाले और ब्राह्मण लोग क्रान्तिकारी प्रतीत हुये। अतः ब्रिटिशों ने इन दोनों का दमन करने के विचार से जस्टिस दल को अपनी ओर से सहायता दी। इस प्रकार जस्टिस दल और ब्रिटिश सत्ता अेक दूसरे के निकट आ गये, जिससे जस्टिस दल ने अपना सिर ऊँचा कर लिया। असल में तमिलनाडु में अेक ओर जस्टिस दल, ब्राह्मणेतर आन्दोलन करनेवाले और ब्रिटिश लोग थे और दूसरी ओर होम रूल वाले[1] और ब्राह्मण लोग थे, इन दोनों में संघर्ष होता रहा। सन् १९२० में जस्टिस दल ने मद्रास में मंत्री परिषद का संगठन किया। अतः इन्होंने सरकार की सेवाओं में ब्राह्मणों की नियुक्ति को कम करने की चेष्टा अवश्य की।[2] इ.वी. रामस्वामी नायकर

---

१. होम रूल को इस संघर्ष में सम्मिलित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि यह आन्दोलन असल में स्वच्छन्द रूप से भारतीय जनों का हित चाहता था। राजनैतिक, सामाजिक धरातल पर भारत में ब्रिटिश सत्ता का विरोध कर रहा था। अतः इसमें प्रान्तीयता का रंग नहीं है। भले ही इसका प्रधान केन्द्र मद्रास रहा हो, इसमें समग्र भारत का रंग है। उत्तर में तिलक और गोखले के कार्यों को बेसण्ट यहाँ करती रहीं। इनके अच्छे कार्यों से प्रतिभा संपन्न तत्कालीन ब्राह्मण प्रभावित अवश्य हुये। इसलिये होमरूल ने ब्राह्मणों का, ब्राह्मणों ने होमरूल का पक्ष लिया था - यह मान लेना उचित नहीं है। यहाँ होमरूल की सेवायें सराहनीय रही हैं।

२. फिर भी मद्रास के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश अधिकांश रूप से ब्राह्मण ही

(शेष अगले पृष्ठ पर)

अर्थात् "पेरियार" बीसवीं शती के द्वितीय दशक के प्रारंभ तक कांग्रेस में थे। कांग्रेस में ब्राह्मणों का आधिपत्य समझकर कांग्रेस से वे अलग हुये। हिन्दी को लेकर मद्रास सरकार के विरुद्ध वे संघर्ष भी करने लगे। इन्होंने नास्तिकता का पक्ष लेकर ब्राह्मणों के विरुद्ध "द्राविड़ कऴगम्" अर्थात् द्राविड़ संस्थान की स्थापना की। इस संस्थान का प्रधान उद्देश्य सामाजिक सुधार रहा। किन्तु राजनीति का रंग भी इसमें अवश्य रहा। पेरियार ने "सुय मरियादै इयक्कम्" अर्थात् "स्व सम्मान की योजना" भी बनायी।

सन् १९३९ में जैसे अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में लीग आफ़ नेशन्स का अन्त हुआ उसी तरह तमिलनाडु में जस्टिस दल का भी अन्त हो गया। इसके उपरान्त द्राविड़ संस्थान और इसी से विभक्त सी.अेन. अण्णादुरै के द्राविड मुन्नेट्र् कऴगम् ने "ब्राह्मण-विरुद्ध" कार्यकलापों को अपना लिया। इस प्रकार तमिलनाडु का सामाजिक इतिहास ब्राह्मण-ब्राह्मणेतर लोगों का संघर्ष सिद्ध हुआ। अत्यन्त ध्यान से अनुशीलन करने पर पता चलता है कि राजनीति का घनिष्ठ संबंध इस इतिहास से है।[१]

पिछले पृष्ठ का शेष:-

ठहरे। प्रशासनीय क्षेत्र में पी.अेस. शिवस्वामी अय्यर, सर. सी.पी. रामस्वामी अय्यर, वी. कृष्णस्वामी अय्यर रहे। श्रीनिवास शास्त्री वैयक्तिक रूप से ब्रिटिश लोगों के अच्छे दोस्त भी रहे। वे समकालीन भारत के सबसे प्रतिभा सम्पन्न अंग्रेज़ी भाषा के वक्ता और शैक्षिक नेता समझे गये।

१. The communal strife in Tamil Nadu can not be said to have merely influenced politics here. The only politics we have had in Tamilnadu was communal strife. - P. 228.
Dr. N. Subramanian, - History Tamil Nadu, AD 1565-1956 AD. - Koodal Prakashan, Madurai-9. 1977.

तमिल समाज में तेलुगु, मराठी, उर्दू और अंग्रेजी बोलनेवाली जातियाँ हैं। रेड्डियार, राजा, नायक्कर, नायुडु, चेट्टियार लोग तेलुगु भाषी हैं। सौराष्ट्र जो गुजराती अथवा मराठी की अेक बोली है, मदुरै, सेलम, तिरुच्चिराप्पल्ली, तंजाउर, कुंभकोणम में व्याप्त हैं। मुदलियार और हरिजन सामान्य रूप से तमिल बोला करते हैं। नीलगिरि में तुडु भाषी लोग रहते हैं। इन सभी लोगों ने तमिल नाडु के राजनैतिक, सामाजिक क्षेत्र में प्रगति लाने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत किया है और आज भी करते आ रहे हैं।

विश्व विख्यात वैज्ञानिक सर सी.वी. रामन, प्रसिद्ध गणितज्ञ श्रीनिवास रामानुजम्, कवि सुब्रह्मण्य भारती, कृष्णस्वामी अय्यंगार, नीलकंठ शास्त्री, सूर्यनारायण शास्त्री, श्रीनिवास शास्त्री, प्रो० सुन्दरम पिल्लै, सी.पी. रामस्वामी अय्यर और सी. राजगोपालाचारी आलोच्यकालीन युग के तमिलनाडु की महान विभूतियाँ हैं।

(ग) आर्थिक क्षेत्र

आलोच्य काल में समग्र भारत में जो आर्थिक परिस्थितियाँ रहीं वे ही मद्रास में भी रहीं। भारत के अन्य प्रान्तों के समान तमिलनाडु भी कृषि प्रधान देश है। तमिलनाडु की आर्थिक स्थिति वर्षा पर निर्भर है। कावेरी नदी पर यहाँ का आर्थिक क्षेत्र निर्भर है। सेलम, काँचीपुरम, मदुरै, आरणी, जैसे स्थानों में बुनाई का काम चलता है। औद्योगिकरण की दृष्टि से कोयम्बत्तूर विशेष उल्लेखनीय है।

(ङ) युगीन परिस्थितियाँ और स्वच्छन्दतावादी कवि

आधुनिक तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने तत्कालीन विभिन्न परिस्थितियों से अवश्य प्रभाव ग्रहण किया है। तमिल क्षेत्र में कवि भारती के राष्ट्रीय गीत, ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध उनकी कवितायें, विद्रोहात्मक प्रवृत्ति, इस बात का साक्षी है।

वन्देमातरम्[१], भारत देश[२], भारत माता तिरुप्पळ्ळि ऎळुच्चि[३], भारतीय जनता की तत्कालीन स्थिति[४], भारतीय समाज[५], जातीय गीतम्-। व ।।[६], स्वतंत्रता (विडुदलै)[७], स्वतंत्रता की प्यास[८], स्वतंत्र देवी की स्तुति[९], बेल्जियम् देश की कामनायें[१०], नया रूस[११], भय नहीं, भय नहीं[१२], पाप्पा पाट्टु[१३](बच्चों के गीत) में जाति-पाँति का खण्डन, नारी की स्वतंत्रता[१४], जियो तिलक[१५], लाला लजपतराय[१६] - जैसी कविताओं को दृष्टान्त के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। स्वयं ब्राह्मण होते हुये भी, ब्राह्मणों की ढोंगी प्रवृत्तियों का उन्होंने पर्दाफाश किया है।[१७] यह प्रवृत्ति तत्कालीन युग के प्रभाव को स्पष्ट करती है। भारतीदासन ने प्रारंभ में चरखा-खद्दर से[१८] सम्बन्धित कवितायें लिखी थीं। उसके बाद पेरियार से प्रभावित होने से स्व सम्मान[१९], नास्तिकता[२०], ब्राह्मणेतर

---

१. पृष्ठ - १८; २. पृ.२०-२१; ३. पृ. २९ इसमें राष्ट्रीय भावना झलकती है। ४. पृ. ४९; ५. पृ.४०; ६. पृ. ४१-४२; ७. पृ.५९; ८. पृ.५४; ९. पृ.५४; १०. पृ. ८९; ११. पृ. ८८; १२. पृ. १८०; १३. पृ. २०३; १४. पृ. २११; (पिणुगल विडुदलै + कुम्मि); १५. पृ. ७८-७९.; १६. पृ. ८०-८१;

१७. पार्प्पानै अय्यर ऎन्र् कालम् पोच्चे - अर्थात् ब्राह्मणों को अय्यर कहकर संबोधित करते थे। अरे। वह संबोधन अब चला गया। - पृ. ५७. सच्चे शास्त्रों को विकसित न करके, उसे भी भूलकर तमिलनाडु के ब्राह्मण झूठी कहानियों को मूर्खों को सुनाकर अपनी जिन्दगी चला रहे हैं - पृ.४४५. भारतीयार कवितायें - द्वितीय संस्करण - अगस्त, १९७८. - पूम्बुहार प्रसुरम्, मद्रास-१३.

१८. भारतीदासन् - कुयिल पाडल्कळ् (कोयल गीत) -पृ.११. प्रथम संस्करण १९७७ सितम्बर - पूम्बुकार प्रसुरम, मद्रास.

१९. (क) तेन अरुवि (मधु झरना) - पृ. १२५ "नानडा"(मैं हूँ रे।) कविता जनवरी १९७८ - पूम्बुकार प्रसुरम, मद्रास-१३.

(ख) भारतीदासन कवितायें - १ प्रथम भाग - पृ.१७२ - वाळिनै ऎडडा (तलवार को उठा रे।) पृ. १७४ - वीरत्तमिळन् (वीरत्व का तमिलन्) - पृ.१३९. तेन्तमिळ निलैयम्, पुदुक्कोट्टै-२४वाँ सं०-१९८०.

(ग) भारतीदासन कवितायें - द्वितीय भाग - ८वाँ सं० १९७७ दिसम्बर पारि, मद्रास-१. पृ.१३८; पृ.९१-९४. नान द्राविडन् - मैं द्राविड हूँ।

२०. (अ) कुयिल पाडल्कळ् - पृ. १३०-१३५. (आ) भारतीदासन कवितायें -। पृ. १८३ - कडवुळ् मरैन्दार (ईश्वर गायब हो गये।)

लोगों के प्रति सहानुभूति[१], ब्राह्मणों के विरुद्ध[२] - उनकी भावनायें, मानवतावादी भावना[३], सामाजिक अंधविश्वास[४], जाति-पाँति [५], बाल विवाह[६], वृद्ध विवाह का खण्डन,[७] विधवा विवाह[८] का समर्थन, आदि इनकी कविताओं में सर्वत्र प्राप्त होने लगे। कविमणि देशिकविनायकम् पिळ्ळै ने तत्कालीन सामाजिक कुरीतियों का खण्डन अेवं अंधविश्वासों का पर्दाफाश "मरुमक्कळ् मानमियम्"[९] नामक खण्ड का०म में किया है। छुआछूत का खण्डन[९अ], शराबबन्दी का समर्थन[१०], जाति-पाँति का विरोध[११], स्वतंत्रता की भावना[१२], खद्दर[१३] और कांग्रेस की प्रशंसा[१४], मानवतावादी भावना[१५] आदि इनकी कविताओं में यत्र-तत्र उपलब्ध होती हैं। अन्य आधुनिक तमिल कवियों में नामक्कल् रामलिंगम् पिळ्ळै ने युगीन परिस्थितियों में प्रेरणा भी ली है।

---

१. भारतीदासन कवितायें-।।। : पृ.११५ - सातवाँ संस्करण १९७८ अगस्त - पारि निलैयम.
२. (अ) कुयिल पाडल्कळ् - पृ.११३. (आ) भारतीदासन कवितायें-।।। -पृ.१०९, ८१; (इ) भारतीदासन कवितायें-।।, पृ.१३८; (ई) तमिल इयक्कम् - पृ.३५-३९, आठवाँ संस्करण १९७८, सेन्तमिल निलैयम्, पट्टुक्कोट्टै.
३. (अ) कुयिल् पाडलकळ् - पृ.४४ व ९८. (आ) भारतीदासन कवितायें-।, पृ.१४५; ।।-पृ.१४९; ।।।-पृ.३.
४. कुयिल पाडल्कळ् - पृ.१०७ मूड नम्बिक्कै (अन्धविश्वास); ५. तेन अरुवि-पृ.१२३.
६. भारतीदासन कवितायें-।, पृ.११५.; ७. वही, पृ.११०, १११.
८. तेन अरुवि - पृ.५३. और भारतीदासन कवितायें-।, पृ. १०६, १०७, १०८, १०९, ११८, ११९ व १२०.
९. तमिलनाडु में अब स्थित कन्याकुमारी जिले के पौर्वात्य भाग को १९-वीं शती के अन्त में नांजिल नाडु कहा गया था। यहाँ सामाजिक कुरीतियाँ प्रचलित रहीं। बहुविवाह और विधवाविवाह की प्रथायें रहीं। इससे नारियों की स्थिति दयनीय रही। असल में अपनी पत्नी की ओर पुरुषों ने ने ध्यान नहीं दिया। "मरुमक्कळ् ताय मुरै" नामक अेक पद्धति वहाँ पर रही। तदनुसार कारणवन (कुटुम्ब के स्वामी) की संपत्ति - उसकी बहिनों के बच्चों को मिलेगी। कारणवन की पत्नी और उसके पुत्रों को संपत्ति का बहुत छोटा-सा भाग ही मिला करता था। इससे कारणवन को बहुत संकट झेलना पड़ता था। बाद में इसे लेकर अदालत में कई मुकद्दमें आये। बहिनों के बच्चों को अगर संपत्ति न दें तो कारणवन कुटुम्ब के दोषी समझा गया। इस पद्धति से यहाँ

(शेष अगले पृष्ठ पर)

इनकी कविताओं में गाँधीवादी स्वर सर्वत्र व्याप्त है। गाँधी मलर्, देशीय मलर्[1] (गाँधी फूल, देशीय फूल) में संकलित समस्त कवितायें तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक परिस्थितियों से स्पष्ट प्रभावित दीखती है। छुआछूत का खण्डन[2], शराब बंदी का समर्थन[3], कांग्रेस की भावनायें[4] इनकी कविताओं में मिलती हैं। आधुनिक तमिल कवियों में सबसे अधिक गाँधीवादी विचारधारा इनकी कविताओं में उपलब्ध होती हैं।

आधुनिक हिन्दी कविता के क्षेत्र में प्रसाद ने अपने महाकाव्य कामायनी में श्रद्धा के द्वारा मानवतावादी[5], गाँधीवादी[6], विचारों को व्यक्त किया है। "आँसू" में लौकिक तथा अलौकिक का रंग लगाने पर भी अन्तिम रूप में

पिछले पृष्ठ का शेष:

शान्ति का वातावरण नहीं रहा। कविमणि की इस रचना के पश्चात् सन् १९२९ में त्रिवेण्ड्रम विधान सभा में इस प्रथा को अवैधानिक घोषित किया गया। - प्रो० वैयापुरि पिल्लै - कविमणि कविता - पृ.१५५-५६. पु. शण्मुगम् पिल्लै-।, १९७७, पारि निलैयम्।

९.अ. पृष्ठ-१६६.

१०. पृ.१६९. ११. पृ.१९०. १२. पृ.१८९. १३. पृ. १८४. १४. पृ. १८३.

१५. पृ. १७०. पिच्चैक्कारर् कुम्माळम् (भिक्षुकों का आनन्द) - कविमणि - मलरुम् मालैयुम् - १५वाँ संस्करण, १९७७ - पारि निलैयम्, मद्रास.

---

१. नामक्कल कवि की कवितायें-।, १९६० - लिट्टिल फ्लवर कंपनि, मद्रास-१७ में संग्रहीत हैं।

२. वही, पृ.१६७, ४६८: ३. पृ. १७१; ४. पृ. ४९८.

५. विजयिनी मानवता हो जाय - श्रद्धा सर्ग - पृ.६७.
औरों को हँसते देखो। मनु। सबको सुखी बनाओ। कर्म सर्ग - पृ.१४०.
कामायनी - १३वीं आवृत्ति - सं० २०१४, भारती भण्डार.

६. वही - ईर्ष्या सर्ग - पृ.१५८.
मैं बैठी गाती हूँ तकली के प्रतिवर्तन में स्वर विभोर
चलती तकली धीरे धीरे प्रिय गये खेलने को अहेर।

उनकी मानवतावादी भावना[1] का परिचय मिलता है। पंत स्वयं युगान्तर, युगवाणी, लोकायतन में मानवतावादी बन गये हैं। गाँधीवादी स्वर[2] ही इनकी उत्तरार्द्ध की कविताओं में सर्वत्र मुखरित है। अरविन्द के प्रभाव[3] को स्वयं पंत ने स्वीकार किया है। निराला ने "प्रेयसी"[4] में जाति-पाँति का खण्डन किया है। भेडवर्ड के प्रति[5], दान[6], विधवा[7], भिक्षुक[8], तोड़ती पत्थर[9] जैसी कवितायें मानवतावादी विचारधारा के प्रतीक हैं। बादल राग, श्यामा नाचे उस पर - विद्रोह के सूचक हैं। धार्मिक क्षेत्र में निराला ने विवेकानन्द से प्रेरणा ली है, और उनकी कविताओं का अनुवाद भी किया है।

---

१. सबको निचोड़ लेकर तुम, सुख से सूखे जीवन में।
बरसो प्रभात हिमकण सा आँसू इस विश्व सदन में।
- आँसू अध्ययन - संस्करण - पृ.७९, १९७१ - प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी.

२. (अ) गाँधी-युग - नवमानवता करती गाँधी का जय घोषणा।
आ. कवि पंत - ११ आवृत्ति, साहित्य सम्मेलन, प्रयाग - पृ. ९९. शक. १८८९.

(आ) मनुष्यत्व का तत्व सिखाया निश्चय हमको गाँधीवाद।
सामूहिक जीवन विकास की साम्य योजना है अविवाद।
- युगवाणी - पृ. ४७ चौथी . १९५९ - राजकमल प्रकाशन.

(इ) वही, पृ.१९ - बापू-कविता.

३. तारकनाथ बाली - पंत - पृ. ४९ उद्धृत: हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - १० भाग - पृ. २५९ - ना.प्र. सभा, सं.२०२८ प्रथम सं.

४. निराला - अनामिका - पृ.८ चौथा. सन् १९७९. भारती भण्डार.

५. वही, पृ. १९.

६. वही, पृ. २५.

७. परिमल - पृ. ६८.

८. वही, पृ. १०३ - प्रथम सं. १९७८ - राजकमल प्रकाशन.

९. अनामिका - पृ.८१ - छठवाँ सन् १९७९ - भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद.

इस प्रकार आलोच्यकालीन परिस्थितियों का प्रभाव दोनों भाषाओं के कवियों पर पड़ा है और इनसे दोनों ने पर्याप्त प्रेरणा भी ली है। स्वतंत्रता की भावना, मानवतावादी दृष्टिकोण, जाति-पाँति का खण्डन, विधवाओं के प्रति सहानुभूति, गाँधीवादी विचारधारा आदि - दोनों के काव्य में उपलब्ध होती हैं। तमिल के भारतीदासन की कविताओं में युगीन प्रभाव से प्रेरित ब्राहूमणेतर आन्दोलन की भावनायें, ब्राहूमण के विरुद्ध उनकी घोषणायें, विधवा विवाह का कट्टर समर्थन, बाल विवाह का खण्डन, स्व-सम्मान, नास्तिकता, तीव्र रूप से सामाजिक अंध-विश्वासों का पर्दाफाश हिन्दी के कवियों में अपेक्षाकृत कम प्रतीत होते हैं। ब्राहूमण - ब्राहूमणेतर - समस्यायें उत्तर भारत के समाज में उतनी नहीं रही, जितनी तमिलनाडु में थी। इसका प्रभाव भारतीदासन पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

(ई) <u>प्रभाव ग्रहण - प्रेरणा स्रोत : सामान्य विश्लेषण</u>

आधुनिक तमिल और हिन्दी के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों ने रोमान्टिक काव्यधारा से प्रभाव ग्रहण किया है। इन भाषाओं के साहित्यिकों ने जितनी अंग्रेज़ी कवि और उनकी कविताओं से प्रेरणा ली है, उतनी अन्य पाश्चात्य भाषाओं के साहित्य से नहीं। इन दोनों पर बँगला का प्रभाव भी है। हिन्दी की तुलना में बहुत कम आधुनिक तमिल कवियों ने अंग्रेज़ी अथवा बँगला से प्रेरणा ली है। इन दोनों साहित्यिकों के प्रभाव ग्रहण का विश्लेषण यहाँ किया जाता है।

<u>अंग्रेजी साहित्य और तमिल कवि</u>

प्रो० सुन्दरम् पिल्लै ने अपने काव्य नाट्य 'मनोन्मणीयम्' में अंग्रेज़ी के ब्लैंक वर्स[१] का प्रयोग किया है, जो तमिल काव्य के लिये नया है।

---

१. **It will be also observed that the metre used is the simplest in the language and the nearest approach to the English Blank Verse. Page No.18. Author's preface - Manonmaniyam - Mallika Publication - III Edition 1968. 1891 March - Mercury Book Co., Coimbatore-1. The plot of the play is based on one of Lord Lytton's Lost tales of Miletus called 'THE SECRET WAY'.**

वी.गो. सूर्यनारायण शास्त्री[1] ने अंग्रेजी के सॉनिटों का प्रयोग अपने कविता-संग्रह "तनिप्पासुरत्तोगै" में किया है। इसमें संकलित "तुइल"[2] (नींद) नामक कविता "वर्ड्सवर्थ" की "टु स्लीप" कविता से मिलती जुलती है। तमिल काव्य क्षेत्रों में इसके पूर्व सानिटों का प्रयोग नहीं मिलता। कवि भारती अंग्रेजी के रोमान्टिक कवि शैली से अधिक प्रभावित दीख पड़ते हैं। उस जमाने में इनको शैली, बायरन की कविताओं का अध्ययन करने में बहुत रुचि रही। "शैलीदासन" के उपनाम पर पत्र-पत्रिकाओं में कविताओं की आलोचना किया करते थे।[3] शैली की कविताओं को अपने मित्रों को सुनाते और व्याख्या भी किया करते थे। कीट्स की छाया भारती पर स्पष्ट प्रतीत होती है। भारती के "कुयिल पाट्टु"[4] (कोकिला गीत) की अन्तिम पंक्तियाँ, कीट्स की "ओड टु नैटिंगेल"[5] की अन्तिम पंक्तियों से बहुत मेल खाती हैं। कुयिल और नैट्टिंगेल दोनों पक्षी हैं। इन दोनों कविताओं में कवियों की दृष्टि एक सी प्रतीत होती है। भारती के "ज्ञान रथम्" में शैली के "क्वीन माब" का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

---

१. ये (१८७०-१९०३) क्रिस्टियन कालेज के तमिल के आचार्य रहे। इन्होंने अपने नाम को तमिल में "परिमाल कलैञर" रख लिया। सूर्य : परिदि; नारायण : तिरुमाल् - माल; शास्त्री : कलैञर। इन्होंने ज्ञान बोधिनी पत्रिका चलायी। रूपावती, कलावती, मान विजयन - इनकी प्रसिद्ध नाट्य कृतियाँ हैं। १८९९ में इनके कविता-संग्रह "तनिप्पासुरत्तोगै" का प्रकाशन हुआ। २०-वीं शती के भारती और शास्त्री ब्राह्मण होते हुये भी इनकी तमिल सेवा उत्कृष्ट रही है।

२. डॉ० रामलिंगम् - तमिल साहित्य - २०-वीं शताब्दी - पृ. १८७ - द्वितीय सं० - १९७७ - तमिल पुस्तकालय, मद्रास.

३. भारती चरितम् - चेल्लम्मा भारती - पृ.३५ - पुनर्संपादन १९७९ - पारि निलैयम.

४. सोलैक्कुयिल कादल सोन्न कदै अनैत्तुम् | भारतीयार कवितायें -
मालै अळकिल मयक्कत्ताल् उळत्ते | कुयिल पाट्टु - पृ. ४१८.
तोन्रियदोर् कर्पनैयिन सूळ्च्चि अन्रे कण्डु कोण्डेन। - अर्थात् वन कोकिला ने जो प्रेम कहानी कही है वह सब सन्ध्या की सुन्दरता के बे-होश में (सपने में) मन में उदित कल्पना की चाल ही है।
- पूम्पुकार प्रसुरम् १९७८ - द्वितीय प्रकाशन , अगस्त.

५. Was it a vision, or a waking dream?
Fled is that music - do I wake or sleep?
Keats - ODE TO NIGHTINGALE - Lines 79-80.

अतः इसमें कोई शक नहीं है कि भारती ने शेक्सपियर, वर्ड्स्वर्थ, कीट्स, शेली, बायरन, ब्राउनिंग, टेनिसन और विट मैन जैसे अंग्रेजी कवियों से अवश्य प्रेरणा ली है।[१]

भारतीदासन अंग्रेजी या बँगला कवियों के काव्यों से कदाचित् ही प्रभावित दीख पड़ते हैं। तमिल पर उनका अटूट प्रेम था। वे तमिल परम्परा के अनुसार चलनेवाले थे और इसी परम्परा पर विश्वास करनेवाले थे। अतः किसी भी अन्य भाषा या साहित्य से प्रभाव ग्रहण करना और प्रेरित होना इन के लिये असह्य था। इसलिये "अळकिन् सिरिप्पु" नामक कविता संग्रह की भूमिका में अन्य भाषाओं का अनुकरण करने की प्रवृत्ति का खण्डन किया है।[२] इनको तमिल नामों पर भी विशेष प्रेम है। यहाँ तक कि अंग्रेजी शब्दों के स्थान पर उन्होंने तमिल शब्दों का प्रयोग किया है।[३] "तमिल इयक्कम्" नामक कविता संग्रह में वे सभी क्षेत्रों में तमिलत्व की स्थापना करना चाहते हैं।[४] इन्होंने द्रविड गीत की रचना भी की है।[५] तमिलवाद और तमिल चेतना पर विश्वास करनेवाले इस कलाकार में अन्य भाषाओं का प्रभाव बिलकुल नहीं पड़ा।[६] अतः स्पष्ट रूप से घोषित किया जा सकता है कि इन्होंने सर्वत्र

---

१. **In spirit and expression Bharathi and Shelley are one. P.104 & 94. Dr. K. Meenakshi Sundaram - 'A study on the Poetical works of Subramanya Bharathi - I Edn. 1965 - Pari Nilayam.**

२. भारतीदासन - अळकिन् सिरिप्पु (सौन्दर्य की मुस्कुराहट) प्राक्कथन - पृ. ४ - १९-वाँ संस्करण - सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै.

३. इलैञर इलक्कियम् (युवकों का साहित्य) - प्राक्कथन - पृ. ३ और पृ. ३७, ७१, ७२, ७५, ९९, ४४. छठवाँ - १९७८ मर्च - पारि निलैयम्.

४. [illegible] तमिल इयक्कम् - पृ.३ प्राक्कथन में - आठवाँ सं. १९७८ - सेन्तमिल निलैयम.

५. भारतीदासन कवितायें - दूसरा भाग - पृ.९. आठवाँ सं. दिसम्बर, १९७७. पारि निलैयम्, मद्रास-१.

६. यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि संस्कृत के "बिल्हण्य" कथा के आधार पर इन्होंने "पुरट्चि कवि" (विद्रोही कवि) नामक दीर्घ कविता की रचना की। (सन् १९३७ में) भारतीदासन कवितायें - प्रथम भाग - पृ. १७. २४ संस्करण १९८० - सेन्तमिल निलैयम्.

तमिल परम्परा का अनुसरण करके काव्य-रचना की है। इस तरह तमिल साहित्य-परम्परा में मौलिकता का प्रतिपादन करने का श्रेय भी इनको प्राप्त है।

कवि मणि ने ब्लेक, व्हिटमैन, कीट्स, वर्ड्स्वर्थ, टेनिसन, थामस ग्रे, मिल्टन, थामस हुड़, अेलिजबेथ बेरट, राबर्ट बर्न्स आदियों की कविताओं का अध्ययन किया है। इन्होंने प्रायः अंग्रेज़ी कविताओं का भावानुवाद ही प्रस्तुत किया है।[१] इन्होंने अेड्विन अरनाल्ड के "लाइट आफ़ अेशिया" के आधार पर "आसिय ज्योति" की रचना की है। फिर भी अंग्रेज़ी के रोमान्टिक कवियों का कम प्रभाव ही उनकी रचनाओं में है। नामक्कल् कवि के बारे में भी यही बात कही जा सकती है। समग्र रूप से भारती ही अेक अैसे कवि हैं, जिन्होंने प्रत्यक्ष रूप से अंग्रेज़ी के रोमान्टिक कवियों से अधिक प्रभाव ग्रहण किया है।

बँगला और तमिल कवि

आधुनिक हिन्दी कवियों की तरह कम ही तमिल कवियों ने बँगला से प्रभाव ग्रहण किया है। केवल यत्र-तत्र बँगला की कविताओं तथा कथाओं का भावानुवाद तमिल में किया गया है और बँगला के प्रमुख व्यक्तियों की प्रशंसा की गयी है। बँगला साहित्य, संस्कृति और सभ्यता का प्रभाव,

---

१. कविमणि - मलरुम् मालैयुम् - १५-वाँ संस्करण - १९७७ - पारि निलैयम्, मद्रास-१.
   (अ) पुलिक्कूडु - ब्लेक की कविता "टैगर" - पृ.६८.
   (आ) "आरु" (नदी) गुडरिच कविता के आधार पर - पृ. ७२.
   (इ) मून्ड्र विषयंगळ् (तीन विषय) - ब्लेक की कविता का अनुसरण - पृ. १०७.
   (ई) मलैयुम् अणिलुम्" - अेमर्सन की कविता के आधार पर - पृ. १३५.
   (उ) अमिळुन्दु उरैयुम् उपर्दक्कळ् - ग्रे की कविता पर आधारित - पृ.२८७.

भारती पर अवश्य पड़ा है। बंगालियों की तरह वेश-भूषा, मूंछ, केश अलंकार आदि स्वीकार करने में उनकी रुचि रही।[१] उन्होंने बंकिम चन्द्र चटोपाध्याय कृत "वन्देमातरम्" का अनुवाद "जातीय गीतम्-।" के रूप में[२] प्रस्तुत किया और ठाकुर के अंग्रेजी गीतों[३] तथा उनकी ११ छोटी कथाओं का अनुवाद भी किया है। भारती ने बंगला की भेंक और प्रशंसा करते हुये "जियो बंगला"[४] कविता की रचना की तो दूसरी ओर कविमणि ने ठाकुर की गीतांजलि की कुछ कविताओं और "गार्डनर" का भावानुवाद प्रस्तुत किया है।[५] इसी तरह कविमणि ने श्री रामप्रसाद सेन की बंगाली कविताओं के आधार पर "ज्ञान दीप"[६] कविता की रचना की है और बंगाल के प्रमुख दार्शनिकों के नाम पर कवितायें रचीं -- जैसे : रामकृष्ण परमहंस,[७] रामकृष्ण परमहंस देवी प्रार्थना[८], विवेकानन्द[९]। इसी प्रकार नामक्कल कवि ने कवि ठाकुर[१०], रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द[११] पर कवितायें लिखी हैं। आधुनिक कवि "इडम् कम्बन" ने ठाकुर की कविताओं का तमिल में "गीतांजलि कीर्तन" नाम से भावानुवाद किया है। आधुनिक तमिल स्वच्छन्दतावादी कवियों में केवल

---

१. भारती चरितम् - पृ. ३० - चेल्लम्मा भारती पुनर्संपादन - १९७९ - पारि निलैयम्। चोटी को काटकर बंगाली की तरह केशों को अंकार कर लिया।
२. भारतीयार कवितायें - पृ.४१-४२. द्वितीय सं. १९७८ अगस्त - पूंबुकार प्रसुरम.
३. वही, पृ. २१५.
४. वही, पृ. ४६१-४६२.
५. मलरुम् मालैयुम् - १५वाँ संस्करण - १९७७ - पारिनिलैयम्- पृ. ८५-८६.
६. वही, पृ. ११९.
७. वही, पृ. १२४.
८. वही, पृ. १२१.
९. वही, पृ. १२९.
१०. नामक्कल् कवि की कवितायें - प्रथम संस्करण - १९६० - लिट्टिल फ्लवर कंपनी, मद्रास-१७ - पृ. २२५.
११. वही, पृ. ४१९-४२०.

भारती ही अन्य देश के विद्वानों की कृतियों का अनुवाद तमिल में करना चाहते थे।[१] तमिल के अन्य कवियों की राष्ट्रीयता प्रान्तीयता तक ही सीमित रही। क्योंकि दूसरों से प्रभावित होना, प्रेरणा लेना इन के लिये तमिल परम्परा के विरुद्ध प्रतीत हुवे।

<u>अंग्रेजी के रोमाण्टिक काव्य और हिन्दी कवि</u>

उन्नीसवीं शती के अंग्रेजी-शिक्षा-प्रचार ने भारतीय साहित्यिक क्षेत्र में नवीनता उत्पन्न की। हिन्दी के कवि अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवि तथा कविताओं से प्रेरणा ले रहे थे। सरस्वती के प्रारंभिक संस्करणों में प्रतिमास वर्ड्स्वर्थ, बायरन आदि रोमाण्टिक कवियों की कविताओं का अनुवाद प्रस्तुत किया जाता था। रोमाण्टिक काव्यधारा की प्रमुख प्रवृत्तियाँ, जैसे स्वच्छन्दतावादी प्रकृति-चित्रण, स्वातन्त्र्य की लालसा, प्रेम और सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टिकोण, नवीनता, विद्रोहात्मकता, अतिकल्पना, अनुभूति, निराशा, वेदना आदि आधुनिक हिन्दी कविताओं में परिलक्षित होने लगीं। अतएव रोमाण्टिक कवियों के प्रभाव से आधुनिक हिन्दी कविता नयी दिशा की ओर उन्मुख होने लगी। अंग्रेजी कविताओं के संपर्क का प्रभाव श्रीधर पाठक की रचनाओं में प्रारंभ होता है। इन्होंने गोल्डस्मिथ की कृतियों का स्वतंत्रानुवाद किया। बाद में प्रसाद ने "कानन कुसुम" में सानिटों और प्रेमपथिक, करुणालय में ब्लैंक वर्स जैसे अतुकान्त छन्दों का प्रयोग किया। "प्रेम पथिक" गोल्डस्मिथ के "हेरमिट" के आदर्शों पर लिखा गया था। प्रसाद का "प्रेम राज्य" (१९१०) "किंगडम आफ लव" का अनुवाद प्रतीत होता है। "लहर" में संकलित कविताएँ "अशोक की चिन्ता", "शेरसिंह का शस्त्र-समर्पण" तथा "प्रलय की छाया" रोमाण्टिक कवियों के ड्रैमेटिक मोनोलॉग से बहुत कुछ साम्य रखती हैं।

---

१. भारतीयार कवितायें - पृ. ४७ - दूसरा संस्करण अगस्त, १९७८ - पूम्बुकार प्रसुरम, मद्रास-१३. - "पिरनाट्टु नल्लरिञर शास्तिरंगळ् तमिल मोळियिल पेयर्त्तल् वेण्डुम्"- अन्य देश के विद्वानों की कृतियों को तमिल में अनुवाद करना चाहिये।

उन्नीसवीं शती के अंग्रेजी के रोमान्टिक कवियों में कीट्स, शेली, वर्ड्स्वर्थ तथा टेनिसन ने पंत को बड़ी मात्रा में आकृष्ट किया। कीट्स का शिल्प वैचित्र्य, शेली की सशक्त कल्पना, वर्ड्स्वर्थ का प्रांजल प्रकृति प्रेम, कॉलरिज की असाधारणता तथा टेनिसन के ध्वनि बोध से वे प्रभावित हुये हैं। कला-शिल्प संबंधी प्रेरणा मुख्यतया इनको अंग्रेजी कवियों से तथा भावना सम्बन्धी उन्मेष प्रारंभ में रवीन्द्रनाथ तथा शेली से मिला। इनकी १९२१ तक की रचनाओं में उच्छ्वास, आँसू, बादल, अनंग, मौन निमंत्रण, वीचि विलास, परिवर्तन आदि मुख्य हैं, जिनमें उपर्युक्त कवियों का व्यापक प्रभाव परिलक्षित होता है।[1] अेक दृष्टान्त यहाँ प्रस्तुत किया जाता है। बादलों के क्रिया-कलापों का वर्णन अपनी अपनी वैयक्तिक अनुभूति के अनुसार शेली और पंत ने किया है। प्राकृतिक धरातल पर कल्पना के द्वारा दोनों का वर्णन चलता है। शेली और पंत के भावों में भी साम्य मिलता है। वैषम्य सिर्फ इतना है कि शेली ने अपनी कविता "दि क्लाउड" में[2] बादल के लिये "अै" अेकवचन और पंत ने "बादल"[3] के लिये "हम" बहुवचन का प्रयोग किया है। निराला ने अंग्रेजी-संगीत तथा शेली, कीट्स, वर्ड्स्वर्थ आदि रोमान्टिक कवियों से प्रभाव स्वीकार किया है। इन्होंने अंग्रेजी के संबोधन अेवं शोक गीतों के आधार पर गीतों[4] की रचना

---

१. पंत - साठ वर्ष : अेक रेखांकन - पृ.१२-१४ प्रथम संस्करण १९६० - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

२. And then again I dissolve it it rain
And laugh as I pass in thunder.
I am the daughter of earth and water.   भूमि गर्भ में छिप विहंग से,
Shelley - 'The cloud' lines 11,12,73.   फैला कोमल रोमिल पंख।

३. कड़क कड़क जब हँसते हम सब
थर्रा उठता है संसार;   - पल्लव : बादल - पृ. १२२-१२३ -
आठवाँ संस्करण - १९७७ - राजकमल प्रकाशन.

४. निराला - सरोज स्मृति - शोकगीत.

की है। वर्डस्वर्थ का मानवीकरण और शैली एवं बायरन की विद्रोहात्मकता इनकी कविताओं में मिलती है। महाराज शिवाजी का पत्र[1] और हिन्दी के सुमनों के प्रति[2] पत्र गीतियाँ रोमाण्टिक प्रभाव के प्रमाण हैं।

सम्बोधन गीत (ओड); चतुर्दश पद (सॉनेट); अतुकान्त छन्द (ब्लैंक वर्स); गीति विधान (लिरिक); शोक गीत (अलेजी); समाधि लेख (अपिटैफ) आदि का आविर्भाव हिन्दी क्षेत्र में रोमांटिक काव्यधारा के प्रभाव के कारण हुआ। आधुनिक हिन्दी कवियों की संबोधन-गीतियाँ शैली, कीट्स, वर्डस्वर्थ के संबोधन गीतियों के अधिक निकट प्रतीत होती हैं। पाश्चात्य रूमानी काव्य धारा के कारण मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, ध्वन्यर्थ व्यंजना जैसे नवीन अलंकारों का प्रयोग हिन्दी में भी किया जाने लगा। विषयों की विविधता और स्वतंत्र प्रकृति चित्रण रोमाण्टिकों की सबसे बड़ी देन है। इस प्रकार पाश्चात्य प्रभाव के फलस्वरूप आधुनिक हिन्दी कवियों ने वैयक्तिक मूल्यों की अभिव्यक्ति, अंतर्मुखी प्रवृत्ति, सूक्ष्म रागात्मक सौन्दर्य दृष्टि, अतीन्द्रियता, अनुभूति परिष्कार, अभिव्यक्ति की नवीन भंगिमाओं को अपनाया। कीट्स, शैली, वर्डस्वर्थ आदि अंग्रेजी रोमाण्टिक कवियों की रचनाओं के अध्ययन से इनकी भाव व्यंजना में रम्यता, लालित्य और अद्भुत तत्वों का संयोग हुआ। साथ ही ये भारतीय काव्य दृष्टि के अनुरूप रस और ध्वनि के प्रति आस्थावान रहे। इन कवियों पर पश्चिम की रोमानी काव्य प्रवृत्तियों का प्रभाव दीर्घ काल तक रहा।[3] इस रोमाण्टिक धारा के प्रभाव के कारण हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्यधारा की चरम परिणति छायावादी काव्य में हमें उपलब्ध होती है।

---

१. परिमल - प्रथम बार - १९७८ - राजकमल - पृ. १११.
२. अनामिका - छठवाँ संस्करण - १९७९ - भारती भण्डार - पृ. ११८.
३. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - १० भाग - पृ. ७१ - सं. २०२८.
   प्रथम संस्करण - नागरी प्रचारिणी सभा, काशी.

बँगला साहित्य और आधुनिक हिन्दी कवि

आधुनिक भारतीय साहित्यिक क्षेत्र में जब से रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाओं की ख्याति फैलने लगी तभी से भारत की अन्य भाषाओं में भी बँगला के ढंग पर नयी प्रणाली से रचना करने का श्रीगणेश हो गया।[1] आधुनिक हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में यह नयी प्रणाली स्वीकृत हुई। आधुनिक स्वच्छतावादी हिन्दी कवि बँगला के ढंग पर लिखने में आस्थावान हुये। विशेषकर रवीन्द्र की साहित्यिक, विषयीगत, भाव एवं कलात्मक प्रणालियों को इन्होंने अपनाया। प्रत्येक विधा में अंग्रेजी का प्रभाव पहले पहल बँगला पर पड़ा। रवीन्द्रनाथ स्वयं पाश्चात्य रोमाण्टिक कवि शैली, कीट्स आदि कवियों से प्रेरणा ले रहे थे। उन्हीं से आधुनिक हिन्दी कवियों के दल प्रेरित हुये। निस्सन्देह रवीन्द्र ने ही हमारे समस्त देश के कवि और कलाकारों की आन्तरिक भावनाओं को स्पर्श किया है।[2] इन्होंने हमारे साहित्य को भावात्मक स्वच्छन्दतावाद दिया। इसी कारण सन् १९२० के बाद के साहित्यिक युग को "गाँधी-रवीन्द्र युग" का नामकरण भी सार्थक समझा गया।[3]

बँगला के प्रसिद्ध "पयार" छन्द का प्रयोग भारतेन्दु ने किया था। इसका अनुसरण प्रसाद ने अपने कविता-संग्रह 'चित्राधार' में किया था। दोनों ने ब्रजभाषा में इस छन्द का प्रयोग किया था। इस पयार छन्द का प्रभाव निराला के मुक्त छन्द पर पड़ा है। बँगला के माध्यम से हिन्दी क्षेत्र में अंग्रेजी के ब्लैंक वर्स (अतुकान्त छन्द) का आविर्भाव हुआ। रवीन्द्र का प्रभाव मुकुटधर पाण्डेय,

---

१. मिश्र बन्धु का प्राक्कथन - आधुनिक काव्य धारा - डॉ० केसरीनारायण शुक्ल पृ. ८ - चतुर्थ आवृत्ति १९११ - नंद किशोर संस, वाराणसी.

२. Rabindranath touched the innermost creative process in poets and artists throughout our country. - Hindi Literature - P.6 - Dr. Hazari Prasad Divivedi.

३. शान्तिप्रिय द्विवेदी - युग और साहित्य - पृ. १९ व १७. - इण्डियन प्रेस - तृतीय संस्करण - मार्च १९५८.

रामनरेश त्रिपाठी जैसे स्वच्छन्द कवियों पर पड़ा है। लेकिन माखनलालजी और प्रसाद की रचनाओं में रवीन्द्रनाथ का कोई भी प्रभाव अब तक नहीं ढूंढा जा सका है।[१] स्वयं पंतजी ने रवीन्द्र की प्रतिभा के गहरे प्रभाव को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया है।[२] इन्होंने रवीन्द्र की गीतांजलि, गार्डनर, किंग आफ डार्क चेम्बर, पोस्ट आफिस इत्यादि ग्रंथों का अंग्रेजी अनुवाद ही पढ़ा था। "मम जीवन की प्रमुदित प्रात सुन्दरी। नव आलोकित कर।" वाला गीत गीतांजलि के "अंतर मम विकसित कर अंतरन्तर हे"वाले गाने से मिलता जुलता है।[३] पंत की "भावी पत्नी के प्रति और अप्सरा पर" रवीन्द्र की उर्वशी का प्रभाव दीखता है। रवीन्द्र के "सन्ध्या चित्र" और निराला की "सन्ध्या सुन्दरी", पन्त की "सन्ध्या", "कौन? तुम रूपसी कौन?" और महादेवी के संध्या चित्र में साम्य है।[४] निराला ने स्वयं बंगला के आधुनिक अमर साहित्य के प्रभाव को स्वीकार किया है।[५] इनकी कविता "तट पर"[६] रवीन्द्र की"विजयिनी" का स्पष्ट भावानुवाद है। गीतिका में संकलित अधिकांश उद्बोधनात्मक गीत गीतांजलि के भावों और विषयों में साम्य रखते हैं। स्वामी विवेकानन्द की कविताओं - जैसे "गाइ गीत शुनाते तोमाय", "नाचुक ताहाते श्यामा" और "सरवार के प्रति" को निराला ने क्रमशः "गाता हूं, गीत, मैं तुम्हें ही सुनाने को"[७],

---

१. दिनकर - काव्य की भूमिका - पृ. ७० - प्रथम १९५८ जून - उदयाचल प्रकाशन, पटना-४.
२. आधुनिक कवि पंत - पृ.२. पर्यालोचन - ११वीं आवृत्ति १९६४ - हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग-१.
३. पंत - वीणा-ग्रंथि-विज्ञापन - पृ. १०, नवीन संस्करण १९७२. राजकमल.
४. डॉ० रामेश्वर दयाल मिश्र - आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र - पृष्ठ २५४-५५. - प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-६ - प्रथम - १९७३.
५. परिमल - पृ. ८ (भूमिका) १९७८ दिसम्बर प्रथम बार प्रकाशित, राजकमल.
६. निराला - अनामिका - पृ. ४९-५१. भारती भण्डार - छठा सं.-१९७९.
७. वही, पृ. ९७-१०६.

G3469

"नाचे उस पर श्यामा"[१], "यमुना के प्रति"[२] के शीर्षकों में अनुवाद किया है। "समन्वय" में प्रकाशित तथा गीति-गुंज[३] में संकलित कुछ कविताएँ विवेकानंद की कविताओं का अनुवाद है। "अनामिका" में संकलित कविताएँ ज्येष्ठ[४], वही देश है[५], क्रमशः रवीन्द्र के "वैशाख", "निरुद्देश यात्रा" के आधार पर हैं। "क्षमा प्रार्थना"[६] नामक कविता रवीन्द्र के भावों को आधार मानकर लिखी गयी है। "परिमल" में संकलित "आवाहन" और "अनामिका" में संकलित "राम की शक्ति पूजा" के कथा विन्यास पर १८-वीं शती के बाद बँगला साहित्य में विकसित शक्ति काव्य का प्रभाव है। रामकृष्ण परमहंस के दर्शन की छाया राम की शक्ति पूजा में अप्रत्यक्ष रूप से अंतर्निहित है। स्वच्छन्दतावादी कवि का मानवतावाद, रवीन्द्र की "मानुषेर माझे आमि बाँचि बारे चाई" की पंक्तियों से प्रतिबिंबित है। स्वच्छन्दतावादी अधिकांश प्रवृत्तियाँ बँगला भाषा साहित्य के माध्यम से आधुनिक हिन्दी कविता क्षेत्र में अवतरित हुई हैं। अतः आधुनिक हिन्दी स्वच्छन्दतावाद को बँगला साहित्य का ऋणी मानने में कोई आपत्ति नहीं होगी।

निष्कर्ष

निष्कर्ष यही है कि आधुनिक तमिल कवि पाश्चात्य और बँगला साहित्य से बहुत कम प्रभावित हैं जब कि अधिक मात्रा में हिन्दी कवि प्रभावित साबित होते हैं। तमिल में केवल भारती ने राष्ट्रीयता और अंतर्राष्ट्रीयता के दौर में आकर इन दोनों साहित्यों से पर्याप्त प्रभाव ग्रहण किया है। इस कारण इनके

---

१. निराला - अनामिका - पृ. १०७-११७. छठा सं. १९७९ - भारती भण्डार.
२. वही, पृ. १७०-१७३.
३. निराला - गीति-गुंज - पृ. ६०-६१, द्वितीय परिवर्द्धित संवत २०१९ - हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, ज्ञानवापी, वाराणसी.
४. अनामिका - पृ. ५२.
५. वही, पृ. ५५.
६. वही, पृ. ६४-६६.

भावों और अभिव्यक्ति में रोमान्टिकों की छाया अवश्य मिलती है। हिन्दी काव्य क्षेत्र में प्रसाद भारतीय काव्य परम्परा पर विश्वास रखनेवाले साहित्यकार थे और भारतीय साहित्य को पाश्चात्य प्रभाव से मुक्त करना चाहते थे। अतएव अन्य हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों की तुलना में प्रसाद बंगला से बहुत कम प्रभावित हुये हैं। पाश्चात्य और बंगला साहित्य ने पंत के साहित्यिक जीवन को खूब सजाया एवं संवारा। निराला और महादेवी का साहित्य पाश्चात्य एवं बंगला साहित्य से प्रभावित तो अवश्य है, परन्तु इनके सामने भारतीय सर्वात्मवाद, रहस्यवाद और दर्शन की परम्परा भी थी।

(उ) स्वच्छन्दतावादी काव्य का विकास क्रम

तमिल और हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य का अनुशीलन करने पर विदित होता है कि १८९० से लेकर दोनों भाषाओं के साहित्यिकों ने अंग्रेजी साहित्य का अनुसरण किया है। स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ दोनों भाषाओं की कविताओं में इसी समय से प्राप्त होती हैं। अतः इनके विकास क्रम का अध्ययन करने के लिये इन्हें निम्नांकित तीन भागों में विभक्त करना आवश्यक है —

१. वृन्त काल : प्रथम उत्थान (१८९०-१९२०)

२. विकास काल: द्वितीय उत्थान (१९२१-१९५०)

३. अद्यतन काल : तृतीय उत्थान (१९५१-१९६५)

(क) तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य का विकास क्रम

(१) वृन्त काल: प्रथम उत्थान - (१८९०-१९२०):- उन्नीसवीं शती के अन्तिम दशक के पूर्व रामलिंगस्वामी (१८२३-१८७४) ने अपनी कविताओं में परम्परागत वृत्तम् (छन्दों) के साथ-साथ सरल भाषा और शैली में कीर्तना, कण्णी, कुम्मी, चिन्दु - जैसे गीतात्मक छन्दों का भी प्रयोग किया। "वाडिय पयिरै कण्ड पोदेल्लाम् वाडिनेन" अर्थात् "जब कभी भी मैं मुरझाये खेतों को देखता हूँ, तब मेरा मन अत्यन्त दुखित हो उठता है" - कहकर मुरझाये खेतों के

प्रति सहानुभूति और प्रेम की भावना को प्रकट किया। इनके काव्य-संकलन "तिरुवरुट्पा" (ईश्वर भक्ति गीत) में जाति-पाँति का विरोध करके मानवतावादी भावना की स्थापना की गयी है। लगभग इसी समय वेदनायकम् पिळ्ळै (१८२६-१८८९) ने पेण्मदिमालै, सर्व समय समरस कीर्तनै, सत्यवेद कीर्तनै (नारी उपदेश माला, सर्व धार्मिक प्रार्थना गीत, सत्यवेद गीत) जैसे ग्रन्थों की रचना की। "पेण्मदिमालै" में नारी के उत्थान पर ज़ोर दिया गया। अन्तिम दोनों रचनाओं में सुन्दर गीतों का संकलन है। शैली में स्वच्छन्दता, कविता में व्यंग्य की भावना, मानवतावादी भावना आदि इनकी प्रधान विशेषतायें हैं। यद्यपि उपरोक्त दोनों कवियों में परम्परा का अनुसरण यदा-कदा दर्शित होता है, तो भी उनमें प्राप्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ उन्हें नवीनता की ओर ले जाती हैं। अतएव इन दोनों को हम पूर्व स्वच्छन्दतावादी कवि कह सकते हैं।

आधुनिक तमिल काव्य परम्परा में सच्चे रूप में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ प्रो० सुन्दरम पिल्लै कृत "मनोन्मणीयम्" काव्य नाट्य में मिलती हैं। श्रीधर पाठक के "गुनवंत हेमन्त" की तरह, इस कृति में साधारण प्राकृतिक वस्तुयें -- जैसे जल, केंचुये आदि का स्वतंत्र चित्रण दार्शनिक धरातल पर प्रस्तुत किया गया है। इसके पूर्व के काव्यों में इस प्रकार का स्वतंत्र, स्वच्छन्द साधारण मानवेतर प्राकृतिक वस्तुओं का वर्णन तमिल काव्य क्षेत्र में दिखायी नहीं पड़ता। इस दृष्टि से यह एक नवीन प्रयत्न है। सुन्दरम पिळ्ळै ने इस कृति में परम्परा का पालन करते हुये भी इतिवृत्तात्मकता के स्थान पर प्रतीकात्मकता, नवीनता और व्यंजनात्मक शैली का प्रयोग करके अपनी स्वच्छन्द भावना का परिचय दिया है। अतएव इस कृति को प्राचीनता और नवीनता के बीच का पुल माना जाता है।[२]

---

१. Among the rich and varied forms of poetic composition extent in the Tamil Language, the dramatic type so consipicuous in Sanskrit and English does not seem to find a place. Author's Preface - P.17. 1891 March - III Edition, 1968. Mallika Publishers, Coimbatore-1.

२. प्रो० विमलानन्दन - तमिल साहित्य का इतिहास - पृ. १४८ - मीनाक्षी पुस्तक निलैयम्, मदुरै -१. प्रथम संस्करण -१९७९ - अगस्त.

इसके उपरान्त स्वच्छन्दतावादी काव्य-विकास वी.गो. सूर्यनारायण शास्त्री के कविता-संग्रह "तनिप्पासुरत्तोगै"(१८९९) में देख सकते हैं। इस संग्रह में भूमि, सागर, सूर्य, चाँद, नक्षत्र, पर्वत, नदी, बादल—जैसे प्राकृतिक वस्तुओं को लेकर ४३शीर्षकों में उनका स्वतंत्र चित्रण किया गया है। इसमें प्रेम के गीत भी हैं। इस संग्रह में चतुर्दश पदों का (सॉनेट) प्रयोग, अेक और स्वच्छन्द प्रवृत्ति का द्योतक है। इस प्रकार स्वतंत्र प्रकृति चित्रण और सॉनिटों का प्रयोग तमिल काव्य परम्परा में निश्चित रूप से नवीनता का उद्घाटन करता है।[१] इसकी महत्ता को तत्कालीन मद्रास गवर्नर ने स्वीकारा और डॉ० जी.यू. पोप ने इन कविताओं को अँग्रेजी में अनुवाद भी किया था। कुल मिलाकर "तनिप्पासुरत्तोगै" तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रवेश द्वार है।

तमिल साहित्य की आधुनिक चेतना के अग्रदूत कवि सुब्रह्मण्य भारती के आगमन (१८८२-१९२१) से स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ पल्लवित अेवं पुष्पित हुईं। यथार्थतः अपने वैयक्तिक और साहित्यिक जीवन में स्वच्छन्द भावनाओं, मानवीय भावनाओं, पुनरुत्थानवादी तथा क्रान्तिकारी विचारों, दार्शनिक सिद्धान्तों, भक्ति भावनाओं और राष्ट्रीय-सांस्कृतिक प्रवृत्तियों को लेकर वे हमारे सम्मुख प्रस्तुत होते हैं। समग्र आधुनिक तमिल साहित्य अेवं नवयुग का नेतृत्व इन्होंने ही किया है। इनकी समस्त कवितायें "भारतीयार कवितायें" में संकलित की गयी हैं। इसमें राष्ट्रीय गीत, भक्ति गीत, दार्शनिक गीत, मुक्तक गीत, विविध कवितायें, आत्मकथात्मक कवितायें, कण्णन पाट्टु (१९१७), पाँचाली शपथम् (१९१२), कुयिल पाट्टु (१९१२), गद्य कविता और नये गीत उपलब्ध होते हैं। इन समस्त कविताओं में स्वतंत्रता की लालसा, मानवतावादी स्वर, वैयक्तिकता, अनुभूति, कल्पना, विद्रोह व क्रान्ति की

---

१. ... **The whole collection gave clear indication of a new departure in Tamil Poetry ... G.U. Pope - Introduction to 'Thanippasurath Thogai' quoted by Dr. Ramalingam**

तमिल साहित्य - २०वीं शताब्दी - पृ. १८७ - तमिल पुस्तकालय, मद्रास- द्वितीय सं. १९७७ - फरवरी.

भावना, प्रेम और सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टिकोण, गीतात्मकता, लोक-भावना, स्वतंत्र प्रकृति-चित्रण, अतीत प्रेम, वेदना की मार्मिक भावना, मानवीकरण पद्धति - जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ यत्र तत्र मिल जाती हैं।

उनकी कविताओं में भारतीय समुदायम्[१] (भारतीय समाज); विडुदलै[२] (स्वतंत्रता) में विद्रोहात्मकता, मानवतावादी भावना, स्वतंत्रता, वैयक्तिकता, राजनीति, समाज में समानता, नारी-उत्थान; छत्रपति शिवाजी[३], आर्य दर्शन[४], ईसाई दर्शन[५], पाँचाली शपथम्[६] में अतीत प्रेम; नल्लदोर वीणै[७] (श्रेष्ठ वीणा), कण्णम्मा ऐन् कुळन्दै[८] (कण्णम्मा मेरी बच्ची) में अनुभूति की तीव्रता, वेदना की अति; कण्णन् तुति[९] (कण्णन स्तुति); नंदलाला[१०] में प्रकृति के कण कण में ईश्वरीय सत्ता का अनुभव; "जय भेरिगै"[११] में मानवेतर प्रकृति पर प्रेम; कण्णम्माविन् कादल्[१२] और ऍळिल्[१३] में (कण्णम्मा का प्रेम और सौन्दर्य) प्रेम की स्वच्छन्द भावना और सौन्दर्य; मनप्पेण्[१४] (मन रूपी नारी) में मानवीकरण; कर्पनैयूर्[१५] (कल्पना नगरी) में अतिकल्पना; अळगु-दैवम्[१६] (सौन्दर्य देवता) में सौन्दर्य को ही देवता के रूप में देखने की प्रवृत्ति; वेण्णिलावे[१७] (ओ चाँदनी); कालैप्पोळुदु[१८] (प्रातःकालीन समय); अन्दिप्पोळुदु (संध्या समय)[१९]; "चाँदनी-नक्षत्र-पवन"[२०]; मळै (वर्षा)[२१], ओळियुम् इरुळुम्[२२] (उजाला और अन्धेरा); ञायिरु (सूरज)[२३], में स्वतंत्र प्रकृति चित्रण; पाप्पा पाट्टु[२४] में (बाल गीत) बच्चों को माध्यम बनाकर समाज में विद्रोह और मानवतावादी भावना; कुयिल पाट्टु[२५] (कोकिला गीत) में प्राकृतिक धरातल पर स्वच्छन्द प्रेम, सुन्दर कल्पना और गीतात्मकता; पाँचाली शपथम्[२६] (द्रौपदी-प्रतिज्ञा) में संध्याकालीन वर्णन; वण्डिक्कारन् पाट्टु[२७] (गाडीवाला गीत); पुदिय कोणंगी[२८] (नये तमाशी) में मानवतावादी भावना - जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं।

---

१. से २८.: भारतीयार कवितायें - द्वितीय संस्करण - अगस्त, १९७८ - पूम्बुकार प्रसुरम् - पृ. क्रमश: ४०-४१, ५९, ५७, १६५, १७७, ३१४, ११२, २९२, १४५, १५६, १८?, १४८, १५०, १९४, १९६, १२५, १७०, २१८, २२०, २२१, २२२, २२६, ४२२, २०२, ३९६, ३५०-३५२, १९२, २१६.

प्राय: इनकी सभी कविताओं में गीतात्मकता है। देशियगीतम् और भक्ति गीतों में गीतों के प्रति अपने हृदयानुराग को भारती ने व्यक्त किया है। इसलिये भारती को ही आधुनिक तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रवर्तक कहना उचित है।

(ii) द्वितीय उत्थान : १९२१-१९५० : विकास काल :- इस काल के अन्तर्गत प्रमुख रूप से चार कवियों की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ दृष्टिगत होती हैं। वे भारतीदासन्, कविमणि देशिय विनायकम् पिळ्ळै, नामक्कल् कवि रामलिंगम् पिळ्ळै और शुद्धानन्द भारती हैं।[1]

भारतीदासन्[2] नाम से ही यह स्पष्ट है कि ये भारती के दासन हैं। आधुनिक तमिल काव्यक्षेत्र में, भारती के बाद ये ही अेक अैसे कवि हैं जिनके नाम से तमिलनाडु के साधारण जन परिचित हैं। पुरच्चिक् कवि (क्रान्तिकारी कवि) नाम से वे विख्यात् हैं। इनकी समस्त कविताओं में सर्वत्र स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिल जाती हैं। सर्वत्र "व्यक्तिवाद" की भावना फूट पड़ती है; अतअेव इसे इनकी कविता की चेतना कही जा सकती है। विद्रोह इनके काव्य का मूल है। इनकी काव्य कृतियाँ जैसे — संजीवि पर्वतत्तिन् सारल (१९३८) (संजीवी पर्वत की छाया) में प्राकृतिक धरातल पर लौकिक प्रेम और कल्पना; "पुरच्चिक् कवि" (१९३७) में विद्रोहात्मकता, प्रेम और सौन्दर्य, कल्पना की अति; कविता-संग्रह प्रथम (१९३८) भाग की अन्य कविताओं में विद्रोह व क्रांति,

---

१. भारतीदासन ने १९५० के बाद भी कविताओं की रचना की है और कविवर शुद्धानन्द भारती आज भी कविता लिखते आ रहे हैं। फिर भी इनकी गणना इसी उत्थान के अन्तर्गत की गयी है। जैसे हिन्दी के पंत और निराला १९४० के बाद भी कविताओं की रचना की है। फिर भी प्राय: उनकी गणना छायावाद के अन्तर्गत ही की जाती है। अत: इन कवियों की समस्त रचनाओं में प्राप्त स्वच्छन्द प्रवृत्तियों के विकास को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से यहीं दिखाया गया है। अलावा इसके इन सभी कवियों का जन्म १९-वीं शताब्दी में ही हुआ है। अतअेव काल गणना का ध्यान भी यहाँ रखा गया है।

२. (अगले पृष्ठ पर देखें)

मानवतावादी भावना; पाण्डियन परिसु (१९४३) (पांडियन का पुरस्कार) में प्रेम और शौर्य आदि प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। अष्कित सिरिप्पु[1] (१९४४) कविता संग्रह में (सौन्दर्य की मुस्कुराहट) "अष्कु" - सौन्दर्य ; कडल - सागर; तेन्ड्रल् (दक्षिणी पवन); काडु - वन; कुन्ड्रम् - पर्वत; आरु - नदी; तामरै - पंकज; ञायिरु - सूरज; वान् - आकाश; पुराक्कळ् - कबूतरें; किळि - तोता; इरुळ् - अन्धेरा जैसे प्राकृतिक वस्तुओं का आलम्बनात्मक वर्णन; "कादल निनैवुगळ्" (प्रेम की स्मृतियाँ) १९४४ में लौकिक प्रेम की भावना, नारी के सौन्दर्यांकन; "इसै अमुदु" (अमृत गीत) प्रथम १९४२; द्वितीय १९५२. में गीतात्मकता, प्रेम, मानवतावादी भावना; तमिल इयक्कम् (तमिलवाद की स्थापना १९४५) में व्यक्तिवादी भावना; कविता-संग्रह द्वितीय (१९४९) में प्रकृति, प्रेम, मानवतावाद, व्यक्तिवाद, लोक भावना; तृतीय (१९५५) में लौकिक प्रेम; तेन अरुवि १९५६ (मधु झरना) में प्रेम और प्रकृति; इलैञर इलक्कियम् १९५८ (नवयुवकों का साहित्य) में सरल सुबोध शैली में वर्षा, सागर, नदी, पर्वत, नक्षत्र, सूर्य, चाँद का स्वतंत्र चित्रण; कण्णकी पुरट्चिक् काप्पियम् (१९६२)

<u>पिछले पृष्ठ की पाद-टिप्पणी सं:२.</u> कुटुम्ब विळक्कु (कुटुम्ब दीप), इरुण्ड वीडु (अन्धेरा घर), कुरिंजित्तिट्टु, सेदिरूपाराद सुत्तम् इनकी अन्य काव्य रचनायें हैं। इसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है कि ये नास्तिकता पर विश्वास करनेवाले हैं। लेकिन यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि इन्होंने कविता का श्रीगणेश "शक्ति देवी" के गान से किया है। यथा -- "एंगुङ् काणिनुम् शक्तियडा - तम्बी एलु कडल अवळ् वण्णमडा।" अर्थात् "अरे भाई। जहाँ कहीं भी देखो शक्ति ही शक्ति है। उस देवी का रंग सप्त सागर का रंग है।"

---

१. लगता है कि वी.गो. सूर्यनारायण शास्त्री कृत "तनिप्पासुरत्तोगै" से प्रभावित या प्रेरणा लेकर इन्होंने इसकी रचना की हो - तमिल साहित्य २०-वीं शती पृ. १८७ - डॉ० रामलिंगम - द्वितीय संस्करण - १९७७ फरवरी - तमिल पुस्तकालयम् - इन दोनों के विषय के चुनाव में भी साम्य है -- उदा०:- सागर, पर्वत, नदी और सूरज का वर्णन दोनों कवियों की कृतियों में मिलता है।

(कण्णकी काव्य - नवीन रूप से) , मणिमेकलै वेण्बा (१९६२)(मणिमेखला काव्य) के द्वारा अतीत प्रेम की भावना; कुयिल पाडल्कळ्[1] (कोकिला गीत) में प्रकृति और कल्पना; कादल् पाडल्कळ्[2] (प्रेम की कवितायें) में लौकिक प्रेम की पराकाष्ठा जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं।

कविमणि देशिक विनायकम् पिळ्ळै कृत 'मलरुम् और मालैयुम्' (१९३८) (फूल और माला) कविता-संग्रह और "आसिय ज्योति" (१९४१) नामक खण्ड काव्य में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ बहुत स्वाभाविक रूप से मिलती हैं। इनकी प्रकृति मानव जीवन के व्यावहारिक पक्ष से सम्बन्ध रखती हैं। प्रथम उल्लेखित कविता-संग्रह में इन्होंने कौआ, मुर्गी, कुत्ता, तोता, गाय और बछड़ा, चूहों की शादी इत्यादि मानवेतर प्रकृति का चित्र अत्यन्त सरल सुबोध शैली में खींचा है। इन्होंने बसन्त, नदी, सागर, चाँद, फूल, शरत्,प्रातःकाल आदि का वर्णन किया है। "आसिय ज्योति" इनके अतीत प्रेम का सूचक है जिसमें प्रकृति, स्वच्छन्द प्रेम व सौन्दर्य और मानवतावादी भावनाओं का सुन्दर समन्वय मिलता है। नामक्कल् कवि का काव्य"अवळुम् अवनुम्"(वह स्त्री और वह पुरुष) में प्रेम की स्वच्छन्दता, सौन्दर्य और अनुभूति की तीव्रता मिलती हैं।

कविवर शुद्धानंद भारती ने बहुत सी कवितायें लिखी हैं। केवल "कवि इन्बक् कनवुकळ्" (कवि के सुख की सपना) और "पुदुमैप्पाडल्" (नवीनता से सम्बन्धित कवितायें) में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ दृष्टिगत होती हैं। उल्लिखित प्रथम संग्रह में प्रकृति, कल्पना, स्वच्छन्द प्रेम की भावना, सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टिकोण और मानवतावादी भावना मिलती हैं। "कनवेनुम् कादलिये"[3] (सपने रूपी प्रेमिका). "मिन्नल् नडनम्"[4] (बिजली का नृत्य), "कालै अमैदियिले"[5](शान्त प्रातःकाल में), "अळगुद् देवते"[6] (सौन्दर्य देवता), "तेन्रल् वरुगुदु"[7](दक्षिणी पवन

---

१. १९४७ से लेकर १९६३ तक की कविताओं का संग्रह है। प्रकाशन काल: १९७७ सितम्बर (प्रथम)

२. सन् १९५८ से लेकर १९६० तक की कविताओं का संग्रह है। प्रकाशन काल १९७७ अगस्त (प्रथम)-प्रकाशक: पूम्बुकार प्रसुरम्, मद्रास-१३.

३ से ७ तक:- कवि इन्बक् कनवुकळ् - शुद्धानन्द पुस्तकालय,प्रकाशन १९७८, मद्रास-२० क्रमशः पृ. २८, ३०, ३३, ४१, ४३.

आता है), "कूण्डुक् किळिमुम् सोलैक् कुयिलुम्"[१] (पिंजड़े में बंद तोता और वन की कोकिला) इनकी प्रमुख स्वच्छन्दवादी कवितायें हैं। उल्लिखित द्वितीय संग्रह में संकलित "पुरट्चिप्प पेयू मनिदा"[२] (हे मानव! क्रान्ति मचाओ), "पुदिय वाळ्वु"[३] (नया जीवन), "पुदु युगमे वा वा"[४] (नव युग आ आ) और "उलहिर्कु नल्लाक्षिप"[५] (विश्व के लिये सुशासन) में नवीनता का आग्रह और विद्रोह की भावनायें प्राप्त होती हैं।

(III) तृतीय उत्थान (१९५०-१९६६) अद्यतन काल:- सन् १९५० के बाद सौ से अधिक कवि तमिल काव्य परम्परा को आगे बढ़ाते आ रहे हैं। यहाँ अन्य भाषाओं के साहित्य में जैसे देखा जाता है वैसे समान्तर होकर नयी कविता की धारा भी बहती आ रही है। इस काल के कवियों की कविताओं में भी किसी न किसी रूप में रोमाण्टिक प्रवृत्तियाँ मिल जाती हैं। यहाँ जिन प्रमुख कवियों की कविताओं में सबल रोमाण्टिक प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं, उन्हीं का उल्लेख किया जाता है। इनमें कुछ कवि आज भी अति स्वच्छन्दता की ओर मुड़ते प्रतीत होते हैं। उदाहरणार्थः- सुरदा, सोलै इळन्तिरैयन् और कामराजन्।

वाणीदासन् (१९१५-१९७४) को तमिल का वर्ड्सवर्थ कहते हैं। इनकी कविता रचनायें - अेळिल ओवियम् (१९५४) (सौन्दर्य का चित्र), में सूरज, पर्वत, बादल, वन, सागर, चाँदनी, मुरझाया फूल (वाडिय मलर्) जैसे प्राकृतिक वस्तुओं का स्वतंत्र चित्रण; "इन्ब इलक्कियम्"[६] (सुखी साहित्य) में लौकिक प्रेम की भावना; "इनिक्कुम् पाट्टु" (१९६५) (मीठा गीत) में आकाश, सरिता,

---

१. कवि इन्बक् कनवुकळ् - सुदूधानन्द पुस्तकालय - प्रकाशन १९७८ - मद्रास-२० पृ. ५२.

२ से ५ तक: पुदुमैप्पाडल् - I . १९७७ - सुदूधानन्द पुस्तकालय प्रकाशन - क्रमशः पृ. ४०, ८२, ८९ व ९२.

६. "अेरोटिक पोयम्स" - अंतरंग की कविताओं का संग्रह (लौकिक प्रेम). "EROTIC POEMS"

कुत्ता, मुर्गी, तोता और बिल्ली का वर्णन; मेळिळ् कुत्तम् (१९७०) (सुन्दर छन्द) में साँझ, प्रभात, नदी, नक्षत्र, रात्रि, और झरने का वर्णन जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं।

कंबदासन् (१९१९-१९६४) की कविताओं में लोक भावना की प्रवृत्ति अधिकतर मिलती है। प्रकृति के कण-कण में साधारण मज़दूरों की स्थिति और उनके वातावरण की कल्पना करते हैं। मछुआ, रिक्शावाला और नाविक इनके प्रधान पात्र हैं। श्रीनिवास राघवन (१९०५-७४) की कविता "कालै"[1] (प्रातः काल) स्वच्छन्दतावादी कविता है। पेरियस्वामी तूरन् (१९०८) की शैली में स्वच्छन्दता है और सॉनेटों का प्रयोग भी इन्होंने किया है। सुरदा (१९२१) को रोमान्टिक कवि की संज्ञा दी गयी है।[2] इनके "तुरैमुखम्" में संकलित कविताओं में प्रकृति, लौकिक प्रेम, नवीन कल्पना, परम्परा के विरुद्ध नवीनता की ओर मुड़ना, पुरातनता के प्रति विद्रोह - जैसी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। व्यक्तिवादी भावनायें इनकी कविताओं की चेतना और जीवन हैं। इनका लौकिक प्रेम अति स्थिति पर पहुँचकर वासना का नग्न रूप धारण कर लेता है।[3] नवीन उपमाओं का प्रयोग, अभिव्यक्ति में स्वच्छन्दता, अति कल्पना का प्रयोग आदि इनकी अन्य विशेषतायें हैं। इनके अन्य कविता-संग्रह तेन मळै (मधु वर्षा) में सागर का पानी; बादल, वन, कोकिला, चाँदनी, मोर (मइल) आदि प्राकृतिक चित्र प्राप्त होते हैं। "निला"[4] (चाँदनी) में प्रयुक्त कल्पना स्वच्छन्द

---

१. डॉ० मा. रामलिंगम - तमिल साहित्य २०-वीं शती - द्वितीय - १९७७ - फरवरी - तमिल पुस्तकालय, मद्रास- पृ. २०७.
२. प्रो० विमलानन्दन - तमिल साहित्य का इतिहास - प्रथम १९७९ - अगस्त - मीनाक्षी पुस्तकालय, मदुरै-१ - पृ. ३९९.
३. ननैन्दु नायकी (भीगी नायिका) - पृ. ४८ नेयवेली वेल्लैस्वामी - पृ.५० और आगट्टुम पार्क्कलाम् (हाँ, ज़रूर देखेंगे) - पृ. ५५. - सुरदा - तुरैमुखम् (हार्बर) - द्वितीय १९७८ अप्रैल - सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास-१८.
४. "तेन मळै" - सुरदा - चतुर्थ १९७७ अगस्त - सुरदा पदिप्पकम् - पृ. २८-३०.

प्रवृत्ति का प्रतीक है। ये हिन्दी के रीतिकालीन कवियों की तरह लौकिक प्रेम का नग्न वर्णन करने में पीछे नहीं हैं। मुडियरसन् (१९२०) ने प्रकृति को माँ के रूप में मानवीकृत किया है। प्रकृति रूपी माँ इनको पालती-पोसती है। इनके कविता-संग्रह "कावियप्पावै" (कविता रूपी नारी) में सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टिकोण मिलता है। सालै इलन्तिरैयन् (१९३०) के कविता संग्रह "पूत्ततु मानुडम्" (मानवता पुष्पित हुई); उरैवीच्चु[१] में मानवतावादी भावना, व्यक्तिवादी भावना, प्राचीन के प्रति विद्रोह और नवीनता उपलब्ध होती हैं। उल्लिखित प्रथम संग्रह में संकलित "पाट्टु"[२](गीत), "आणि वेरुगळ्"[३](मूल);, "मनिदु नडै"[४] (मानव का चलना),"तिसैक्कदवम्"[५] (दिशा का दरवाजा), "नाट्टुत्तेन्रल्"[६] (ग्राम का दक्षिणी पवन), "पुदिय वीणै"[७] (नयी वीणा), ऎळु शक्ति[८] (उठो शक्ति), "मनिदन् ऎळुन्दान्"[९] (मानव उठ खड़ा हुआ), "नाम्"[१०] (हम) और द्वितीय में संकलित कवितायें "पुरट्चिक्कणक्कु"[११] (विद्रोहात्मक गणित), "नांगळ् पुल्लुक्कळ्"[१२] (हम घास हैं) आदि में भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ दृष्टिगत होती हैं।

कण्णदासन् (१९२७-८१) सन् १९७८ से अपनी मृत्यु तक तमिलनाडु सरकार के राजकवि रहे। इनकी कविताओं में लौकिक प्रेम और नवीन कल्पना, वैयक्तिकता और विद्रोह की भावनायें मिलती हैं। पट्टुक्कोट्टै कल्याणसुन्दरम् (१९३०-५९) की कविताओं में पुरातनता के प्रति विद्रोह, सामाजिक अंधविश्वासों के प्रति क्रान्ति की भावना, नवीनता - जैसी प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं।

---

१. **PROSE FLASHES:** डॉ० सालै दिल्ली विश्वविद्यालय, तमिल विभाग के प्रोफेसर हैं। (- द्वितीय - १९७७ - सालै प्रकाशन - दिल्ली) - ये साधारण जनवादी शैली को "उरैवीच्चु" की संज्ञा "प्रोस फ्लैशस" प्रदान की है। इस प्रकार की शैली को नयी कविता या वचन कविता (गद्य पद्य) कहना अनुपयुक्त समझते हैं। - पृ. ९-७. (Prose Poetry)

२. से १०. - डॉ० सालै इलन्तिरैयन् - पूत्ततु मानुडम् - पृ० क्रमशः १५, ४९, ६१, ७५, ९७, ९९, १०४, १३२, व १४१ - प्रथम, १९६८ - सालै प्रकाशन, दिल्ली-५. 'Towards an Enlightened Humanity' - I Edn.1968.

११. वही, पृ. ८९.

१२. वही, पृ. १०९ - उरैवीच्चु - सालै - द्वितीय १९७७ दिसम्बर, सालै प्रकाशन.

पल्लडम् माणिक्कम् के कविता-संग्रह "आइरम् पू" में संकलित "वरुमे मालै"[१] (संध्या आनेवाली है), "मलै"[२] (वर्षा), "मलर्गळ"[३] (फूल), "इदयमिलाद्"[४] (हृदयहीन) में स्वतंत्र प्रकृति चित्रण; "अेन् पॆट्रताय्"[५] (क्यों जन्म दिया) में विद्रोह; "अेन्न"[६] (क्या?) में विस्मय की भावना, "अळकि"[७] (सुन्दरी), "कादल्"[८] (प्रेम) में सौन्दर्य और प्रेम - जैसी प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक रूप से मिलती हैं। डॉ० ना. कामराजन् का कविता-संग्रह "करुप्पु मलर्गळ्" (काले फूल) अति स्वच्छन्दता की ओर मुड़ता है। अभिव्यक्ति में नवीनता, विद्रोहात्मक स्वर, सर्वत्र व्यक्तिवादी भावना, विषयों के चुनाव में नवीनता, लोक भावना आदि - इस संग्रह की प्रमुख विशेषतायें हैं। "वानविल"[९] (इन्द्रधनुष), "कडल्"[१०] (सागर), "वानम्पाडि"[११] (निट्टिंगेल की तरह अेक पक्षी) जैसी कविताओं में नवीन कल्पनाओं का समावेश हुआ है। "पिच्चैक्कारि"[१२] (भिखारिणी), "विलै मकळिर्"[१३] (वेश्यायें) अपनी अपनी आत्मकथायें कहती हैं। इन कविताओं में यथार्थता और विद्रोहात्मक भावनायें स्पष्ट रूप से मिलती हैं।

इस प्रकार तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य के विकास में प्रमुख रूप से वी.गो. सूर्यनारायण शास्त्री, सुब्रह्मण्य भारती, भारतीदासन, वाणिदासन्, सुरदा और नव स्वच्छन्दतावादी कवियों में डॉ० सालै इलन्तिरैयन् तथा डॉ० कामराजन् का योगदान उल्लेखनीय है।

---

१. से ८ तक - पल्लडम् माणिक्कम् - आयिरम् पू (हजार फूल) - प्रथम संस्करण १९६३ - पारि निलैयम्, मद्रास-१.-पृ.७,९,१३,१५,२५,२८,३१,३३.

९. से १३. - ना. कामराजन् - करुप्पु मलर्कळ् (कवितायें और गद्य-पद्य) चतुर्थ संस्करण १९८० मई - तमिल पुस्तकालय, मद्रास-५ - पृष्ठ क्रमश: ५२-५३, ५४-५५, ५८-५९, ३२-३३, ८८-८९.

(ख) <u>हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य का विकास क्रम</u>

(1) <u>प्रथम उत्थान : सन् १८९०-१९२० तक काल</u>:- हिन्दी साहित्य के इतिहास में इस प्रथम उत्थान का तात्पर्य भारतेन्दु और द्विवेदी युग से है। असल में आधुनिक युग में स्वच्छन्दतावाद के बीज भारतेन्दु युग में भारतेन्दु की कृतियों में मिलते हैं। इनकी कृतियों में "प्रेम सरोवर" (१८७३), "प्रेमाश्रु वर्षन" (१८७३), "प्रेममाधुरी" (१८७५), "प्रेम तरंग" (१८७७) एवं "प्रेम प्रलाप" (१८७७) को उदाहरण स्वरूप ले सकते हैं। उसके बाद ठाकुर जगमोहन सिंह ने स्वयं हिन्दी काव्य में एक नूतन विधान का आभास दिया था।[१] इतना होते हुये भी श्रीधर पाठक को ही हिन्दी काव्य क्षेत्र में प्रथम स्वच्छन्दतावादी कवि की संज्ञा प्रदान की गयी है और सच्चे स्वच्छन्दतावाद (रोमाण्टिज्म) का प्रवर्तक भी ठहराया गया है। क्योंकि ये "गुनवंत हेमन्त" में गाँव में उपजने वाली मूली, मटर जैसी वस्तुओं को प्रेम से सामने लाये, जो परम्परागत ऋतुवर्णनों के भीतर नहीं दिखायी पड़ती थी।[२]

श्रीधर पाठक (सं १९१६-१९८५ वि.) कृत एकान्तवासी योगी (१८८६), उजड़ ग्राम (१८८९), श्रान्त पथिक (१९०२), काश्मीर की सुषमा (१९०४) हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रथम चार सीढ़ियाँ हैं। लेकिन एकान्तवासी योगी में जो स्वच्छन्दवादिता है वह उजड़ ग्राम में नहीं, और उजड़ ग्राम में जो स्वच्छन्दवादिता है वह श्रान्त पथिक में नहीं। अतः पाठक की प्रथम कृति स्वच्छन्दतावादी काव्य का अग्रदूत है।[३] इनकी "व्योम बाला" कविता स्वच्छन्द

---

१. रामचन्द्र शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ. ४०४ - काशी नागरी प्रचारिणी सभा, अठारहवाँ पुनर्मुद्रण - संवत् २०३५ संशोधित एवं प्रवर्धित।

२. वही, पृ. ४१०.

३. डॉ० रामचन्द्र मिश्र - श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ. २१०-१, १९५९ - रणजीत प्रिन्टर्स व पब्लिशर्स, चाँदनी चौक, दिल्ली.

प्रवृत्ति का अेक और उत्कृष्ट नमूना है। पाठक जी मुख्यतया प्रकृति के उपासक थे। इनके छन्द, पद विन्यास और वाक्य विन्यास में नवीनता मिलती है। ये भारतेन्दु युग के साहित्यिक लिबरेल थे।[१] क्योंकि साहित्य में उदारता स्वच्छन्दता की ओर मुड़ती है। इसके बाद गुप्त जी के काव्य "झंकार" (१९१४-१५) में रहस्यवादात्मक गीत, "पंचवटी" में प्राकृतिक धरातल पर स्वाभाविक स्वच्छन्दतावाद और "किसान" (१९१५) में मानवतावादी भावना देख सकते हैं। गया प्रसाद शुक्ल सनेही का "कृषक क्रन्दन" (१९११) और सियारामशरण गुप्त की कृति "अनाथ" (१९१७) में हम मानवतावादी स्वर सुन सकते हैं। तदुपरान्त रामनरेश त्रिपाठी "स्वच्छन्दतावाद के प्रकृत पथ पर दिखाई पड़ते हैं। ये छाया-वादी काव्य के निकटतम पूर्ववर्ती है। इनके तीनों खण्ड काव्य "मिलन" (१९१७), "पथिक" (१९२०), "स्वप्न" (१९२९) हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य के विकास को आगे बढ़ाते हैं। लेकिन स्वच्छन्दतावाद का मूल तत्व विद्रोह इनके काव्य में पुष्पित न हो पाया। इसी काल में रूपनारायण पाण्डेय ने प्रकृति के "दलित कुसुम" और "वन विहंगम" के लिये आँसू बहाकर अपनी वैयक्तिक करुणा की भावना को व्यक्त किया। मुकुटधर पाण्डेय की कवितायें आँसू, नमक की डली, उद्‌गार में वैयक्तिकता की भावना मिलती है। श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, रूप नारायण पाण्डेय और मुकुटधर पाण्डेय को "हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य के वृन्त" कहना अनुपयुक्त न होगा।

इसी उत्थान काल में गुरुभक्त सिंह "भक्त" और प्रसाद की आरंभिक काव्य कृतियों का उल्लेख करना अत्यन्त आवश्यक है। गुरुभक्त सिंह "भक्त" ने "प्रकृति संग, खेल की कुछ ठानी"। इन की प्रवृत्ति बराबर नूतन पद्धति की ओर चलती रही। इन्होंने सरस सुमन (१९२५) में पवन, भानु, चपला, जुगनू, बसन्ती, कुसुम कुंज, वंशी ध्वनि, वनश्री के प्रति अपने हृदयानुराग को व्यक्त किया है। प्रसाद ने

१. शान्तिप्रिय द्विवेदी - युग और साहित्य - तृतीय - १९५८ - पृ.१७०. इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद.

"प्रेम पथिक" (१९१३) और "करुणालय" (१९१३) में तुकान्तहीन हिन्दी छंदों का प्रयोग किया है। उनके "महाराणा का महत्व" में अतीत प्रेम की भावना मिलती है।

उनके कानन कुसुम[1] में संकलित कविताओं में स्वतंत्र प्रकृति चित्रण, अनुभूति की तीव्रता, स्वच्छन्द प्रेम, सौन्दर्य के प्रति नवीन दृष्टिकोण, अतीत प्रेम - जैसी प्रवृत्तियों का सुन्दर संगम हुआ है। महा क्रीड़ा, प्रथम प्रभात, नव बसन्त, रजनी गन्धा, सरोज, कोकिल, सौन्दर्य, हृदय वेदना, प्रियतम, चित्रकूट, भरत, कुरुक्षेत्र, श्री कृष्ण जयन्ती[2] आदि रचनायें इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं। इनकी अन्य कृति "झरना"[3](१९१८) की कवितायें - जैसे बसन्त, किरण, बिखरा हुआ प्रेम, प्रियतम, निवेदन, उपेक्षा करना, खोले ठहरो। आदि इस प्रथम उत्थान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान हैं। कुल मिलाकर झरना स्वच्छन्दतावाद के आगमन की सूचना है और हिन्दी की नयी रोमानी प्रवृत्ति का उद्घोष भी।[4] इस प्रकार प्रसाद की रचनायें प्रारंभ से ही स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख दिखाई देती हैं।

इस उत्थान के अन्तर्गत रामनरेश त्रिपाठी का'स्वप्न'(१९२९); भक्त का "सरस सुमन" (१९२५) रखे गये हैं। इसके प्रमुख दो कारण हैं। ओक इन दोनों रचनाओं में स्वच्छन्दतावाद का वृन्त ही दीख पड़ता है अर्थात् विकसित न हो पाया। दूसरा प्रमुखता का सिद्धान्त। इन दोनों कवियों का नाम छायावाद युगकेपूर्व ही सामान्य रूप से लिया जाता है। इसके अतिरिक्त रचना और प्रकाशन तिथियों की समस्या भी उठती है। उदाहरणार्थ:-"जुही की कली की

---

१. सन् १९०९-१९१७ तक की स्फुट कविताओं का संग्रह - प्रथम संस्करण १९१३ - तृतीय सन् १९२९)
२. ये कवितायें - कानन कुसुम - आठवाँ संस्करण - सं. २०३३ वि. - भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद में संकलित।
३. झरना - प्रथम संस्करण १९७१ - प्रसाद मन्दिर संस्करण - प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी.
४. डॉ० प्रेमशंकर - हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - प्रथम संस्करण - १९७४ - मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल - पृ. १९५.

रचना सन् १९१९ में हुई थी, फिर भी क्रमिक रूप से "परिमल" में संकलित होकर सन् १९३० में वह प्रकाशित हुई। कवि दिनकर की काव्य कृतियाँ रेणुका (१९३५), हुंकार (१९३८), रसवन्ती (१९४०) छायावाद कालीन होते हुये भी - छायावाद के बाद की गणना में आती हैं। अतः इस प्रकार कवियों और उनकी रचनाओं का स्थान निर्णय करने में काल की अपेक्षा, कवियों की प्रमुखता और उनमें प्राप्त प्रवृत्तियाँ अधिकतर काम आती हैं। इन सबके उपर अध्ययन एवं विवेचन की सुविधा की ओर भी ध्यान देना पड़ता है। इसलिये प्रवृत्तियों की प्रकृति, कवियों की प्रमुखता, अध्ययन में क्रमिकता आदि इस निर्धारण में महत्वपूर्ण रोल अदा करती हैं। प्रसाद की आरंभिक रचनाओं में स्वच्छन्दतावाद की सुन्त स्थिति ही मिलती है न कि विकास। अतः इनकी आरंभिक कृतियों का उल्लेख यहाँ किया गया है।

(ii) <u>द्वितीय उत्थान : १९२०-१९५० : विकास काल</u>:- हिन्दी साहित्य के इतिहास में सन् १९२०-४० तक के काल को "छायावाद" की संज्ञा दी गयी है। इस धारा का संपूर्ण विच्छेद सन् १९४० को हो जाता है।[१] लेकिन स्वच्छन्दतावाद का विच्छेद या तिरोभाव का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, भले ही स्वच्छन्दतावाद की चरम परिणति छायावादी काव्य में उपलब्ध होती हो। अतः कुल मिलाकर साहित्य के इतिहास में संबोधित या निर्धारित किसी काल अथवा कवि विशेष का नामकरण प्रस्तुत न करके, प्रमुख कवि तथा उनकी प्रवृत्तियों के आधार पर काल का निर्धारण और नामकरण प्रस्तुत किया गया है। इस उत्थान काल में प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी वर्मा स्वच्छन्दतावादी काव्य को चरमपरिणति की ओर ले चलते हैं। प्रसाद ने "आँसू" (१९२५) में अपनी घनीभूत पीड़ा को अत्यन्त वेदना भरे शब्दों में व्यक्त किया है। वैयक्तिकता, प्रेम और विरहानुभूति इस कृति की प्रधान विशेषतायें हैं।

---

१. तार सप्तक - सं० अज्ञेय - पृ. १९३ - गिरजाकुमार माथुर के वक्तव्य से...। तृतीय संस्करण - १९७० - भारतीय ज्ञानपीठ, प्रकाशन.

स्वच्छन्द प्रेम, प्रकृति प्रेम, सौन्दर्य, कल्पना, गीतात्मकता, रहस्यात्मकता, अतीत प्रेम का सुन्दर समन्वय "लहर" (१९३३) में मिलता है। इसमें हम प्रसादजी को वर्तमान और अतीत जीवन की प्रकृत ठोस भूमि पर अपनी कल्पना ठहराने का कुछ प्रयत्न करते पाते हैं।[१] अत्यन्त स्वाभाविक रूप से स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का समावेश कामायनी (१९३५) में हुआ है। बृहत्रयी में पंत को स्वच्छन्दतावादी काव्य के प्रतिनिधि कवि[२] ठहराने का प्रयत्न किया गया है, भले ही इसमें निराला की विद्रोही भावना विरले ही मिलती हो। उच्छ्वास (१९२०), ग्रंथि (१९२०), वीणा (१९२७), पल्लव (१९२८), गुंजन (१९३२), ज्योत्स्ना (१९३४) में कल्पना, प्रकृति, प्रेम और सौन्दर्य जैसी सबल स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं। प्रकृति का मानवीकरण इनकी कविताओं की प्रधान विशेषता है। इनके "पल्लव प्रवेश" को स्वच्छन्दतावादी काव्य का घोषणा पत्र माना जाता है। युगान्त (१९३६), युगवाणी (१९३९), ग्राम्या (१९४०) में मानवतावाद ने प्रकृति का स्थान ले लिया है। लोकायतन (१९६४) में प्रकृति और मानवतावादी भावना का सुन्दर समन्वय मिलता है। इस प्रकार पंत की रचनायें समग्र रूप से स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रवृत्तियों का सुन्दर प्रकाशन है।

इसके बाद हिन्दी के विद्रोही कवि निराला की कवितायें स्वच्छन्दतावादी काव्य परम्परा में नवीनता को लेकर आती हैं। अनामिका (प्राचीन १९२३; नवीन १९३७), परिमल (१९३०), गीतिका (१९३६), तुलसीदास (१९३८) में स्वच्छन्द प्रवृत्तियाँ सर्वत्र मिलती हैं। विद्रोह, वैयक्तिकता, नवीनता और मानवतावाद - इनके काव्य की चेतना और जीवन हैं। अर्चना (१९५०), आराधना (१९५३), गीतिगुंज (१९५४) की कविताओं में स्वाभाविक

१. शुक्ल - हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ. ४६४ - ना.प्र. सभा, संवत् २०३५ - अठारहवाँ पुनर्मुद्रण।
२. डॉ० पी. आदेश्वर राव - स्वच्छन्दतावादी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन - पृ. ९८ - प्रथम १९७२ - प्रगति प्रकाशन, आगरा-३.

रूप से स्वच्छन्दतावाद का विकास हुआ है। गीति-गुंज में संकलित "पथ"[१] शीर्षक कविता में इनकी स्वच्छन्दता की अमिट छाप है। विकास काल में महादेवी वर्मा का नाम सादर लिया जाता है। नीहार (१९३०), रश्मि (१९३२), नीरजा (१९३५), सांध्य गीत (१९३६) और दीपशिखा (१९४२) में संग्रहीत उनकी कविताओं में व्यक्तिवादी भावना, अति वेदना, रहस्यात्मकता, गीतात्मकता, आत्मानुभूति की तीव्रता, प्रकृति में वेदना का अनुभव, कल्पना की अतिशयता को देख सकते हैं। कुल मिलाकर इनकी कविता में"ओक निरामिष रोमांस"[२] मिलता है।

संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि उपरोक्त चार प्रमुख कवियों ने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य को जो आलोकमय रूप दिया, वह हिन्दी साहित्य के अन्य किसी भी काल में नहीं मिलता।

(III) तृतीय उत्थान काल : १९५०-१९६५ - अद्यतन काल:- इस उत्थान के अन्तर्गत आनेवाले कवियों तथा उनकी कविताओं की रचना सन् १९४० के पूर्व होने पर भी सामान्य रूप से इनका नाम छायावाद युग के बाद ही लिया जाता है। अतः इन्हें"गौण कवि" का संज्ञा देना उपयुक्त होगा। क्योंकि गौण कवि वे हैं जो युग विशेष या प्रवृत्ति विशेष के पक्षधर होकर भी अपने क्षेत्र के कवियों के बीच प्रथम पंक्ति के अधिकारी न हो पाते, अथवा मौलिक उद्भावना करने के बदले अपने गोत्र के शलाकापुरुषों का अनुकरण, अनुगमन करते रह जाते हैं। यहाँ गौण शब्द अन्य का वाचक है, अमहत्वपूर्ण या कम महत्व-पूर्ण का नहीं।[३] अतः इस उत्थान काल के अन्तर्गत बालकृष्ण शर्मा नवीन,

---

१. निराला - गीत-गुंज - पृ. ५८-५९. युवावस्था की रचना है। मुक्त छन्द का प्रयोग किया गया है। इसे गीत नहीं कह सकते। यह कविता, समन्वय में प्रकाशित हुई थी। द्वितीय संस्करण परिवर्द्धित संवत् २०१९ - हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, ज्ञानवापी, वाराणसी.

२. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - पृ. २३९ - प्रथम संस्करण - सं.२०३८ वि. उत्कर्ष काल - १० भाग - काशी ना.प्र. सभा, वाराणसी.

३. हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - १० भाग - प्रथम सं. २०२८ - पृ. ३४१ व ९५६.

माखनलाल चतुर्वेदी, भगवतीचरण वर्मा, रामकुमार वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, नरेन्द्र शर्मा, हरिवंशराय बच्चन, रामेश्वर शुक्ल "अंचल", जानकी वल्लभ शास्त्री, शिवमंगल सुमन, अज्ञेय, गिरजाकुमार माथुर, केदारनाथ अग्रवाल जैसे प्रमुख कवियों का नाम उल्लेखनीय है। इस काल में व्यक्तिवाद, विद्रोह, मानवतावाद, लौकिक प्रेम, निराशा - जैसी प्रवृत्तियाँ प्रमुख रूप में पायी जाती हैं।

"नवीन" जी की कविताओं में रहस्यात्मकता, क्रान्ति स्वर, नवीनता, वैयक्तिक पीड़ा और मानवतावादी भावना मिलती हैं। "क्वासी" इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। अतः इन्हें स्वच्छन्दतावादी कवि ठहराया गया है।[१] माखनलाल चतुर्वेदी कृत "हिम किरीटनी" के महत्व को हिन्दी की रोमाण्टिक कविता के इतिहास में कोई अस्वीकार नहीं कर सकता।[२] इनकी कवितायें राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना और वैयक्तिक पीड़ा से ओतप्रोत हैं। भगवतीचरण वर्मा कृत 'मधु कण', 'प्रेम संगीत', 'मानव' में प्रकृति, प्रेम, क्रान्ति, वेदनामयी अनुभूतियों में वैयक्तिक भावना, मानवतावाद, अतीत प्रेम - जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं। रामकुमार वर्मा प्रकृति में वेदना और नश्वरता का

---

१. (अ) काव्य के क्षेत्र में नवीन स्वच्छन्दतावादी हैं - भाषा, भाव, छन्द सब में स्वच्छन्दता के प्रेमी हैं। - रामबिहारी मिश्र व भगीरथ मिश्र - पृ.२०२.

(आ) इन कविताओं में सच्चे रोमाण्टिक कवि की भाँति वे कल्पना के पंख फैलाकर भाव के आकाश में उड़ान लेते हैं। - हजारी प्रसाद द्विवेदी-पृ.२५३.

(इ) नवीनजी का काव्य प्रायः रोमांसवादी है - डॉ० मुंशी राम - पृ.४४८. डॉ० लक्ष्मीनारायण दुबे - बालकृष्ण शर्मा नवीन व्यक्ति एवं काव्य हिन्दुस्तानी अकेडमी - इलाहाबाद - प्रथम - १९६४.

(ई) स्वयं शुक्ल जी ने इन्हें स्वच्छन्द धारा के अन्तर्गत रखा है। -पृ.४८८. हिन्दी साहित्य का इतिहास - ना.प्र. सभा, अठारहवाँ सं.२०३५ वि. ना.प्र. सभा - प्रवर्धित संशोधित।
दिनकर, माखनलाल, बच्चन को भी इसके अन्तर्गत रखा है।

२. विचार विश्लेषण - डॉ० नगेन्द्र - तृतीय संस्करण - १९६६ दिसम्बर, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली - पृ. १५१.

अनुभव करते हैं। "गजरे तारों वाले" में संकलित रूपराशि, चित्र रेखा, निशीथ, चन्द्रकिरण जैसी कविताओं में स्वाभाविक रूप से स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। "आकाश गंगा" की "प्रकृति के प्रतिबिंब में मानव। अरे। साकार बन" पंक्तियाँ और "अेकल०य" का०य इनके मानवतावादी पक्ष को स्पष्ट करते हैं। "रसवन्ती" में प्रेम और सौन्दर्य. "हुंकार" में संकलित "विपथगा" में क्रान्ति की तीव्रता, "कुरुक्षेत्र" में मानवतावाद, "उर्वशी" में प्रेम, प्रकृति, कल्पना और सौन्दर्य का प्रतिपादन करके बसतन रोमांटिक का०य के विकास में दिनकर ने अेक महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है। नरेन्द्र शर्मा ने "प्रवासी के गीत" में निराशा, वेदना और लौकिक प्रेम, "पलाश बन" में चाँदनी, रात, नीम और खुली हवा का चित्रण, "कदली बन" में चाँद, सितारे, बादल और चाँदनी का स्वतंत्र प्रकृति चित्रण, हाल ही में प्रकाशित "मनोकामिनी" का०य में प्रेम, प्रकृति और प्रतीकों का सुन्दर संगम प्रस्तुत करके हिन्दी स्वच्छन्दतावादी का०य को आगे बढ़ाया है। "बच्चन" के विषय हैं प्रेम और सौन्दर्य। इनकी अभि०यक्ति और शैली में स्वच्छन्दता है। "निशा निमंत्रण" और "अेकान्त संगीत" में स्वाभाविक स्वच्छन्दता है।"लहरों का निमंत्रण" क्रान्तिकारी स्वच्छन्दतावाद के अधिकनिकट है। ०यक्तिवाद और मानवतावाद[1] इनकी कविताओं के मूल में हैं। "हालावाद" में आध्यात्मिक विद्रोह छिपा हुआ है। नयी भाषा, नई अभि-०यंजना, नये किस्म की अनुभूति, इनका सब कुछ नया ही नया है।[2] का०य में नया आन्दोलन पहले अंचल में[3] प्रतीत होता है। ये पंत की वीणा, गुंजन और

---

१. मानवता की उपेक्षा करके कोई भी महत्वपूर्ण कार्य नहीं किया जा सकता। जीवित जागृत मनुष्य से, विचार भावों के आदान-प्रदान से अधिक आवश्यक क्या हो सकता है। कविता लिखना? जी नहीं। कविता इसलिये लिखी जाती है कि मनुष्य, मनुष्य के निकट जा सके। कविता अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारकर नहीं चल सकती। - साहित्य संदेश - बच्चन विशेषांक - नवम्बर-दिसम्बर, १९६७ - पृ. २३१ - मानवतावादी कवि बच्चन (डॉ० बच्चन से लिये इन्टर०यू के आलोक में) श्री दिनकर सोनवलकर।

२. नंद दुलारे वाजपेयी - हिन्दी साहित्य २०-वीं शताब्दी - पृ.७ - लोकभारती प्रकाशन, नवीन संस्करण - १९६३.

३. वही, पृ. २७.

महादेवी वर्मा से प्रभावित हैं। शेली, कीट्स, बायरन, रोसेट्टी को महत्व देकर इन्होंने रोमाण्टिक अनुभूति को संवारा। "मधुलिका", "अपराजिता", "किरण बेला", "करील", "लाल चूनर", "विराम चिह्न" में इनकी स्वच्छन्दतावादी भावनाओं को देख सकते हैं। इनमें प्रधान रूप से वैयक्तिकता, और तीव्र विद्रोहात्मकता मिलती हैं। बाद की कृतियों में ये कल्पना से अनुभूति की ओर अग्रसर हुये हैं। "लघु त्रयी"[१] में इनकी गणना की जाती है। जानकी वल्लभ शास्त्री कृत 'तीर तरंग से', 'शिप्रा से', 'सुमित्रा की शेष स्मृति', 'अवंतिका' में स्वाभाविक रूप से रोमाण्टिक प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। अनुभूति की तीव्रता, इनकी प्रधान विशेषता है। "चाणक्य", "कर्ण", "अश्वत्थामा" जैसी कवितायें इनके अतीत प्रेम के प्रतीक हैं। "कर्ण" में मानवतावादी भावना झलकती है। "लघु त्रयी" में शिवमंगल सुमन की कविताओं में विद्रोहात्मकता तीव्र रूप में प्राप्त होती है। इनके "हिल्लोल" में वैयक्तिक अनुभूति, गीतात्मकता, "प्रलय सृजन", "विश्वास बढ़ता ही गया" में प्रेम की भावनायेंऔर नवीनता मिलती हैं। इनकी प्रवृत्तियाँ मूलतः रोमाण्टिक हैं। "अंचल" के साहित्य की मूल चेतना विद्रोह ही है। "भग्न दूत", "चिन्ता" में रोमाण्टिक भावनायें हैं। गिरिजाकुमार माथुर की कवितायें 'मंजीर', 'नाश और निर्माण' (पूर्वार्द्ध) में प्रेम, कल्पना और गीतात्मकता मिलती हैं। ये सभी रोमानी आभा के रमणीय उपकरण हैं।[२] केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में ग्राम्य प्रकृति का यथार्थ वर्णन मिलता है। "बसन्ती हवा" प्रकृति की उन्मुक्त स्वच्छन्दतावादी कविता है। इनकी कल्पना और प्रगीतात्मकता रूमानी प्रवृत्ति को प्रमाणित करती हैं। उदाहरणः"ओस की बूँद कहती हैं।"[३]

---

१. आज के लोकप्रिय कवि - "अंचल" - पद्मसिंह शर्मा कमलेश - प्रथम १९६० - राजपाल ऍण्ड संस - लघुत्रयी "अंचल, नरेन्द्र, सुमन।"
२. नगेन्द्र - आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ - पंचम १९७९ - नेशनल पब्लिशिंग हाउस - पृ. ११२.
३. कविता और कविता - सं. इन्द्रनाथ मदान - प्रथम १९६७ - राजकमल - पृ. २४१.

इस प्रकार उपरोक्त कवियों ने आधुनिक हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य को क्रमिक रूप से विकसित किया है और आज भी कई कवि लोग नयी स्थानी प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख होते आ रहे हैं।

(ग) तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य का विकास क्रम : तुलनात्मक अध्ययन

तमिल और हिन्दी की आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्यधाराओं के विकास क्रमों का अध्ययन करके उनकी तुलना करने से कई महत्वपूर्ण समानतायें और असमानतायें दृष्टिगत होती हैं। कुछ विशेष कारणों से दोनों का श्रीगणेश सन् १८९० से होता है। दोनों भाषाओं के साहित्यिकों की वैयक्तिक विभिन्नता के कारण, उनकी अनुभूतियाँ और कल्पनाओं में भिन्नता आना स्वाभाविक है। अतः स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति में भी भिन्नता दीख पड़ती है।

समानतायें

१. तमिल और हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी काव्य धाराओं का प्रारंभ लगभग अेक ही समय में अंग्रेज़ी कविताओं के अनुकरण, अनुसरण और अनुवाद के द्वारा हुआ। उदा०:- १. मनोन्मणीयम्, २. अेकान्तवासी योगी। अतः दोनों भाषाओं के साहित्यिकों पर प्रारंभ में अंग्रेज़ी का स्पष्ट प्रभाव पड़ा है।

२. युग की माँग के अनुसार दोनों साहित्यिकों के विषय चुनाव अभिव्यक्ति की प्रणालियाँ और प्रवृत्तियाँ अेकदम बदल गयीं।

३. कवियों की कविताओं में उदारता की भावना, मानवतावादी भावना, और साधारण लोगों के प्रति सहानुभूति रहीं; परन्तु उनका निरीक्षण बहुत गहरा रहा।

४. दोनों भाषाओं के कवि भाव अेवं कलागत रूढियों से मुक्त हुये। उनकी विचारधारा में विद्रोह का स्वर प्रधान रहा।

५. प्रेम में लौकिकता की प्रधानता रही। प्रेम की भावनाओं को व्यक्त करने के लिये प्रकृति का सहारा लिया गया। स्वच्छन्द मानसिक, आध्यात्मिक प्रेम का विकास दोनों भाषाओं के इने गिने कवियों में उपलब्ध होता है। उदा०:- भारती, कविमणि और प्रसाद।

६. सौन्दर्य के प्रति दोनों भाषाओं के कवियों का दृष्टिकोण नवीन रहा।

७. स्वच्छन्दतावाद का आधार दोनों काव्य धाराओं में प्रकृति ही रही। स्वतंत्र प्रकृति चित्रण दोनों की कविताओं में मिलता है। विषय के चुनाव में भी समानतायें हैं। उदाहरणार्थ - सागर, बादल, प्रभात, सन्ध्या, फूल, नक्षत्र, चाँदनी, इत्यादि।

८. दोनों में अतीत प्रेम की भावना मिलती है।

९. दोनों ने सुन्दर गीतों का प्रयोग किया है।

१०. शैली की दृष्टि से स्वच्छन्द अर्थात् मुक्त छन्द; ब्लैंक वर्स (अतुकान्त छन्द) और सॉनिटों (चतुर्दश पद) का प्रयोग दोनों में मिलता है। मुक्तक कविताओं की प्रधानता दोनों में मिलती हैं।

असमानतायें

१. हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों पर अंग्रेज़ी का रोमान्टिक साहित्य और बँगला का स्पष्ट प्रभाव है। लेकिन तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों पर अंग्रेज़ी और बँगला का प्रभाव कम है। केवल भारती इसका अपवाद हैं। अन्य तमिल कवि कदाचित् ही बँगला जानते थे।

२. हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने पौराणिक कथाओं से प्रेरणा लेकर उनमें आधुनिकता का रंग भर दिया। तमिल कवियों में यह प्रवृत्ति बहुत कम मिलती है। भारती कृत "पाँचाली शपथम्" और भारतीदासन् के "पुरक्षि कवि" इसके अपवाद हैं।

३. प्रकृति वर्णन में भाषा की सरलता, सुबोधता, स्पष्टता जितनी तमिल कवियों की कविताओं में है उतनी हिन्दी की कविताओं में नहीं है। तमिल के लोरी गीतों में प्रकृति नाचती है। तमिल की प्रकृति जीवन के व्यावहारिक पक्ष को लेकर चलती है। अर्थात् कुत्ता, मुर्गी, गाय, कौआ, तोता, चूहा, चींटी[1] आदि का वर्णन मिलता है। हिन्दी क्षेत्र में इस प्रकार के वर्णन का अभाव है। प्रकृति के कोमल एवं रुद्र रूप हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों में मिलते हैं। लेकिन तमिल में प्रकृति का रुद्र रूप बहुत कम है।

४. तमिल कवियों ने पग-पग पर अपने तमिल प्रेम को व्यक्त किया है। इस प्रकार भाषा प्रेम की विलक्षण प्रवृत्ति हिन्दी काव्य क्षेत्र में विरले ही मिलती है।

५. रहस्यात्मकता की भावना तमिल की अपेक्षा हिन्दी में अधिक है। अलौकिक पक्ष से अधिक लौकिक पक्ष की ओर तमिल कवियों का ध्यान रहा।

६. सामाजिक भावना की प्रवृत्ति हिन्दी कवियों की तुलना में तमिल कवियों में अधिक मुखर उठी है। विशेषकर भारतीदासन् की कविताओं में सामाजिक सुधार संबंधित भावनायें मिलती हैं।

७. आधुनिक हिन्दी काव्य क्षेत्र में स्वच्छन्दतावाद को लेकर जो वाद-विवाद हुआ और होते आ रहे हैं, वे तमिल के क्षेत्र में नहीं है। छायावाद, रहस्यवाद, प्रतीकवाद जैसी धारायें भी यहाँ नहीं है। तमिल काव्य क्षेत्र में स्वच्छन्दतावाद नामक कोई अलग धारा नहीं है। लेकिन ध्यान देने की बात है कि स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ यहाँ की कविताओं में मिलती हैं।

८. हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में प्रबन्धात्मकता की प्रवृत्ति मिलती है। तमिल में दीर्घ कविताओं की रचना ही अधिकतर हुई है। हिन्दी में दीर्घ कविताओं की रचना और तमिल में प्रबन्धात्मक रचनायें बहुत कम मिलती हैं।

---

१. केवल सुमित्रानन्दन पंत ने "युगवाणी" में चींटी का वर्णन किया है। -पृ.२७. चतुर्थ संस्करण - १९५९ - राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली.

९. हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों को भाषा-विषयक अर्थात् ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली का प्रयोग करने में क्रान्ति मचानी पड़ी। लेकिन तमिल काव्य क्षेत्र में इस प्रकार की भाषा समस्यायें नहीं उठीं। क्योंकि तमिल भाषा अपनी मिठास के लिये प्रसिद्ध है और यह लगभग दो हजार वर्षों के पहले ही सुन्दर अेवं सुदृढ बन गयी थीं और लगातार काव्य भाषा के रूप में चलती आ रही है।

१०. तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में हिन्दी की अपेक्षा परम्परागत छन्दों का प्रयोग अधिक हुआ है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अतुकान्त अेवं मुक्त छन्दों का प्रयोग प्रमुख रूप से किया है। तमिल में गद्य-कविता (वसन कवितै[१]) का प्रयोग है। लेकिन हिन्दी में इसका प्रयोग अपेक्षाकृत कम हुआ है।

उदाहरण:- १. भारतीयार कवितायें - पृ. ४३०-४५८.

वसन कवितै (i) इन्बम् अर्थात् सुख।

(ii) पुकळ् अर्थात् यश के अन्तर्गत सूर्य, अग्नि, पवन, सागर जैसे प्राकृतिक चित्रों का वर्णन मिलता है। इसी के अन्तर्गत जगत चित्तिरम् (जगत-चित्र) और विडुदलै (स्वतंत्रता) जैसे लघु नाटकों को भी कवि भारती ने सम्मिलित किया है।

द्वितीय संस्करण १९७८ अगस्त, पूम्पुहार प्रसुरम्, मद्रास.

---

१. PROSE-POEM: Composition able to have any or all features of the lyric, except that it is put on the page-though not conceived of - as prose. It differs from Poetic Prose in that it is short and compact, from free versein that it has no line breaks, from a shorter prose passage in that, it has usually, more pronounced rhythm, sonorous effects, imagery and density of expression. It may contain ever inner rhyme and meterial runs. Its length, generally is from half a page (one or two paragraphs) to three or four pages. i.e., that of the average lyrical poem. If it is any longer, the tension and impactare forfeited and it becomes more or less poetic-prose. - ENCYCLOPEADIA OF POETRY and POETICS - P.664.

२. भारतीदासन कवितायें - द्वितीय भाग में संकलित 'कादल वाऴ्वु' (प्रेममय जीवन) वसन कविता है। पृ. २५-३०. आठवाँ संस्करण १९७७ दिसम्बर, पारि निलैयम, मद्रास.

आधुनिक युग में पे. तूरन और कण्णदासन ने इस प्रकार का प्रयोग सफलता-पूर्वक किया है। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि "वसन कविता" नयी कविता नहीं है। वसन कविता का आकार "कुछ" बड़ा अर्थात् लंबा होता है। नयी कविता प्रायः संक्षिप्त होती है। वसन कविता में प्रायः अेक प्रकार की गीतात्मकता उपलब्ध होती है। लेकिन नयी कविता में अेक प्रकार की ध्वन्यात्मकता के रहते हुये भी गीतात्मकता का अभाव है। दोनों में छन्दों का बन्धन नहीं है, तुकान्त का प्रश्न नहीं है और गद्यात्मकता की प्रधानता रहती है। दूसरे शब्दों में काव्यात्मक ढंग से लिखे हुये गद्य को वसन कविता की संज्ञा दी जा सकती है।

-०-

तृतीय अध्याय

तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

(अ) भावगत प्रवृत्तियाँ

इस शोध कार्य का प्रधान लक्ष्य प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालना है। प्रकृति, प्रेम, सौन्दर्य, कल्पना, अनुभूति, व्यक्तिवाद, नवीनता, विद्रोह, मानववाद, जैसी सबल प्रवृत्तियों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुये स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का तात्विक विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

प्रकृति चित्रण

"प्रकृति और मानव" का विशाल कानवास कवि का ध्येय रहता है।[1] प्रकृति और मानवतावादी भावना विशेष रूप से स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं। प्रकृति स्वच्छन्दतावाद का केन्द्र-बिन्दु है। जिस काल के

---

१. Sharp, John Comphbell - Aspects of Poetry - 1881,P. 70.
उद्धृत:-
डॉ० मु. वरदराजन - मऋन्तमिऴ इलक्कियत्तिल् इयर्कै - पृ. १२
द्वितीय संस्करण १९७९ मार्च - पारिनिलैयम, मद्रास-१.

साहित्य में प्रकृति को प्रधानता मिल जाती है और उसके प्रति नवीन दृष्टिकोण, स्वच्छन्द भावना, स्वतंत्र चित्रण आदि कवि का मुख्य लक्ष्य हो जाता है तब स्वच्छन्दतावादी साहित्य पनपने लगता है। अतएव प्रकृति का स्वतंत्र आलम्बनात्मक चित्रण इस धारा की विशेषता है। पूर्व स्वच्छन्दतावादी साहित्यों में उद्दीपन, उपमा, अलंकार, पृष्ठभूमि आदि रूपों में प्रकृति का वर्णन प्राप्त होता है। तमिल काव्य क्षेत्र में संघम् काल से लेकर उन्नीसवीं शती तक, प्रकृति मानवीय भावों को उद्दीप्त करनेवाली वस्तु ही रही। लेकिन आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति के साथ तादात्म्य प्राप्त करता है।

प्रकृति के सौन्दर्य को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने में वह सफल हुआ। आधुनिक तमिल स्वच्छन्दतावादी कवि ने परम्परागत प्रकृति वर्णन की अपेक्षा स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण की ओर अपना ध्यान अधिक केन्द्रित किया। इसमें कोई शक नहीं है कि अप्रत्यक्ष रूप से इन्होंने अंग्रेजी के रोमान्टिक कवियों का अनुसरण किया। इसके कारण तमिल काव्य में प्रकृति नयी दिशा की ओर उन्मुख हुई। मानवेतर प्रकृति के प्रत्येक अंग को चाहे साधारण वस्तु हो, या असाधारण, तमिल कवि ने उसको महत्व प्रदान किया। इस प्रकार की प्रकृति परम्परागत वर्णनों के अन्तर्गत नहीं दिखायी पड़ती है। प्रकृति को ही सौन्दर्य और देवता के रूप में इन्होंने स्वीकार किया है। प्रकृति के विविध अंगों का स्वतंत्र चित्रण करना ही स्वच्छन्दतावादी कवि को अभीप्सित रहा।

जल और केंचुआ[१]

तमिल काव्य क्षेत्र में प्रो० सुन्दरम पिळ्ळै कृत काव्य नाट्य "मनोन्मणीयम्" में प्रकृतिकी साधारण से साधारण वस्तुओं पर भी ध्यान गया है। लेखक जल और केंचुवे के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करते हैं। इस दृष्टि से निम्नांकित

---

१. यह कीडा मिट्टी का संस्कार करके किसानों की मदद करता है। उसे तमिल में मण् पुळु कहते हैं। साहित्यिक भाषा में "नांगूल पुळु" कहते हैं। उसीका वर्णन यहाँ किया गया है।

पंक्तियाँ विशेष उल्लेखनीय है --

शाश्वत! आह! बहुत दुखित हो गये! बस! बस!
चिल्लाते क्यों हो? क्यों रोते हो? इससे क्या होनेवाला है?
हे! जल! जल! तुम्हारी स्थिति है क्या?
तुम्हारी तरह दिन-रात कौन परिश्रम करता है?
स्वच्छन्द प्रेम, उत्साह दृढ़ता - तुम्हारी तरह हो तो;
उससे बड़ा भाग्य क्या हो सकता है?

ओह! केंचुआ! तुम्हारी स्थिति! चिरन्तन है। अनुभव करते हैं। तुम्हारी कृपा से किसान की खेती बारी बढ़ती है। तुम किसानों के राजा हो। किसी भी मिट्टी को उपजाऊ मिट्टी बनाते हो। क्या तुमने इसलिये शरीर धारण किया है? मिट्टी के अन्तर्गत खेती बारी करने पर भी, यश की चाह तुम्हें नहीं है। तुम्हारे बिना यहाँ की घास, नटखट चींटियाँ कैसे जी सकती हैं? तुम्हारी तरह चाल-चलन शान्ति किसकी है? (मिट्टी के भीतर ओझल होता है) हम जानते हैं कि तुम यश नहीं चाहते हो। हम तुम्हारी वन्दना करते हैं। तुम अपने कार्य को संभालो और क्रमिक रूप से चलाओ। हा! हा![1]

---

१. जल के प्रति: निरन्तरम्! अयुमो! नोन्दने! निल्! निल्!
इरुन्तदु येन्? अलुवयो? आइन् येगुदी
नीरे! नीरे! येन्नेयुन् निलैमै; पारे उन्नैप्पोल् अनुदिनम् उळैप्पोर्?
नीक्कमिल् अन्बुम्, उक्कमुम् उरदियुम्; उन्नैप्पोल् उळवेल् पिनैप्पेर् येन्ने? पृ. १२५.

केंचुआ के प्रति : ओहो! नांगूल् पुळुवे! उनपाडु
ओवाप्पाडे उणर्वेन्! उणर्वेन्!
उळैप्पोर् उळैप्पिल्, उळुवोर् तोळिल मिकुम्!
उळुवोर्क्केल्लाम् विळुमिय वेन्दु नी!
येम्मंणाइनुम् नन् मण्णाक्कुवै!
विळुत्तनै इदर्क्को, येडुत्त उन् यात्कै!
निलुप्पुकळ् वेण्डले, अरिवोम् येनिदु? तुदिक्कलम् उन तोळिल् नडत्तुदि आ!
- पंक्तियाँ ६०-९४ - पृ. १२५, १२६, १२७. आ!

प्रो० सुन्दरम् पिळ्ळै -मनोन्मणीयम् - मल्लिका प्रकाशन - तृतीय १९६८. मेरकुरि पुस्तकालय - कोयम्बत्तूर-१.

इन पंक्तियों में प्रकृति के प्रति लेखक ने अपने हृदयानुराग को व्यक्त किया है। कवि की दार्शनिक भावनायें भी अप्रत्यक्ष रूप से इन पंक्तियों में स्थापित हुई हैं। कवि का कथन है कि मानव से कहीं जल और केंचुआ श्रेष्ठ हैं। क्योंकि वे न यश चाहते हैं और न किसी से, किसी प्रकार की सहायता। मानव कभी कभी क्रमिक रूप से काम चलाने में अपने को असमर्थ पाता है। लेकिन ये तो क्रमिक एवं सुचारु रूप से अपना अपना काम करते हैं। ये पंक्तियाँ तमिल साहित्य को पूर्ण रूप से स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की ओर मुडने में सहायक हुईं।

नक्षत्र

अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवियों की तरह वी.गो. सूर्यनारायण शास्त्री ने नक्षत्रों का स्वतंत्र चित्रण प्रस्तुत किया है। उनको संबोधित करते हुये वे कहते हैं - "हे नक्षत्र! प्रकाशमयी सेना! आप सबसे बडे दानी हैं। क्योंकि आप रात के समय उजाला देकर दुनिया की सहायता करते हैं और लोगों के देखने के लिये अन्धेरे को दूर भगाते हैं। आप सुन्दरी रात्रि-रानी के मंच के नीचे कंबल में जडित जवाहरात हैं क्या? गगन में ठहरनेवाले विविध अण्डे हैं क्या? आकाश रूपी सरोज पत्र में तैरते हुये, सुढंग से प्रकाशित पानी की बूँदें हैं क्या? कहिये! मेरे नक्षत्र! कहिये!"[1]

---

१. विण्मीनम् काट्। मिडिन्तोळिर् पडैये!
वर् कडम् सेन्कलि वळ्ळलार् पोलक्
कलैमदि अेन्टल कावाक् कालैयुम्
उलवि निन्ड ओळि सेय्दु उलकिनुक्कु उदवुवीर्!
काक्कियिन् मक्कळ् वारिवळ् कडिवीर्।
इरविनरसिइन् अेळिलाल् कीळ्निरि
नीलक्कम्बलत्तिलर् परम्पुपु
सेमीर तीरन्दु इलंगुम् वयिर मेन को?
विण् तंगु वेवुवेड़ अण्डंगळ् अेन को?
वान मा मरै इलै मेल ननि मिकिवम् ,
पुनल् तुळि अेन को? पुकलुमिनु! मीन इनम् काडे।

- तनिप्पासुरत्तोके
१८९९
सूर्यनारायण शास्त्री
उद्धृत:- तमिल साहित्य २०-वीं शती - पृ. १८९ -द्वितीय १९७७
तमिल पुस्तकालय, मद्रास-५.

है प्रकाशमयी सेना, नील कंबल में जडित जवाहर और आकाश रूपी सरोज पत्र में तैरते हुये पानी की बूंद; कहकर नक्षत्रों को संबोधन करना कवि की स्वच्छन्दतावादिता का लक्षण है। रात्रि को रानी के रूप में चित्रितकर स्वाभाविक रूप से कवि ने मानवीकरण को प्रस्तुत किया है। नक्षत्रों को "रानी" कहकर संबोधन करना कवि की नवीन वैयक्तिक अनुभूति का स्पष्ट परिचायक है। नक्षत्रों को लेकर विविध बिम्बों को कवि ने प्रस्तुत कविता में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार का नवीन वर्णन आधुनिक युग के पूर्व के तमिल काव्य में दिखायी नहीं पड़ता। सचमुच कवि की दृष्टि सर्वत्र रोमान्टिक है।

<u>वर्षा</u>

कवि भारती ने प्रकृति के रुद्र रूप का वर्णन इस रचना में प्रस्तुत किया है। वर्षा किस प्रकार होती है? उसकी प्रकृति कैसी है? आदि का परिचय देकर उसके कार्यकलापों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत करते हैं। उन्हीं के शब्दों में देखिये --

> तिक्कुक्कळ् येट्टुम् सिदरि - तक्कत्
>
> धीम् तरिगिड धीम् तरिगिड धीम् तरिगिड धीम् तरिगिड
>
> पक्क मलैक्कु उडैन्दु - वेळ्ळम् पायुदु पायुदु पायुदु - ताम् तरिगिड
>
> तक्कत् तदिंग गिड दित्तोम् - अण्डम् सायुदु सायुदु सायुदु -पेय् कोण्डु
>
> तक्कै यडिक्कुदु काट्रु - तक्कत् धीम तरिगिडत् ताम तारिगिड
>
> ताम् तरिकिड तरिगिड
>
> वेट्टियडिक्कुदु मिन्नल्, कडल् वीरत्तिरै कोण्डु विण्णै इडिक्कुदु;
>
> कोट्टि यडिक्कुदु मेघम्; कू कू वेन्रु विण्णै कुडैयुदु काट्रु
>
> चट्टच्चट चट्टच्चट टट्टा - वेन्रु ताळम् कोट्टिट कनैक्कुदु वानम्
>
> येट्टुत्तिसैयुम् इडिय - मळै येंगनम् वन्ददडा, तंबी वीरा।[1]

---

१. भारतीयार कवितायें - पृ. २२२-२२३ - द्वितीय १९७८ अगस्त - पूम्बुहार प्रसुरम्, मद्रास-१३. "मळै" कविता से।

अर्थात् —

अष्ट दिशायें चकनाचूर हो गयी हैं - फट फट कड कड फट फट कड कड
अचल पर्वत को फाड़कर बाढ़ उमड़ती है उमड़ती है चल चल कल कल चल चल
मानों अंड पिंड ही गिर रहे हो। हवा भूत को लेकर चल रही है।
फट फट कड कड फट फट कडक्कड कडक्कड कड कड
बिजली टूट पड़ती है। सागर की वीर लहर नभ को धक्का देती है।
मेघों में हलचल मच गयी है। तूफानी हवा नभ को चीरती है।
चट चट फट फट करके ताल बजाकर गगन गरजता है।
अष्ट दिशाओं को चकनाचूर करनेवाली वर्षा, बोलो वीर भाई, कैसे आ गयी?

वर्षा का यथार्थ वर्णन पढ़कर ऐसा लगता है कि भारती जैसे कवि ही इस प्रकार वर्षा की अत्यन्त निकट से देखकर, उसके प्रत्येक कण को अनुभव करके वर्णन कर सकते हैं। इनके शब्दों की ध्वनियों में लय की मात्रा अधिक है। वर्षा का ऐसा सजीव वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है।

"उजाला और अन्धेरा" (ओळियुम् इरुळुम्)

भारती ने आकाश, सागर, पर्वत, वर्षा, उजाला, अंधेरा, तूफान जैसी प्राकृतिक वस्तुओं को अत्यन्त निकटतम रूप से देखा है। उनकी कविताओं में इनका वर्णन अधिक मात्रा में मिलता है। प्रस्तुत कविता में सर्वत्र उजाला का वर्णन करके कवि कहते हैं कि केवल मानव के मन में तिमिर छाया हुआ है।

पूरे गगन में सूर्य किरणों की ज्योति, पर्वत के ऊपर भी सूर्य की ज्योति;
सागर, भूमि, वन और नदी के किनारों पर सूर्य की ज्योति।
आह! आश्चर्य! मात्र मानव मन में अन्धेरा बसा है।[१]

"साहित्य में विरुद्धात्मकता" को जो अनुरूप कल्पना संभव है वही इन पंक्तियों में है। (कॉंटेस्ट इन लिट्रेचर)।

---

१. भारतीयार कवितायें - ,पृ. २२९ - द्वितीय - अगस्त, १९७८ - पून्बुहार प्रसुरम, मद्रास-१२

<u>सूरज और सन्ध्या</u>

सन्ध्या-कालीन वर्णन प्रायः सभी तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने किया है। लेकिन भारती का प्रस्तुत चित्र उनसे भिन्न है। अपने में यह अकेला है। कल्पना के द्वारा कई प्रतिमान प्रस्तुत कविता में नवि के आते हैं। भारती के शब्दों में ही देखिये --

"पार! सुडरप्परिदि अेच्चूळवे पडर मुकिल् अेल्लाम्
तीप्पट्टेरिवन? ओहो!
अेन्नडि! इन्द वन्नत्तु इयल्बुकळ्! अेत्तने वडिवम्! अेत्तने कलवै!
तीइन कुळम्बुकळ्! - सेलुम पोन काय्च्चि विट्ट ओडेगळ् - वेम्बे
तोन्ड्रामे
अेरिन्दिडुम् तंगत् तीवुकळ्! - पारडि! नीलप्पोय्गैकळ्! अडडा, नील
वन्न मोन्ड्रिल् अेत्तने कोयडि, अेत्तने सेम्मै! पसुमैयुम् करुमैयुम्,
अेत्तने - करिय पेरुम् पेरुम् भूतम्!
नीलप्पोय्गैइन मिदन्दिडुम् तंगत्तोणिकळ् सुडर् ओळिप्पोर् करैइट्ट
करुं शिखरंगळ्! काणडि, आंगु तंगत्तिमिंगलम् ताम पल मिदक्कुम्
इरुळ् कडल्! - अहा! अंगु नोक्किडिनुम् ओळित्तिरळ्!
ओळित्तिरळ् वन्नक् कळंजियम्!"[१]

अर्थात् --

देखो! प्रकाशमान सूरज को घेरकर मेघ आग की तरह जल रहे हैं। आह! री! कैसा चित्र है? कैसा रूप है? कैसा मिश्रण है। आग की ज्वालायें - तपे हुये स्वर्ण की सरितायें। गरमी न लगने पर भी जलते हुये स्वर्ण द्वीप! देखो! री!

---

१. भारतीयार कवितैकळ् - पृ. ३५१-३५२ये पंक्तियाँ पांचाली शपथम् से उद्धृत की गयी हैं। पांडवों के हस्तिनापुर के निकट पहुँचते पहुँचते संध्याकालीन वर्णन किया गया है। पृष्ठभूमि के रूप में प्रतीत होने पर भी स्वतंत्र चित्रण सा लगता है। क्योंकि इसका स्वतंत्र अस्तित्व है। इसे काव्य से अलग कर देने पर भी काव्य की घटनाओं में कोई आघात नहीं पहुँचता, क्योंकि भारती ने "वेरु" (अलग) नामक शब्द का प्रयोग इन पंक्तियों के आरंभ में किया है।

नील रंगीन सरोवर। आह। रे। उस नीले रंग में भी कितने वैविध्य हैं। कितने स्वर्ण रंग। हरे भरे श्याम रंग - हाय। कितने बड़े बड़े काले भूत हैं? नील रंगीन सरोवर में स्वर्ण रंगीन नाव चल रही है, जिसके तटों पर स्वर्ण रंग है और काले शिखर हैं। दृष्टिपात करो। री। वह तो कई स्वर्ण तिमिंगलों का अंधकार-सागर है। आह। सर्वत्र प्रकाशमयी किरणें। विविध रंगों का संगम।

सन्ध्याकालीन सूरज और बादलों के विविध रंगीन चित्र जैसे -- स्वर्ण की सरितायें, स्वर्ण द्वीप, नील रंगीन सरोवर, सन्ध्या के अन्तिम याम में बादलों के भूत का रूप, नील रंगीन सरोवर की स्वर्ण रंगीन नावों के लिये तिमिर सागर के स्वर्ण तिमिंगिलों की उपमा, सूर्य की किरणों से तट का रंग स्वर्ण की तरह दीप्त पड़ना आदि अद्वितीय कल्पनायें हैं। समग्र रूप से संध्याकालीन प्रकृति के विविध बिम्बों की कल्पना अत्यन्त स्वाभाविक एवं नवीन है। प्रकृति, कल्पना और कवि की वैयक्तिक अनुभूति का सुन्दर संगम इस कविता में उपलब्ध होता है।

उषा और प्रकाश

इस कविता में भारती ने "उषा" का स्वतंत्र चित्रण प्रस्तुत करते हुये उसकी प्रशंसा की है। उसके गुणों, उसकी प्रकृति एवं प्रवृत्तियों को वे शाश्वत एवं अनन्त समझते हैं। लगता है कि कवि ने उषा के अंग-प्रत्यंग को बहुत सूक्ष्म रूप से देखा है।

"प्रकाश कौन देती है? शाश्वत यौवन किसका है?
धूप देनेवाली कौन है? अनन्त सुख किसका है?
वर्षा कौन प्रदान करती है? नेत्र किसका है?
जीवन कौन देती है? सम्मान कौन देती है?
आदर किसको मिलना चाहिये? ज्ञान किसकी तरह प्रकाशमय है?
ज्ञान-देवता का मन्दिर कहाँ है? "उषा" - वही श्रेष्ठ है।

तुम्हीं उजाली हो। तुम्हीं ज्वाला।
तुम्हीं विश्लेषण। तुम्हीं दृश्य।
बिजली, रत्न, अग्निस्फुलिंग - ये सब तेरी लीलायें हैं।
नेत्र तुम्हारा गृह है। मत्र, वीरता तेरी लीलायें हैं।
ज्ञान तेरा चिह्न है। ज्ञान का बिंब तू ही है।
तुम गरमी देती हो, जिओ - दृश्य देती हो; जिओ।
फूलों की तरह मुस्कानेवाली उषा। तुम जिओ।
उषा की हम वन्दना करते हैं। यही सौन्दर्य है।
जागृति, स्पष्टता, जीवन, उत्साह, सुन्दरता और कविता देती है।
वह मधु है। आध्यात्मिकता रूपी भौंरा उसे चाहता है।
वह अमृत है। वह शाश्वत है।
प्रकाश तुम कौन हो? क्या सूरज की पुत्रीहो?
नहीं तुम सूरज की आत्मा हो। उसके देवता हो।
सूरज में अन्तर्निहित तुम्हें ही सब प्रशंसा करते हैं।
सूरज बहिरंग और तू अंतरंग; अतएव आत्मा हो।
प्रकाश। तुम्हारा जन्म कब हुआ? तुम्हारा जन्म देनेवाला कौन है?

तुम्हारी प्रवृत्ति क्या है? इस प्रकार विविध प्रश्न करके प्रकाश की जन्मदात्री को कवि मोहिनी मानते हैं और उसकी वन्दना करते हैं।[1]

उषा और प्रकाश को लेकर कवि ने हमारे सम्मुख विविध प्रकार के बिम्बों को प्रस्तुत किया है। कवि ने प्राकृतिक वस्तुओं को कल्पना का सहारा लेकर जीवन प्रदान किया है। इस प्रकार का वर्णन कवि भारती की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति का ही परिचायक है।

---

१. भारतीयार कवितायें - पृ. ४२२, ४२३, ४२४ व ४२५.

शक्ति

शक्ति भी प्रकृति का अेक अंग है। प्रकृति को ही शक्ति के रूप में देखने की नवीन प्रवृत्ति भारती की कविताओं में पायी जाती है। प्रस्तुत पंक्तियों में शक्ति का अेक चित्र मिलता है।

"शक्ति (रूपी) बाढ में उषा अेक बूंद (के समान) है। शक्ति सरोवर में उषा अेक फूल है। शक्ति अनन्त है। सीमाहीन है। अचलता में भी "चलता" को दिखानेवाली है।"[१]

भारती की कविताओं में प्रकृति के प्रत्येक कण में ईश्वरीय सत्ता अर्थात् शक्ति का रूप प्राप्त होता है। इस प्रकार की कविताओं में शक्ति ही प्रकृति है और प्रकृति ही शक्ति। कवि ने कच्चे फल की खटास, फलों की मिठास में कृष्ण[२] और कौवे के पंख, श्याम रंग, पेड़ों की हरियाली, गीतों की गीतात्मकता, स्वरों और अग्नि में नंदलाला (कन्हैया)[३] को देखा है। पवन (कात्रु)[४] और सागर (कडल्)[५] की कविताओं में प्रकृति के नाना प्रकार के चित्र मिलते हैं। इनकी कविताओं में परम्परागत प्रकृति वर्णनों की अपेक्षा स्वतंत्र प्रकृति चित्रण अधिक है।

प्रकृति ही सौन्दर्य है और वह सौन्दर्य सरोज, चाँदनी और सूर्य के रूपों में मुस्कुराता है।[६] यही भारतीदासन कृत "अऴकिन् सिरिप्पु" कविता-संग्रह का कथ्य है। प्रकृति के प्रमुख अंगों का स्वतंत्र चित्रण इस संग्रह में मिलता है।

---

१. भारतीयार कवितायें - पृ. ४३० - द्वितीय १९७८ अगस्त, पून्कुहार प्रसुरम, मद्रास.
२. वही, पृ. १४५.
३. वही, पृ. १४९.
४. वही, पृ. ४३९.
५. वही, पृ. ४४८.
६. भारतीदासन - "अऴकिन सिरिप्पु" (सौन्दर्य की मुस्कुराहट) - प्राक्कथन - पृ. ४ - सोलहवाँ संस्करण - १९८० - सेन्तमिल निलैयम्. पुदुक्कोट्टै.

सागर

इस कविता में तट, सूर्य, आकाश, सागर-गर्जन, प्रातःकाल, मधुमान्ह, और सायंकालीन समुद्र के विविध रूपों के चित्र मिलते हैं। प्रस्तुत उदाहरण में प्रातःकालीन सागर और सूर्य का बहुत सुन्दर वर्णन मिलता है।

सूर्य सागर के उपर उदित हुआ।
आह्! सर्वत्र स्वर्ण की किरणें --
सभी स्थल प्रकाशमय है।
जल-मंच पर स्वर्ण-किरणें उड़ रही हैं।
प्राचीन प्रकृति का कार्य; अर्वाचीन नवीन दृश्य
देखो! आनन्द में डूब रे! भाई!

रात्रिकालीन सागर का वर्णन भी कवि ने किया है --

सागर रूपी नारी ने स्वर्ण परिधान फेंककर
नये मोती जडित वस्त्र को पहन लिया है। ...
चाँदनी अपनी किरणें बरस रही है।[१]

कवि की कल्पनायें प्राकृतिक मंच पर सजीव हो उठी हैं। रात्रि काल में सागर को नारी कहकर मानवीकरण की छटा दर्शाया है। वह अपने स्वर्ण परिधान को दूर फेंककर, मोती जडित वस्त्र को पहन लेती है। अर्थात् सूर्य की स्वर्ण-किरणों से बुने हुये वस्त्र को फेंककर चाँदनी की किरणों से बुने हुये नक्षत्रों से जड़ित वस्त्र को सागर रूपी नारी पहन लेती है। ये क्रमशः दिन का ढल जाना और चाँदनी रात के आगमन को सूचित करते हैं। मोती नक्षत्र का प्रतीक है।

---

१. भारतीदासन "अऴकिन् सिरिप्पु" - पृ. ७-९ सोलहवाँ संस्करण - १९८० - सेन्तमिल निलैयम् - पुदुक्कोट्टै, तमिलनाडु.
"शेलुन्तडु सेकंदिर तान् कडल् मिशै! अडडा शेंगुम्
विलुन्तडु तंगत्तूहल्! वेळियल्लाम् ऑळियिन् वीच्चु!
मुळंगिय नीर् परप्पिन् मुळुतुम् पोन्नोळिप् परक्कुम्
पळम् काल इयर्कै सेयुम् - पुदुक्काक्षि पडुगु तंबी!
पोन्नुडै कळैन्दु, वेरे पुदिदान मुत्तुच्चैलै
तन इडै अणिन्ताळ्, अन्दत् तडंग कडल् पेण्णाळ्।

गगन

"वान्" अर्थात् गगन नामक कविता में विभिन्न समय में गगन के विविध रूप वर्णन अत्यन्त स्वाभाविक हुआ है। उदाहरणार्थ दिन के गगन और मेघों का चित्र, रात का गगन, प्रातःकालीन गगन, ज्वालामुखी का आकाश, मध्याह्न और सन्ध्या काल के बीच का नभ आदि प्रातःकाल से लेकर रात तक के गगन की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं का रंगीन चित्र इस कविता में मिलते हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में वर्षा के पूर्व आकाश की जो दशा है उसका वर्णन किया गया है।

दिनाकाश पर काले काले बादल हमला कर रहे हैं।
धनुष-बाण तलवार शूल चमका चमका कर घूम रहे हैं।[१]
"कड" "कड" कर बादल हँस रहे हैं।
विजयिनी प्रकृति फूलों की तरह वर्षा बरस रही है।[२]

यहाँ "धनुष, बाण, तलवार, शूल" चमका चमकाकर घूमना बिजली के कार्यकलापों का प्रतीक है। बिजली का चमकना कभी बाण, कभी तलवार और कभी कभी शूल की तरह कवि को लगता है। प्रकृति को विजयिनी के रूप में इन पंक्तियों में दिखाया गया है।

अन्धेरा (इरुळ्)

जैसे अमूर्त वस्तु का वर्णन करके कवि ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। यहाँ भी कवि ने अन्धेरे को नारी का रूप प्रदान कर नवीनता का उद्घाटन किया है। अन्धेरा रूपी नारी दिन और रात भिन्न-भिन्न प्रकार के वस्त्र पहना

---

१. तमिल वीर युद्ध में धनुष, बाण, तलवार, शूलों का प्रयोग करते वक्त वे बिजली की तरह चमकने लगते हैं।

२. पकलवान् मेल् करुमुकिल्कळ् पडैयेडुत्तन, विल्लोडु
तुगलडु वाळुम्, वेलुम् सुळन्रन मिन्नि मिन्नि
मीगत्तदु कल कल वेन्रु नल्ल कार मुकिल् तान् वेडि
अगत्तद इयर्कैयुम् पेण्णाळ् इरैत्ताळ् पू मळैये अहिळा। - पृ. ३६.
- "अळकिन् सिरिप्पु" - १६-वाँ १९८० - सेन्तमिळ् निलैयम्

करती है। दिन में स्वर्ण वस्त्र और रात में विविध रूप से अलंकृत श्वेत रेशमी वस्त्र पहनती है। कवि का कथन है कि --

"नभ से भू तक विस्मयकारी तुम्हारी देह को दृष्टिपात करता हूँ। लेकिन तुम तो अक्सर अपने पहनावे को बदला करती हो। हे। अँधेरी। तुम्हारे दिन की साड़ी स्वर्ण की है और रात के समय विविध प्रकार से अलंकृत श्वेत रेशमी साड़ी तुम पहनती हो।"[1]

यहाँ श्वेत रेशमी साड़ी का तात्पर्य चाँदनी तथा नक्षत्रों की प्रकाशमयी श्वेत किरणों से बुनी हुई साड़ी से है। कल्पना की उड़ान भरने में यहाँ कवि अनुपम कौशल दिखाते हैं।

<u>सूर्यकान्ति पुष्प</u> (सूरजमुखी)

कविमणि ने सूरजमुखी को देखकर अपनी अद्भुत सहानुभूति प्रकट की है। मानवेतर प्रकृति को देखकर वेदना का अनुभव करना स्वच्छन्दतावादी कवियों की प्रवृत्ति है। अतः कविमणि भी यहाँ कहते हैं -- हे। सूरजमुखी। नित्य प्रातःकाल सूर्य की किरणों के उदय होते ही तुम्हारा मुख आनन्द से प्रफुल्लित हो उठता है। लेकिन शाम को शिथिल होकर, मुरझाकर क्यों तुम दुखित होते हो? सदा सूरज की दिशा की ओर तुम्हारा मुख क्यों मुड़ जाता है? अगर वह तुम्हारा प्रेमी होता तो (पति हो तो) कुछ न कुछ वार्तालाप नहीं करता? तुम्हारा नाम सूर्यमुखी क्यों पड़ा है? अच्छा, इसका कारण अब मैं जानता हूँ। इस भू लोक को तुम सुख देती हो। अतएव तुम्हारे समान इस संसार में कोई नहीं है।[2] सूर्यमुखी की वेदना में कवि भी दुःख का अनुभव करते हैं।

---

१. विण् मुदल् मण् वरैक्कुम् वियक्कुम् उन् मेनि तन्निक् कण्णाले काण्पेन्। नीयो अडिक्कडि उडैहल् माट्रम् पण्णुवाय्। इरुळे। उन्नुन् पकलाडै तंगच्चेलै वेण्पट्टिल् इराच्चेलै मेल् वैलिप्पाडेन्न सोलुवेन्। - पृ. ५० - "अहलिन् सिरिप्पु"

२. कविमणि "मलरुम् मालैयुम्" - पृ. ८० - १५वाँ संस्करण - १९७७ - पारि निलैयम्.

व्यक्तिवाद की भावना भी इन पंक्तियों में प्राप्त होती है। स्वच्छन्दतावादी कवियों की वैयक्तिक अनुभूति प्रायः दुःखात्मक होती है। प्रकृति में "दुःखात्मक अनुभूति" इस कविता की विशेषता है। कवि ने सूर्यमुखी को आदर्श पत्नी और सूर्य को पति के रूप में देखा है। अतः यहाँ मानवीकरण का आभास मिलता है।

<u>बिजली का नृत्य</u>

कवियोगी शुद्धानन्द भारती ने बिजली के प्रति अपने हृदयानुराग को प्रस्तुत कविता में व्यक्त किया है। उन्हें प्रकृति के प्रत्येक कण को अत्यन्त निकट से देखने का अवसर मिला है। यहाँ इन्होंने बिजली की कल्पना नवीन ढंग से की है। उसको संबोधन करके कवि कहते हैं --

"बादलों के पट को चीरकर अति वेग से दौड़ती हो।
मन को मोहित करनेवाली "चमक" दिखाकर अदृश्य हो जाती हो।
प्यार को बुझाने के लिये धधकती हुई मुस्कुराहट छिटकाती हो।
मुझे शोक में डालकर तुम क्यों ओझल हो जाती हो?
ठहरो। ठहरो। मैं तुम से प्रार्थना कर रहा हूँ।"[१]

बिजली के नृत्य का ऐसा वर्णन अन्यत्र दुर्लभ है। बिजली की मुस्कुराहट, शोक में डालना आदि नवीन कल्पनायें प्रतीत होती हैं। इस कल्पना में कवि की वैयक्तिकता का ही दर्शन होता है।

स्वतंत्र प्रकृति-चित्रण में भारतीदासन का अनुकरण करते हैं वाणीदासन्। तथापि अपनी वैयक्तिक अनुभूति में प्रकृति पंख खोलकर उड़ती दिखाई देती है। उन्हें प्रकृति ही सौन्दर्य है। उनकी कविता "प्राकृतिक सौन्दर्य" (ऐळिल् ओवियम्)[२] में प्रकृति का एक समग्र चित्र उपलब्ध होता है।

---

१. शुद्धानन्द भारती - कवि इन्बक् कनवुकळ् - पृ.३० - १९७८ - शुद्धानन्द पुस्तकालय, मद्रास-२०. - "मिन्नल् नडनम्"।

२. वाणीदासन् - ऐळिल् ओवियम्" - पृ. १३-१५ - तृतीय संस्करण १९७७ - पुदुवै कविञर् मन्रम् का प्रकाशन - पारि निलैयम्, मद्रास.

चिड़ियाँ गीत गाती हैं। आकाश अन्धेरे से मुक्त हो रहा है। भौंरें कलियों पर मंडरा रहे हैं। सूर्य अन्धेरे को चीरता हुआ, शीतल पवन युक्त प्रातः काल में उदय हो रहा है, मानों आकाश के उस पार से, सागर के ऊपर उठकर कोई दीप जल रहा हो। जहाँ कहीं भी सूर्य की किरणें पड़ती हैं वह स्थान स्वर्ण रंग का हो जाता है। सभी दिशाओं में सुन्दरता फैल रही है। झरना कल कल मधुर ध्वनियाँ करता है। सहस्र रंगों के बादल सूर्य की किरणों को ओझल करने का प्रयत्न कर रहे हैं। पर्वतों पर बादल छा रहे हैं मानों पर्वतों के ऊपर से झरने बह रहे हों। वन में सुन्दर मोर नाच रहा है। वह आवाज़ कर रहा है। श्याम वर्ण कोकिला गीत गाती है। विविध प्रकार के पेड़ जैसे नारियल, पुन्नै[१] वन की सुन्दरता को बढ़ाते हैं। सन्ध्या के होते होते नक्षत्रों के आकाश पहुँचने का दृश्य मन को लुभानेवाला है। आहा चाँदनी। आ गयी है। आनन्द मिल रहा है।

इस प्रकार कवि ने प्रकृति के सूर्य, चाँदनी, बादल, वन, गगन, चिड़ियाँ, मोर और कोकिला का अेक संश्लिष्ट चित्र खींचा है। कवि ने प्रकृति के रम्य स्थलों को कल्पना के द्वारा सजीव बना दिया है। सूर्य को आकाश के उस पार, सागर से ऊपर उठकर दीप के रूप में जलने की कल्पना, पर्वतों पर बादलों के छाने में, पर्वतों के ऊपर से झरनों के बहने की कल्पना आदि बहुत सुन्दर लगती हैं। प्राकृतिक वस्तुओं में अेक प्रकार की संबंध भावना इन पंक्तियों में उपलब्ध होती है। प्रकृति चित्रण में कवि की कल्पनायें इतनी पराकाष्ठा तक पहुँचती हैं कि असंभाव्य भी संभाव्य सा प्रतीत होता है।

सुबह (काले)

भारती, भारतीदासन्, वाणीदासन् जैसे प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी अपनी वैयक्तिक अनुभूति के द्वारा प्रातःकालीन चित्र प्रस्तुत किया है। उन सभी चित्रों में सूरज का उदित होना, सागर के ऊपर सूर्य का निकलना,

---

१. अेक पेड़ का नाम है। इसका वर्णन तमिल काव्य में यत्र-तत्र मिलता है। साहित्य में प्राकृतिक वर्णनों में इसका प्रयोग प्रायः किया गया है। उदाहरणार्थ -- "अन्नै कूरिनळ् पुन्नैयदु सिर्प्पे" - माँ ने कहा "तुम से पुन्नै बेहतर है। तुम्हारी बड़ी बहन के समान है।" संघम साहित्य - नद्रिणै - पृ. १७२.

किरणें फैलाकर स्वर्ण रंग का हो जाना जैसा वर्णन सुलभ है। कवि श्रीनिवास राघवन का प्रस्तुत चित्र दूसरों के चित्रों से सर्वथा भिन्न है। यह भाव अेवं कलागत दृष्टियों से स्वच्छन्दवादिता का द्योतक है। सरल, भाषा तथा शैली में बिलकुल नवीन रूप से, अत्यन्त स्वाभाविक अेवं प्रभात वर्णन प्रस्तुत करते हुये कवि ने काव्य चातुर्य ही प्रकट किया है।

"प्राची में सुबह हुआ; नभ में नवीनता छा गयी।
प्रकाश को चीरकर अेक चिड़िया गीत गाती है। सुनो।
किक्की। किक्की। कि की; कि की,
कौआ आवाज़ करता है का। का। का।,
उपवन की छोटी कोकिला गाती है, कुक्कू, कू कुक्कू कू।
भैंस सब = मम्मा, = मम्मा म्मां मां कहकर सुबह का मंत्र
पढ़ते हैं।"[1]

भैंसों का मंत्र पढ़ना अद्भुत अेवं अनुपम कल्पना है। प्रकृति वर्णन में यथार्थता का बोध भी इन पंक्तियों में आया है।

<u>बदली</u> (मुकिल्)[2]

इस कविता में बादलों के आगमन, उसकी प्रकृति और प्रवृत्तियों का वर्णन नवीन कल्पनाओं को लेकर कवि सुरदा ने किया है। बादलों के परम्परागत वर्णन को छोड़कर नवीन चित्र ही वे प्रस्तुत करते हैं।

---

१. पोलुदु पुलर्न्दतु, कीलुत्तिसैइल, पुदुमै मलर्न्ददु वान वेळिइल्
पाड्म् ओळिइल् पायुन्दु और कुरुवि, पाट्टु पाडुदु केळ्। किक्की कि की।
काक्के करैयुदु का का का सोलि इळं कुहिल् अम कूकू।
मन्दै मेडूमे मडुचिलुन्ति मन्तिरम् ओदुदडा म्मा। म्मा।
- श्रीनिवास राघवन "काले कविता" - उद्धृत
द्वितीय - १९७७ - तमिल पुस्तकालय, मद्रास. डॉ० रामलिंगम् ...
तमिल साहित्य २०-वीं शती - पृ. २०७.
२. तमिल में प्राय: प्राकृतिक वस्तुओं के लिये स्त्रीलिंग का प्रयोग मिलता है।

सागर के तन को छूनेवाली; श्याम रंग सहित आनेवाली
दीर्घ पर्वत पर लेटनेवाली; पर्वत की पुष्टी-घन[1] देनेवाली
अन्धेरे रंग के सौन्दर्य को लेकर बीच-बीच में गरजनेवाली
कड़ी धूप के दुख को मिटाकर, शीतलता को लेकर आनेवाली।
तुम्हारी वन्दना हम करते हैं।[2]

समुद्र के तन को छूना, दीर्घ पर्वत पर लेटना आदि नवीन उद्भावनाओं के कारण प्रकृति चित्रण में कवि यथार्थतः नवीनता ले आये हैं।

कालिक्कुमरी[3]

प्रातःकालीन कन्याकुमरी का प्राकृतिक दृश्य-इस कविता में श्री पल्लडम् माणिक्कम् ने खींचा है -- सूर्य के उदय का सौन्दर्य देखने के लिये कुमरी गूँजकर नभ को छूनेवाली सागर की लहरों को दमन करती है। सूरज की बरसती हुई स्वर्ण रंगीन किरणों को चूम चूमकर सागर आनन्द मनाता है। प्रातःकालीन सागर की लहरों में न जाने कितने कितने रंग हैं - नील, हरा, लाल, पीला और मोती का रंग। प्रत्येक रंग क्षण-क्षण में बदलता जाता है। न जाने उसको

---

१. घन : वर्षा रूपी घन।
२. कडलुडल् तोंडुपवळे करुवोडु वरुपवळे नेडुमलै तुइल पवळे, निधि तरु मलै मक्कळे।
इडेइडै इडियुडने इरुळूनिर अेळिल् उडने, कोडुवेइल् तुयर् केडवे कुळिरोडु वन्दनैये।
- सुरदा "तेन् मळै" (मधु वर्षा) - पृ. १५-१६ - चतुर्थ, १९७७ - सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास.
३. रोज प्रातः काल साढे पाँच बजे से सवा छे बजे तक का कन्याकुमरी का प्राकृतिक दृश्य अद्वितीय माना जाता है। प्रकृति की लीलायें बहुत रंगीन प्रतीत होती हैं। नीले नभ के बीच-बीच लाल रंग, उषा के उदय होते होते पीली स्वर्ण रंगीन किरणें, समुद्र की लहरों का बहुत ऊँचे उठकर उन किरणों को अर्थात् उषा को छूने का प्रयत्न करना, ऐसा लगता है मानों समुद्र राजा उषा रानी को आलिंगन करना चाहता हो। निराश होकर उसका गरजना, चट्टानों से टकराना, बहुत सुन्दर अवलोकनीय दृश्य हैं। इसी बीच अेक सुन्दर द्वीप के समान विवेकानन्द मण्डप दर्शनीय है। देवी कुमरी के दर्शन करने के पूर्व सूर्य के उदय को देखने की प्रथा चल रही है। सूर्य की किरणें माता देवी के मंदिर को और भी प्रकाशमयी बनाती हैं।

इस प्रकार के विविध रंग कैसे मिले हैं? प्रातःकालीन कुमरी के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन कल्पना के बाहर की वस्तु है।[१] कवि ने कन्याकुमारी के प्रातःकालीन समुद्र, सूर्य का वर्णन, अत्यन्त स्वाभाविकता के साथ किया है। प्राकृतिक सौन्दर्य और कल्पना का समन्वय इसमें मिलता है।

इन्द्रधनुष

अद्यतन तमिल कवियों की दृष्टि अत्यन्त रोमाण्टिक है। पूर्व कवियों की अपेक्षा प्रकृति के प्रति इनकी अनुभूतियाँ एवं कल्पनायें अत्यन्त नवीन लगती हैं। अभि०यक्ति में, शैली में, भावों में नवीन भंगिमा और नया रंग है। प्रस्तुत कविता इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

यह अद्भुत नभ एक ओर वर्षा देता है तो दूसरी ओर वस्त्रों को भी सुखाता है। यह (इन्द्रधनुष) बिना डोरी की पिरोयी फूलों की माला है। इसे जब कभी भी नभ गूँथता है तब वर्षा रूपी डोरी को भूमि पर फेंकता है।

इन दृश्यों की सुन्दरता के कारण ही
लगता है इसकी आँखें फूट गई हैं।
फूलों का यह पुल वसन्त ऋतु के पथ को
विकसित करने के लिये बाँधा गया है क्या?

धूप और वर्षा के संगम का यह परदा किसके लिये? ... प्रकृति ने एक सुन्दर चित्र की सृष्टि की। यही इन्द्र धनुष है।[२] विषय की अभि०यक्ति में

---

१. पल्लडम् माणिक्कम - बाइरम् पू - पृ. ४-६ - प्रथम, १९६३ - पारि निलैयम, मद्रास.

२. वानविल : वानम् (आकाश) + विल् (धनुष) : इन्द्र धनुष
इन्दप् पोल्लाद वानम् मषैयैयुम् तुरिक्कोण्डु, तुणियैयुम् उलर्त्तुकिन्रदु।
नार्गळिन्रि तोडुक्कप् पट्ट माले इदु।
इदै तोडुक्कुम् पोदेल्लाम् मळै नार्गळै वानम् भूमियिल् एरिन्दु विडुकिन्रदु।
इन्दप् पुरवम् इ०वळवु अळकाकप् पडैक्कप्पट्टदाल् तान् इदन् कण्कळ् कुरुडु
इन्दप् पूप्पालम् वसन्त ऋतुवे मेले मेले - आगिविट्टन।
अमैत्तुच चेल्वदर्कागवा अमैक्कप्पट्टदु?
वेइल मळैइन् इरट्टैत् ताक्कुदलिल् इन्द मुक्काडु यारुक्कागवाम्?
इयर्कै ओर वोवियत्तै सृष्टित्तदु - अदुवान् वान विल। - पृ. ५२-५३.
- कामराजन् - करुप्पु मलर्गल् - चतुर्थ १९८० तमिल पुस्तकालय, मद्रास-५.

नवीनता है। वैयक्तिक अनुभूति के अनुरूप कवि की कल्पनायें रंगीन हैं। आकाश के दो गुण होते हैं। अेक गरमी देना, दूसरा वर्षा देना। इसलिये यहाँ वर्षा के साथ वस्त्रों को सुखाना कहा गया है। दुर्गों की सुन्दरता धनुष की आकृति से मिलती जुलती है। धनुष की कोई आँख नहीं है। अतः कवि कल्पना कर बैठते हैं कि दुग अर्थात् धनुष की आकृति की सुन्दरता के कारण ही इसकी आँखें फूट गयी हैं। यहाँ मूर्त (दुग) की तुलना अमूर्त (धनुष) से करके अमूर्त के गुण को मूर्त पर आरोपित किया गया है। फूलों का पुल, वसन्त ऋतु के पथ को विकसित करने के लिये है। यह कल्पना की अतिशयता का प्रतीक है। इन्द्रधनुष के उदय होते समय बिना गरमी की धूप होती है। अतः इन्द्रधनुष धूप और वर्षा - दोनों के सम्मिलित समर से उत्पन्न परदा है। प्रकृति के विशाल मंच पर कवि की कल्पना की उड़ानें अनुपम ही हैं।

वानमपाडि

कामराजन की कविता "वानमपाडि में" वानमपाडि पक्षी की आत्मकथा प्रस्तुत की गयी है। यह कविता "नैट्टिंगेल" का अनुसरन करते हुये भी नवीन उद्भावनाओं से युक्त है। वानमपाडि अपना परिचय इस प्रकार देती है। --

मैं नक्षत्रों को देखकर कीड़ों को खाती हूँ।
मैं भूमि से नभ की ओर अग्रसर होनेवाली प्रथम यात्री हूँ।
जब मैं पहले पहल आकाश में गाने लगी तब
आप कहने लगे कि अरे! स्वर्ग तो उसके ऊपर है।
मुझे फँसाने के लिये मेघराजन ने अेक फूल-माला-जाल
गूँथा - वही इन्द्र धनुष है।
मैं प्रेम के गीत गाती हूँ। अतअेव फटे
पंखों से घोंसला बनाती हूँ।[१]

---

१. नान् नक्षत्रंगळैप् पार्त्तुविट्टु पुळुक्कळैच् साप्पिडुकिरेन्।
नान् मण्णिलिरुन्दु विण्णुक्कु मुदल् यात्रिगन।
नान् मुदन् मुदलाग वानत्तिल् पाडिय पोदुतान्
अदर्कु मेले स्वर्गम् इरुप्पदाग नींगळ् पेसत् तोडंगिनीर्गळ् (शेष अगले पृष्ठ पर)

वानमपाडि पक्षी को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये विविध रंगीन फूलों को लेकर जिस माला को मेघराजन ने गूँथा, उसका नाम इन्द्रधनुष रखा गया है। अतमेव यहाँ मेघराजन, वानमपाडि, इन्द्रधनुष क्रमशः नायक, नायिका और फूल-माला के प्रतीक हैं। प्रेम का गीत गाना और फटे पंखों से घोंसला बनाना असफल प्रेम को सूचित करते हैं।

इस प्रकार प्रकृति के प्रत्येक अंग को मेक अलग अस्तित्व प्रदान कर उनका वर्णन स्वच्छन्दतापूर्वक तमिल के कवियों ने किया है। इस प्रकार के वर्णन के अतिरिक्त परम्परागत रूपों में भी इन कवियों ने प्रकृति का चित्रण प्रस्तुत किया है - जैसे पृष्ठभूमि के रूप में[1], मानवीय लौकिक प्रेम को उद्दीप्त करने के लिये[2] और दूत के रूप में।[3] अलंकारात्मक मेवं नारी के अंगों को उभारकर दिखाने के लिये भी प्रकृति का सहारा लिया गया है।

<u>पिछले पृष्ठ का शेष</u>

मेन्नैपू पिडिप्पदर्काग मेघराजन् पिन्निय कण्णितान् वानविल्।
नान् कादलैपू पाडुगिरेन् मेनमे दान्
मुरिन्द रिगगलाल् कूडु कट्टुगिरेन्।
-कण्पु मलरगल् - पृ. ५८-५९ - चतुर्थ, १९८० -
तमिल पुस्तकालय, मद्रास-५.

----

१. भारतीदासन कविता संग्रह-। में संकलित संजीवि पर्वतत्तिन् सारल् - पृ. १ व १६ - २४वाँ संस्करण १९८० - सेन्तमिल निलैयम्, पुदुक्कोट्टै.

२. नामक्कल् कवि - अवलुम् अवनुम् - पृ. ३० - सातवाँ संस्करण १९८० - पलनियप्पा ब्रदर्स, मद्रास.

३. भारतीदासन् कविता संग्रह - ।। - पृ. १६ पक्षी दूत - सातवाँ संस्करण, १९८० - पारि निलैयम्।
अपने देश के लिये नायक अपनी जान देता है। मरते समय अपनी दयनीय स्थिति को बताने के लिये, उस समय उड़ते हुये पक्षी को दूत बनाकर नायिका के पास भेजता है।

<u>प्रेम</u>

तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों में प्रमुख रूप से तीन प्रकार की प्रेम भावनायें उपलब्ध होती हैं। (i) अलौकिक प्रेम; (ii) लौकिक प्रेम, और (iii) भाषा प्रेम। अलौकिक का सम्बन्ध भगवान से, लौकिक का नारी से और भाषा प्रेम तमिल से आसानी से जुड़ जाता है। भारती और शुद्धानन्द की कविताओं में अलौकिकता और भारतीदासन, नामक्कल कवि, वाणीदासन, सुरदा जैसे कवियों में लौकिक प्रेम की छवि मिलती है। तमिल भाषा प्रेम सभी तमिल कवियों में मिलता है। तमिल कवितायें तमिल की आत्मा से अन्योन्याश्रित हैं। अतएव तमिल भाषा प्रेम को अलग करके प्रकृत विषय पर अग्रसर होना संभव नहीं है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तमिल काव्य में प्राप्त तीनों प्रकार की प्रेम भावनाओं का पृथक पृथक यहाँ विश्लेषण किया जाता है।

(i) <u>अलौकिक प्रेम</u>

भारती की कविताओं में प्रमुख रूप से अलौकिक प्रेम की भावना उपलब्ध होती है। कवि ने कण्णम्मा के प्रति अपने अपूर्व प्रेम को व्यक्त किया है। उसको संबोधित करते हुये कवि कहते हैं -- "खुली हवा में मैं तुम्हारे प्रेम की याद करते करते सन्तोष का अनुभव करता हूँ। अमृत समान तेरे अधर, तेरी सुन्दर आँखें और स्वर्ण रंगीन तेरे तन को जीवन भर याद करता रहूँगा। तुम मेरे प्राण हो। कण्णम्मा। हर क्षण तेरी प्रशंसा करूँगा। तुम्हें स्वर्ग के समान समझते ही मेरी वेदना और सारे दुख दूर हुये। तुम्हारे नाम का उच्चारण करते समय मेरे मुँह में अमृत की धारा बहती है। तुम आत्मा रूपी आग में पल्लवित ज्योति हो। तुम मेरे चिन्तन हो। तुम मेरे चित्त हो कण्णम्मा।"[१] यहाँ यद्यपि प्रेम की लौकिकता का आभास मिलता है तो भी इसके मूल में अलौकिकता है। गीतात्मकता इस कविता की विशेषता है।

---

१. भारतीयार कवितायें - कण्णम्माविन् कादल् - कण्णम्मा पर प्रेम - पृ.१४८-१४९.

कवि भारती की अलौकिकता का स्पष्ट रूप सरस्वती, लक्ष्मी और काली (शक्ति) के प्रेम में मिलता है। इन्होंने तीनों देवियों से प्रेम किया है और अपने असफल प्रेम की भावना को व्यक्त किया है। अेक दिन नदी के किनारे अेकान्त मण्डप में कवि दक्खिणी हवा[१] (तेन्रल्) का अनुभव कर रहे थे। उस समय सरस्वती आयी। उसने कवि को यौवन कविता प्रदान की। उसे प्रफुल्लित मन से स्वीकारते हुये कवि ने उससे शादी का प्रस्ताव रखा तो मुस्कुराते मुस्कुराते अदृश्य हो गयी।

नदी के किनारे अेक दिन अेकान्त मण्डप में दक्खिणी पवन का अनुभव कर रहा था - वहाँ आकर उसने यौवन-कविता प्रदान की। प्रफुल्लित मन से उसे स्वीकार कर मैंने कहा -- मुझे स्वीकार करो, शादी करो। सुनते ही मुस्कुराते मुस्कुराते अदृश्य हो गयी।[२]

---

१. इस दक्खिणी हवा का उल्लेख रवीन्द्र की गीतांजलि में भी है।

"दक्खिनी हवा लगती आ
घर घर वह माँग रही क्या?
यह सौरभ विह्वल रजनी
किसके चरणों जगती जा।" - पृ. ५८.

"मतवाला दक्खिणी समीर" - पृष्ठ ६४.

गीतांजलि - रवीन्द्रनाथ ठाकुर - अनुवादक हंसकुमारी तिवारी
मानसरोवर प्रकाशन, गया। संवत् २०१८.

दक्खिणी हवा अपनी मृदुता के लिये प्रसिद्ध है। आधुनिक तमिल काव्य में इस हवा का उल्लेख बारम्बार मिलता है।

२. आट्रंग् करै तनिले - तनियानदोर् मण्डपमीदिनिले, तेन्रल्
काट्रै नुगर्न्दु इरुन्देन् - अंगु कन्निकवितै कोणर्न्दु तन्दाळ्, अदै
एट्रु मन मकिळ्न्दे - "अडि एन्नोडु इणंगि मणम् पुरिवाय्" एन्रु
पोट्रिय पोदिनिले - इळम् पुन्नकै पूत्तु मरैन्दु विट्टाळम्मा। - पृ. १६१.

इस प्रकार पागल के समान दिन-रात उस देवी की याद कर रहा था कि अेक और सुन्दरी आयी। अद्वितीय ज्योतिर्मय उसके मुख को देखकर मैं दाँतों तले उंगली दबाने लगा। उसने अपना नाम लक्ष्मी बताया। मेरा मन उससे गले लगाने को चाहता था। वह मुस्कुराती रही। देखती रही। उसी के मोह में जब मेरा सिर घूमने लगा तब न जाने पता नहीं क्यों वह मुँह मोड़कर भाग गई।[1] मेरा मन छिन्न भिन्न हो गया। मेरा मन का लड्डू हवा हो गया। मुझे हार्दिक दुख हुआ।[2] और अेक दिन रात के समय श्यामरंगीन सुन्दरी मेरी आँखों के सामने आयी। युवती समझकर, खुश होकर जब मैं उसके निकट पहुँचा, तो पता चला कि "वह माँ का रूप है। आह! यह आदि पराशक्ति है। अरे! इसकी कृपा"[3] चाहिये। इसकी कृपा से विश्व का सब कुछ अपने वश में आयगा। यह भाग भारती के शब्दों में ही सुनिये --

"पिन्नोरु इरविनिले - करुम्

पेण्मै अळकोन्ड्र वन्तदु कण् मुन्बु,

कन्नि वडिव मेन्ड्रे - कळि

कोण्डु सद्रे अरुगिर् सेन्ड्र पार्क्कयिल्

अन्नै वडिवमडा। - इवळ्

आदि पराशक्ति देवीयडा - इवळ्

इन्नरुळ् वेण्डुमडा। पिन्नर्

यावुम् उलकिल् वशप्पट्टु प्पोमडा।"

---

१. "अेन्नैप् पुरक्कणित्ते अेकिडुवाळ्" - पृ. १६१ - लक्ष्मी नफ्रत करके चली जाती है। लगता है इसी कारण भारती को जिन्दगी भर आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ा।

२. वही, पृ. १६१.

३. वही, पृ. १६२ - भारतीयार कवितायें.

इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि कवि का प्रेम अलौकिक ही है। आदि पराशक्ति के प्रयोग से इसका प्रमाण मिलता है। भारती का प्रेम शक्तिमय है। इनकी कविताओं में प्राप्त नारी का रूप भी शक्ति ही है। प्रकृति के प्रत्येक कण में शक्ति का दृश्य देखना और अनुभव करना भारती की सबसे बड़ी विशेषता है।

"कण्णम्मा अेन् कादली" (कण्णम्मा मेरी प्रेमिका) १, २, ३, ४, ५ कविताओं में प्रमुख रूप से शृंगार रस का प्रतिपादन है। कवि भारती प्रकृति के प्रत्येक कण में कण्णम्मा का अनुभव करते हैं। लगता है कण्णम्मा के प्रति उनका प्रेम अलौकिक ही है। लौकिकता का रंग जब अमूर्त होता है, तो अलौकिकता ही फूट पड़ती है।

तुम आग की ज्वाला के समान हो कण्णम्मा। सूर्य-चन्द्र हो क्या?
आँखें तुम्हारी श्याम रंगीन हैं कण्णम्मा। नभ का श्याम है क्या?[1]
विशाल सागर में मैंने तुम्हारे मुख को देखा।
नीलिमा भरे नभ के बीच तुम्हारे मुख को देखा।[2]
प्राचीन हिरण्य रूपी मेरी मूर्खता को दूर करने के लिये नरसिंह के समान;
तुम कण्णम्मा आयी हो। बुद्ध की यशोधरा की भाँति तुम मेरे लिये हो।[3]

---

१. सुट्टुम विळिच्चुडर् तान् - कण्णम्मा। सूर्य चन्दिररो?
वट्ट करिय विळि - कण्णम्मा। वानक् करुमै कोल्लो? - पृ. ३०१
- कण्णम्मा अेन् कादली - १.

२. नेरित्त तिरैक्कडलिल् निन् मुखम् कण्डेन् - कण्णम्मा अेन् कादली -११. पृ.३०३
- भारतीयार कवितायें-११ अगस्त, १९७८ - पूम्बुहार प्रसुरम, मद्रास.

३. "मुन्नै मिकपू पळमै इरणियनाम् - अेन्नै
मूर्कम् तनिक्क वन्द नरसिंगन् नी;
पिन्नैयोर् बुद्धनेन नान् वळर्न्दिट्टेन् - ओळिम्
पेण्मै यशोदरै अेन्ड्र उन्नै अेय्दिनेन्। - पृ. ३०५.
- कण्णम्मा अेन् कादली-४.

"कण्णम्मा का प्रेम" नामक कविता में आत्मा, परमात्मा का सम्बन्ध स्थापित किया गया है। कण्णम्मा को संबोधित करते हुये कवि भारती कहते हैं --

"तुम उजाली हो मेरे लिये, मैं हूं आँखें तेरे लिये;
तुम वीणा हो, मैं हूं उंगलियाँ;
तुम वर्षा हो, मैं हूं नाचनेवाला मोर;
तुम चाँदनी हो, मैं सागर हूं;
तुम प्रेम हो, मैं चुंबन हूं;
तुम हो सप्राण, मैं हूं नाडि।"[१]

अपने को आत्मा, कण्णम्मा अर्थात् शक्ति को परमात्मा के रूप में वर्णन करके अपने अलौकिक प्रेम की भावना को कवि ने व्यक्त किया है। इसे रहस्यात्मक अनुभूति कहना ही ठीक रहेगा।

भारती के अनुसार "कादलैक् काट्टिलुम् पेरिय इन्बम् वेरिल्लै"[२] अर्थात् प्रेम से बड़ा सुख कोई नहीं है। कादलै वेण्डिक् करैकिन्रेन् इलैयेनिल्; सादलै वेण्डित् तविक्किन्रेन्[३] अर्थात् प्रेम की प्रार्थना करके पिघलता हूं, नहीं तो मरण की प्रार्थना करके तड़पूंगा। अतः "प्रेम, प्रेम, प्रेम, बिनु प्रेम मरण मरण मरण"[४] यही उनका रटना है। क्योंकि वे मानते हैं कि प्रेम से ही मानव का कल्याण होगा, मानव का दुःख दूर होगा। मानव को कविता मिलेगी, गीत मिलेगा,

---

१. पायुमोलि नी एनक्कु, पार्क्कुम् विष़ि नानुनक्कु;
वीणैयडि नी एनक्कु, मेवुम् विरल् नानुनक्कु;
वानमष़ै नी एनक्कु, वण्ण मयिल् नानुनक्कु;
वेण्णिलवु नी एनक्कु; मेवु कडल् नानुनक्कु;
कादलडि नी एनक्कु; कान्तमडि नानुनक्कु;
नल्ल उयिर् नी एनक्कु; नाडियडि नानुनक्कु। - पृ. ३०७-३०८.
कण्णम्मा एन कादली-१.
२. भारतीयार कवितायें - पृ. ४५३.
३. वही, पृ. ३९८.
४. वही, पृ. ३९७. "कादल् कादल् कादल्, कादल् पोयिर् सादल् सादल् सादल्."

कला मिलेगी। अतः हे! दुनियावालो! प्रेम करो। वही इस विश्व का सर्वस्व एवं सर्वसुख है। प्रेम करने से अमरत्व मिलेगा, चिन्ता दूर होगी। अतएव प्रेम से मरण भी असत्य सिद्ध होगा।[1] साधारण प्रेम से यह संभव नहीं है। अलौकिक ईश्वरीय प्रेम से ही यह संभव है। भारती ने अपनी बारहवीं वर्ष की उम्र में[2] जिस युवती से प्रेम किया था वह साक्षात् सरस्वती ही है। सामान्यतया ईश्वर को माता-पिता के रूप में देखने की प्रवृत्ति पायी जाती है। लेकिन भारती ने नायक-नायिका अर्थात् आत्मा, परमात्मा के रूप में वर्णन किया है। परमात्मा में ऐक्य होने में ही उनका चिर आनन्द रहा। इनसे दूर भागना वे कभी, कदापि नहीं चाहते थे। ईश्वर अर्थात् शक्ति को इन्होंने हृदय में बाँध लिया है।[3] इन सबके उपर कोकिला (कुयिल्) को ही नारी का रूप देकर उसमें ईश्वरत्व का दर्शन इन्होंने किया है।[4] कवि भारती के अलौकिक प्रेम की चरम सीमा -- "कादल् सेय्युम् मनैवियै शक्ति कण्डीर्,

कडवुळ् निलै अवळाले एय्द वेण्डुम्।"[5] अर्थात् --

"प्रेम करनेवाली पत्नी ही शक्ति है

ईश्वरीय स्थिति उसी से संभव है।"

पंक्तियों में दर्शनीय है। अतएव यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि उनकी

---

१. कादलिनाल् मानुडर्क्कुक् कलवियुण्डाम्, कादलिनाले मानुडर्क्कुक् कवलै तीरुम्; कादलिनाल् मानुडर्क्कुक् कवितैयुण्डाम्, गानमुण्डाम्; शिल्प मुदल् कलैकळ् उण्डाम्; आदलिनाल् कादल् सेय्वीर्; उलकत्तीरे; अहदन्रो इव्वुलगत् तलैमै इन्बम्; कादलिनाल् सागामल् इरुक्कलाकुम्, कवलै पोम्, अदनाले मरणम् पोय्युमाम्।
- पृ. २९८-२९९.

२. चौदहवीं उम्र में भारती की शादी हुई थी।

३. भारतीयार् चरितम् - चेल्लाम्मा भारती - पृ.१८ - पुनःसंपादन १९७९ - प्रथम १९४१ - पारि निलैयम्, मद्रास.

४. भारतीयार् कवितायें - कुयिल् पाट्टु - पृ. ४१७ - "पेण्णेतान् देविकामाम् काणिक्यडा।" - नारीत्व ही अलौकिक दृश्य है।

५. भारतीयार् कवितायें - पृ.२९९ - द्वितीय १९७८ - अगस्त, पूम्पुहार प्रसुरम्, मद्रास-१३.

कविताओं में प्राप्त प्रेम भावना प्रमुख रूप से अलौकिक है, भले ही कहीं कहीं लौकिकता का आभास मिलता हो।[१] उस लौकिकता में भी अलौकिकता अंतर्निहित है।

प्रकृति में पले हुये शुद्धानन्द भारती का प्रेम अलौकिक है। इन्होंने प्रेम की कवितायें बहुत कम लिखी हैं। ये योगी हैं। अतअेव लौकिक, प्रेम की भावना इनकी कविताओं में दुर्लभ है। अपनी कविता "कालैयमैदियिले" (प्रातःकालीन शान्त वातावरण में) में इन्होंने अपने को प्रेयसी और परमात्मा को प्रियतम के रूप में देखा है।

> "प्रातःकालीन शान्त वातावरण में कवि ने स्वप्न रूपी उपवन में;
> माला को गूँधा - प्रियतम की प्रतीक्षा करते हुये,
> उस प्रेम, अभिलाषा और पूजा की माला की ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया।
> यश - "यह क्या फूल है" कहकर अश्रद्धा के साथ हट गया।
> घमण्डी धनवान भी पास नहीं आये।
> भौरों ने गीत गाये, कोकिला ने कामनायें कीं।
> पर पास के व्यक्ति ने मुझे पहिचाना नहीं।
> समय पर प्रियतम भी आये, माला पहनकर मुझे गले से लगा लिया।
> वह मुझ में, मैं उनमें मिल गया।
> बस। रूप। अरूप हो गया। दुनिया देखने आयी।
> प्रशंसा करने लगी।[२]

---

१. भारती ने युवावस्था में १४-वीं उम्र में अपनी पत्नी चेल्लम्मा के प्रति प्रेम का अेक गीत गाया है। उसमें लौकिकता अवश्य है। लेकिन उस प्रेम में भी स्वच्छता और पवित्रता का अनुभव किया जा सकता है।

> "ढूँढने पर भी न मिलनेवाली। अरे। जीवित चित्र। हे। हंस पक्षी।
> छाती पर मन्मथ-तीर शूल मारता है, तुम देखती नहीं?......
> आलिंगन करके अेक चुंबन अगर दोगी तो, नित्य तुम्हें मैं कर जोडकर वन्दना करूँगा। - भारतीयार चरितम् - चेल्लम्मा भारती - पृ. २१-२२. पुनःसम्पादन १९७९ - पारि निलैयम्।

२. शुद्धानन्द भारती - कवि इन्बक् कनवुकळ् - पृ. ३३-३४. १९७८ - शुद्धानन्द पुस्तकालय, मद्रास-२०.

कवि की वैयक्तिक अनुभूतियों में अलौकिकता है। आत्मा-परमात्मा के मिलन का वर्णन करके कवि ने अपने प्रेम की अलौकिकता का परिचय दिया है।

(ii) लौकिक प्रेम

तमिल के अनेक आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रेम के अलौकिक पक्ष को प्रधानता दी है। भारतीदासन लौकिक प्रेम के कट्टर पक्षपाती थे। उनके प्रेम की कविताओं में लौकिकता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। उनके प्रेम की लौकिकता की पराकाष्ठा "संजीवि पर्वतत्तिन् सारल्" में मिलती है। इसमें प्रेम के सिलसिले में अधरामृत की चर्चा ही होती है।[1] प्रेम की पृष्ठभूमि के लिये अेक मनोरम वातावरण की कल्पना कवि ने की है।

कमल पुष्पित सरोवर में कमल् जैसे मुख को दिखाते हुये नहानेवाली नायिका को नायक ने देख लिया तो असमंजस में पड़ गया। उसके तन तथा चाल को देखकर नायक मन्मथ को मारने के लिये वहीं उपवन में प्रतीक्षा करता रहा। बादलों को चीरकर आनेवाली चाँदनी के समान भीगे हुये तन से वह सुन्दरी तट पर आ पहुँची। नायक की स्थिति विचित्र रही। वस्त्र पहिनकर चलनेवाली नायिका के सामने जाकर "मेरे लिये सबकुछ तुम्हीं हो" कहकर अपनी इच्छा को नायक ने प्रकट किया। बिजली की तरह उस युवक पर दृष्टि डालकर युवती ने नायक के आवेदन को मुस्कुराकर स्वीकार कर लिया।[2] उसके बाद दोनों का प्रेम पल्लवित हुआ। प्रस्तुत कविता में व्यावहारिक लौकिक प्रेम का प्रतिपादन करते हुये कवि ने विधवा विवाह का समर्थन किया है।

---

१. भारतीदासन कविता संग्रह - I - पृ.४, ७, ८, १०, १३, १४ संकलित "संजीवि पर्वतत्तिन् सारल्"लघु काव्य (दीर्घ कविता) २४-वाँ संस्करण - १९८० - सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै.
नायक: मेरे तोते। तुम कितने चुंबन दोगे?
नायिका: तुम्हें गले से लगाकर सौ चुंबन दूँगी। - पृ. ४.

२. वही - पृ. १७ - भारतीदासन कविता संग्रह - १ - पृ. १७.
"मान्तोप्पिल् मणम्" (आम के उपवन में प्रेम और शादी)।

भारतीदासन की कविताओं में प्राप्त प्रेम के पीछे किसी न किसी सामाजिक सुधार की भावना अवश्य रहती है।

नायिका के विरह में नायक रो-रोकर अपनी वेदना और प्रेम की भावनाओं को व्यक्त करता है। विविध प्रकार से नायिका के अंगों की तुलना प्राकृतिक वस्तुओं से करके अपने मन को बहला लेता है। नायिका के सौन्दर्य के सम्मुख प्रकृति के सौन्दर्य को तुच्छ समझता है। उस नायक का कथन है कि तुम्हारे हाव भाव के सम्मुख मोर का सायल (हाव-भाव) तुच्छ है। बिजली से भी बढ़कर तुम उजाली हो। तुम्हारे अधर फूलों से भी कोमल हैं। तेरे नीलवस्त्र मणियों से अलंकृत है। इसे देखें तो सागर लज्जित होगा। सूर्य तेरे ज्योतिमय मुख को देखें तो अवश्य लज्जित होगा।[१] विरह में मन के आन्तरिक प्रेम की भावनाओं को नायिका के अंगों पर नायक ने आरोपित कर दिया है। इनके लौकिक प्रेम की चरमसीमा नायक-नायिका के संयोग में मिलती है। "आकर मुझे स्पर्श करो। हे! प्रियतम!"[२] और दक्खिनी पवन को भी हम दोनों के बीच में न आने दीजिये।[३] नायिका की इन पंक्तियों में भी प्रेम की लौकिक भावनायें मिलती हैं। अेक अन्य नायिका अपनी सखि से प्रेम की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुये अपने प्रियतम के विरह में अपनी स्थिति को इस प्रकार व्यक्त करती है। नायिका कहती है -- "लोगों को जिस प्रकार वर्षा की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार प्रियतम का सुख मेरे लिये आवश्यक है। हे! सखि! उनके अभाव में मेरी जो वेदना है, दुःख है, उन्हें व्यक्त करना असंभव है। पेड़ों की

---

१. भारतीदासन - पाण्डियन् परिसु - पृ.१६३ - पन्द्रहवाँ संस्करण १९७८ - सेन्तमिल निलैयम्।

२. वही, पृ. १७० - "अेन्ने वन्दु तोडुंगळ् अत्तान्!"

३. वही, पृ. १७२ - "तेन्रल् इवनवनुम् नडुव्वेल्ल विडादीर्" - तमिल साहित्य परम्परा में आलिंगन से बद्ध नायक-नायिका के बीच तेन्रल् का आना भी असह्य समझा जाता है। तेन्रल् जैसे मृदुल हवा को भी लौकिक प्रेम के बीच मना कर दिया जाता है।

छोटी शाखायें जिस प्रकार बड़े फलों का भार संभालती हैं उसी प्रकार मेरे छोटे प्राण की बड़ा प्रेम संभाल लेता है। अगर प्रियतम न आवे तो मेरा प्राण तन से बिछुड जायगा।[१]

भारतीदासन का प्रेम धरती की गंध लेकर पनपता है। यह कवि की स्वच्छन्द भावना का प्रतीक है। उनके नायक-नायिका साधारण श्रेणी के हैं। इस दृष्टि से गाड़ीवाला, गाय चरानेवाला, बुननेवाला (जुलाहा), किसान, मज़दूर, चित्रकार, फूल बेचनेवाली जैसी कवितायें[२] उल्लेखनीय हैं। यहाँ उनकी पूक्कारी (फूल बेचनेवाली) का प्रेम प्रस्तुत है। प्रेम में व्यावहारिकता इस कविता की विशेषता है। नायक कहता है --

कुन्द-फूलों की माला को मैंने चाहा --
सुन्दरी (पूक्कारी) ने अपनी हँसी रूपी कुन्द[३] को दिया।
कमल के फूलों को मैंने माँगा - उसने
अपने कमल रूपी मुख को दिखाया।[४]

अेक दूसरी कविता में उन्होंने आत्मा और परमात्मा का जो सम्बन्ध है, उसे दूसरे रूप में "नानुम् अवळुम्" (मैं और वह (स्त्री)में कवि ने दिखाया है। अलौकिकता का आभास मिलने पर भी इसमें लौकिकता है। प्रेम के स्वच्छ

---

१. याळुम् मन्तर्क्कु वान मढि पोन्रुदु, मणाळर् वन्दु अेनक्कु तरवदोर् इन्बम्।
तोळियि! अवनिन्रि नान् पडुम तोल्लै, सोल्लिक् काट्टल् इलेसिल इल्लै।
सिरिय कोम्बु प्रेरम् पळम् तांगुवदु पोलै - अेन
सिरिय उयिर् पेरम् कादल् तांगुवताले,
मरत् तमिळन् विरैविल् वराविडिल् उडलिल्
मडुक्कोन्क्र मुरियुम् अेन आवि मदु मेले। - पृ.१४ - तेनरुवि - १९७८.
- पूम्बुहार प्रसुरम् - मद्रास.१३.

२. भारतीदासन - इसैयमुदु प्रथम भाग - पुनःसंस्करण १९८० - पारि निलैयम;

३. तमिल काव्य क्षेत्र में नारियों की हँसी (मुस्कुराहट) की उपमा मुल्लै फूल से दी जाती है। मुल्लै सदा प्रफुल्लित रहती है। मुल्लै सिरिप्पु - मुल्लै जैसी मुस्कुराहट (हँसी) - कुन्द के फूल जैसे शुभ्र दाँतोंवाली।

४. भारतीदासन - [illegible] - [illegible] - [illegible] - [illegible] [illegible]- [illegible] इसैयमुदु - प्रथम भाग - पृ. १३.

श्रेष्ठ पवित्र भावनाओं को ही यहाँ कवि ने प्रस्तुत किया है। "मैं और वह" और "वह और मैं" का सम्बन्ध भिन्न भिन्न अन्योन्याश्रित वस्तुओं को लेकर कवि ने स्थापित किया है --

<u>मैं और वह</u>:- "प्राण और तन, फूल और सुगन्ध, मधु और मधुरता, हँसी और हर्ष, चाँदनी और शीतल, सूर्य और उजाला, मीन और जल, नभ और विशालता, गाय और बछड़ा, नदी और तट, शूल और तीखापन, धनुष और बाण, कविता और व्याख्या।"

<u>वह और मैं</u>:- "अमृत और सलिल, दान और फल, लहरें और समुद्र, तप और कृपा, माँ और बच्ची, मूल और पेड़।"[1]

इस प्रकार भारतीदासन की प्रायः समस्त काव्य कृतियों में प्रेम की भावनाएँ व्याप्त हैं।[2] क्योंकि प्रेम इनकी कविता की चेतना है। इनके काव्य की मूल

---

१. भारतीदासन - कादल पाडल्कळ् - प्रेम की कवितायें - पृ. १०० - प्रथम - १९७७ - पूम्बुहार प्रसुरम्।

इस संग्रह में संकलित अन्य सभी कविताओं में स्पष्ट रूप से लौकिक प्रेम का रूप ही मिलता है। आलोचना की पैनी दृष्टि से इस कविता में अलौकिकता का आभास दिखाया गया है। लेकिन इसके मूल में लौकिकता है। नानुम् अवळुम्, पूवुम् मणमुम्, तेनुम् इनिप्पुम्, सिरिप्पुम् मकिळ्वुम्, तिंगळुम् कुळिरुम्, कदिरुम् ओळियुम्, [illegible] विण्णुम् विरवुम्, वेलुम् कूरुम्, मीनुम् पुनलुम्, आवुम् कन्रुम्, आरुम् करैयुम्, अम्बुम् विल्लुम्, पाट्टुम उरैयुम्, अवळुम् नानुम्, अमिळ्दुम् तमिळुम्, अरमुम् पयनुम्, अलैयुम् कडलुम्, तवमुम् अरुळुम्, तायुम् सेयुम्, वेरुम् मरमुम्।

१. (अ) भारतीदासन कवितायें - I. कादल कवितायें - पृ. ६४-८४. २४वाँ, १९८०.
(आ) " -II. " - पृ. ४६-६४. ८वाँ, १९७७.
(इ) कादल् निनैवुकळ् (प्रेम की स्मृतियाँ) - समस्त कवितायें - ११वाँ, १९७८. सेन्तामिळ पदिप्पकम्.
(ई) तेन अरुवि - पृ. ३४-४९. कादल कवितायें - १९७८ - पूम्बुहार प्रसुरम्.
(उ) इसैयमुदु-I . पृ. ३-१७ कादल भाग पुनर्संस्करण. १९८० - पारि निलैयम्.
(ऊ) इसैयमुदु-II. पृ. ५-२४. कादल भाग ६, १९८० - पारि निलैयम्.
(ऋ) अन्य समस्त कृतियों में उनकी प्रेम की भावनायें सर्वत्र मिलती हैं।

प्रेरणा लौकिक प्रेम ही है। तमिल साहित्य के इतिहास में प्रेम की मनोवृत्ति को अलग रूप से लेकर अधिकतर कविताओं की रचना इनके द्वारा ही हुई है।[१]

कविमणि ने बहुत कम प्रेम की कवितायें लिखी हैं। उनकी काव्य कृति "आसिय ज्योति" में स्वच्छन्द प्रेम की भावनायें मिलती हैं। लौकिक दीखते हुये भी अश्लीलता इनके प्रेम के वर्णन में नहीं है। प्रेम के उदय की पूर्व-स्थिति का उल्लेख प्रस्तुत पंक्तियों में अत्यन्त स्वाभाविक रूप से किया गया है। देखिये --

"कण्कळुम् कण्कळुम् कलन्दु पेसिन्
कण्कळुम् कण्कळुम् कलन्दु
पेसिन पेच्चिल् पिरन्तदु कादले।"[२] अर्थात्

आँखों से आँखें मिलकर बातें करने लगीं
आँखें मिलकर बातें करने से
बातों बातों में प्रेम का उदय हुआ।

प्रथम दर्शन में प्रेम के उदय का वर्णन करने से यह रोमांटिक प्रेम का द्योतक है।

तमिल काव्य परम्परा में "अगम्" (प्रेम) की कविताओं में नायक धन कमाने के लिये परदेश जाने का वर्णन मिलता है। नायक के गमन काल में नायिका विरह की आग में तड़पती है। नायक के आगमन के समय प्रकृति हँसती है। नायिका को प्रियतम के आगमन की सूचना भी देती है। आधुनिक कविताओं में भी ऐसे दृश्य प्राप्त हैं। नायक के आगमन का वर्णन वाणीदासन् ने अपने "इन्ब इलक्कियम्" में प्रस्तुत किया है। इस संग्रह में संकलित अन्य सभी कवितायें इस ढंग की हैं।

---

१. कादल् पाडल्कळ् (प्रेम कवितायें) - पृ. ६, १९७७ - प्रथम - पुम्बुहार मदुरम्.
२. कविमणि - आसिय ज्योति - पृ. ३२ - १५वाँ संस्करण, १९७४ - पारि निलैयम्, मद्रास.

श्रेष्ठ तमिल कविता के प्रवाह के समान खेतों में नदी बह रही है। जल से पूर्ण सरोवर में फूल प्रफुल्लित हो रहा है। वृक्ष की शाखाओं में और खेतों में सुन्दरता छा रही है। भौरें नव नव फूलों पर मंडरा रहे हैं। छोटी कोकिलायें गीत गाती हैं। दक्खिनी हवा फूलों में घुस रही है। सुगन्ध फैल रही है। मोर नाच रहा है। उसकी आवाज नायिका की हँसी उड़ाने सी लगती है। अगर उसकी हँसी को ही प्रेम मानें तो दुबले-पतले उसके तन को कौन रोक सकता है? तोते सब फलों को नोचते-नोचते नायिका को "अक्कक्का" (बड़ी बहन) कहकर पुकार रहे हैं। अगर इस प्रकार "अक्कक्का" कहकर संबोधन करने को ही प्रेम मानें तो विरह में बिछुड़ते हुये उसके प्राण को कौन रोक सकता है? पुष्पित सरोवर में स्नान करके श्याम वर्ण भौरें नव-नव फूलों के मधु को पीकर रास्ते में नायिका की दिल्लगी करते आ रहे हैं। अगर ऐसी दिल्लगी को ही प्रेम मानें तो उसका प्राण तन में रहेगा क्या? (कवि का कथन) इस प्रकार नायिका के रोते समय विशाल छातीवाला नायक घोड़े पर बैठकर सूरज की तरह आ पहुँचता है।[१]

इस कविता में नायिका के प्रेम को प्रकृति उद्दीप्त करती है। प्रत्येक क्षण नायिका अपने प्रियतम की प्रतीक्षा करती है। राह देखते देखते अपनी जान को देने के लिये भी तैयार हो जाती है। तत्काल ही प्रियतम सूरज की तरह घोड़े पर सवार होकर नायिका को सुख-सन्तोष देने के लिये आ पहुँचता है। प्रकृति के विस्तृत मंच पर सारी घटनायें घटित होती हैं। अतः प्रकृति, कल्पना और विरहानुभूति का सुन्दर समन्वय इसमें मिलता है।इन सबका मूल प्रेम ही है। लगता है कवि ने प्रकृति और नायिका को अत्यन्त निकट से देखा है और उन्हीं का वर्णन अत्यन्त स्वाभाविक रूप से किया है।

ऐक अन्य नायिका अपने अंगों की सुन्दरता को प्रकृति के विविध अंगों को प्रदान करते करते प्रेम के मद में अपनी साड़ी को भी अंधकार को देकर

---

१. वाणीदासन् - इन्ब इलक्कियम् - "ऐरोटिक पोयम्स - द्वितीय - १९७९ - पृ. ४२-४३. - पुदुवै तमिल एळुत्तार मन्रम्, पुदुच्चेरी-१.

यौवन को स्वयं समर्पित होती है। लौकिक प्रेम का नग्न वर्णन इन पंक्तियों में मिलता है। प्रकृति को लेकर कवि की कल्पनायें पल्लवित होकर लौकिक वासनामय प्रेम में पुष्पित हो जाती हैं।

तुमने कुन्द फूल को अपनी मुस्कुराहट, श्याम मेघों को अपनी अलकें;
धनुष को अपना भ्रुग, शूलों को अपनी आँखें; [1]
अबुदों को अपनी सुमधुरता, सरोवर के जल को शीतलता
शत दल को अपने अरुण अधरों को दिया,
सुन्दरता को ही तुमने अपना सौन्दर्य दे दिया।

जब नायक आवेश में मचलते हुये कुसुम को संभाल रहा था, तब नायिका आयी। दोनों की आँखें बातें करने लगीं। दोनों प्रेम के जाल में फंस गये। उस प्रेमरी ने दिनांक निश्चय किया। उस दिनांक में नायिका ने साड़ी दी अंधकार को, काम दिया यौवन को। [2]

सुरदा की कविताओं में प्राप्त प्रेम भी काम से भीगा हुआ है। इनकी लौकिकता भ्रान्ति की स्थिति पर पहुँचकर वासना का नग्न रूप धारण कर लेती है। [3]

---

१. तमिल कविता में नायिका की आँखों की उपमा शूलों के तीखापन से दी जाती है। यहाँ नायिका अपनी आँखों के तीखापन को ही शूलों को दे देती है।

२. मुल्लैक्कु मुरुवल् तन्दाळ्, मुकिलुक्कु कून्दल् तन्दाळ्;
विल्लुक्कुम् पुरुवम् तन्दाळ्, वेलुक्कु विळिकळ् तन्दाळ्
सोल्लुक्कु तेन्तेन् तन्दाळ्, सुनै नीरुक्कुळ् कुळिर्च्चि तन्दाळ्
अल्लिक्कुच् चेंवाय् तन्दाळ् अळकुक्के अळकु तन्दाळ् .....
इरट्टुक्कुम् चेलै तन्दाळ्, इळमैक्कु वेलै तन्दाळ्। पृ. १४५-१४६.
सुरदा - "तेन् मळै" चतुर्थ १९७७ - सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास.

३. "तेन मळै" में संकलित अन्य कवितायें - पृ. १४७, १५४, १५६ - क्रमशः कण् शिवन्देन (आँखें लाल हो गयीं), चोल्लादे (मत कहो), नाटकप्पेण्णी (नाटक की नायिका) इसी प्रकार की हैं।

सच्चा अेवं पवित्र प्रेम सदा शाश्वत है। जन्म और मरण होगा, इतिहास बदलेगा, प्रतिबन्ध आयेंगे, धैर्य मिलेगा, नियति की राह बदलेगी, लेकिन शैत ओस बूँदों की तरह स्वच्छ प्रेम जीता रहेगा।[१]

(111) तमिल भाषा प्रेम

यह प्रवृत्ति तमिल की अपनी है। परम्परा से चलनेवाला यह तमिल प्रेम आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों में भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। प्रो० सुन्दरम् पिल्लै ने अपने "मनोन्मणीयम्" काव्य में तमिल को देवता मानकर उसकी वन्दना की है। और वि.गो. सूर्यनारायण शास्त्री ने अपने नाम को तमिल-भाषा-प्रेम के कारण बदलकर, "परिदिमाल् कलैञर" रख लिया है। भारती ने तमिल पर अपना अटूट स्नेहधारा बरसायी थी। उनके अनुसार तमिल चिंता के बुरे स्वप्नों से मुक्ति देनेवाली औषधी है।[२] अन्य भाषाओं में तमिल भाषा की सी मधुरता नहीं है,[३] "जियो, जियो अनन्त। जियो तमिल भाषा। जियो। जियो।"[४] पंक्तियों में उन्होंने अपने भाषा-प्रेम को व्यक्त किया है। भारतीदासन

---

१. "अळगिरम् पू" - पृष्ठ ५४. - प्रथम, १९६३ - पारि निलैयम, मद्रास-१.

२. अपनी पत्नी चेल्लम्मा-को भारती ने अेक बार पत्र लिखा था कि जब कभी भी तुम चिन्तित हो, उस समय अगर तुम तमिल का आद्योपान्त अध्ययन करोगी तो मैं बहुत सन्तोष का अनुभव करूँगा। - पृ. ३९ - भारती चरितम्, चेल्लम्मा भारती। पुनःसंस्करण १९७९ - पारि निलैयम.

३. यामरिन्द मोळिकळिले तमिळ मोळि पोल्
इनितावदु अंगुम् काणोम्। - पृ. ४९.

४. वाळ्क। निरन्तरम्। वाळ्क। तमिळ मोळि
वाळिय वाळियवे।
- भारतीयार कवितायें - पृ. ४७.

का तमिल-प्रेम उनके संपूर्ण साहित्य में परिलक्षित है। उनकी सभी कविताओं में किसी न किसी रूप में प्रत्यक्ष हो अथवा अप्रत्यक्ष, तमिल प्रेम-भावना स्पष्ट रूप से झलकती है। अपने प्रत्येक कविता-संग्रह में "तमिल"[१] नामक अेक अध्याय को इन्होंने जोड़ दिया है। उदाहरणार्थ उनकी अेक कविता नीचे उद्धृत है, जिसमें तमिल-प्रेम स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। यह कविता तमिल प्रेमियों के हृदय में सदा जीवित है। गीतात्मकता इस की विशेषता है।

"तमिल का नाम अमृत है,
वह मधुर तमिल हमारे प्राण के समान है।
तमिल का नाम चाँदनी है,
वह मधुर तमिल हमारे समाज को पुष्पित करनेवाले जल के समान है।
तमिल का नाम सुगन्धि है,
वह मधुर तमिल हमारे रहने के लिये निर्मित निवास-स्थान है।
तमिल का नाम मधु है, मधुर तमिल हमारे स्वत्व का मूल है।
तमिल हमारे यौवन का दूध है,
मधुर तमिल श्रेष्ठ विद्वानों का शूल है।

---

१. (अ) भारतीदासन कविता संग्रह-१, तमिल अध्याय -पृ.८७-१०२, २४वाँ - १९८०.
(आ) अळकिन् सिरिप्पु - तमिल - पृ. ६१. दस कवितायें १९-वाँ १९८० - सेन्तमिळ् निलैयम्.
(इ) तेन् अरुवि - पृ. १०-१८ - तमिल - १९७८ जनवरी, पून्गुहार प्रसुरम्, मद्रास.
(ई) तमिळियक्कम् - आठवाँ - १९७८ - सेन्तमिल् निलैयम्। सभी क्षेत्रों में तमिल की स्थापना इस कृति का ध्येय है।
(उ) इळैञर् इलक्कियम् - पृ. ५-१२. (नौ कवितायें) - छठवाँ - १९७८ - मार्च, पारि निलैयम्.
(ऊ) इसैयमुदु-१, पुनःसंस्करण, १९८० - पारि निलैयम्, तमिल खण्ड ३४-४७.
(ऋ) इसैयमुदु-११, छठवाँ - १९८० जून, पारि निलैयम् - पृ. २५-३४.
(ए) कुरिंजित्तिट्टु - पृ. ७०-७१. चौथा, १९७७ - पारि निलैयम्, मद्रास.

तमिल हमारी उन्नति का आकाश है,
मधुर तमिल हमारी अलसता को दूर करने में मधु समान है।
तमिल हमारे ज्ञान का सुख है,
मधुर तमिल हमारी कविता की रक्षा करने में हीरे की तलवार है।
तमिल हमारे जन्म के कारणभूत माता है,
मधुर तमिल हमारे बल में अंतर्निहित आग है।[1]

इनके प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति, विद्रोह, मानववाद, व्यक्तिवाद आदि सभी चित्रणों में तमिल घुल कर आती है। सचमुच उनका जीवन तमिल से ही आन्दोलित हुआ है। तमिल इनकी लेखनी की शक्ति है। तमिल को ही प्राण मानते हैं। तमिल का जीवन जीकर उसी में वे लीन हो गये। अतः दृढ़तापूर्वक यह कहा जा सकता है कि बीसवीं शताब्दी में इनसे अधिक तमिल पर कवितायें लिखनेवाला, कोई अन्य कवि अप्राप्त है। इन्होंने तमिल के ७७ प्रकार का[2] संबोधन करके उसकी भूरी-भूरी प्रशंसा की है।

---

१. तमिऴुक्कुम् अमुदेन्‌ड्र पेर्। - अन्द तमिऴ् इन्बत्तमिऴ् ऍंगळ् उयिरुक्कु नेर्।
तमिऴुक्कु निलवेन्‌ड्र पेर्। - इन्बत्तमिऴ् ऍंगळ् समूहत्तिन् विळैवुक्कु नीर्।
तमिऴुक्कु मण मेन्‌ड्र पेर्। - इन्बत्तमिऴ् ऍंगळ् वाऴ्वुक्कु निरमित्त ऊर्।
तमिऴुक्कु मधुवेन्‌ड्र पेर्। - इन्बत्तमिऴ् ऍंगळ् उरिमैच् चेम्पइरुक्कु वेर्।
तमिऴ् ऍंगळ् इळमैक्कुप्पाल्। इन्बत्तमिऴ् नल्ल पुकऴ्मिक्क पुलवर्क्कु वेल्।
तमिऴ् ऍंगळ् उयर्वुक्कु वान्। इन्बत्तमिऴ् ऍंगळ् असदिक्कुच् चुडर् तंदु तेन्।
तमिऴ् ऍंगळ् अरिवुक्कुत् तोळ्। इन्बत्तमिऴ् ऍंगळ् कवितैक्कु वयिरत्तिन् वाळ्।
तमिऴ् ऍंगळ् पिरविक्कुत् ताय्। इन्बत्तमिऴ् ऍंगळ् वळमिक्क उळमुद्र् ती।
- इन्बत् तमिऴ् - मधुर तमिऴ् (सुख देनेवाली तमिल)
भारतीदासन् कवितायें - पृ. ८९. २४-वाँ संस्करण, १९८०.
सेन्तमिऴ् निलैयम्, पुदुक्कोट्टै, तमिलनाडु.

२. डॉ० अेम. सेल्वराजन् - भारतीदासन् बोर पुरच्चिक् कविञर - पृ. १४९-१५०.
(क्रान्तिकारी कवि भारतीदासन्)
प्रथम - वण्णमलर् प्रकाशन, पारि निलैयम्, मद्रास-१.

नामक्कल् कवि ने "तमिऴ् तेन् मलर्"[1] (तमिल मधु-फूल) नामक काव्य भाग के "अमृत तमिल भाषा", "जियो तमिल", "तमिल सेवा", "तमिल की रक्षा करेंगे", "तमिल के विकास के लिये शपथ लेंगे" - इत्यादि कविताओं में अपने तमिल प्रेम को व्यक्त किया है। तमिल के अेक अन्य कवि शुद्धानन्द भारती भी तमिल-जीवन बिताने में निर्वृति का अनुभव करते हैं। वे सदा-सर्वदा तमिल के स्मरण करने का उपदेश इस प्रकार देते हैं —

प्रत्येक विचार में तमिल को मन में रखिये
गीतों के रूप में तमिल को गाइये......
खाते समय, सोते समय, दिल के तड़पते समय,
आँखों से अधिक प्यारी तमिल को हृदय में रखकर
कार्यों को दृढ़ता पूर्वक आगे बढ़ाइये।[2]

कविवर सुरदा अपना तन, मन, धन, जान सबको तमिल पर न्योछावर कर देते हैं।

मेरा मन, विचार, कार्य, सब कुछ तमिल ही है।
मेरा स्वर मेरी कविता मेरा स्वाद वही है।
मेरी कथा, मेरा प्रेम, मेरी कीर्ति उसी से है।
मेरा तन मेरा धन मेरी जान उस के लिये ही है।[3]

इनकी अन्य कवितायें "तमिल नेतृत्व करती है", "मन में रखिये", और "तमिल में नामकरण कीजिये"[4] इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। कवि मुडियरसन् ने तमिल को

---

१. नामक्कल् कवि की कवितायें - पृ. १७, १९, ३१, ४२, ४९ - लिफ्को, मद्रास- प्रथम, १९६०.

२. तमिल साहित्य - २०वीं शती - पृ.१५६ में उद्धृत। द्वितीय १९७७ - तमिल पुस्तकालय, डॉ० अेम. रामलिंगम्.

३. अेन् मनम्, अेन्रन् अेण्णम्, अेन् सेयल् तमिऴे अेन्बेन्
अेन् कुरल्, अेन्रन् पाडल्, अेन् सुवै, अदुवे अेन्बेन्
अेन कदै अेन्रन् कादल् अेन् पुकऴ् अदनाल् अेन्बेन्
अेन्नुडल्, अेन्रन् सेल्वम् अेन्नुइर् अवर्के अेन्बेन्। - पृ. २४३.
सुरदा - तेन मऴै - चतुर्थ १९७७ - सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास.

४. सुरदा - तेन मऴै - पृ. २४४, २४५, २४९ - चतुर्थ १९७७, सुरदा पदिप्पकम्.

देवता, माता, पिता, प्रेयसी, पत्नी[1] जैसे विविध रूपों में वर्णन करके अपने तमिल प्रेम को व्यक्त किया है। "एँगळ् मोळि"[2] (हमारी भाषा), "पुदर् कवितै"[3] (प्रथम कविता) इत्यादि कविताएँ भी आधुनिक तमिल कवियों के तमिल प्रेम को सूचित करती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि बहुत से तमिल कवियों ने मातृ भाषा प्रेम को प्रकाशित करते हुये उसकी महत्ता को घोषित किया है।

सौन्दर्य

कविता की श्रेष्ठता सौन्दर्य-वर्णन पर अवलम्बित है और सौन्दर्य ही कवि के लिये सच्चा साधन है। सबसे बड़ा सत्य कवि के लिये सौन्दर्य है। जो सौन्दर्य को अत्यन्त श्रद्धा के साथ ढूँढता है, उसको अवश्य सत्य का ज्ञान होगा। सत्य ही सौन्दर्य और सौन्दर्य ही सत्य है।[4] तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवि सौन्दर्य की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुये हैं। सौन्दर्य के आधार पर उन्होंने सुन्दरतम कविता का मंच तैयार किया है। तमिल कवियों में सौन्दर्य के तीन रूप प्रमुख रूप से उपलब्ध होते हैं -- अर्थात् (i) सौन्दर्य का देवता रूप; (ii) प्राकृतिक सौन्दर्य;

---

१. तमिल शैनु पेयुवम् - पृ.१३ - शैन तायू,पृ. १४, शैनु तन्दै - पृ.१५, शैनु कादली पृ.१६, शैनु मनैवी पृ. १७ व १८ - मुडियरसनू - काविरप्पावै - तृतीय, १९७१. वल्लुवर पदिप्पकम् - पुदुक्कोट्टै - तमिलनाडु.
२. प. माणिक्कम् - आहरम् पू - पृ.८४. प्रथम, १९६३ - पारि निलैयम्.
३. कामराजनू - करुप्पु मलर्कळ् - पृ. ९८ - चतुर्थ, १९८० - तमिल पुस्तकालय, मद्रास.
४. भारतीयार कहानियाँ - पृ. ३९ उद्धृत "कवियरसर् भारती में" - पृ. २८. डॉ० प. अरुणाचलम् - द्वितीय, १९७१ - तमिल पुस्तकालय, मद्रास। इन पंक्तियों में कीट्स का प्रभाव सा लगता है। लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि तमिल साहित्य परम्परा के अनुसार सौन्दर्य ही ईश्वर है। ईश्वर ही सत्य है। ईश्वर मुरुगन की आराधना तमिलनाडु में इस बात का साक्षी है। "मुरुगु" का अर्थ अळकु अर्थात् सौन्दर्य। इसका उल्लेख "सौन्दर्य" के सिलसिले में प्रथम अध्याय में भी किया गया है।

और (iii) नारी का सौन्दर्य। अलग अलग रूप से इनका विश्लेषण उदाहरण सहित यहाँ प्रस्तुत है।

(i) सौन्दर्य का देवता रूप

प्राकृतिक और मानव-कृत कलागत सौन्दर्य का ही सार्वत्रिक वर्णन होता है। लेकिन भारती और शुद्धानन्द भारती ने सौन्दर्य का देवता के रूप में वर्णन करके उसमें अलौकिकता का दर्शन किया है। तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों की यह अेक विशेष उल्लेखनीय प्रवृत्ति मानी जा सकती है। "अळकुत् देवम्" (सौन्दर्य देवता) नामक कविता में अलौकिक भूमि पर खड़े होकर भारती ने सौन्दर्य को ही देवता के रूप में वर्णन किया है। अतः लौकिकता का आभास इस कविता में नहीं है। कविता के आरंभ में कवि सौन्दर्य को अेक युवती के रूप में देखता है, लेकिन अन्त में वही युवती अलौकिकता का रूप धारण कर लेती है और देवता बन जाती है। भारती कहते हैं --

चाँदनी के प्रकाश काल में अेक स्वप्न दृश्य मैंने देखा,
उम्र सोलह साल की होगी - नव यौवन युक्त युवती,
उदित होती हुई पूर्ण चाँदनी के समान प्रकाशमय मुख,
मुस्कुराती हुई नयी चन्द्रिका के समान उसकी आभा,
बिजली समान प्रकाशमान आकृतिवाली - आकर,
मुझ से कहा - निद्रित मत रहो, जागकर मुझे देखो -
जग कर मैंने देखा - आह! रे! आह!
सौन्दर्य रूपी देवता ही है, वह! अेसा मुझे ज्ञात हुआ।[1]

---

१. मंगियदोर् निलविनिले कनविलिदु कण्डेन्।
वयदु पदिनार् इरक्कुम् इळवयदु मंगै
पोंगि वरुम् पेरुनिलवु पोन्र् ओळि मुखम्
पुन्नकैयिन् पुदु निलवुम् पोल् वरुम् तोट्रम्।
तुंगमणि मिन् पोलुम् वडिवत्ताळ् वन्दु,
तूंगादे अेळुन्दु अेन्नैप्पार् अेन्र् सोन्नाळ्।
अंगतनिर् कण् विळित्तेन् अडडा वो! अडडा
अळगेन्नुम् देय्वम् तान् अदुवेन्रे अरिन्देन्।

भारतीयार् कवितायें -पृ.२२५.
"अळकुत् देय्वम्" सौन्दर्य देवता

द्वितीय संस्करण, १९७८ - अगस्त, पूम्पुहार प्रसुरम्, मद्रास.

अर्थात् चाँदनी रात में भारती ने स्वप्नावस्था में अेक दृश्य देखा। उस दृश्य में अेक नवयौवन युक्त युवती आकर खड़ी हुई। उसकी उम्र सोलह साल की होगी। पूर्ण चाँदनी के समान उसका प्रकाशमय मुख था। मुस्कुराहट अनुपम थी। बिजली के समान उसकी आकृति थी। आकर भारती से उसने कहा - सोओ मत। जागकर मुझे देखो। जब स्वप्नावस्था से मुक्त होकर जागृतावस्था में देखा तो उन्हें ज्ञात हुआ कि वह साधारण युवती नहीं है। साक्षात् सौन्दर्य रूपी देवता है। वे आह। कहकर दाँतों तले उँगली दबाने लगे। स्वप्नावस्था में उन्होंने जिस साधारण युवती को देखा वही जागृत अवस्था में देवता दिखाई पड़ी। स्वप्नावस्था भारती की अज्ञानता का सूचक है और जागृत अवस्था उनकी ज्ञानावस्था का प्रतीक है। उस ज्ञानावस्था में भारती सौन्दर्य रूपी देवता से दार्शनिक अर्थात् आध्यात्म संबन्धी प्रश्न करने लगते हैं और उन प्रश्नों का उत्तर देवी देती है। भारती इन वार्तालाप के द्वारा सौन्दर्य देवता से उपदेश ग्रहण करके सत्यता और संपूर्ण ज्ञान का अनुभव करते हैं। उन दोनों का वार्तालाप निम्न लिखित है --

भारती : योग श्रेष्ठ है अथवा तप बड़ा है?

देवता : योग ही तप है, तप ही योग है।

भारती : सत्य स्वरूप अद्वैत है या द्वैत?

देवता : द्वैत भी है अद्वैत भी है सभी है।

भारती : प्यास को ज्ञात कर पानी देने की प्रवृत्ति वर्षा को है?
अथवा प्यास की वेदना ही वर्षा है?

देवता : जोर से प्रेम को व्यक्त न करके प्यार से बरसनेवाली वर्षा - कैसे
भिन्न हो सकती है?

भारती : काल की नियति को क्या बुद्धि जीत सकती है?

देवता : काल ही बुद्धि के लिये अेक यंत्र है।

भारती : दुनिया में इच्छित वस्तु उपलब्ध हो सकती है क्या?

देवता : बार में अेक-दो मिलने की संभावना है।

भारती : विचारों का क्रय-विक्रय ठीक है क्या?

देवता : चाहोगे तो चाहनेवाली (वस्तु) मिल सकती है। देखो (विचारो।)
भारती: मूल तत्व (परम तत्व) को व्यक्त करें या न करें?

देवता के मुख में "ईश्वर कटाक्ष" झलका। बस। मेरा मोह दूर हो गया।[१]

---

१. कविताओं को लिखकर, प्रकाशक के पास सौंपकर धन कमाने की प्रवृत्ति कवियों में पायी जाती है। दूसरे शब्दों में कविताओं का (विचारों का) विक्रय किया जाता है। अतः भारती विचारों के क्रय-विक्रय के संबंध में प्रश्न करते हैं। इस पर देवी भारती को अपनी इच्छा के अनुसार प्रवृत्त होने को कहती है और इच्छित वस्तु मिलने का आशीर्वाद भी देती है। अगर "ऍण्णिनाल्" चाहोगे तो; नण्णुम् काणु। मिलेगा। देखो। इसमें "काणु" का साधारण अर्थ "देखो" है। ध्यान से अनुशीलन करने पर उसका अर्थ "ऍण्णुम्" - "विचारो" अर्थात् "विचार करो" का अर्थ भी ठहरता है। क्योंकि उस पंक्ति का आरंभ "ऍण्णिनाल्" से - चाहोगे तो "विचार करके चाहोगे तो" से होता है। विचारों का अस्तित्व ईश्वर पर निर्भर है। अतः यही निष्कर्ष है कि इसका निर्णय मानव को नहीं करना चाहिये। ईश्वरीय शक्ति पर छोड़ देना उत्तम है। यही कवि भारती का विचार ठहरता है।

"योगम्तान् सिरन्तदुवो? तवम् पॆरिदो?" ऍन्रेन्;
योगमे तवम् तवमे योगमेन उरैत्ताळ्।
येकमो पॊरुळन्रि इरण्डामो? ऍन्रेन
इरण्डुमाम्, ऒन्रुमाम्, यावुमाम् ऍन्राळ्।
तागम् अरिन्दु ईयुम् अरुळ् वान मळैक्कु उण्डो?
तागत्तिन् तुयर् मळै तान् अरिन्दिडुमो? ऍन्रेन्;
वेगमुडन् अन्नवैयेवॆळिप्पडुत्ता मळै तान्
निरप्पुडने पॆय्युवतु वेरामो? ऍन्राळ्।
कालत्तिन् विदि मदियुम् कडन्दिडुमो? ऍन्रेन्;
कालमे मदियुनक्कारे कडवियाम् ऍन्राळ्।
ञालत्तिल् विरुंबियदु नण्णुमो? ऍन्रेन्;
नालिले ऒन्रु इरण्डु पलिक्तिडलाम् ऍन्राळ्।
मेलत्तिल् विडुवदु उण्डो ऍण्णत्तै? ऍन्रेन्;
ऍण्णिनाल् ऍण्णियदु नण्णुम् काणु, ऍन्राळ्।
मूलत्तैच् चॊल्लवो? वेण्डामो? ऍन्रेन्;
मुखत्तिल् "अरुळ्" काट्टिनाळ मोहमृतु तीर्न्देन्। - पृ. २२६.
- भारतीयार कवितायें - २२५-२२६, "अकृत्देयुवम्" कविता.

तात्पर्य यह हुआ कि सौन्दर्य देवता के सम्मुख जागृत होकर जो ज्ञान भारती ने प्राप्त किया वह परमतत्व का ज्ञान ही था। सौन्दर्य देवता के मूल तत्व का ज्ञान अर्थात् सत्य का ज्ञान होने के पश्चात् उनका मोह रूपी परदा हट जाता है। यह मूल तत्व चिर आनन्द का प्रतीक है। अतएव सौन्दर्य ही अन्त में सत्य का रूप धारण कर लेता है और वही सत्य (ज्ञान) देवता का रूप है। ध्यान पूर्वक अनुशीलन करने पर पता चलता है कि जो सौन्दर्य बाह्य रूप में मानव को लुभाता है, वही आन्तरिक रूप में देवता का रूप धारण करके पहुँचे हुये कवि को ज्ञान का उपदेश प्रदान करता है। कवि ने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सौन्दर्य को ढूँढकर, सत्य का अनुभव किया है। भारती को सौन्दर्य अर्थात् सत्य रूपी ज्ञान देवता की कृपा मिली है। स्वच्छन्दतावादी काव्य सिद्धान्तों और मान्यताओं को ध्यान में रखकर प्रस्तुत कविता को कसने पर खूब खरी उतरती है। क्योंकि इसमें सुन्दर कल्पना, सौन्दर्य, विस्मय भावना[1], पृष्ठभूमि के रूप में प्रकृति, युवती के वर्णन में प्रेम का आवरण आदि का सुन्दर सम्मिश्रण मिलता है। इसके अतिरिक्त सौन्दर्य को ही देवता के रूप में वर्णन करके काव्य क्षेत्र में कवि नवीनता, स्वच्छन्दता और विद्रोह ही प्रस्तुत करते हैं। अतः यह कविता तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रतिनिधि रचना ठहरती है।

---

१. जिज्ञासा, प्रयत्न, मिलन रहस्यवाद की तीन स्थितियाँ हैं। जागृतावस्था में कवि को ज्ञात हो गया कि वह देवता है। अतः उनके मन में मूलतत्व की <u>जिज्ञासा</u> उत्पन्न हो जाती है। मूल तत्व के लिये उनका प्रश्न <u>प्रयत्न</u> है। अन्त में कवि को देवता का "अरुळ्" अर्थात् देवी प्रसाद मिल जाता है और उनका मोह भी दूर हो जाता है। मोह रूपी परदा हट जाता है। मूल तत्व का ज्ञान <u>मिलन</u> का प्रतीक है। "तीरुन्देन्" "बस। मोह दूर हो गया" मिलन हो गया।" वाला अर्थ भी आसानी से प्रकट होता है। अडडा। ओ। अडडा। अर्थात् आह! रे। आह! "विस्मय" का प्रतीक है। अतः मुझे इस कविता में [illegible] रहस्यवाद की तीनों स्थितियों का अनुभव होता है। विस्मय पूर्ण रहस्यात्मकता स्वच्छन्दतावादी काव्य की अेक प्रवृत्ति है। इस कविता की भूमि भी सर्वथा अलौकिक है। स्वयं अलौकिकता रहस्यवाद का प्रतीक है।

भारती का अनुसरण करते हुये शुद्धानन्द भारती ने "अळकु मणि देयुवम्" और "अळकुत् देवतै" नामक कविताओं में सौन्दर्य को अलौकिक देवता के रूप में दिखाया है। प्रथम उल्लिखित कविता में सौन्दर्य को माँ की शक्ति के रूप में दर्शन करके, कवि उसके स्वर्ण चरणों में गिर पड़ते हैं। इस कविता में भी कल्पना, प्रकृति और विस्मय की भावना मिलती है।

वर्षाकालीन तूफान को तोड़नेवाली बिजली की तरह,
चिन्ता रूपी अंधकार को दूर करके मेरी ओर दृष्टि डालकर खड़ी रही।
आह! यह कौन है? आश्चर्य में पड़ गया! ओ सौन्दर्य मणि देवता!
माँ-शक्ति जियो! जियो! कहते, कहते, उसके स्वर्ण चरणों में गिर पड़ा।[१]

द्वितीय कविता में सौन्दर्य को सरस्वती के रूप में देखकर कवि उसकी वन्दना करते हैं --

सौन्दर्य देवता की प्रशंसा करके वन्दना करेंगे।
सौन्दर्य के उपवन में प्रेम सहित मिलेंगे।
सौन्दर्य के सुख को सभी जीवों को प्रदान करेंगे।
सौन्दर्य को जीवन रूपी वीणा में बजायेंगे।[२]

कवि सौन्दर्य की वन्दना करके उसे जीवन रूपी वीणा में बजाना चाहते हैं। सौन्दर्य के सुख को विस्तृत करना मानवतावाद का प्रतीक है। कवि सत्य के ज्ञान को सभी जीवों में फैलाना चाहते हैं। इस प्रकार सौन्दर्य के प्रति कवि का दृष्टिकोण नया प्रतीत होता है।

---

१. कारप्पुयलै वॆट्टुकिन्ऱ कम्बि मिन्नल् पोलै,
कवलै इरुळोट्टि कॆन्नैक् कण् पार्त्तु निन्ऱाळ्।
यारॆन्ऱे अदिसयित्तेन्! अळकु मणित् दैवम्!
अन्नै शक्ति वाळ्क ऎन्ऱे पोन्नडियिर् पणिन्देन्। - पृ. ४१. "अळकु मणि दैवम्"।

२. अळकुत् देवतैयै वाळ्त्ति वणङ्गुवोम्।
अळकुच् चोलैयिल् अन्बुर कूडुवोम्।
अळकिन् इन्बत्तै आरुयिरक् कूट्टुवोम्।
अळकै वाळ्वॆन्नुम् वीणैयिल् मीट्टुवोम्। -"अळकुत् देयुवम्"से
शुद्धानन्द भारती, कवि इन्बक् कनवुकळ् - पृ. ४१-४२. १९७८ - शुद्धानन्द पुस्तकालय, अडैयार, मद्रास-२०.

(11) <u>प्राकृतिक सौन्दर्य</u>

प्राकृतिक सौन्दर्य ईश्वर की देन है। तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी अपनी वैयक्तिक अनुभूति के अनुरूप इसे देखा है और वर्णन किया है। प्रायः स्वच्छन्दतावादी कवियों को प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रेरणा मिली है। प्राकृतिक सौन्दर्य इन कवियों को आकृष्ट करता है और वह आकर्षण कवि की कल्पना शक्ति को लेकर कविता का रूप धारण कर लेता है। कवि भारती को प्रायः प्रकृति से प्रेरणा मिली थी। बहुत छोटी अवस्था में ही तालाब के किनारे बैठकर वे प्रकृति की सुन्दरता में आनन्द का अनुभव किया करते थे। तमिलनाडु के होते हुये भी वे उत्तर की गंगा के विविध चित्रों को देखकर आकृष्ट हुये थे। काशी निवास काल में[1] स्कूल के समय को छोड़कर बाकी समय गंगा के तट पर बैठकर प्रकृति का रसास्वादन किया करते थे। साथियों सहित गंगा में नौका विहार भी करते थे। और वहीं कवितायें भी लिखते थे। उनको प्रकृति-माँ के अलौकिक दृश्य देखने की रुचि सदा रहती थी। कडैयम[2] के पर्वत, हरे भरे खेत, बगीचे, उपवन की कोकिला, नील रंगीन चिड़ियें, झरना, कल कल करनेवाली नदियाँ आदि प्राकृतिक वस्तुयें उनको अधिक भायीं। इन सबको देखकर वे परम आनन्द में डूब जाते थे।[3] अतः प्राकृतिक सौन्दर्य उनकी कविताओं में प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है। प्रातःकाल का अेक रंगीन चित्र उनकी "कालैप् पोंहुदु" नामक कविता में उपलब्ध है। उसका स्वरूप देखिये --

हम प्रातःकाल जागकर आकाश की ओर देखते देखते खड़े रहे। प्राची में सूर्य अपनी प्रकाशमयी किरणों को बरसा रहा था। सर्वत्र सूर्य की किरणें चमकती थीं। नारियल के पेड़ के पत्तों के बीच दक्खिनी हवा घुसकर वहाँ

---

१. सन् १८९८ जून में अपने पिता की मृत्यु के बाद भारती काशी चले गये। १८९८-१९०२ तक अपने पिता की बहिन फूफी (बुआ) कुप्पम्माळ् के यहाँ रहे। उस समय की घटनायें हैं।
२. तिरुनेलवेली जिले कडैयम् अेक छोटा सा गाँव है। वहीं भारती का ससुराल है। १९१८-१९२० इसी कडैयम् में रहे। उस समय इसी के प्राकृतिक सौन्दर्य में वे डूबा करते थे और आनन्द में मग्न हो जाते थे।
३. भारती चरितम् - चेल्लम्मा भारती - पृ.१७,३०,११०,१११. - १९७९ - पुनःसंस्करण - पारि निलैयम्, मद्रास-१.

बैठे हुये गरुड़ को माला पहनाकर चली गयी। नारियल के पेड़ पर विराजित, विचार मग्न अेक काग नभ को चूमता था। नारियल के हरे-भरे पत्तों को नोचकर अेक छोटा काग चमकते हुये दक्खिनी सागर को देखकर "काव काव" कहकर संबोधन कर रहा था।[1]

"दक्खिनी हवा के गरुड़ को माला पहनाना" अैसा चित्र उपस्थित करता है मानों नायिका नायक को माला पहिना रही हो। काग का नभ चूमना, दक्खिनी सागर को संबोधन करके "काव काव" बोलना आदि कल्पना की अतिशयता का सूचक है। यहाँ प्रकृति की दैनिक घटनाओं का स्वाभाविक वर्णन कल्पना के सहारे कवि ने प्रस्तुत किया है। इस कविता में काग, चिड़िया, तोते का जो संभाषण है वह भी विशेष उल्लेखनीय है।

भारती ने कौआ और चिड़िये को भी मानव जाति के अन्तर्गत रखा है। उनका कथन है कि --

"काक्कै कुरुवि अँगळ् जाति - नीळ्
कडलुम् मलैयुम् अँगळ् कूट्टम्।"[2] अर्थात्

"काग, चिड़िया सब हमारी जाति के हैं - दीर्घ सागर और पर्वत हमारे समूह हैं"। अपनी पत्नी से प्राप्त अपने प्रिय खाद्य पदार्थों को स्वयं न खाकर अपने प्रिय साथियों अर्थात् कौआ और चिड़िया को दे दिया करते थे।[3] अेक बार गधे की बच्ची को अपनी भुजाओं में लेकर उसको चुंबन भी दिया था[4] और ट्रिवेण्ड्रम मृगशाला में उन्होंने सिंह से भी वार्तालाप किया था और अपने दस मिनट के

---

१. कालैप् पोळुदिनिले कण्विळित्तु नेनिलै मेल्, मेलैच् चुडर् वानै नोक्कि निन्ऱोम् विण्णकत्ते।
कीळ्त् तिसैयिल् ञायिऱ् तान् केडिल् चुडर् विडुत्तान्, पार्त्त वेळियेल्लाम् पक्कोळियाय् मिन्निन्दे।
तेन्नै मरत्तिन् किळैकिक्कैये तेन्ऱल् पोय् मन्नप्पुकन्दिनकक्कु मालै इट्टुच् चेन्ऱदुवे।
तेन्नै मरक्किळै मेल् चिन्तनैयोडु ओर् कागम् वन्नमुर वीट्रिरुन्दु वानै मुत्तमिट्टदुवे।
तेन्नै पसुं कीट्रैक् कोत्तिच् चिऱु काक्कै मिन्नुकिन्ऱ तेन् कडलै नोक्कि विळित्तदुवे।
-भारतीयार कवितायें - पृ.२२८, कालैप् पोळुदु कविता। -५.
२. वही, पृ. १८१.
३. भारती चरितम् - चेल्लम्मा भारती - पृ. ९, १९७९ पुनर्संस्करण, पारि निलैयम्।
४. वही, पृ. ९९.

गर्जन से उस सिंह ने भारती को उत्तर भी दिया था।[1] अतः यह स्पष्ट है कि उन्होंने प्रकृति के सभी जीव जालों से मिलजुल कर उसके प्रत्येक के सौन्दर्य का रसास्वादन किया था और उनसे तादात्म्य भी स्थापित किया था। यही सौन्दर्य उनकी प्रतिमा और कल्पना से सजीव हो काव्य स्वरूप में परिणत हुआ था।

प्रातःकालीन कौवे की तरह कवि भारती ने सायंकालीन कौवे के सौन्दर्य का वर्णन भी किया है। कौवे को संबोधित करके कहते हैं —

"काव काव कहकर बोलनेवाला कौआ - मेरा
नेत्रों को आनन्द देनेवाला श्याम रंगीन कौआ।"

कुछ उड़ते उड़ते, कई शाखाओं पर बैठकर, आकाश में शाम के वैविध्य को देखते हैं - कुछ काव काव कहकर इधर उधर जाते हैं; कुछ मिल-जुलकर हर दिशा में गमन करते हैं। तत्काल देवी माँ! पराशक्ति आकाश में प्रकाश दिखाकर चाँद को अपने सिर में रख लेती है।

नारियल के पेड़ पर हरे रंग का तोता "कीच-कीच" बोलती है और अेक छोटी चिड़िया "कू" कहकर नभ की ओर गमन करती है।[2]

कवि प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ सन्ध्या देवी रूपी शक्ति को देखते हैं और वह शक्ति अपने सिर के मुकुट में चाँद को रख लेती है। यह सन्ध्या के उत्तरार्द्ध भाग का सूचक है। प्राकृतिक सौन्दर्य में कवि की अनुभूति, कल्पना का सुन्दर समन्वय इस से प्रमाणित होता है।

---

१. भारती चरितम् - चेल्लम्मा भारती - पृ.१२३, १२४. - १९७९ - पुनःसंस्करण परि निलैयम.

२. काळैरु कत्तिडुम् काक्कै - अेन्रन् कण्णुक्किनिय करुनिरक् काक्कै,
मेविप् पल किळै मीदिल् - इंगु विण्णिडै अन्दिप् पोळुदिनिक् कण्डे
कूवित् तिरियुम् चिलवे; चिल कूट्टंगळ् कूडित् तिसैदोरुम् पोगुम्
देवी पराशक्ति अन्ने - विण्णिल् चेवुलोळि काट्टिप् पिरै तलैक् कोण्डाळ्
तेन्नै मरत्तिळै मीदिल् - आंगोर् तेलवप् पसुंकिळि कीच्चिट्टुप् पाडुम्
चिन्नंप् चिरिय कुरुवि - अदु "जिवू" वेन्रु विण्णिडै उसलिट्टे अेगुम्।
- भारतीयार कवितायें - पृ.२२०. अन्दिप् पोळुदु कविता से -
द्वितीय - १९७८ - पूम्बुहार प्रसुरम, मद्रास.

भारतीदासन की कविताओं में प्राकृतिक सौन्दर्य सजीव हो उठा है। पर्वत के प्राकृतिक सौन्दर्य को अंकित करनेवाली एक कविता नीचे दी जाती है। काव्य की पृष्ठभूमि के रूप में यहाँ प्रकृति काम करती है।

'कोकिला 'कू कू' बोलती है, कोलाहल से मोर नाचता है,
सुगन्धपूर्ण हवा चलती है, हीरे की तरह जल की रश्मिएँ चमकती हैं
फल देनेवाले कई वृक्ष हैं। फूल सुगन्ध को सर्वत्र फैलाते हैं।
फूलों को देख देखकर भौंरे गीत गाते गाते, मंडराते मंडराते
आनन्द मनाते हैं! शिकार खेलनेवाली नारियाँ वहाँ खेलती हैं।
जंगली लोग वहाँ प्रेम करके विवाह भी करते हैं।'(1)

पर्वत के सुन्दरता को बढ़ाने के लिए नारियाँ और प्रेमी लोग भी आया करते हैं। समस्त पर्वतीय प्रदेश के सौन्दर्य को कवि ने यहाँ प्रस्तुत किया है। प्रकृति के अंतर्गत चांदिनी का वर्णन अनेक स्वच्छन्दतावादी कवियों ने किया है। लेकिन भारतीदासन की चांदिनी (निला) के निम्नलिखित वर्णन में अपूर्व सौन्दर्य है। चांदिनी को संबोधन करके कवि का कथन है –

'नील परिधान में अपने तन को छुपाकर
चांदिनी कहकर तुम अपने प्रकाशमय मुख को दिखाते हो।
संपूर्ण रूप को दिखाओगी तो, प्रेम की लूट में
यह दुनिया मिट जाएगी क्या? – आकाश रूपी
उपवन में पुष्पित एक विशिष्ट फूल हो क्या? तुम
मन को लुभानेवाला स्वेत दुग्ध-कलश हो क्या?
अमृत धारा हो क्या?

---

1. भारतीदासन कविताएँ – पृ. 124 वाँ संस्करण 1980 सेन्तमिल निलैयम – संजीवि पर्वतत्तिन सारल से।

प्रातः काल में उदित लाल सूर्य सागर में डूबकर
शीतल होकर प्रकाशित ज्वाला हो क्या?'[1]

तमिल कवियों का प्रधान वर्ण्य वस्तु चाँदनी को लेकर कवि भारतीदासन ने विविध कल्पनाएँ की हैं। नीले नभ रूपी वस्त्र में अपने पूर्ण अंगों को छुपाकर चाँदनी का अपने प्रकाशमय मुख मात्र को दिखाने का चित्र उसके संपूर्ण अंगों को दिखाने से यह दुनिया प्रेम के मद में अपनी जान दे देगी - यह कल्पना, भ्रम में फँसाकर उसे आकाश रूपी उपवन में पुष्पित एक विशिष्ट फूल कहना, दूध भरे रजत कलश, अमृत धारा आदि कहकर पुकारना, प्रातःकालीन उषा, सायंकालीन सागर में डूबकर शीतल होकर पुनः चाँदनी के रूप में प्रकट होने की उद्भावना सब अपूर्व ही हैं। यहाँ तक कि कवि ने उसे मुकुलाहट की मोती[2] भी कहा है।

एक और स्थान पर कवि ने प्रकृति के प्रत्येक कण में सौन्दर्य का दृश्य देखा है। इनके लिए प्रकृति ही चिर सुन्दरी है। उसका सौन्दर्य ही अनंत एवं शाश्वत है। सौन्दर्य को ही सुन्दरी

---

1. नीलवान आडैक्कुळ उडल मैरत्तु निलाकेन्न कादृदुकिन्राय ओळि मुकत्तै!
कोलमुलुतुम कादृटविट्टाल कादल कोळ्ळैयिले इक्कुलगम सामो! वान
ओडैयिले पूर्त तनिपूवो नी तान सोक्क वेळ्ळिल पाल कुडमो, अमुद उट्टो!
कालैवद सेमपरिदि कडलिल मूलगि कनल मारि कुळिर्न्द ओळि पिलम्बो!

प्रस्तुत पंक्तियों में उल्लिखित चाँदनी, कविता में वर्णित नायिका अमृतवल्ली की सुन्दरता का प्रतीक है। अतएव अप्रत्यक्ष रूप से नायिका के सौन्दर्य का भी वर्णन कवि ने यहाँ किया है। नायिका जिस उपवन में रहती थी, उसी के पास खड़े-खड़े काव्य का नायक 'उदारन' चाँदनी को देखकर उसकी सुन्दरता का वर्णन करता है। इसमें नायक उदारन को कवि के रूप में दिखाया गया है।
— 'पुरट्चिक्कवि' नामक लघु काव्य से। 'भारतीदासन कविताएँ' - पृष्ठ 20,
24 वाँ संस्करण 1980

2. भारतीदासन कविताएँ - 1 पृष्ठ 20 -'पेरम सिरिप्पिन ओळिमुत्तो निलवे नी तान?'
अर्थात — ओ! चाँदनी! तुम क्या मुकुलाहट की प्रकाशमयी मोती हो क्या?

और शाश्वत युवती के रूप में यहाँ कवि ने दिखाया है। प्रातःकाल के सूरज, सागर, किरणों के प्रकाश, उपवन, फूल, प्रत्येक ऋतु, सन्ध्याकालीन पश्चिम में अस्त होनेवाला सूरज और वृक्ष की शाखा सभी में प्रकृति रूपी सुन्दरी निवास करती है और कविता करने की प्रेरणा देती है। कहीं कन्नों की आँखों में ज्योति की तरह वह प्रकाशित होती है। सुन्दर दीपों में हँसती है। माला गूँथनेवाली उंगलियों में वह नृत्य करती है। हरे भरे खेतों में काम करनेवाले किसानों की नयी स्फूर्ति में, दिशाओं में आकाश में चल-अचल हरे-भरी वस्तुओं में सौन्दर्य को कवि ने देखा है। यह सौन्दर्य प्राचीन रहते हुए भी मिटनेवाला नहीं है। वह अजर-अमर, अनश्वर-शाश्वत युवती है।

'हँसते हुए मुख से अवलोकन करने पर सर्वत्र यह
सुन्दरी दीखेगी।'(1)

(iii) <u>नारी का सौन्दर्य</u> :-

सौन्दर्य का दूसरा पक्ष, नारी का सौन्दर्य है। नारी का सौन्दर्य प्रायः लौकिक प्रेम से जुड़ा हुआ है। लौकिक प्रेम की भावना प्राचीन काल के आदि साहित्य से लेकर आज तक व्याप्त है। कवि भारती की नारी अनेक स्थलों पर भक्ति का रूप धारण कर लेती है। भक्ति-रस प्रधान कविताओं में 'कण्णम्माविन् एलिल' (कण्णम्मा का सौन्दर्य) नामक कविता में कण्णम्मा की सुन्दरता का वर्णन कवि कैसे करते हैं, देखिए :

'हमारी कण्णम्मा की स्मिति नव गुलाब का फूल है
हमारी कण्णम्मा की आँखें इन्द्र-नील फूल हैं
हमारी कण्णम्मा का मुख लाल कमल फूल है
हमारी कण्णम्मा का मस्तक बालासूर्य है

---

1 अभ्किन सिरिप्पु - पृ° 5 - 15 वाँ सेन्तगिल।

हमारी कण्णम्मा का सौन्दर्य बिजली समान है
हमारी कण्णम्मा के दृग, मनमथ के धनुष हैं।'(1)

कण्णम्मा की हँसी, आँखें, मुख, मस्तक, दृगों की क्रमशः नव गुलाब, कृष्ण के नील-फूल, लाल रंगीन कमल, बाल सूर्य, धनुष से तुलना करके संपूर्ण सौन्दर्य को बिजली के समान प्रकाशमय कहा गया है। प्रकृति के विभिन्न वस्तुओं की उपमानों के रूप में दिखाकर नारी सौन्दर्य वर्णन में भारती ने परंपरागत प्रवृत्ति को अपनाया है। नारी के अंगों को प्रकृति अलंकृत करती है।

और एक स्थान पर कोकिला (कुयिल) की कल्पना करते करते कवि उसे नारी के रूप में देखते हैं। उस अद्वितीय नारी की सुन्दरता का वर्णन कवि ने'कुयिल पाट्टु' की अन्तिम पंक्तियों में किया है।

'पेण्मैतान देयवीकमाम कादृचियहा!'(2)

अर्थात् नारीत्व ही अलौकिक दृश्य है रे!' कहकर नारीत्व में कवि अलौकिकता का दर्शन करते हैं। उस अलौकिक नारी का सौन्दर्य ऐसा है कि 'कविता रूपी मधुर मधुर फूलों के रस में, मधुर अमृत को मिलाकर प्रेम की धूप में सुखाने से जो घनीभूत सार मिलता है, उसी से स्वयं ब्रह्मा ने उसके अंगों का निर्माण किया है।

'कवितैक कनिपिलिन्द
सादृनिले, पण्कूत्तु एनुम इवदृन सारमेलाम,

1· एंगळ कण्णम्मा नगै पुदु रोजप्पू
एंगळ कण्णम्मा विलि कृष्ण नीलप्पू
एंगळ कण्णम्मा मुखम् सेन्तामरै।
एंगळ कण्णम्मा नुतल बाल सूर्यन।
एंगळ कण्णम्मा एलिल मिन्नले नेरक्कुम।
एंगळ कण्णम्मा पुरुवंगळ मदन विरकळ।

'एंगळ कण्णम्माविन एलिल' कविता - भारतीयार कविताएँ - पृ· 150 - 'कण्णम्मा का सौन्दर्य'
II अगस्त 1978 पूम्बुहार प्रसुरम्

2· भारतीयार कविताएँ - पृ· 417 - कुयिल पाट्टु (कोकिला गीत) से II 1978 अगस्त पूम्बुहार, मद्रास·

गेट्टि, अवनोडे इनअमुदैर तान कलन्दु,
कावल वैगिलिले कायवैत्त कट्टिइनाल,
मादवळिन मेनि वकुत्तान बिरमनेन्बेन !।(1)

नारी के सौन्दर्य वर्णन करने में इससे अधिक विलक्षण कल्पना कदाचित् हो और कहीं प्राप्त होगा।

कवि भारतीदासन ने नारी की सुन्दरता को उत्कृष्ट दिखाने के लिए नारी को पूर्ण चंदिनी, बिजली, इन्द्रधनुष, तमिल कवियों की कल्पना, स्वर्ण, फूलों के समूहों का सौन्दर्य आदि कहा है। कवि कहते हैं —

आकाश की पूर्ण चंदिनी नारी का रूप धारण करके मेरे
पास खड़ी हो गयी है। भूमि में इस प्रकार के शीतल प्रकाश कहाँ है?
बिजली कुल में इसका जन्म हुआ है क्या? इन्द्रधनुष के वंश में उदित
हुई है क्या? श्रेष्ठ तमिल कवियों की कविताओं में निहित कल्पना का रूप है
क्या? तपे हुए स्वर्ण में उदित हुई है क्या? पुष्पलता है क्या? अथवा
फूलों का अम्बार है क्या?(2)

इस प्रकार नारी के सौन्दर्य वर्णन में कवि की कल्पनाएँ वैविध्य को लेकर चलती हैं। मणिमेकलै के सौन्दर्य वर्णन में भी इस प्रकार की एक नवीन पद्धति कवि ने अपनायी है। पर्वत प्रदेशों में उत्पन्न

1· भारतीदासन कविताएँ – पृ· 418 – कुयिल पाट्टु (कोकिला गीत) से – II 1978 अगस्त, पूम्बुहार, मद्रास

2· 'पुरट्चिक्कवि' में अमुतवल्ली को देखकर उदारन की उक्तियाँ। भारतीदासन् कविताएँ I, पृ· 22
वानिले इलगिट्टवोर माळवि मंगियाय एन्नीदिरे कटु वायत्तदो।
पुविक्के गेदु इदु पोल ओर तण ओळि।
मिन्नल कुलत्तिल विळैन्ददो? कविमा -कुलपति पिरन्तदो।
कन्दमिल कवियर्गळ- उळत्तुमिन्नल कुलत्तिळ विळैन्ददो? वन विमिन्न कुलत्तिल पिरन्ददो?
पोन्निन उर्समप कुम्किर पोलिन्तदो? ओर पूंगकोडि यो? मलर कूट्टमो?

केलों[1] में निहित मधु, सेन्तमिल मधु — इन तीनों मधुओं का स्वाद करने से ही उनकी मधुरता का अनुमान हो सकता है। लेकिन मणिमेकलै को सुन्दरता को देखते ही मधुर लगता है।[2] अतएव मणिमेकलै का सौन्दर्य उपरोक्त तीनों प्रकार के मधुओं से मधुर स्थापित करके उसके अद्वितीय सौन्दर्य की ओर संकेत किया गया है। तमिल काव्य परंपरा में इस मणिमेकलै के अद्वितीय सौन्दर्य का वर्णन अन्यत्र भी किया गया।[3] लेकिन प्रेम और नारी का सौन्दर्य इस कवि की चेतना और प्राण-सत्ता हैं। अद्वितीय सुन्दरी को देखकर वे इस प्रकार विविध प्रश्न करने लगते हैं —

'वह पूर्णचन्द्रिनी है क्या? किरण है क्या?
पर्वतीय प्रदेश में उत्पन्न मधु है क्या?
चलचित्र है क्या? हरिणी है क्या?
नव मधु की भाषा है क्या? मन को लुभानेवाली

1• वन प्रदेशों में 'तेन वाषै' मधु केला नामक एक जाति का फल उत्पन्न होता है। वह मधु की तरह मीठा होता है।

2• कुन्दुव कोम्बुत्तेन, मुलै वाषैप्पषत्तेन मरुन्दु मारुपूलवर सेन्तमिलत्तेन – एन्र मुत्तेन उण्डाले तेन ! इम मणिमेकलै ओविय्त कण्डाले तित्तिक्कुम तेन। – पृ• 26

— भारतीदासन 'मणिमेकलै वेण्पा' काव्य ॥। 1979 पारि निलैयम, मद्रास•

3• भारतीदास का काव्य 'मणिमेकलै वेण्पा' मणिमेकलै महाकाव्य का एक नवीनतम लघु रूप है। मणिमेकलै के सौन्दर्य का वर्णन महाकाव्य मणिमेकलै में भी मिलता है। उसका वर्णन काव्यकार सीत्तलै चात्तनार इस प्रकार करते हैं — नगर के बीच में स्थित उपवन की ओर पूर्णचन्द्रिनी मणिमेकलै फूलों को तोड़ने के लिए जा रही है। उसे देखने के लिए नगर के सभी लोग आ रहे हैं। मन्मथ भी उसका सामना करने में हिचकिचा रहा है। उसकी ओर दृष्टि डाले बिना कोई भी पुरुष नहीं गुजर सकता है वहाँ से। कवि का कथन है कि अगर कोई उसकी ओर दृष्टि किये बिना जाता है तो वह पुरुष नहीं है बल्कि वह कापुरुष (पेडि) है, कायर है। तात्पर्य यह हुआ उसका सौन्दर्य अपार है।

'पडैयिट्टु नडुंगुम कामन; पावैये आडवर कण्डाल
अकलुम उण्डे? पेडि यर अन्रो पेट्रियन निन्रिडिन।
'मलर्वनम पुक्क कादै' (फूलों के उपवन में प्रवेशित' – से — उपसर्ग।

शीतल हवा है क्या उसकी हँसी माणिक्य है क्या?
हृदय को आनन्द देनेवाली वानमपाडि पक्षी है क्या?
स्वर्ण ही उसका तन है क्या? उसकी भाषा मीठी शक्कर
है क्या? नाचनेवाली मोरनी अथवा गानेवाली कोकिला?
श्रेष्ठ साहित्य है अथवा रैनतमिल की मधुरता?'[1]

और नायिका की हँसी को सुन्दर फूल, उसके शब्दों को ईख-रस, आँखों को प्रेम का प्रकाश, केशों को श्याम रंगीन बादल, मुख को चाँदनी[2] की संज्ञा भी उन्होंने दी है। इनके काव्य किसान और नागरिक के बिना भी चल सकते हैं, लेकिन नारी के सौन्दर्य के वर्णन के बिना शुष्क हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त नारी के प्रति इनके संबोधन भी विचारणीय हैं —'अद्वितीय सुन्दरी'[3] 'मधुर तमिलिनी'[4] 'हरे रंग की मोरनी'[5] 'फूलों की तरह आँखों वाली'[6] 'दूध की तरह भाषा वाली'[7] 'शीशे की तरह कपोल वाली'[8] 'स्वर्ण रंगीन तन वाली'[9] 'बिजली सम पतली कमर वाली'[10] 'बिजली सम मुस्कुराहट वाली'[11] 'माणिक्य की तरह अधरों वाली'[12] 'मोरनी की चाल चलनेवाली'[13] 'चाँदनी सम मुखवाली'[14] 'फूलों की

1· कादल पाडलकळ – पृ· 25 – 1977 – I पुम्बुहार
2· पाण्डियन परिसु – पृ· 162 नायिका अनम का सौन्दर्य – 15 वाँ संस्करण 1978, रैनतमिल निलैयम
3· सीरपाक्
4· तोन्तमिल
5· पच्चै मइल
6· वेल विधि
7· पाल पोल मोधि
8· कण्णाडिक्कन्नम्
9· पोन मेनि
10· मिन्नल नेर सिद्दिडै
11· मिन्नल पोल पुन्सिरिप्पु
12· उवड् माणिक्कम·
13· मइल नडै
14· मदि पोल मुखम्

तरह मुँह वाली'(1) 'चलने वाला चित्र'(2) 'बिजली तन वाली'(3) 'लाल कमल की तरह मुख वाली'(4) 'पुष्पित फूलों की तरह अधरों वाली'(5) 'हंस की चाल चलनेवाली'(6) (नारी का चलना), 'स्वर्ण सा तन वाली'(7) 'मोरनी'(8) 'कोकिला'(9) 'चलनेवाली सुन्दरी'(10) 'पतली कमर की सुन्दरी'(11) 'पुचकारनेवाला तोता'(12) आदि आदि प्रयोग उनकी कई कविताओं में मिल जाते हैं। नारी के सौन्दर्य-वर्णन में अन्य तमिल कवियों ने परंपरागत प्रकृति के उपमानों का प्रयोग करके, नारी की सुन्दरता को श्रेष्ठ बताया है। कविमणि का सौन्दर्य वर्णन इसी प्रकार का है।

'इसकी आँखें हरिणी को हरानेवाली हैं
इसकी चाल सुन्दर मोरनी के समान है
इसके बोल मधु को भी परास्त करनेवाली है।
वह नारी देवता का दूसरा रूप है।'(13)

1· मलर पोल वाय्याळ
2· नडै ओवियंगळ
3· मिन्नुडल
4· सेन्तामरै मुखम्
5 · सेतु मलर इदल
6· अन्न नडै
7· तंग तेर
8· पेण मइल
9· कुयिल
10 · नडैयपकि
11· इडैयपकि
12· कोंजुम किळि
* पिछले पृ· की 3 से 14 तक इस पृष्ठ की 1 से 12 तक के संबोधन शब्द कवि की विभिन्न कविताओं से लिये गये हैं।
13· मानैपपिरत विषिकुंयाळ - और मा मइल पोलुम नडैयुडैयाळ
तेनैपपिरत मोळिकुडैयाळ - पेण्णिन देय्वमेनत्तकुम सोइैयाळ।
— असिय ज्योति - पृ· 77 15 वाँ - 1979 पारि निलैयम·

सुरदा की भावनाएँ, नारी और उसके सौन्दर्य के प्रति नवीन प्रतीत होती हैं। व्यंग्यात्मक ढंग से अहल्या का सौन्दर्यांकन करते हुए अपने अतीत प्रेम का भी परिचय दिया है। इनकी कल्पनाएँ नारी के सौन्दर्य के प्रति नवीन हैं।

अहल्या, सौन्दर्य का विश्लेषण है

श्वेत पूर्ण चंद्रिनी उसकी सुन्दरता को देखकर विस्मित होती थी
उसका प्रत्येक अंग, नेत्रों की पलकें, धनुष सा भृग
लंबे लंबे केश, लाल अधर, हाथ, पैर, तन, मुख
लाक्षणिक रूप से जैसे होने चाहिए वैसे रहे।
उसकी चाल को देखकर हंस पक्षी भी लज्जित होती थी
सुन्दरी के कपोलों को देखकर मीठे मीठे आम्र फलों ने मुंह फेर लिये
कमल-मुख वाली नारियाँ इस आर्य नारी के सौन्दर्य पर
विजय पाने में असमर्थ होकर पर्दा पहनने लगीं।(1)

इस वर्णन में ऊपर दिये वर्णनों से कुछ नवीनता है। हंस पक्षी का लज्जित होना, आम के फल हार मान लेना आदि नवीन कल्पनाएँ प्रतीत होती हैं। पर्दा पहनने की प्रथा का इतिहास नवीन ढंग से कवि प्रस्तुत करते हैं। 'अहल्या को सौन्दर्य का विश्लेषण बताना' उसकी अद्वितीय सुन्दरता की उद्भावना है।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि तमिल कवियों ने नारी के सौन्दर्य वर्णन में प्रकृति के प्रत्येक अंग को उपमान के रूप में प्रयोग किया है। कहीं कहीं इन्होंने नारियों की सुन्दरता को प्रकृति से भी बढ़कर दिखाया है। भारती को छोड़कर शेष कवियों की नारी का सौन्दर्य लौकिक प्रेम को उद्दीप्त करता है। सौन्दर्य के क्षेत्र में तमिल कवि विशेष रूप से नारी के सौन्दर्य रूपी मधु में झूमनेवाले

---

1. सुरदा - तेन मषै - पृ. 164, 165 IV 1977 - सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास.

प्रतीत होते हैं। सौन्दर्य प्राकृतिक हो अथवा नारीगत - सभी क्षेत्रों में एक आधुनिक कवि उसकी खोज करते हैं।

सौन्दर्य के निवास स्थान को मैंने ढूँढा। उस दिन इधर उधर भटका।
मोर की तरह नाचनेवाली नारियों के पावों में
मद में झूमनेवाली नारियों की मीन जैसी आँखों के कूल में
बादलों के बीच चांदनी स्थित आकाश में
बाघ-हाथी कुल निवासित कानन की गुफाओं में
मधुर मधुर फलों में, सुगन्ध पूर्ण फूलों में
मोर पंखों को विशाल करके नाचने और खेलने में
गर्व से सिंह के चलने में, श्रेष्ठ कवियों के जीभ में
'भू' को जीवन देनेवाले किसानों की भुजाओं में जोतों में,
दैवी कृपा (अरुळ) निवास करनेवालों के हृदय में ...
अन्त में देखा, सर्वत्र सौन्दर्य निवास करता है।(1)

पहले कवि लौकिकता के मोह में नारी में सुन्दरता को खोजते हैं। शायद असन्तुष्ट होकर अपनी दृष्टि को प्रकृति में लगाकर उसमें सौन्दर्य को ढूँढते हैं। पग पग बढ़ते हुए अन्त में ईश्वर कृपा के वासस्थान हृदयों में सौन्दर्य को पहिचानते हैं। प्रथम नश्वर हैं, द्वितीय अनंत हैं और तृतीय अमर हैं। कविता की अन्तिम पंक्तियाँ फलीभूत ज्ञान का प्रतीक है।

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य वर्णन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है।

---

1. मुडि यरसान - कविताएँ भाग - तृतीय संस्करण 1976 वल्लुवर पदिप्पकम्, पुदुक्कोट्टै, तमिलनाडु 'तेडिय एधिल' - खोजा हुआ सौन्दर्य' - पृ• 107, 108

कल्पना ।

कविता तभी पूर्ण रूप से रूपायित हो सकती है जब कवि की कल्पनाएँ शक्तिमयी एवं स्वाभाविक हों। स्वच्छन्दतावादी कवियों में यह कल्पना शक्ति एक अन्तर्निहित प्रवृत्ति है। आधुनिक तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों में कल्पना की उड़ानें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होती हैं। प्रकृति, प्रेम और सौन्दर्य के प्रति उनकी अनुभूतियाँ अत्यन्त कल्पनिक प्रतीत होती हैं। अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को प्रकृति, प्रेम और सौन्दर्य पर आरोपित करते कल्पना के माध्यम से कविता के जाल बुनने में वे समर्थ हुए हैं।

भारती कृत 'कुयिल पाट्टु' में प्रकृति, कल्पना को साथ लेकर ही अग्रसर होती है। प्राकृतिक वस्तुओं में डूबकर स्वयं कवि कोकिला बनकर गीत गाने की कल्पना करता है। कविता का आरंभ और अन्त कल्पना संकुल है। देखिए —

उपवन के पक्षी आनन्द मना रहे हैं। पवन में मधुरता फैल रही है। ऐसा लगता है कि बिजली का स्वाद सर्वत्र फैलता आ रहा है और आकाश की मोहिनी ये सब लीलाएँ कर रही हैं। उसी समय एक सुन्दर कोकिला मधुर गीत गा रही है। उस गीत को सुनकर कवि कल्पना करता है कि मैं भी मानव का रूप त्यागकर कोकिला का रूप धारण करूँ, कोकिला, बनकर प्रेम करते करते गीत गाते-गाते अपना जीवन बिताऊँ और प्राण को भी छोड़ दूँ।(1) अन्तिम पंक्तियों में कवि की कल्पना से कोकिला नारी का रूप धारण कर लेती है। उसकी सुन्दरता को देखकर कवि को अत्यन्त सन्तोष होता है। उसका आलिंगन करते उसके मधुर अधरों का पान करते करते मोह में वह बेहोश हो जाता है। कुछ देर के बाद 'सुन्दरी सहित उपवन सब दृश्य हो जाता है। आह ! कहकर उसी बेहोशी में वह गिर पड़ता है। फिर होश में आकर आँखें खोलकर देखता तो पता चलता है कि यह उनका घर है, और उनकी चारों ओर पुरानी किताबें, लेखनी, पत्र-पत्रिकाओं का समूह, पुरानी चारपाई - पड़ी हुई हैं। ऐसा

---

1. भारतीयार कवितायें। पृ. 396 पंक्तियाँ 15-30 'कुयिल पाट्टु' (कोकिला गीत)

लगता है कि उपवन, कोकिला, कोकिला द्वारा कही हुई प्रेम कहानी — सब सायंकालीन सुन्दरता की बेहोशी में मन में उचित कल्पना की लीलाएँ हैं।[1] 'कुयिल पाट्टु' में कल्पना, प्रेम और प्रकृति को नया रंग, एवं नया कलेवर प्रदान करती है। अतएव तमिल रोमांटिक काव्य क्षेत्र में 'कुयिलपाट्टु' एक नया मोड़ है।

अन्य स्थल पर सूर्य और अन्धेरे की कल्पना बहुत ही श्रेष्ठ बन पड़ी है। प्रस्तुत पंक्तियों में कवि की कल्पनाएँ चरम सीमा पर पहुँचती हैं। यह उनकी अद्वितीय प्रतिभा का प्रतीक है। सूर्य को संबोधन करते हुए कवि भारती विविध प्रश्न करते हैं —

ओ सूर्य !
तुमने अन्धेरे को क्या कर दिया? भगा दिया है?
या मार दिया है अथवा ग्रस लिया है क्या?
आलिंगन करके चूमकर किरणें रूपी तुम्हारे करों में
बन्द कर लिया है क्या? अन्धेरे तुम्हारा शत्रु है क्या?
अन्धेरे तुम्हारा खाद्य पदार्थ है क्या?
वह तुम्हारी प्रेयसी है क्या? रात भर तुमको न देखने के
कारण बेहोश में अन्धेरे में रह गयी है क्या?
तुमको देखते ही तुम्हारे प्रकाश को स्वयं लेकर
तुममें समा गयी है क्या? तुम दोनों एक माता के
बच्चे हैं क्या? क्रमिक रूप से आकर दुनिया की रक्षा
करने का आवेश दोनों माँ से पाया है क्या?
क्या दोनों को मरना नहीं है? क्या दोनों अमृत हैं?
दोनों की प्रशंसा करता हूँ। हे ! सूर्य ! तुम्हारी प्रशंसा करता हूँ।[2]

1• भारतीयार कविताएँ - पृ• 418 - 'कुयिल पाट्टु' पंक्तियाँ 247 -260
'कल्पनैयल सूळ्न्द एन्रे कण्डु कोण्डेन! (मुझे भान हुआ कि ये सब कल्पना की लीलाएँ हैं अर्थात् कल्पना की चाल है।)
॥ 1978 अगस्त - पूम्बुहार प्रसुरम्
2• भारतीयार कविताएँ - पृ• 424 ॥ 1978 अगस्त, पूम्बुहार, मद्रास-13

आलिंगन करते चूमकर 'किरणों रूपी करों में बन्द कर लेना', 'एक माता के बच्चे' आदि अनुचित हैं। अन्य एक स्थल पर सूर्य को देखकर वे कहते हैं —

वर्षा तुम्हारी पुत्री है, भूमि भी तेरी पुत्री है,
पवन, सागर, ज्वाला तेरी संतान है
प्रकाश तुम्हारी प्रेयसी है, वज्र और बिजली तेरी लीलाएँ हैं?[1]

आगे वे मेघों की बच्चियों की कल्पना भी करते हैं जो बिजली रूपी फूलों की वर्षा करती हैं।[2]

प्रकृति को लेकर कल्पना की उड़ानें भरना भारती को पसन्द है। इनकी कल्पनाएँ कोरी कल्पनाएँ नहीं हैं, उनमें सत्यता भी है। क्योंकि कल्पना का सत्य ही सब से बड़ा सत्य है।[3] प्रकृति के विशाल मंच में आकाश, सूर्य, पवन, शक्ति, अंधेरा, मेघ, वर्षा, बिजली, भूमि, सागर, नक्षत्र, वज्र जैसी वस्तुओं से सत्य-कल्पना-रत्नों को चुन-चुनकर कविता में भारती ने इस प्रकार सजा दिया है कि वह कोहिनूर जड़ित हार जैसा बन गया है और तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में शाश्वत प्रकाश प्रदान कर रहा है। प्रकृति की विस्तृत, दुर्गम निधि से सत्य कल्पना के रत्न चुन लेना और चुनकर कविता में इस भाँति सजा देना कि वह लोक हृदय का हार बन जाए, साधारण कवियों का काम नहीं है। कवि-कल्पना में सत्यता होनी चाहिए, किन्तु सत्यता का जो अर्थ साधारणतः किया जाता है उसे कविता में ढूँढ़ना ठीक न होगा।[4] भारती जैसे असाधारण कवि ही इस प्रकार का खेल खेल सकते हैं। इस प्रकार 'कल्पना में सत्यता' की दुस्साध्य साधना अन्यत्र दुर्लभ है।

---

1. मळैयुम निन मकळ, मण्णुम निन मकळ, काट्रुम कडलुम कनलुम निन मक्कळ
   ओळि निन कादली, इडियुम मिन्नलुम, निनदु वेडिक्कै ।
   — भारतीयार कविताएँ 429
2. 'मेघक् कुंजुकळ मिन्नल पूच्चोरिकिन्रन ।
   — वही - पृ॰ 429
3. आधुनिक कवि पंत पर्यालोचन - पृ॰ 33 ।। वीं आवृत्ति 1964 साहित्य सम्मेलन
4. श्याम सुन्दरदास - 'साहित्यालोचन' - पृ॰ 65 - 18 वाँ संशोधित संस्करण -
   सन् 1973 - इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद

भारतीदासन की कल्पनाएँ प्रायः प्रेम और सौन्दर्य से संबंध रखती हैं। वे नारी की तुलना मोरनी से करते हैं। वे मोरनी को संबोधित करते हुए कहते हैं — "तुम और नारियाँ समान हैं। यह सत्य है, सत्य ही है। सत्य होने पर भी ये नारियाँ दूसरों की गालियाँ देती हैं। अरे! कहो! उनकी गर्दन, तेरी गर्दन के समान कैसे हो सकती है? अन्य घरों की घटनाओं को ताकने के कारण प्रकृति-माता ने इनकी गर्दन को ह्रस्व कर दिया है। तुम तो निश्छल एवं निष्कपट हो। इसीलिए दीर्घ गर्दन दी गयी है।(1)

फिर कवि मोरनी से कहते हैं — "तुम इस रहस्य को किसी से मत कहो, क्योंकि मैं नारियों की गालियों से बेहद डरता हूँ। यह कल्पना अत्यन्त सरस प्रतीत होती है। जीवन के व्यावहारिक पक्ष पर भारतीदासन की कल्पनाएँ बल देती हैं।

'नील परिधान पहनकर खड़ी रहनेवाली आकाश रूपी नारी की मोती-माला को युवक चाँद ने खींच लिया। इस प्रकार खींचने से माला के मोती चारों ओर बिखरकर नक्षत्रों के रूप में प्रकाश देते हैं।(2) जैसे वर्णन कवि की प्रकृति संबंधी कल्पनाओं की विशाल मनोभूमि ही प्रस्तुत करते हैं। यहाँ आकाश को प्रेयसी और चाँद को युवक प्रियतम के रूप में कल्पित किया गया है। युवक चाँद का आकाश रूपी नारी को देखना, पहनी हुई मोती माला को खींचना, माला के मोतियों के चारों ओर बिखरकर नक्षत्र बनकर रात में प्रकाश देना — ये सब कल्पना के अति को सूचित करते हैं। लगता है कि रात के आते-आते युवक प्रेम के मद में आकर प्रेयसी की मुक्ता-माला को खींचता है। यहाँ नीला रंग (नील परिधान) प्रेम और मोती नक्षत्र का प्रतीक है।

और एक स्थान पर कवि ने सन्ध्या कालीन आकाश और पर्वत की कल्पना नवीन ढंग से की है। ये पंक्तियाँ कल्पना की अतिशयता का द्योतक हैं। 'सन्ध्या का समय है। स्वर्ण रंगीन झरना आकाश से गिर रहा है। इस उद्देश्य से कि दुनिया के लोग देख लें। सन्ध्या देवी ने ऊँच पर्वत रूपी सुंदर तन पर लाल रंगीन प्रवाल जड़ित वस्त्र पहना दिया।(3)

---

1 भारतीदासन कविताएँ - प्रथम भाग पृ॰54 - 24 वाँ संस्करण 1980, सेन्तमिल निलैयम।

2॰ भारतीदासन कविताएँ II भाग - पृ॰ 40 III 1977, पारि निलैयम

नील उडैयणिन्दु पोरुन्दु-अंगु निन्र वान्दाळ उयर विण्माळ

वाणिम चेम्माई - कुळ मुत्तु मालैयै वैरल इळुत्तु

नालु पुरत्तिलुम चिन्दि - ओळि नक्षत्तिरम् कुरै — कूप्पैयाक्कि"

3. अपकिन सिरिप्पु - पृ॰ 18 - XVI 1980 सेन्तमिल निलैयम।

झरने हीरों की तरह लटक रहे हैं
घनी लताएँ हरे रंग की रेशमी हैं
चिड़ियाँ सोने के टुकड़े हैं
शीतल फूल मणियों की चिकनाहट है।(1)

कवि ने यहाँ प्रकृति के विविध रंगीन चित्रों की कल्पना के द्वारा प्रस्तुत किया है। सन्ध्या-कालीन सूर्य की स्वर्ण-किरणों के अपूर्व प्रकाश से पर्वत से गिरनेवाले झरने, वहाँ की घनी लताएँ, चिड़ियाँ, शीतल फूल क्रमशः हीरे, हरे रंग की रेशमी, स्वर्ण-खण्ड और रत्नों मणियों की तरह दीख रहे हैं। ये कल्पनाएँ निर्विवाद रोमाण्टिक कल्पना को सुन्दरतर कर जाती हैं। हरे भरे पल्लवित, पुष्पित उपवन के प्राकृतिक सौन्दर्य में कल्पना के द्वारा मानवेतर प्रकृति के जीवों में भी प्रेम की भावनाओं का आरोप किया गया है। प्रेम सौन्दर्य और कल्पना का सम्मिश्रण प्रस्तुत पंक्तियों की विशेषता है। उपवन में

सुन्दर मोर नाचता है, कोकिला गाती है,
विविध चिड़ियाँ मिलती-जुलती हैं,
सुन्दर कुन्द की लताएँ फैलती हैं,
आनंद आनंद आनंद देखो रे!
स्वर्ण थाली पर चाँदी की सुषमा सी
तन वाली हरिणी प्रेम के मद में

---

1. अभिनव तिरुप्पु - पृ. 13 XV। 1980 रेन्तमिल निलैयम
अर्विकळ वयिर तोंगल !
अडर कोडि पच्चै पट्टे '
कुरुविकळ संग कट्टि
कुळिर मलर मणियिन कुपै।

प्रियतम को ढूंढ निकालकर उससे मिलती है
नवीन नवीन नवीन देखो रे !(1)

यहाँ अपने आदर्श उपवन की कल्पना, कवि ने की है। स्वर्ण रंगीन हरिणी के तन में स्थित श्वेत बिन्दु को, स्वर्ण थाली पर बिखरे हुए चांदी की प्रभा के साथ तुलना करके अपनी नवीन कल्पना का परिचय ही कवि ने दिया है।

भारतीदासन की कल्पना की चरम सीमा उनकी 'रात्रि देवी के स्वागत' में स्पष्ट परिलक्षित होती है। यहाँ रात्रि नारी के रूप में कल्पित है। रात्रि देवी पश्चिम में अस्त होने वाले सूर्य रूपी फल को खाती है। वस्त्र बदलकर आकाश रूपी नील वस्त्र को पहन लेती है। प्रकाशमय नक्षत्रों से अपने को अलंकृत कर लेती है। पेड़ की शाखाओं पर बैठे हुए पक्षियों की ध्वनियाँ रात्रि देवी के नूपुरों (पायल) की ध्वनियों से समता रखती हैं। अतएव रात्रि को प्रेममय मधुर देवी समझकर नायिका उस देवी का स्वागत करने के लिए दीप लेकर गली में खड़ी होती है।(2)

पश्चिम में सूर्य का अस्त होना, रात्रि में आकाश का नील रंगीन दीख पड़ना, नक्षत्रों का प्रकाश देना, पक्षियों की चहचहाहट आदि दुनिया की स्वाभाविक चीज़ें हैं। ये कवि की रंगीन

---

1. अधिकिय महल कुहत आड़ुम पाडुम, अन्डुम चिट्टुकळ तुडुम कूलवुम
एलिलाडु तळिर्ळ्डु पडरुम कोडि मुल्लै, इन्बम् इन्बम् इन्बम् पारीर।
तंगम तकट्टिल वेळ्ळि कासु सारद मेनि कलेमान कादल
पोंगि तेडि तुणैयवळ कूडुम ! पुदुमै पुदुमै पुदुमै पारीर।
— 'तेनअरुवि'- पृ॰93 1978 - पुम्बुहार॰

2. मेट्रिसैव अदिर पळत्तै विड्डुण्डु, नील आडै
माट्रियाय उडुत्तु मरकत मणिकळ पूण्डु
कोर किळै ओडुगुम पुट्कळ कोट्टिडुम इसैविन चदद
कार मिलर्न्दु अरैयव कावल कण्णान इरवु कन्नि
तिरुविळक्केन्दि कदु तेरुविनिल वरवेर्किन्नळ !
— 'इरवुक्कु वरवेर्पु' - कुट्टिव विळक्कु - पृ॰26-27 - प्रथम भाग ×। वर्ष 1979,
पारि निलैयम

कल्पनाओं में सजीव हो उठती हैं। रात्रि, नायिका को प्रेम की सूचना देती है और रात्रि ही नायिका के लिए माधुर्य का प्रतीक है। इसलिए नायिका अपने करों में दीप लेकर प्रसन्न मुख से रात्रि देवी का स्वागत करती है। रात्रि देवी के सूर्य रूपी फल को खाना, वस्त्र को बदल लेना, नक्षत्रों से अपने को अलंकृत कर लेना, नूपुरों की ध्वनियों के साथ चलना आदि रोमांटिक कल्पनाएँ हैं।

कविमणि प्राकृतिक वस्तुओं में सूर्य, चाँद, आकाश, सागर, पर्वत, नक्षत्र आदि की ओर अधिक ध्यान न देकर साधारण 'घास' की ओर मुड़ते हैं। आत्म-कथा प्रस्तुत करनेवाली घास अपनी वेदना पूर्ण कहानी ही सुनाती है। कवि की वैयक्तिक अनुभूति ही घास द्वारा प्रकट होती है। 'मैं घर के बाहर किसी एक कोने में पलती हूँ। घर के बाहर नतमस्तक होकर बीती हूँ। बिना पानी के तरसती हूँ फिर भी कोई पानी नहीं देता। जीवन भर दुख का अनुभव करती हूँ। आकाश मुझे वर्षा के रूप में पानी देता है। उसे मैं अमृत समझकर पिया करती हूँ। इस प्रकार पानी पीने से ही मेरा रंग हरा हुआ है। लोगों ने मुझे देखा, काटा, गाय और बकरियों को चराकर मेरा ध्वंस करवाया। फिर भी मैं भूमि के भीतर एक छोटे अंकुर के रूप में छिपी रही। मैं क्या करूँ? मेरी स्थिति ही ऐसी थी। मेरे मित्र बरसात ने आकर मुझे देखा और कहा — मानव की लीलाओं से क्या तुम बलहीन हो गये? मेरे रहते हुए तुम्हें फिकर क्या है? मूर्ख हो क्या? डरो मत ! मत डरो! सब की ईश्वर रक्षा करता है। इस प्रकार की सांत्वना से उत्साहित होकर पुनः धीरे-धीरे मैंने सिर ऊँचा किया तो पुनः काटी गयी, मेरा सर्वनाश कर दिया। फिर भी हताश नहीं हुई। अदृश्य होकर रही। क्या करूँ? समय की प्रतीक्षा करती रही। वह दिन भी आया। एक दिन/घर के सब लोग बाहर रिश्तेदारों के गाँव चले गये, बहुत दिनों तक नहीं लौटे। मौका पाकर अपनी इच्छा से मैं खूब पली और विकसित हुई। अब मुझे दूसरों के घर को नाश करने की शक्ति है फिर भी मैं उसे अनुचित समझती हूँ। मेरा यही विश्वास है कि 'जो सहनशील है, वह सदा भू पर राज करेगा।"(1) इस प्रकार घास की आत्म-कथा स्वच्छन्दतावादी काव्य के सभी गुणों से युक्त है।

मूर्त मानवेतर वस्तुओं का मानवीकरण सर्वत्र प्राप्त होता है। लेकिन कवि सुब्रह्मण्य भारती ने अपने को ही प्रेमिका के रूप में चित्रित करके अमूर्त भाव को मानवीकरण प्रदान किया है। कवि स्वप्न रूपी

---

1. 'पोरुतवर एन्सम भूमि आळ्वार'

प्रेमिका को संबोधित करके कहते हैं — हे ! स्कन रूपी प्रेमिका ! तुम मेरी काव्य कला की नायिका हो। मन रूपी रथ पर चढ़कर दुनिया भर घूमकर हम सुख ले आएँगे। दिनकर के साथ घूमेंगे। पूर्ण चाँदनी रूपी नौका में विहार करेंगे। उपवन के फूलों की तरह नीले व्योम के मणियों अर्थात् नक्षत्रों को तोड़कर प्रकाशमयी माला पिरोकर पहनेंगे।[1] कल्पना ही इस कविता का सर्वस्व है। चाँदनी में नौका-विहार रोमांटिक कल्पना का नवीन रूप है।

भारतीदासन की तरह उपवन की कल्पना न करके वाणीदासन ने उपवन को युवती के रूप में देखा है। वे लिखते हैं — उपवन रूपी नव युवती को देखने के लिए बहुत दूर से पर्वत को त्यागकर, सायंकालीन मन्द प्रकाश में सुगन्धपूर्ण दक्षिणी पवन[2] आ पहुँचा। आकाश के श्याम मेघों को देखकर मोर खूब नृत्य करता है। इस वैभव को हँसी उड़ाते हुए भौंरे मुरली जैसे गीत गाते हैं।[3] प्रकृति की सारी लीलाएँ उपवन में होती हैं। उपवन को नवयुवती के रूप में कहना, उस युवती को देखने के लिए सन्ध्या के उत्तरार्द्ध काल में दक्षिणी पवन रूपी प्रियतम का आना, मोर के नृत्य को देखकर भौंरों को दिल्लगी करना आदि अपूर्व कल्पनाएँ हैं।

आधुनिक तमिल कवियों में सुरदा की विशिष्ट कल्पनाएँ[4] उनको अन्य रोमांटिक कवियों से अलग कर देती हैं। इनकी अभिव्यक्ति नई है और उपमाएँ नवीनतम हैं। आकाश इस

---

1. कवि कुणकनवुकळ - पृ. 28 - 1973 शुद्धानंद पुस्तकालय
2. तेन्रल को यहाँ नायक का रूप दिया गया है।
3. सोलै पुदुप्पेण्णै काण दूरत्तु मा मलै विट्टु
   मालैक्कदिरोळि मंग क्कदत्तु मा मण तेन्रल
   काले उन्दरित्तए वानक्कार मुकिल कण्डाडुम तोकैक
   कोलत्तै एळ्ळि नगैत्ते कुंजल इसै मोट्टिन तुम्बि।
   'एधिल वुत्तम' - पृ. 23 वाणीदासन - I 1974 विडिल प्रकाशन
4. कविता करने के लिए कल्पना को अनावश्यक समझते हैं। क्योंकि इनका विचार है कि कविता गणित की तरह है। 'कणक्कैपोन्रदे कवितै एन्बदाल कवितै पुनैन्दिडक्करपने वेण्डुम एन्नुम कक्तै नान पेरपदे इल्लै।'
   — तेन्मुळम् - पृ. 154 - II - 1978 सुरदा पदिप्पकम्।

दुनिया का छात्र है। इस भूमि में बहनेवाली नदियों की आँखों ने जो भिक्षा दी वही समुद्र का नील रंग है।(1)

कल्पना के द्वारा प्रकृति के गुणों का इतिहास ढूँढने की प्रवृत्ति इस कवि में पायी जाती है। इस दृष्टि से चाँदनी की कल्पना विचारणीय है। 'श्वेत चाँदनी में जो श्याम रंगीन बिन्दुएँ हैं, उन्हें देखकर कवि चिन्तित हैं कि श्वेत चाँदनी को यह घाव कैसे लग गया? कवि नारी को इसका कारण समझता है। किसी अद्वितीय सुन्दरी ने अपनी आँखों के काजल को चाँदनी पर फेंक दिया, इसी कारण श्याम रंगीन बूँदें उस पर पड़ गयी हैं।(2) यह कल्पना अत्यन्त रोचक एवं नवीन है।

समुद्र तमिल काव्य में परंपरागत प्राकृतिक वस्तु है। प्रायः स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी-अपनी वैयक्तिक अनुभूति के अनुरूप समुद्र की कल्पना की है। कवि कामराजन की कल्पना यहाँ अपवाद है। उनकी कविता में समुद्र स्वयं अपनी आत्म-कथा कहता है —

"युग-युगों के पूर्व मेरा जन्म यहाँ हुआ था। मेरे दीर्घ केशों में थोड़ी देर गूँथकर जिन फूलों को मैंने फेंका उन्हीं को आप सूर्य और चन्द्र कहते हैं। मेरे शरीर की धूलियाँ सब हवा में फूट जाती हैं।

---

1. त्रिश वेळि इरुवेयस्तिन त्रिरि कूई
पृथिइल वापुम पेयकळिन कावळ इट्ट पिच्चै ए कडलिन नीलमु।

— तेन मधे - पृ. 12 कवि मुरदा - IV 1977 मुल्ला पतिप्पगम्, मद्रास

2. वट्टमिट्ट वेण्णिलाविन मोदु - कायम
कन्द मैयव कारणमु यादु - काम
वट्टपुकि अंजनत्तै विट्टेरिद ताल विळैन्द कैरयो?
सोन्दव कूरयो?

— वही - पृ. 26-30

मैं फेनों को देकर मोतियों को एकत्रित करता हूँ। आकाश और भूमि के बीच वर्षा रूपी बुनाई के बीच, टूटती हुई बिजली की डोरियों का विचार करके मैं रो रहा हूँ। मैं मोतियों का पाताल हूँ। जहाजों का निवास-स्थान हूँ। नदियों का कब्रस्थान हूँ। मैं अकसर भौंकता हूँ। क्योंकि मैं तूफान का शिकारी कुत्ता हूँ।'(1)

समुद्र का जन्म कब हुआ? किसी को पता नहीं है। दिन में सूर्य और रात को चाँद से समुद्र का संबंध प्रायः स्थापित किया जाता है। समुद्र प्रातःकाल में चाँद और सन्ध्या काल में सूर्य को दूर फेंक देता है। अर्थात् क्रमिक रूप से दिन-रात ओझल हो जाते हैं। यह शाश्वत सत्य है। अतः 'सूर्य और चाँद को समुद्र के फूल' कहा गया है। समुद्र में उत्पन्न फुरियाँ अर्थात् बुदबुदें हवा में फूट जाती हैं। उसके फेनजाल लहरों से नष्टभ्रष्ट हो जाते हैं। समुद्र की सीपियों में मोती रहते हैं। आकाश से वर्षा जब भूमि पर आती है तब स्वाभाविक रूप से बिजली टूटती है। बिजली के टूटते समय समुद्र गरजता है। गरजते समय लहरें अति वेग से ऊपर उठती हैं। इसी को समुद्र का रोना कहा गया है। सीपियों में स्थित मोती समुद्र के पाताल में रहा करते हैं। समुद्र में जहाज निवास करता है। नदियाँ समुद्र में समा जाती हैं। अतएव इसे नदियों का कब्रिस्तान कहा गया है। समुद्र अकसर गरजता है। समुद्र का गरजना तूफान पर निर्भर है। तूफान के अधिक होते होते समुद्र अधिक गरजता है - इसी लिए यहाँ समुद्र के गरजने को भौंकना, तथा समुद्र को शिकारी कुत्ता कहना आदि अतीव रोचक हैं।

---

1. 'इन्रैक्कु मुने, एन्रो एप्पोदो, एत्तनैयो युगमु मुन मुने इंगे पिरन्देन
एन्नुडैय नोळ्कार कूपलिल येदो सिरिदु नेरम नान
चूडि एरिद वाडर पूक्कळै तान सूरिय चन्दिरन एन्र सोलकिरार !
एनक्कु वरैकिर सिरंगुकळ मट्टुम काट्रिल उडैन्दु पोय विडु किरन।
नान नुरैकळै चेलवु सेयदु विट्टु मुत्तुकळै सेरत्तु वैक्किरेन।
वानित्तक्कुम भूमिक्कुमाक मरै नेसवु नडुवे पोयु अरुदु पोन मिन्नल नूलकळै
निनैत्तु तान नान अपुनु कोण्डु इरुक्किरेन।
नान मुत्तुक्कळिन पळ्ळम्, कप्पलिन सभवेळि, नदिकळिन कल्लरै
नान अडिक्कडि कुरैक्किरेन कारणम् नान पुयलिन वेट्टैनाय।
— कामराजन - करुप्पु मलरकळ (काले फूल) - पृ॰ 54-55 - IV संस्करण 1980
तमिल पुस्तकालय, मद्रास'

समुद्र को न नारी का रूप देकर पूर्ण रूप से रूढ़ि से मुक्त होकर साधारण रूपसे के साथ समुद्र जैसे प्रमुख प्राकृतिक वस्तु को तुलना करना विद्रोह का प्रतीक है। मोतियों का पाताल, जहाजों का निवासस्थान, नदियों को कब्रिस्तान आदि उपमानों में सरलता है। अतएव प्रस्तुत कविता तमिल की नव स्वच्छन्दतावादी कविता का उदाहरण है।

ऊपर व्यक्त किया गया है तमिल कवियों ने प्रमुख रूप से प्रकृति और नारी के सौन्दर्यांकन में कल्पना का अद्भुत जाल बुन लिया है। उनकी कल्पना में भी सरलता है। एक ओर भारतीदासन वर्णनात्मक शैली को स्वीकार करते हैं तो दूसरी ओर कविमणि की कल्पना साधारण प्रतीत होते हुए भी गंभीर एवं चित्रपूर्ण है। सुरदा और कामराजन की कल्पनाएँ नव-रोमांटिकता की ओर उन्मुख होती हैं।

अनुभूति पक्ष :

असल में अनुभूति ही कविता की आत्मा है। स्वच्छन्दतावादी कवि अनुभूति को ही सच्ची कविता मानते हैं। तमिल कवि के लिए अनुभूति ही अमृत है और अनुभूति ही ईश्वर है। बस, वह अनुभूति को संबोधित करके कहता है — 'अनुभूति, तुम जियो, तुम प्रकाश हो, तुम एक हो और अनेक हो, तुम्हीं दोस्ती और दुश्मनी हो, उपलब्ध और अनुपलब्ध हो, ज्ञान, अज्ञान, अच्छे, बुरे तुम्हीं हो। तुम्हीं अमृत और स्वाद। तुम्हीं श्रेष्ठ और सुख हो।'(1) इस प्रकार तमिल कवि ने अनुभूति के विविध रूपों को दर्शाया है।

---

1. उनरवे अमुदम, उनरवु देय्वम्, उनरवे नी वाழ्क ! नी ओन्रु, नी ओलि, नी ओन्रु, नी पल। नी नट्पु, नी पगै। उळ्ळदुम इल्लातदुम नी। अरिवदुम अरियातदुम नी ! तवम, सोदुम नी ! नी अमुदम, नी सुवै, नी नन्रु, नी इन्बम।
भारतीयार कविताएँ - पृ. 421-422 - 11 संस्करण 1978 अगस्त.
पूम्पुहार प्रसुरम, मद्रास.

कवि भारती अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को 'कण्णन पाट्टु' में खूब व्यक्त किया है। इसमें इन्होंने कण्णन को साथी, माता, पिता, सेवक, राजा, शिष्य, सद्गुरु, बच्ची, खेलनेवाला बच्चा आदि अनेक रूपों में देखा है। प्रियतम, प्रियतमा, सेवक, बच्ची, कुलदेवता की कविताओं में उनकी अनुभूतियाँ मुखरित हुई हैं। कवि सेवक के रूप में कण्णन को देखकर उसके प्रति इस प्रकार कहते हैं — 'वह (कण्णन अर्थात् कृष्ण) मेरे कुटुंब को सुचारु रूप से चलाता है। आ करता है मुँह फेरने की प्रवृत्ति उसमें नहीं है। घर और उसके बाहर की गली को भी साफ करता है। बच्चों के लिए सभी प्रकार की सेवाएँ करता है। कुटुंब के सभी खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करता है, दूध, दही, खरीदता है। माता की तरह बच्चों का देखभाल करता है। वही दोस्त, मंत्री, सद्गुरु है मेरे लिए। गुणों में देवता है नजरों में सेवक के रूप में दीख पड़ता है।[1] पता नहीं, कहाँ से वह आया है? कवि कहते हैं - इन्हें प्राप्त करने के लिए कैसी तपस्या मैंने की है।[2]

यहाँ कवि ने अपनी अनुभूतियों को क्रमिक रूप से व्यक्त किया है। 'कण्णन पाट्टु' के एक अन्य स्थल पर कवि कण्णम्मा को बच्ची के रूप में देखते हैं। अर्थात् पराशक्ति को ही बच्ची के रूप में देखकर अपनी वृक्षात्मक अनुभूतियों को सुन्दर गीतों में व्यक्त किया है। कवि की अनुभूतियाँ अत्यन्त वेदनामयी हैं।

अगर तेरे आँखों में आँसू आये तो - मेरे हृदय में
रक्त की धारा बहती है री!
मेरी आँखों की पुतली हो कण्णम्मा! मेरा जीवन तेरा ही है।
तुतली बोलियों से कण्णम्मा! दुखों को दूर करो।

---

1 · भारतीयार कवितायें - पृ· 282 ।। संस्करण 1978 अगस्त, मुत्तुकुमार प्रसुरम, मद्रास
2· एंगिरुन्दो कदान, इडैजाति एन्ड्रसोन्नान
इंगु इवनै यान पेर वे एन्न तवम् सेयदु विट्टेन।
— पंक्तियाँ 55-56 ·· पृष्ठ 282

कुन्द के फूल की तरह हँसकर - मेरी मूर्खता को दूर करो
सुख की कथाएँ तेरी तरह पुस्तकें नहीं कहतीं।
प्रेम देने में तेरे समान, कोई देवता नहीं है।
गले में लगाने के लिए तेरी तरह कोई जवाहर मणि नहीं है।
श्रेष्ठ जीवन के लिए तेरी तरह कोई धन नहीं है।[1]

अन्तिम स्थिति में कवि की अनुभूतियाँ प्रार्थना परक हो जाती हैं। कवि कण्णम्मा की शरण में पहुँचकर इस प्रकार गाने लगते हैं -

तुम्हारे शरण में हूँ! कण्णम्मा! तुम्हारे शरण में हूँ!
अब दुःख नहीं है, असफलता नहीं है, हार भी नहीं है।
प्रेम के द्वारा धार्मिकता को विकसित करने के लिए
अच्छे बुरे हम नहीं जानते हैं माँ!
अच्छाइयों को स्थापित करो, बुराइयों को भगाओ![2]

1• उन कण्णिल नीर वडिन्दाल एन नैंजिल उदिरम कोट्टुदडि
एन कण्णिन पावैयन्रो? कण्णम्मा! एन्नुयिर निन्नदन्रो?
सोल्लुम पदत्तिडैले - कण्णम्मा! तुन्बंगळ तीर्त्तिडुवाय!
मुल्लै चिरिप्पाले - एनदु मूर्खम तविर्त्तिडुवाय।
इन्बक्कदै गळेल्लाम - उन्नैपोल एडुगळ सोल्वदुण्डो?
अन्बु तरुविदिले - उनै नेर आगुमोर दैवमुण्डो?
मार्बिल अणिवदर्क्के - उन्नैपोल वैरमणिगळुण्डो?
सीर पेट्रु वाळ्वदर्क्के - उन्नैपोल सेल्वम पिरिदुमुण्डो?
— भारतीयार कविताएँ - पृ॰ 292 संगीतात्मकता इन पंक्तियों की विशेषता है। राग : भैरवी
2• निन्नै शरण अडैन्देन कण्णम्मा - निन्नै शरण अडैन्देन। ताल : रूपकम्
तुन्बम इनि इल्लै,
सोर विल्लै, तोल्विल्लै, अन्बु नेरिइल अरंगळ वळर्त्तिड
नल्लदु तीयदु नाम अरियोम अन्नै! नल्लदु नाट्टुक! तीमैयै ओट्टुक।'
— भारतीयार कविताएँ - पृ॰ 316, कण्णम्मा एन कुल दैवम।

इस प्रकार 'कण्णन मेरा सेवक' में स्नेह अनुभूति, 'कण्णम्मा मेरी कन्नी' में दुखात्मक अनुभूति और 'कण्णम्मा एन कुलदेवता' में उनकी प्रार्थनानुभूति हैं। इन तीनों दृष्टान्तों में वैयक्तिकता की अमिट छाप है। क्योंकि अनुभूति तो वैयक्तिकता का एक पहलू मात्र है। किसी न किसी रूप में अनुभूतियाँ वैयक्तिकता से जुड़ी हुई रहती हैं। अतः इन तीनों उदाहरणों में अनुभूतियों की तीव्रता, वैयक्तिकता और गीतात्मकता का सुन्दर समन्वय मिलता है। कवि अपनी विद्रोहात्मक अनुभूतियों को भीम के द्वारा व्यक्त किया है।

'आह ! सहा नहीं जाता भाई ! आग की ज्वाला ले आओ,
कुलमणिकिरण को खोया – बड़े भाई के करों को जला देंगे।'(1)

कवि ने अप्रत्यक्ष रूप से अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को भीम पर आरोपित करके उसके मुँह से अपने आक्रोश प्रकट किये हैं। अतः कवि भारती की कविताओं में अनुभूतियाँ चाहे वह सुखात्मक हों अथवा दुःखपूर्ण, स्नेह हों अथवा प्रार्थनापरक या विद्रोहात्मक — नदी के प्रवाह के समान अत्यन्त स्वाभाविक रूप से बहती हैं।

भारतीदासन की कविताओं में प्रमुख रूप से प्रेमात्मक अनुभूति मिलती है। उनकी वैयक्तिक अनुभूतियाँ प्रायः प्रेम के रूप में पल्लवित हो जाती हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में उनकी वैयक्तिक प्रेमानुभूति स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। देखिए :

तुम्हें (प्रेयसी को) मैं अपने सुन्दर आँखों से देख रहा हूँ
प्रकाश मिल रहा है, अंधेरे को त्याग रहा हूँ,

---

1. 'कुडु पोरुपदिल्लै – तंबी ! एरितळल कोण्डुवा,
कदिरै वैत्तु इळुन्तान – अण्णन कैयै एरित्तिडुवोम्।'
—भारतीयार कविताएँ – पृ. 388 – 'पांचाली शपथम'

चतुरंग के खेल में युधिष्ठिर सारा राज्य, भाइयों सहित, खो बैठते हैं। अन्त में द्रौपदी को भी खेल में बाजी लगाकर खो बैठते हैं तो आवेश में आकर भीम सहदेव से इस प्रकार कहता है। 'कदिर' का अर्थ प्रकाशमयी किरणें अथवा सूर्य। प्रकाशमयी किरणों को खोना अर्थात् द्रौपदी को खोना – प्रतीक है। कुलदीप सूर्य का प्रतीक भी द्रौपदी को माना जा सकता है। रूपकात्मक खण्ड काव्य होने के कारण इसका दूसरा अर्थ भी है। द्रौपदी रूपी भारत माता को हम खो चुके हैं। अतः भारती ब्रिटिश के करों को जलाना चाहते हैं। ब्रिटिश सत्ता का घोर विरोध करते हैं। भारत-माता द्रौपदी का रूपक यहाँ सांकेतिक है। कवि-मन की ज्वालाएँ भी यहाँ व्यक्त हैं।

दुःख सब हरते जा रहे हैं, सन्तोष का अनुभव कर रहा हूँ।
छाती में जलन नहीं है, अन्दर बाहर शीतलता मिल रही है।
मन में प्रेम का अनुभव कर रहा हूँ - वह भी पुष्पित होकर
आकाशव्यापी विशाल प्रेम में पड़ गया हूँ
मेरे सुख रूपी दुग्ध फेन ! हे ! शीतल दीप !
तेरे सौन्दर्य में समा जाने से, मैं अपने को खो गया।'(1)

यहाँ सभी भावों में प्रेमानुभूतियों की तीव्रता मिलती है। इसके अतिरिक्त सर्वत्र उनकी कविताओं में विद्रोहात्मक अनुभूतियाँ आग की ज्वाला की तरह धधकती हैं। इस प्रकार की अनुभूतियों में उनकी व्यक्तिवादी चेतना सदा जागृत हो जाती है। इन्होंने तमिल और तमिल भाषी लोगों पर अपना अपार प्रेम बरसाया है। इन पर लिखी हुई कविताओं में इस प्रकार की अनुभूति की तीव्रता मिलती है। स्वाभाविक रूप से इनका व्यक्तित्व आवेशपूर्ण रहा। अतः कविता करते समय इनकी अनुभूतियाँ विद्रोहात्मक हो उठती हैं। तब इनका स्वर भी बल पकड़ता है। इसके लिए उत्तम उदाहरण है 'तमिषन' (तमिल जाति वाला) नामक कविता।

माता पर शपथ ! पिता पर शपथ !
तमिल नाडु पर शपथ
हे ! साथियो ! मैं स्वच्छ तमिल पर कसम खाकर कहता हूँ
मैं सेन्तमिल नाडु के लोगों की भलाई के लिए अवश्य काम करूँगा

---

1. उन्नै एननि विधियाल काणुकिन्रेन, ओळि पेरुकिन्रेन, इळै ओदुक्कुकिन्रेन।
इन्नलेल्लाम तविर्किन्रेन, कळि कोळ किन्रेन, एरियकिल्लै कुळिर किन्रेन पुरमुम उळ्ळुम।
अन्बुळ्ळम पूणुकिन्रेन, अदुउ मुट्टि आकायमुअळावुमोर कादल कोण्डेन।
इनबमेनुम पाल नुरै ! कुळिर विळक्के !
एन्नै इळन्तेन, उन्नैमिल कलन्तदाले ! - पुरट्चिक्कवि से।
— भारतीदासन कवितैगळ्। - 24 वाँ संस्करण 1981 सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै, तमिळनाडु

तमिल लोगों की महत्ता को जो खिल्ली उड़ाते हैं उनको
मैं माता के रोकने पर भी नहीं छोड़ूंगा। (उनसे अवश्य टक्कर लूंगा)
मैं तन व मन को भी तमिलनाडु के लिए खुशी से दूंगा।'[1]

तमिल साहित्य के विद्रोही कवि भारतीदासन के जोशीला स्वर उनकी तीव्र अनुभूतियों में स्पष्ट रूप से सुन सकते हैं।

तमिल काव्य परंपरा में 'शिलप्पदिकारम्' की नायिका कण्णकी का दुःख अत्यंत तीव्र माना जाता है। भारतीदासन ने भी उसी पुरातन नायिका की दुःखानुभूति को 'कण्णकीप् पुरट्चिक् काप्पियम्'[2]

---

1. 'ताइन मेल आणै! तन्दै मेल आणै!
तमिऴकम् मेल आणै!
तूय एन तमिल मेल आणैइट्टे नान! तोप्परे! उरैक्किरेन...
अकर नलम एण्णा उयैरिरुक्क नान सवरेन
तमिऴरिन मेन्मैयै इकऴ्न्तवनै एन ताय तडुत्तालुम विडेन।
ऊनउडल तेटपिनुम सेन्तमिल नाट्टुक्कु
उवप्पुडन नान सेल्पेन।
— 'तमिऴन' कविता से' - इरैयमुदु प्रथम भाग - पृ. 4। पुनर्संस्करण 1980 पारि निलैयम, मद्रास.

2. कोवलन-कण्णकी 'शिलप्पदिकारम्' (इलंगोअडिकळ कृत) के नायक-नायिका हैं। इस महाकाव्य का नवीनतम लघुरूप ही कण्णकीप् पुरट्चिक् काप्पियम है। यह भारतीदासन की रचना है। विवाह के थोड़े दिनों के बाद कोवलन कण्णकी को छोड़कर माधवी नामक एक वेश्या के साथ रहने लगा, सारी संपत्ति के चले जाने के बाद पुनः कोवलन कण्णकी के पास आ पहुँचा। दोनों व्यापार करने के लिए मदुरै जा पहुँचे। कोवलन कण्णकी के एक शिलंबु (नूपुर) को लेकर बेचने चला राज्याश्रित एक सुनार की बातों में आकर, उसके जाल में कोवलन फँस गया। अन्त में रानी के एक नूपुर की चोरी का अपराध कोवलन पर लग गया। राजा की आज्ञा से कोवलन का सिर काटा गया। कण्णकी के पास जो शिलंबु शेष था उसके आधार पर उसने अपने पति को निरपराध सिद्ध किया। उसके बाद मदुरै के लोगों के बीच रो-रोकर विद्रोही स्वर में पाण्डियन राजा के विरुद्ध बोलती है।
* मदुरै ही पाण्डियन राजाओं की राजधानी है। 1981 जनवरी में यहीं अन्तर्राष्ट्रीय तमिल सम्मेलन संपन्न हुआ था।

नामक कृति में तीव्रता की चरम सीमा पर पहुँचाया है। मदुरै के लोगों को संबोधित करके, आवेश में आकर, जोश पूर्ण शब्दों में अपनी दुःखात्मक वेदनामयी अनुभूतियों को कण्णकी कैसे व्यक्त करती है सो देख लीजिए :

अगर सजा का खेल ही नियम है तो,
अगर वह नियम ही सर्वत्र विद्यमान है तो,
मेरी जो हालत हुई, और मेरे पति की जो दयनीय स्थिति हुई,
वही आप लोगों की भी होनी चाहिए।
मेरा वैधव्य आप लोगों को भी मिलना चाहिए।
आप लोगों को भी प्रेम के सुख को खोना चाहिए।
मेरा स्वामी अन्याय पूर्वक मारा गया है। अब मेरा मौन है?
मेरे लिए यह आभूषण क्यों? मेरे लिए फूलों की माला की
क्या आवश्यकता है? इस प्रकार कहकर बिजली की तरह
आभूषण और फूलों की माला को (कण्णकी ने) ऊपर फेंक दिया।
यह यौवन किसके लिए? - कहकर अपने केशों को उखाड़कर
फेंक दिया। बायें करों में रहकर संभोग के प्रारंभ काल में ही
अपने पति को सुख प्रदान करनेवाले बायें कुच को
तोड़ कर फेंक दिया।(1)

बीच बीच में लोगों की आह! आह! आदि चकित ध्वनि और 'अम्मा! अम्मा!

---

1. भारतीदासन - 'कण्णकी पुरट्चिक्काप्पियम' (कण्णकी का विद्रोहात्मक काव्य) पृ. 120, 121, 122 - इयल 59 कविताएँ संख्या 176, 177, 178 III 1979 पारि निलैयम।

एम अम्मा एम अम्मा (हमारी माँ, माँ हमारी माँ) आदि कण्णकी से लोगों की प्रार्थना — अनुभूति की दशा को तीव्रतर कर देती है। समस्त तमिल साहित्य में[1] कण्णकी की वेदना और उसकी दुःखात्मक अनुभूति बेजोड़ है। उपर्युक्त पंक्तियों में दुखात्मक अनुभूति की तीव्रता में विद्रोहात्मकता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। कवि शैली भी इस अनुभूति को अर्जित करने में सक्षम है।

---

1. इसी प्रकार इळंगो ने शिलप्पदिकारम् में कण्णकी की दुःखात्मक अनुभूतियों को व्यक्त किया है। 'पति मारा गया' सुनकर कण्णकी इस प्रकार कहते-कहते रोती और चिल्लाती है :

'पट्टेन पड़ाद तुयरम पड़ुकोले, उट्टेन उरावदुउळवने ईवोम्म कळवनोखलन'

अर्थात् : 'दुःख मिला जो मुझे मिलना नहीं चाहिए था, खून हुआ जो नहीं होना चाहिए। मेरा पति चोर नहीं है।' — कहते-कहते मदुरै के लोगों से संबोधित करके पूछती है —

'पेण्डिरुम उण्डुकोल? पेण्डिरुम उण्डुकोल? पेण्डिरुम उण्डुकोल?
कोण्ड कोधुनर उरु कूर तांगिडुम
पेण्डिरुम उण्डुकोल? पेण्डिरुम उण्डुकोल
सान्रोरुम उण्डुकोल? सान्रोरुम उण्डुकोल
दैवमुम उण्डुकोल? दैवमुम उण्डुकोल? - कोलै कळ कादै से'

अर्थात् : बताइए ! महिला है ऐसी महिला है? पति विरह के अति दुख को सहन करनेवाली महिला है क्या?

बताइए ! पहुँचे हुए (विद्वान ज्ञानी) जन हैं? पहुँचे हुए जन हैं क्या? ईश्वर है? ईश्वर है? —

— 'खून खण्ड' उपसर्ग से।

राज्य की सभा तक पहुँचने के पूर्व की घटनाएँ हैं। इसके बाद की राज्य की सभा पहुँचकर अपने पति को निरपराधी सिद्ध करती है और मदुरै को जला देती है। मदुरै को जलाकर नारीत्व (पेण्मै) की महत्ता को स्थापित करती है।

कविमणि की काव्यकृति 'आशिय ज्योति' में अनुभूति की तीव्रता मिलती है। सुजाता[1] अपने मरे हुए पुत्र को लेकर बुद्ध के पास पहुँचती है और उसे जीवित कराने की प्रार्थना करती है। वह रो-रोकर अपनी भावनाओं को इस प्रकार व्यक्त करती है —

मेरा बच्चा
न चुंबन देता है, न तुतली बोली बोलता है,
इसे देख, मेरा चित्त विचलित हो उठता है।
न मुख को देखता है, न स्तन्य-पान करता है
पुत्र की स्थिति को देखकर, मेरा मन सहता नहीं है।
पूर्णचन्द्र समान मुख मुरझाकर, रंग फीका पड़ा है उसे देख
मेरे पेट में ज्वाला फैलती है।
मुस्कुराहट को न देखकर मेरी बुद्धि विचलित होती है।[2]

---

1. सुजाता के पुत्र को सर्प डसता है। उसे लेकर सुजाता बुद्ध के पास आकर उसे जिलाने की प्रार्थना करती है। बुद्ध जब तप में लीन होकर दुबले-पतले हो गये थे तब सुजाता ने बुद्ध को खीर खिलायी थी। उन्होंने इसी बच्चे को आशीर्वाद भी दिया था।

(i) वायमुत्तम तारामल मयलैमुरि याडामल
सेय किडरतल कण्डेनक्कु चिन्तै तडुमारुदय्या।

(ii) मुखम् पारक्कू पेसाल मुलैपालुम उण्णामल
मकन किडक्कुम किडै कण्डु मनम पोरुक्किल्लै अय्या! ...

(iii) नोडुम मदिरुनै पोल निल वेरिक्कुम सेय्व मुखम्
वाडि निरम मारिय वेन वयिट्रिल एरि मुट्टुदय्या।

(iv) पुन्सिरिप्पैक काणाद् बुद्धि तडुमारुदु अय्या।

— आशिय ज्योति - पृ॰ 80-81

2॰ कविमणि : आशिय ज्योति : पृ॰ 80-81 - 15 वाँ - 1979 - पारि निलैयम।

यहाँ कवि ने माता की दुःखात्मक अनुभूतियों का एक वेदनामय चित्र प्रस्तुत किया है। न चुंबन देना, तोतली बोली न बोलना, मुख न देखना, स्तन्यपान न करना आदि दुःख भरी अनुभूतियाँ क्रम को स्वीकार कर सहृदय के सम्मुख प्रकट होती हैं।

नामक्कल कवि के कथाकाव्य 'अवळुम अवनुम' में जगह जगह पर तीव्र दुःख की अनुभूतियाँ प्रस्तुत हुई हैं। टूटे हुए दिल से बच्ची को ले जाती हुई नायिका(1) को देखकर कवि की अनुभूति और कल्पना प्रवाहमान हो जाती हैं। कवि कल्पना करते हैं —

क्रोध में आग की ज्वाला धधक रही है क्या?
टूटे दिल की दृढ़ता कहूँ क्या?
टूटे प्रेम का स्वभाव यही है क्या?
जीवन की आशाएँ खो गयी हैं क्या?
जीवन का लक्ष्य चला गया है क्या
अभिलषित जीवित वस्तु के खो जाने से इस प्रकार चल रहा है क्या?
पागल हो गयी है क्या? भूत-पिशाच है क्या?
चित्त का भ्रम में पड़ जाने से ये सब घटित होता है क्या?
पापों का फल है क्या? शाप लग गया है क्या?

---

1. 'अवळुम अवनुम्' काव्य के नायक - नायिका हैं माधवन् और कमलम्। इन दोनों का प्रेम शादी में परिणत हो जाता है। उनकी एक बच्ची भी पैदा होती है। कुछ दिनों के बाद माधवन् को पतिव्रता कमलम् पर अनावश्यक रूप से शक होने लगता है। उसको यह भी भ्रम हो जाता है कि बच्ची उसके द्वारा नहीं हुई है। कमलम् के अनुनय-विनय करने पर भी वह मानने के लिए तैयार नहीं होता है। इस पर कमलम् का दिल टूट जाता है और टूटा दिल जीवन को नफरत की दृष्टि से देखने लगता है। बस ! बच्ची को लेकर आत्म-हत्या कर लेने के लिए चल पड़ती है।

क्या चल रहा है ! कहना असंभव है।
कोई वेगता उसे खींच ले जा रही है।(1)

केवल नामक्कल कवि में भारती के बाद इस प्रकार की दुःखात्मक तीव्र अनुभूतियाँ मिलती हैं। स्वच्छन्दतावादी कवियों में दुःखात्मक अनुभूति की जो प्रचुरता है वह कवि भारती में मिलती है। उनके बाद अनुभूति का स्थान विद्रोह और मानववाद ने ले लिया है जैसे पंत की प्रकृति और कल्पना का स्थान उनकी उत्तरार्द्ध काव्य-कृतियों में मानवतावाद उभर आया है।

व्यक्तिवाद :

'गीता' में कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं 'जीवों की अनुभूति मैं हूँ' कृष्ण के इस वाक्य में 'मैं हूँ' व्यक्तिवाद का ही प्रतीक है। अतः व्यक्तिवाद का संबंध मानव के 'अहं' अर्थात् 'मैं हूँ', 'हम' से आसानी से जुड़ जाता है। यही व्यक्तिवाद स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का मूल है। अन्य स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ इस व्यक्तिवाद के अनुसार बदला करती हैं। सौन्दर्य, प्रेम, प्रकृति, कल्पना, अनुभूति, मानवतावादी भावना, विद्रोह की भावनाएँ, वैयक्तिकता के अनुरूप नया रंग, नया कलेवर धारण कर लेती हैं। आधुनिक युग में स्वतंत्र प्रकृति चित्रण इस बात का

---

1. कोक्कु पोल कोदिप्पन वेगमो ! ओडिन्द मनत्तिन उविद एन्बदो !
मुडिन्द अन्बिन मुडुक्केन लामो ! इडिन्द कादलिन एडुप्पिन इयल्बो !
नबि इल्लाद् नम्बुविय नडैयो ! वाप्प कैइन नोक्कमु वप्पुविय वादैयो !
कैत्त आरी पोग्गलदाल वल्लदो।
येदो ओर पोरुळ उयिरपोल इरुत्तै इप्पुन्दु पोनदाल एप्पडिदहुम इप्पुपा !
पित्तम पिडित्त दो ! पेयो ! पिसासो !
चित्तम् एन्बदु चिदरिनाल वल्लदो !
पापम पयनो ! शापम पलनो ! इन्नदु एन्न पेयर चोल्ल इयला !
एन्नमो वेगमु इप्पुक्कु चेन्रदु।
— नामक्कल कवि - अवळुम अवनुम - पृष्ठ 119-12, पलनियप्पा ब्रदर्स, मद्रास
(VII - 1980)

परिचय देता है। महान वृक्ष जिस प्रकार अपने मूल में खड़ा रहता है, उसी प्रकार 'अहं' की वृत्ति ही शरीर को संतुलन प्रदान करती है। मूल का निर्बल होने से वृक्ष का और 'अहं' के विनाश से मानव के तन का कोई अस्तित्व नहीं है।(1) इसी प्रकार स्वच्छन्दतावादी काव्य के मूल में व्यक्तिवाद अन्तर्निहित है। तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों में व्यक्तिवादी भावना अति मात्रा में उपलब्ध होती है। इन कवियों के प्रेम, सौन्दर्य, कल्पना, अनुभूति और विद्रोह में व्यक्तिवाद का स्वर गूँज उठता है।

कवि भारती के प्रेम, सौन्दर्य, अनुभूति और विद्रोह की भावनाओं में यह प्रवृत्ति प्रमुख रूप से पायी जाती है। इनकी राष्ट्रीय एवं भक्ति कविताओं में इनकी व्यक्तिवादी भावना सर्वत्र झलकती है। देखिए —

'हमारे माता पिता उल्लास सहित इसी देश में रहे।
उनके पूर्वज भी सहस्र वर्ष इसी देश में रहकर गुजरे।
उनके मन में सहस्र भावनाएँ इसी देश में विकसित हुईं
इस देश को मैं वन्दे मातरम्, वन्दे मातरम् कहकर वन्दना करता हूँ।'(2)

'मैं' और 'हम' जैसे प्रथम पुरुष वाचक शब्द यहाँ व्यक्तिवादी भावना को सूचित करते हैं।— और भी देखिए :

"आयुध बनाएँगे, अच्छे कागज बनाएँगे,
औद्योगिक शालाएँ बनाएँगे, विद्यापीठों का निर्माण करेंगे।"(3)

---

1. अहंकार क्षयदेहे निलाश्रय विनश्यति
मूले छिन्न संतुने गुहयानिव पादयः योग वशिष्टाकर।

2. एन्तैयुम तायुम मकिळ्न्तु कुलवि इरुन्तदुम इनाडे ...
इदै वन्तनै कूरि एन वायुर वाळ्त्तेनो? इदै वन्तेमातरम् वन्तेमातरम्
एन्रु वणंगेनो - पृ० 19 भारतीयार कविताएँ, ब नाट्टु वणक्कम
(देश की वन्दना)

3. आयुधम सेयवोम नल्ल कागितम सेयवोम,
आलेकळ वैप्पोम कल्वि शालै कळ वैप्पोम।
— भारतीयार कविताएँ - पृ० 22 'भारत देश' नामक कविता से।

इन पंक्तियों में 'हम' करेंगे इस बात का द्योतक है। नारी के प्रति उनके दृष्टिकोण में भी यह व्यक्तिवादी स्वर मुखरित है —

'मादर तन्मै इपिवु रैच्युम
मढ्मैयैग्म कोळुत्तुवोम'(1)

अर्थात् — 'नारियों का जो अपमान करता है, उनकी अज्ञानता को हम जलायेंगे।' 'हम' 'एंगे' व्यक्तिवादी भावना के प्रतीक हैं। इन संबंधित कविताओं में भी उनकी व्यक्तिवादी भावना अति तीव्र हो उठती है। 'अच्चमिल्लै' (भय नहीं है) नामक कविता में उनके विद्रोही स्वर में व्यक्तिवादी चेतना ही गूंज उठती है।

'भय नहीं भय नहीं कदापि भय नहीं है।
इस दुनिया के सब लोग अगर सामना करें तो भी
भय नहीं भय नहीं कदापि भय नहीं है।
तुच्छ समझकर हमें दुःखित करेंगे तो भी
भय नहीं भय नहीं कदापि भय नहीं है।
भीख माँगने की स्थिति-जीवन में आ जाए तो भी
भय नहीं भय नहीं कदापि भय नहीं है।
सब इच्छित वस्तुएँ अगर खो जाएँ तो भी
भय नहीं, भय नहीं, कदापि भय नहीं है ...
सिर पर आकाश ही फूटकर गिर पड़े तो भी
भय नहीं, भय नहीं कदापि भय नहीं है।'(2)

इससे अधिक आवेशपूर्ण व्यक्तिवादी स्वर अन्यत्र दुर्लभ है।

---

1. भारतीयार कवितएँ - पृ. 56 विडुतलै (स्वतंत्रता) ।। अगस्त 1978 पुम्बुहार प्रसुरम, मद्रास
2. वही - पृ. 180

इनकी और एक कविता 'नान' (मैं हूँ) में 'अहं' की भावना में परमात्मा का आभास है, परम तत्व की ज्योति है।

'आकाश में उड़नेवाला पक्षी मैं हूँ।
          भूमि पर विचरित जीव-जन्तु मैं हूँ।
जंगल में चलनेवाले वृक्ष मैं हूँ
          पवन, पानी, सागर भी मैं हूँ।
नभ में दृष्टिगत नक्षत्र मैं हूँ।
          शून्य गगन की व्यापकता मैं हूँ।
मिट्टी में अन्तर्निहित कीड़े मैं हूँ
          जल में जीवित सभी जीव मैं हूँ...
अहं रूपी मिथ्या को चलानेवाला मैं हूँ
          ज्ञान रूपी एक कायमय नभ में उड़नेवाला मैं हूँ।
समस्त वस्तुओं में निहित समष्टिगत
          ज्ञान की प्रथम ज्योति मैं हूँ।'(1)

अन्त में कवि का कहना है कि मानव का 'अहं' मिथ्या है। झूठ है। उस 'अहं' को चलानेवाला भी मैं हूँ, अर्थात्, ईश्वर है। यहाँ कवि ने समस्त प्राकृतिक वस्तुओं में ईश्वरीय सत्ता का

---

1. वानिल पर्रक्कुम् पुळ्ळेल्लाम नान
          मण्णिल तिरियुम विलंगेल्लाम नान,
कानिल वळरुम मरमेल्लाम नान, काट्रुम, पुनलुम कडलुमे नान,
विण्णिल तेरिगिन्र मीनेल्लाम नान, वेट्टवेळियिन विरिवेल्लाम नान,
मण्णिल किडक्कुम पुळुवेल्लाम नान, वारियिलुळ्ळ उयिरेल्लाम नान,
नानेनुम पोय्यै नडत्तुवोन नान
ज्ञानच्चुडर वानिल सेल्लुवोन नान
आन पोरुळ्कल अनैत्तिलुम ओन्राय
अरिवाय विळंगुकिन्र मुदल्ज्योति नान। - नान -

— 'भारतीयार कविताएँ' - पृ॰ 188-189 - II 1978 - पूम्बुहार॰

अनुभव किया है। अपने अहं को भी मिटाना चाहता है :

'पगैवनुक्कु अरुळवाय-नन्नेजे ! पगैवनुक्कु अरुळवाय।'[1]

अर्थात् -

'हे ! अच्छे दिल ! शत्रुओं पर कृपा करो' शत्रुओं पर दया करो।'

कहकर अपने अहं को उपदेश भी देते हैं कवि। 'तमिलन' को पतन नहीं' नामक कविता में भारतीदासन अपनी वैयक्तिक भावनाओं को किस प्रकार व्यक्त करते हैं, देखिए :

'तमिपुन को पतन नहीं है, उनकी कीर्ति अधोमुख नहीं होती,
तमिल नाडु तमिल लोग, तमिल भाषा की महान् भावनाएँ,
अब जो हैं, वे तमिलनाडु में इससे पूर्व कभी नहीं रहीं।
तमिल लोगों की सेवा करनेवाले, तमिपुन को, अगर पर्वत भी
बाधा डाले तो वह भी चकनाचूर हो जाएगा।
तमिल की जो सेवा करता है, वह मरता नहीं है
तमिल का दास भारती कभी मरता है क्या?'[2]

इस प्रकार अपनी वैयक्तिक भावनाओं को जोशीले शब्दों में वे व्यक्त करते हैं। समाज सुधार परक उनकी कविताओं में इनकी वैयक्तिकता ही झलकती है। एक विधवा को संबोधित करते हुए एक प्रियतम कहता है - प्रेम करना प्रकृति है, प्रेम के कारण मरण भी मिले तो कोई बात नहीं है। तुम डरो मत ! हाथ फैलाओ ! कसम खाकर कहता हूँ, मैं तुम से शादी करूँगा।'[3] साक्षात् प्रियतम के रूप में कवि ने अपनी वैयक्तिक भावना को प्रकट किया है। बूढ़ों के विवाह का कट्टर विरोध करते हुए कवि स्वयं कहते हैं -

'मणाळ्र पोग ! मणाळ्र पोग !

1• भारतीदासन कविताएँ - पृ• 195 - II 1978 - पूम्बुहार•

2• भारतीदासन कविताएँ - I पृ• 69 - 24 वाँ संस्करण 1980 - सेन्तमिल निलैयम।

मनम पोन्दा मनम मण्णाग्पोग ! समूह चट्टमे ! समूह वळक्कगे '
नींगळ, मक्कळ अनेवरुम येंगदिक्कम मण्णाग्पोगवे ![1]

अर्थात् –

मिट्टी में मिल जाए ! मिट्टी में मिल जाए !
बेमेल मन व तन मिट्टी में मिल जाए
सामाजिक नियम – सामाजिक रीति –
सब मिट्टी में मिल जाए !
ताकि सभी लोगों का दुःख हर जाए – सुख मिल जाए!'

वे सामाजिक रीति-नीति और नियमों का नाश करना चाहते हैं। यह उनकी व्यक्तिवादी भावना का प्रतीक है।

सुख्वा की कविताओं में व्यक्तिवादी भावना की कमी नहीं है। कोकिला का वर्णन करते-करते कविता के अन्त में कोकिला को संबोधित करके स्वयं अपना परिचय वे इस प्रकार देते हैं –

'बहुत लोग मुझे नहीं जानते हैं,
कुछ लोग मेरी कमियों को ढूँढते हैं
तुमको सब लोग पहचानते हैं
हे ! जीवन के चित्र ! तुम बादल के समू हो।'[2]

1· भारतीदासन कविताएँ । – पृ· 111 – 24 वाँ संस्करण 1980, रेन्तमिल निलैयम।

2· एन्नै तेरियादवरो पल पेर,
एन्नैक्कुर कुरिवार सिल पेर
उन्नै तेरियादवरे इल्लै, उयिरोवियमे
मुकिलिन पगैए !

– तेन मघै – पृ· 27 – IV 1977 'सुरखा पदिप्पकम·

इस प्रकार उपर्युक्त दृष्टान्तों से स्पष्ट होता है कि तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों में, भारती के व्यक्तिवाद में अलौकिकता, भारतीदासन और सुरदा – जैसे कवियों के तमिल प्रेम, तमिपन आदि में वैयक्तिक भावनाएँ मिलती हैं। लौकिक प्रेम और सौन्दर्य के वर्णन में भी इनके वैयक्तिकतापूर्ण शब्दों को देखा जा सकता है। कवि भारतीदासन के सामाजिक सुधारों की ओर उन्मुख कविताओं में विधवा-विवाह का समर्थन, बाल-विवाह, बूढ़े-विवाह का विरोध, नास्तिकता, ब्राह्मणों के विरुद्ध-विचार आदि में व्यक्तिवादी चेतना, विद्रोह का रूप धारण कर लेती है। अद्यतन तमिल कवियों की वैयक्तिक भावनाएँ प्रमुख रूप से मानवतावाद की ओर उन्मुख होती जा रही हैं।

अन्य प्रवृत्तियाँ : नवीनता, विद्रोह, मानववाद

तमिल काव्य का नवीनता रूपी अंकुर विद्रोह में पल्लवित होकर मानववाद में पुष्पित हो जाता है। पुरातनता के प्रति विद्रोह का शब्द सब कवियों में मुखरित है। इतिहास इस बात का साक्षी है। तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों में ये तीनों प्रवृत्तियाँ अन्योन्याश्रित रूप में मिल जाती हैं। कवि भारती सर्वदा नवीनता की इच्छा करते थे। कविता में नव रस, नव विषय, नव नव शब्दों का प्रयोग करके, नवीन रूप से ज्योतिर्मयी महान् अनश्वर कविता की रचना करना चाहते थे।[1] चाहे कविता हो, चाहे समाज नवीनता की सृष्टि करना उनका ध्येय रहा। कवि ऐसा नियम बनाना चाहता है जिससे हर मानव को भोजन मिल जाए। अगर भोजन नहीं मिले तो इस जगत् को ही सर्वनाश करना चाहता है।[2] इनके अनुसार हर मानव को समाज में समानता मिलनी चाहिए।[3] नारी को भी वे

---

1. सुवै पुदिदु, पोरुळ् पुदिदु वळम् पुदिदु सोल्पुदिदु सोति मिक्क
 नव कवितै एन्नाळुम अषियाद महा कवितै।
 – भारतीयाद कविताएँ – पृ. 24।

2. तनि मनिदनक्कु उणविल्लैएनिल जगत्तिनै अषित्तिडुवोम। – भारतीय समाज – वही पृ. 4।

3. 'मनिदर यावरुम ओर निगर समानमाग वाषवोमे'। – 'विडुदलै' – पृ. 56

समाज में समानता और स्वतंत्रता प्रदान करना चाहते हैं। धोखेबाज और समाज द्रोहियों से भयभीत न होकर उन्हें पैरों तले कुचलने और उनके मुख पर थूकने का उपदेश 'पाप्पा पाट्टु' में वे बालकों को देते हैं।(1) इनके विद्रोही स्वर में मानवतावाद गूंज उठता है। सभी एक कुल हैं, सभी एक जाति के हैं और सब लोगों में ईश्वर अन्तर्निहित है। सब लोग इस देश के शासक हैं।(2) ऊँच-नीच, जाति-पाँति आदि भेद-भावनाओं को वे चकनाचूर करना चाहते हैं। मानवेतर कौआ, चिड़िया और सागर, पर्वत आदि को भी मानव जाति के अन्तर्गत रखकर उन्होंने अपनी मानवतावादी भावना को घोषित कर दिया है।(3) इसी लिए शायद लगता है कि 'कुयिल पाट्टु' में कोकिला को नारी का रूप प्रदान किया है।(4) और उसकी अद्वितीय सुन्दरता का भी वर्णन उन्होंने किया है।(5) अतः यह स्पष्ट है कि कवि भारती ने मानव के लिए जन्म लिया है और मानवतावादी चेतना उनके सारे साहित्य में प्रगति पायी है। वे सच्चे रूप में मानवतावादी थे।(6)

पुरट्चिक्कवि भारतीदासन की कविताओं में इन तीनों प्रवृत्तियों का सुन्दर सम्मिश्रण मिलता है। जाति-पाँति तथा अन्य अन्ध विश्वासों को समाज से मिटाकर वे स्वाभिमान (सुय मरियादै) भरी नयी दुनिया की स्थापना करना चाहते हैं जिसमें प्रेम की नदी हो, संघर्ष न हो बल्कि समानता हो।(7)

1• पादकम् सेय्पवरैक्कण्डाल – नाम भयम कोळ्ळलाकादु पाप्पा।
मोदि मिदित्तु विडु पाप्पा – अवर मुखत्तिल उमिळन्दु विडु पाप्पा। – 'पाप्पा पाट्टु' पृ·203

2• एल्लोरुम ओर कुलम
एल्लोरुम ओरिनम् ··· एल्लोरुम इन्नाट्टु मन्नर — पृ·41
— भारतीयार कवितैगळ् – 11 संस्करण 1978 अगस्त, पूम्बुहार प्रसुरम, मद्रास

3• भारतीयार कवितैगळ् – पृ· 181 – जय भेरिगै

4• वही – पृ·417

5• वही – पृ·418

6• The passage of time only reveals the timelessness of his works. It can be said of him – now he belongs to the ages and to all humanity. He belongs to humanity. Page 17. Hindu – December 1981(13.12.'81) Weekly Edition II

7• भारतीदासन कवितैगळ् – I पृ· 146 व 158 – 24 वाँ 1980 – सेन्तमिल निलैयम्

विधवा विवाह के समर्थन में उनके स्वर में विद्रोह की ज्वाला धधकती है। पत्नी के मरणोपरान्त बूढ़ा बूढ़ा भी दूसरी शादी के लिए वधु को ढूंढता है। लेकिन फूल की तरह रहनेवाली युवतीके अपने पति के मरणोपरान्त शादी करने में क्या बुराई है?(1) अतः उन्होंने उपदेश दिया कि विधवा को भी विवाह का अधिकार मिले।(2) इनके अनुसार विद्रोह के बाद साम्यवाद की स्थापना होती है।(3) अतः कवि को आशा है कि विद्रोह में ही सुखी जीवन पुष्पित होता है।(4) इनके विद्रोही स्वर में मानवतावादी भावना सर्वत्र गूंज उठती है। इनके अनुसार इस भूमि के लोग सब समान हैं।(5) यह देश सब के लिए है, संपत्ति का अधिकार सब को मिलना चाहिए। सभी लोगों को विद्या का अधिकार है। सब को सुहृदय होना चाहिए। सभी नर-नारियों को स्वतंत्रता मिले।(6) इसीलिए इनके कविता में वर्णित प्रेम भी परंपरागत पात्रों को न लेकर साधारण गाड़ीवाले, चरवाहे का, जुलाहे, किसान, फूल, बेचनेवाली आदि को लेकर अग्रसर होता है।(7) नवीन दुनिया में वे चाहते हैं, पुराने पंचांग भी नष्टभ्रष्ट हो जाएँ।(8) अतएव मानव को चाहिए कि वह मानवता को ऊँचा स्थान प्रदान करें। कवि का उद्गार देखिए :

गगन को छूनेवाले पर्वत के ऊपर चढ़ो ! ऊँचे चढ़ो ! चढ़ते रहो !
चढ़कर देखो ! सर्वत्र ! इस भूमि के मानव को,
देखो ! रे ! तुम्हारी मानवता की विशालता को,
देखो ! रे ! तेरे साथ जन्मे मानवों को ;

1• भारतीदासन कविताएँ I- पृ• 82 -24 वाँ - वाँ- 1980, सेन्तमिल निलैयम
2• वही - पृ• 167
3• कुयिल पाडलकळ - पृ•86 । 1977
4• पुरट्चिक्कवि मलरम कब वायवे ! भारतीदासन कविताएँ III - पृ• 82, सातवाँ संस्करण 1978, पारि निलैयम, मद्रास
5• 'इन्निल मक्कळ एल्लोरुम-निकर' - वही - पृ•3
6• भारतीदासन कविताएँ-I - पृ•56 24 वाँ - 1980 सेन्तमिल निलैयम
7• इसैयमुदु । भारतीदासन् पुर्नसंस्करण 1980 पारि निलैयम पृ•3,4,6,7 व 13
8• एल्लारुम एल्लाम एन्र इरुपदाम इरुम नौकि नवकिन्द्रु इन्द वैयम्।
 नल्लारे एल्लारुम अन्वैय गरित्तल नमक्केन किळियट्टुम पळैय पंचांगम्।
 — भारतीदासन - पांडियन परिसु - पृ•99 - 15 वाँ 1978 सेन्तमिल

सागर के समान लोगों को देखकर सुख का अनुभव करो।
आवाज करो ! मैं मानवता का समुद्र हूँ।'(1)

यहाँ भारतीदासन के प्रान्तीयता और वैयक्तिकता मानववाद में परिणत होकर व्यापकता को प्राप्त करती है।—

तन में प्रवाहित रक्त और आँखों के आँसू में ढूँढने पर भी जाति पाँति की भावनाएँ नहीं मिल सकतीं। सब के तन का रक्त लाल रंग का है। जन्म से किसी की कीर्ति होती नहीं, बल्कि कीर्ति सुकार्यों से मिल सकती है।(2) शान्तिपूर्वक क्रान्ति द्वारा वे मानवतावादी भावनाओं की स्थापना चाहते हैं। कवि नामक्कल कवि रामलिंगम पिल्लै नवजीवन(3) के लिए गान्धीवाद के सत्य और अहिंसा को ही क्रान्ति मानकर, उनके द्वारा, गाँवों और जनता का विकास करके नये समाज की स्थापना करना चाहते हैं।(4) नये स्पन्दन, नव नव विचारों, नयी नयी कलाओं में नवजीवन की कामना करके तद्वारा वे मानव के प्रेम का विकास चाहते हैं और सूर्य की किरणों तथा प्रातःकालीन पुष्पित फूलों की तरह मानव के जीवन की कल्पना करते हैं।(5) मानव जीवन में मंगलपूर्ण, प्रेम की भावनाएँ रखते हुए मानव के सुखी जीवन के लिए कोकिला से मधुर गीत गाने को वे प्रार्थना करते हैं।(6) एक और कविता में कवि मानव जीवन में शान्ति, समानता, विकास, सभी के लिए विद्या, और उद्योग के लिए, मानवता रूपी अमर शक्ति से विद्रोह करने का उपदेश देते हैं। उनकी कविताओं में से एक उदाहरण नीचे दिया जाता है —

नवीनता ही ज्ञान का विकास है, नवीनता ही यश का कारण है।
नवीनता ही नेतृत्व करेगी, नवीनता ही शाश्वत रहेगी।

---

1. भारतीदासन कविताएँ – प्रथम भाग। – पृ. 149–150
2. कविमणि – अमिय ज्योति : पृ. 48–49 – 15 वाँ 1979 पारि निलैयम
3. पुदुप्पदु एण्णम वेण्डुम, वाय्क्कैइल पुदुमै वेण्डुम — नामक्कल कवि रामलिंगम पिल्लै कृत अवळुम अवनुम – पृ. 15 VII वाँ 1980 पलनियप्पा ब्रदर्स मद्रास
4. वही – पृ. 14
5. शुद्धानंद भारती : पुदुमैप्पाडल पृष्ठ : 5 । 1977 शुद्धानंद पुस्तकालय, मद्रास
6. वही : कवि कण्णकनवुकळ – पृ. 11, 12 – 1978

नवी नता के बिना कविता करना निर्जीव पुतली को
रेशमी वस्त्र पहनाने के समान है।(1)

दिन और समय को न देखकर नयी दिशा की ओर दरवाजा खोलकर साम्यवादी पथ पर जाने की कामना नवीन तोते की ओर से कवि करता है और अन्धेरे पथ को मिटाकर प्रकाशमय पथ पर नये सिद्धान्तों का निरूपण करना भी चाहता है।(1-ए) इस प्रकार नये प्रकाशमय पथ पर चलकर इस भूमि और आकाश को सुधारने एवं खोलने के लिए कवि मानव से प्रार्थना करता है क्योंकि इसीलिए उनका जन्म हुआ है।(2) आगे वे शक्तिहीन तंत्री को उखाड़ फेंककर, वीणा में नयी चिन्तन रूपी तंत्री को बांधकर, उसे बजाकर मधुर मधुर नये गीत को गाने का उपदेश आज का तमिल कवि आज के मानव को देता है।(3) वे अभिलाषा करते हैं कि मानव प्रेम के दीप को जलाये और उसमें पुष्पित श्रेष्ठ गुण उपलब्ध हों। सोने वाला, आलस्यवाला मानव नहीं है, नयी विद्या को प्राप्त कर नये काल को बनानेवाला दूसरों को नया नाद सुनानेवाला ही मानव है। उसकी दोनों भुजाओं में जीत के पसीने होंगे।(4) नयी नयी भावनाओं के द्वारा पुरातनता के प्रति कवि विद्रोह करता है। वे कहते हैं,

---

1• पुदुमैए अरिविन अक्कम, पुदुमैए पुकप्पुकडाक्कम, पुदुमैए कलैमें तगुम
पुदुमैए क्लैत्तु निस्कुम, पुदुमैए इन्नि पाडल पुनैन्दिडलड निरिलाद पदुमैइन मोदु
सुदुम। पट्टाडै आगुम।
— सुरदा तैन मर्च IV 1977 सुरदा पत्तिप्पकम्, मद्रास•

1-ए• पूत्तदु मानुडम (मानवता पुष्पित हुई) - पृ•76 - I 1968 साले प्रकाशन,
डॉ• सालेइलक्किन्तिरयन, नयी दिल्ली

2• वही - पृ• 85

3• वही - पृ• 100

4• कनविकळ कण्डवन मानुडन, पुदुक् कालम समैत्तवन मानुडन।
अन्बोळि कण्डवन मानुडन, पण्बुकळ कण्डवन मानुडन।
तूंगि किडप्पवन, सोम्बल तिळैप्पवन अल्लन काण।
वीगिय ओळि तोळिनन - अविल वदि्ट विमरवैयन।
— डॉ• साले - पूत्तदु मानुडन - पृ• 109-110, साले प्रकाशन, दिल्ली-5

स्वयं खाना खाकर दूसरों को भी खाना खिलाना मानव का धर्म है। अगर भूख बढ़े तो विद्रोह स्वयं फूट पड़ेगा। इस तत्व को कवि ने अत्यन्त नवीन ढंग से हमारे सामने प्रस्तुत किया है।

दस और दो
बारह ही हैं
अगर भूख को बढ़ावें तो
विद्रोह हो ही जाएगा
क्यों?
गणित ठीक है ना?
क्यों हिचकिचाहट करते हो?
गलत प्रमाणित करने के लिए
दार्शनिकों को ढूंढते हो क्या? (1)

अगर मानव भूखे हो तो, चोरी, दुश्मनी, विद्रोह आदि को कोई नहीं रोक सकेगा। नियमों से काम नहीं चलेगा। अतएव समधर्मिता और समानता को लाने के लिए सत्य और दर्शन को लेकर इतिहास को ही बदलने का वह आदेश देता है।(2) कवि मानव से बातें न करके ईश्वर से ही

1· पत्तुम रण्डुम
पन्निरण्डु तान,
पशियेय वळर्त्ताल
पुरट्चि तान।
एन्न —
कणक्कु चरि ताने?
येन तयक्कम
तप्पु एन्नु निरूपिक्कर
तत्तुव वादि कळै तेडुकिरीरकळो!
— डॉ· साले इब्लन्तैरयन : उरेवीच्चु म - पृ· 89, ई 1977, साले प्रकाशन, दिल्ली-5
2· तत्तुवत्तिन एच्चरिक्कै समत्तुवम नाडुंगळ।
सत्यत्तिन एच्चरिक्कै चरित्तिरत्तै माट्रुंकळ।
— कण्णदासन कविता संग्रह - भाग IV पृ· 108, 109, 110 वानति पतिप्पकम्, मद्रास-

विद्रोह की बातें करने लगता है और मानव और मानवता की रक्षा करने की प्रार्थना करता है। ईश्वर ! बच्चों को जन्म देकर भूल जानेवाली माता की तरह, तुम इस जगत् को भूल गये हो। यह अनुचित है। इस जगत् को सुधारो, नहीं तो जड़मूल से उखाड़ कर खत्म कर दो।[1]

समय के बदलते-बदलते तमिल कवियों की कविताएँ स्वच्छन्दता की चरम सीमा पर पहुँचती हैं। क्योंकि इनकी कविताओं में सामाजिक विद्रोहात्मक मानवता दृष्टिगत होती है। नीचे की कविताएँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। कवि समाज के द्वारा तिरस्कृत पात्रों जैसे भिखारिणी और वेश्याओं के प्रति सहानुभूति प्रकट करता है। दोनों की आत्म-कथाओं में विद्रोह की ज्वालाएँ हैं। कवि के अनुसार वे भी समाज में स्थित मानव ही हैं।

'रात भी प्रातः काल उदय हो जाती है
लेकिन अब तक हमें क्षमा प्राप्त नहीं हुई है
हमारे इस दुनिया में क्या है? .. केवल हथकड़ियाँ ही हैं।'[2]

उनकी एक और कविता में वेश्याएँ अपना परिचय इस प्रकार देती हैं —

'हम रजनी की पुत्रियाँ हैं, मनमथ के जासूस हैं।
नारीत्व रूपी जेल को तोड़ने के कारण कैद की जाती हैं
समुद्र मंथन के अमृत को देव पी चुके हैं
इसीलिए हम अपने अधरामृत को रसिकों को वितरित करती हैं
हमारे न्यायालय में ही चरित्र दूषित होता है
हम नारीत्व को बेचते हैं, किसलिए? वस्त्र खरीदने के लिए ...

---

1. ईन्र तेय तनै मरन्द तायैप पोल, इरैव नीयुम
इव्वुलगै मरन्दु विट्टाय ! इदु उनक्कु नल्लदल्ल
गेन्गै केट्ट उलगै नन्गु तिरुत्ति अमै । अल्ल दिन्रे
वेरोडु अफ़्त्तु उलगै वेट्ट वेळि आक्कि विडु। - येन पट्टैत्ताय।
— प. माणिक्कम - आरम्भ पू - पृ. 27 । 1963 पारि निलैयम
2. इरउ पुड्ड विडियलिल मन्निक्कप्पडुकिरदु, इन्नुम नागळ मन्निक्कप्पड़विल्लै
एमक्कु इन्द उलगिल पेर वदरक्कु एन्न इरुक्किन्रदु .. कै विलंगु कळै तविर ...।
— पृ. 33 कल्पू मलरगळ - 'पिच्चक्कारी' (भिखारिणी)

हम मनमथ के मुद्रणालय के रहते रंकत्त हैं।
हम गुलाम हैं, इसी लिए हमारे साम्राज्य में,
सूर्य उदित भी नहीं होता, अस्त भी नहीं होता।'(1)

वेश्याओं के प्रति कवि की इन पंक्तियों में अत्यन्त गार्मिक विद्रोह की ज्वालाएँ फूट पड़ती हैं। अलग-कथा के रूप में भिखारिणी और वेश्या की अनुभूतियों को सहानुभूतिपूर्वक कवि ने व्यक्त किया है।क्योंकि साधारण जनों के प्रति 'सहानुभूति' स्वच्छन्दतावादी कवियों की विशेषता है। इन दोनों कविताओं में नवीनता, विद्रोह और मानवतावादी भावनाओं का समन्वय मिलता है।

अतः तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों के स्वच्छन्दतावादी काव्य रूप के विभिन्न पक्षों का विस्तृत विवरण दिया जा चुका है। प्रायः सभी कवियों ने नारियों को नवीन दृष्टिकोण से देखकर नारीत्व की वन्दना की है और उनको भी स्वतंत्रता, समानता प्रदान करना चाहा है। भारती और भारतीदासन भारती की नारी शक्ति के रूप में मानवी है। भारती दासन की दृष्टि उनकी ओर सहानुभूतिपूर्ण रही। भारती के बाद के कवियों ने प्रायः ईश्वर की उपेक्षा करके मानव को ही महत्व प्रदान किया है।

आ) कलागत प्रवृत्तियाँ: काव्य के रूप, विशेष अलंकार प्रयोग (मानवीकरण (2) विशेषण विपर्यय (3) और ध्वन्यर्थव्यंजना (4)) भाषा, शैली और छन्द। स्वच्छन्दतावादी तमिल कवियों का

---

1. 'नांगळ रंजनिडन मक्कळ, मनमथनिन औदूरकळ
कर्पुं चिरैयैय उडैप्पदाल दैदु रेक पड्किन्रोम।
एंगळुडैय नीति मन्रत्तिल तान ओपुक्कम दुष्टिकर पड्किरदु।
नांगळ निवर्त्तिक्कै विसनै सैयकिन्रोम, आडै वांगुवदर्काग,
नांगळ मनमथ अच्चगत्तिन मलिकुत्तिदप्पुकळ।
नांगळ अडिमैकळ अदनाल तान एंगळ साम्राज्यत्तिल सूरियन
उदिप्पदु मिल्लै, अस्तमिप्पदु मिल्लै। करुप्पु मलरकळ - पृ. 88-91
— ना कामराजन - करुप्पु मलरकळ (काले फूल)। 1980 तमिल पुस्तकालय, मद्रास।

2. Personification
3. Transferred Epithet
4. ONO Mato Poeia

क्षेत्र प्रमुख रूप से मुक्तक रहा। 'आधुनिक तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में मुक्तकों का चरम विकास मिलता है। भारती के 'पांचाली शपथम्'[(1)] भारतीदासन के 'पाण्डियन परिसु'[(2)] और कविमणि कृत 'आसिय ज्योति'[(3)] खण्ड काव्य के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। 'कुयिल पाट्टु', 'संजीवि-पर्वतत्तिन सारल', 'पुरट्चिक्कवि' दीर्घ कविताएँ हैं जिस में एक ही घटना को केन्द्रित कर कथा आगे बढ़ती है। नामक्कल कवि कृत 'अवळुम अवनुम'[(4)] चंपू काव्य मान सकते हैं या कथात्मक-कविता[(5)] कह सकते हैं। तमिल स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रमुख रूप से रूपक, उपमा जैसे प्राचीन अलंकारों का प्रयोग किया है उनके अतिरिक्त इनकी कविताओं में यत्रतत्र मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, ध्वन्यर्थ व्यंजना जैसे विदेशी अलंकारों का प्रयोग मिलता है जो यूरोपीय स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा में विशेष रूप से प्रयुक्त हैं।

<u>मानवीकरण</u> :— मानवेतर वस्तुओं में मानवीय क्रिया-कलापों का आरोप ही मानवीकरण है। यह अलंकार से बढ़ कर विशेष काव्य प्रयोग के रूप में आता है। कवि भारती ने अपनी कविता 'मनप्पेण' (मन रूपी नारी) में मानवेतर प्रवृत्ति से भिन्न मनुष्य चित्त के कर्मों में मानव धर्म का आरोप किया है। मन रूपी नारी को संबोधित करके कवि भारती कहते हैं —

'मन रूपी नारी ! जियो ! तुम सुनो !
एक ही को देखकर चपला होवेगा,

---

1. भारती कवित्तिरन : पृष्ठ 13 डॉ॰ मु॰ गोविन्द स्वामी V संस्करण - 1976, पारि निलैयम, मद्रास-1
2. डॉ॰ मु॰ वरदराजन : तमिल साहित्य का इतिहास - पृ॰ 352 IV 1980, साहित्य अकादमी, दिल्ली
3. रामलिंगम् पिल्लै - कविमणि कवितै - पृ॰ 153 - I 1977 पारि निलैयम।
4. 'गद्य पद्य मय काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते' - साहित्य दर्पणकार। गद्य एवं पद्यमय काव्य चंपू।
5. महाकाव्य और खण्ड काव्य में कथा निबद्ध होती है। किन्तु इनसे कुछ भिन्न वर्णनात्मक कविता की एक पृथक कोटि भी होती है जिसमें न तो महाकाव्य का औदात्य रहता है और न उसकी सी सुव्यवस्थित योजना। उसमें कथा तत्व की प्रधानता होती है और वर्णन कवि स्वयं करता है अथवा किसी पात्र के द्वारा कराया जाता है। कथा के इस पद्य बद्ध रूप को कथात्मक कविता अथवा 'नैरेटिव वर्स' की संज्ञा प्रदान की गयी है।
— साहित्य रूप पृ॰ 254 II सं॰ 2023 वि॰ भारती भण्डार, लीडर प्रेस, डॉ॰ राम अवध द्विवेदी
नामक्कल कविकृत इस काव्य में इस प्रकार की विशेषताएँ मिलती हैं।

दूसरे को देखकर पुनः पुनः तरंगित होगी।
अच्छी वस्तुओं को लो ! - कहने पर अलसाकर क्यों छोड़ती हो?
उसे त्यागो कहने से बलात् उस पर लुब्ध क्यों होती हो?
छुयी हुई वस्तु को क्या फिर फिर छुओगी?
नवीनता को देख क्या क्षुब्ध होगी?
नवीनता की चाह रखते हुए उसे देखकर डरती हो।
अक्सर भौंरों के मधु के चारों तरफ मंडराने की तरह
तुम प्राचीन वस्तुओं में सहानुभूति दिखाकर उसी में लीन होती हो
प्राचीनता के सिवा इस भूमि में कोई
नवीनता नहीं है? छी छी ! हाय ! कहकर ऊबने का भाव दिखाती हो
लाश को चाहनेवाले कौवे की तरह
दुर्गंध, मृत्यु, भयंकरता आदि दुर्गुणों को स्वीकार करती हो।
उसी प्रकार
मुझ से निश्छल प्रेम करती हो ! मेरी आत्मा की रक्षा करती हो
आँखों और कानों की तरह मुझे भी संसार के चक्र में घुमाना चाहती हो।
सुख देती हो, सुख में बेहोश होती हो,
सुख को ही चाहते हुए कई त्रुटियाँ करती हो,
सुख की रक्षा कर दुःख को मिटाती हो,
सुख समझकर दुःख में डूब जाती हो।(1)

इस प्रकार मन की प्रवृत्तियों और गुणों में नारी के धर्मों का आरोपण किया गया है। मन की चपलता, उसमें विविध तरंगों और उमंगों का उठना, अच्छी वस्तुओं को छोड़ कर बुरी वस्तुओं पर

---

1. भारतीयार कविताएँ : पृ. 194 ॥ 1978 अगस्त, पूंबुहार प्रसुराम्
'मनपेण' पंक्तियाँ - 1-25
(मनपेण)

अवधान को केन्द्रित करना, पहले नवीनता को देखकर डरना, लेकिन उसे ही पसन्द करना, फिर उसी में लीन रहना — जैसी प्रवृत्तियाँ नारी में मिलती हैं। उसी प्रकार प्रेम करना, क्षमा करना, संसार के चक्र में घुमाने का प्रयत्न करना, सुख देना, सुख में बेहोश होना, सुख को ध्यान में रखकर लापरवाही से त्रुटियाँ करना, सुख के कारण दुख को दूर करना, सुख का प्रयत्न करके स्वयं दुःखित होना — जैसी प्रवृत्तियाँ स्त्री सहज मन के सभी धर्मों को नारी में आरोपित कर कवि ने मानवीकरण की सुन्दर छटा प्रस्तुत कविता में दिखाई है। कवि ने आकाश में नारी, प्रकाश में देव आदि के धर्मों का परिचय देकर अपनी अनेक कविताओं में मानवीकरण के अच्छे नमूने प्रस्तुत किये हैं।[1]

भारतीदासन प्रारंभिक कविताओं में प्रकृति में मानव भावों को परखने की प्रवृत्ति पायी जाती है। नीचे प्रस्तुत 'अन्दि पोदिन मदि'[2] अर्थात् 'सन्ध्या की नियति' नामक कविता में कवि ने प्रकृति के विभिन्न अंगों में मानवीय भावों का आरोप किया है। देखिए —

'सन्ध्या पश्चिम में डूब गई – उसके वस्त्र रूपी श्याम बादल,
हर दिशा की ओर पवन में उड़ रहा है – देखिए
बिखरे हुए मोती हैं – प्रकाशमय नक्षत्र ;
चित्त में वृद्ध-सन्ध्या का मुख संकोचित हुआ
गरजनेवाला समुद्र राजा अपने में मग्न
दीखता है किन्तु दूसरी युवती को याद करता है
सन्ध्या किस प्रकार यह सह सकती है?
अरे ! देखो ! सन्ध्या की सौत आ गयी है !
श्याम रंगीन केशों को बिखराकर सन्ध्या चल पड़ी
किरीट के मणियों को बिखरते बिखरते दौड़ चली हुई।

---

1. 'वानवेळि एन्नुम पेण्णै ओळि एनुम देवन
मणित्तक्किरान' — पृष्ठ 426
भारतीयार कवितायें – II अगस्त 1978 पूम्बुहार प्रसुरम, मद्रास
2. सन् 1935 में भारती कविता मण्डलम् नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी।

प्रियतम-समुद्र की प्रकृति को विचारकर कन्या का मन दुखित हुआ
बार बार समुद्र ने मनाया सुनी-अनसुनी सन्ध्या मुँह मोड़ती है
अपने मुख को प्राची की ओर नहीं दिखाती।
अरे ! प्रकाशमयी सन्ध्या ! मुझे क्यों भूल गयी?
कोटि बार निमंत्रण दिया - समुद्र ने
फिर अन्दोलित होकर उमड़ने घुमड़ने और गरजने लगा।
मुरझायी सन्ध्या का पथ वह देखता रहा -
तत्समय एक नारी आकर पीछे खड़ी हो गयी।
उदित होनेवाली ज्योतिर्मयी चंदिनी को - समुद्र ने गले से लगा लिया
सन्ध्या के विरह से समुद्र का तन काला हो गया था
फिर चंदिनी के आगमन से उसका तन प्रकाशमय हो गया
मन को सन्तोष मिला - समुद्र-चंदिनी का मिलन हो गया।"(1)

इस कविता की सब से बड़ी विशेषता यह है कि सन्ध्या, समुद्र, चंदिनी — इन तीनों की क्रियाएँ प्रकृति के विस्तृत रंगमंच में होती हैं। कविता में प्रयुक्त कड़र पेर केन्दन (समुद्र राजा), नंगै (नारी), सककळत्ति (सौत), 'किरीडम' (किरीट), 'कादलन' (प्रियतम), 'पेण' (नारी) आदि शब्द प्रयोग मानवीकरण के सौन्दर्य को बढ़ा रहे हैं।

भारतीदासन का अनुगमन करते हुए कवि परलाडम माणिक्कम ने 'तेन्रल' में (दक्षिणी पवन) हृदयहीन प्रेयसी के भावों को भरकर अनुपम मानवीकरण का परिचय दिया है — सुन्दर फूलों से चित्रित परदा को धीरे धीरे हटाकर धीरे-धीरे आयी। आकर आलिंगन करके बिना लज्जा के मेरे मुख को अपने शीतल फूल जैसे करों से छूकर मेरे अधरों को उसके अधरों से मिलाकर सौ बार उसने अधरामृत का पान कराया।

---

1. भारतीदासन 'कुयिल पाडलकळ' : पृ.78-79 - I 1977 पुम्बुहार

आँखें मूंदकर मैंने भी सुख का अनुभव किया। रोज जब मैं अकेले में रहता था, यही लीलाएँ कल्के स्वप्न की तरह अदृश्य हो जाती थी। कई बार उस युवती से गले लगाने का प्रयत्न किया। लेकिन मैं छला गया। जब कभी वह चाहती थी, इच्छा के अनुसार मुझसे गले लगा लेती थी। लेकिन मुझे उसके तन छूने की भूलकर भी अनुमति नहीं देती थी। मैं किससे कहूँ ? यह भी कैसी नारी है? आह ! मैं तो इस हृदय-हीन नारी का नाम बताना भूल ही गया। दक्षिण की गलियों में विचरनेवाली इसे लोग 'दक्षिणी हवा' कहते हैं।'(1)

(II) विशेषण विपर्यय :

दो तत्वों के संसर्ग से एक का गुण दूसरे में आरोपित हो जाने को विशेषण विपर्यय अथवा धर्म विपर्यय की संज्ञा दी गयी है। तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में इसका प्रयोग स्वाभाविक रूप से यत्रतत्र मिलता है। भारती और भारतीदासन की कविताओं में इसका प्रयोग देखा जा सकता है।

'कादल वेयिलिले कायवैत्त, कट्टिइनाल

मालवलिन मेनि वळुत्तान .... '(2)

अर्थात् — प्रेम धूप में सुखाया गया कविता फलसार

यहाँ 'प्रेम' धूप धूप में वस्तुओं को सुखाने का वर्णन हुआ है। लेकिन प्रेम धूप में सुखाना संभव नहीं। यहाँ धूप के गुण को प्रेम में आरोपित किया गया है अर्थात् प्रेम में धूप के गुण को दिखाकर प्रेम में सुखाने की क्षमता प्रदान की गयी है।

कोडैव कोडुमैइल वाडलानोम

पुरुट्टिचइन पुधुक्करितन पिन

---

1. प. माणिक्कम - 'आहरम पू' - पृ. 15, 16 । 1963 'इदयमिलाळ कविता' (हृदय हीन) पारि निलैयम, मद्रास-।

2. भारतीयार कवितायें - पृ. 418 - 1978 अगस्त - द्वितीय संस्करण, पूम्बुहार प्रसुरम, मद्रास.

पोद् उडैमै पोल पुकुन्तदु मारिए।(1)

अर्थात् —

गर्मी के कारण तंग होने लगे
विद्रोही पसीने के बाद
साम्यवादी वर्षा बरसाने लगी।

यहाँ पुरट्च्चि इन पुमुक्कम अर्थात् 'विद्रोही पसीना' संभव नहीं है। विद्रोह के गुण को पसीने में आरोपित किया गया है। अर्थात् 'पसीना' ने विद्रोह के गुण को ग्रहण कर लिया है। (पुरट्च्चि = विद्रोह, पुमुक्कम = पसीना) अतः विशेषण विपर्यय सिद्ध होता है। आगे की पंक्ति पसीने के बाद साम्यवाद की वर्षा बरसाने लगी। विद्रोह के बाद साम्यवाद की स्थापना होती है। 'पसीना' वर्षा से हट जाता है। इस दृष्टि से विद्रोह के गुण को पसीने में स्थानान्तरण किया जाना उचित जंचता है। विद्रोह के बाद समानता की भावना, स्थापित हो जाना स्वाभाविक है। अति धूप अथवा गर्मी के बाद वर्षा की भी संभावना की जा सकती है।

(iii) ध्वन्यर्थ व्यंजना :(2)

ऐसे शब्दों का प्रयोग करना जिससे शब्दों को सुनते ही कार्य व्यापार अथवा वस्तु का ध्वनन हो उसको हम ध्वन्यर्थ व्यंजना कह सकते हैं। इसके प्रयोग से कविता में संगीत की वृद्धि होती है। भारती और भारतीदासन की कविताओं में इसका प्रयोग प्रमुख रूप से मिलता है। जैसे :

वेट्टियडिक्कुदु मिन्नल, कडल
वीस सिर कोण्डु विणै इडिक्कुदु।

---

1. भारतीदासन कुयिल पाडलकळ - पृ. 86 - 1977 पूम्बुहार प्रसुरम, मद्रास
(कविता संग्रह)

2 ONO - MATO - Poeia : "Formation of names or words from sounds that resemble those associated with the object or action to be named" or that seen naturally suggestive of it's qualities --Page No.846; The concies oxford Dictionary of Current English V Edition 1964

कोट्टि इडिक्कुदु मेघम्, - कू

केन्र विण्णै कुडैयुदु काट्टु,

सट्टच सड सट्टच सड टट्टा - एन्र

ताळंग कोट्टिक कनैक्कुदु वानम्,

एट्टुत् तिसैयुम इडिय - मपै

एङ्ङनम् वन्ददडा, तंबी वीरा !"(1) — भारती

" आड आड एन्राडुमाम मइल

न्राडुमाम कळिप्पिल निन्राडुमाम।

माले वैइल, तनि मलक्क सोलै तनिल, नडमिडुम नील मइल।

कण्णाडिरम् सोळि विडुम मिन्नाडिरम मइल, अदु पेण्णाय् वन्दे

आड आड एन्राडुमाम।"(2) — भारतीदासन

उल्लिखित प्रथम उदाहरण में ऐसे शब्दों का प्रयोग हुआ है जिन्हें सुनते ही हमें 'मपै' (अर्थात् : वर्षा) के कार्यव्यापारों का ध्वनन होता है। दूसरे दृष्टान्त में प्रयुक्त शब्दों में मोरनी का नृत्य व्यंजित होता है। अतएव दोनों उदाहरणों में ध्वन्यर्थ व्यंजना का प्रयोग हुआ है।

तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों की भाषा व शैली सरल एवं सुबोध है।(3) उनमें लोक प्रचलित सरल मधुर शब्दों का प्रयोग मिलता है। ओज, प्रसाद, माधुर्य — तीनों गुण इनके

1· भारतीयार कविताएँ - पृ· 223 - II 1978 अगस्त, पूम्पुहार प्रसुरम्, मद्रास

2· भारतीदासन - कुयिल पाडलकळ - पृ· 26 - I 1977 पूम्पुहार प्रसुरम्, मद्रास

3·(I) भारतीयार कविताएँ - पृष्ठ 313 - II 1978 अगस्त - पूम्पुहार

(II) भारतीदासन् : 'पाण्डियन परिसु' - प्राक्कथन में। पन्द्रहवाँ संस्करण 1978 सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै तमिलनाडु

(III) भारतीदासन : 'अपकिन सिरिपु' - पृ· 4 - सोलहवाँ संस्करण 1980 सेन्तमिल निलैयम।

काव्य में मिलते हैं। विद्रोह की भावनाओं को व्यक्त करने के लिए भारती और भारतीदासन ने ओजपूर्ण भाषा का सर्वत्र प्रयोग किया है। माधुर्य-सम्मल की विशेषता है। अतएव यह गुण सभी में विद्यमान है। इन कवियों ने परंपरागत छन्दों के साथ स्वच्छन्द अथवा मुक्त छन्द का प्रयोग भी किया है।(1)

* * *

1. पिछले अध्यायों में इसका उल्लेख व्याख्यान किया गया है।

चतुर्थ अध्याय

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

अ. भावगत प्रवृत्तियाँ।

इस शोध कार्य का प्रधान ध्येय तुलनात्मक अध्ययन होने के कारण दोनों भाषाओं की कविताओं में प्राप्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को दृष्टिकोण में रखकर, उनका विश्लेषण किया गया है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास के प्रथम तीन कालों में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का रूप, आधुनिक काल के तथाकथित स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रवृत्तियों के रूपों से भिन्न है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों का दृष्टिकोण प्रकृति, प्रेम, सौन्दर्य और मानव वाद के प्रति स्वच्छन्द था। उनकी कल्पनाएँ एवं अनुभूतियाँ युगीन परिस्थितियों और व्यक्तिवादी भावनाओं के अनुरूप बदल गयीं। अतएव आधुनिक युग में बीसवीं शती के आरंभ होते ही हिन्दी कविताएँ स्वच्छन्दता की ओर उन्मुख होने लगीं। हिन्दी कविता की ये बदलती दिशाएँ काव्य के रोमाण्टिसिज्म को स्पष्ट रूप से सूचित करती हैं। तमिल के आधुनिक काव्य में प्राप्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की तरह हिन्दी के आधुनिक

युग में भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रमुख रूप से प्रकृति का स्वतन्त्र चित्रण, प्रेम, सौन्दर्य, कल्पना, अनुभूतियों की तीव्रता, व्यक्तिवाद, विद्रोह, नवीनता और मानवतावादी भावनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

प्रकृति चित्रण ।— आधुनिक काल के पूर्व हिन्दी साहित्य के अन्य कालों में लौकिक प्रेम को उद्दीप्त करने के लिए, नारी के अंगों को उभारकर दिखाने के लिए प्राकृतिक वस्तुओं का प्रयोग किया गया था। प्रकृति प्रायः अलंकार और पृष्ठभूमि के रूप में काम करती थी। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी युग के पूर्व प्रकृति को गौण स्थान ही प्रदान किया गया था। लेकिन आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि ने प्रकृति को 'रसों के अन्तर्गत विभावों के बन्धन' से मुक्त किया और उसे एक अलग वस्तु के रूप में देखा, अनुभव किया और स्वतंत्र रूप से उसका चित्रण भी प्रस्तुत किया। उसने प्रकृति के प्रत्येक कण को अत्यन्त ध्यान से निरीक्षण करके उससे तादात्म्य स्थापित किया। कभी वह प्रकृति को नटी के रूप में देखता था और कभी कभी सुन्दरी के रूप में। आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि ने सत्य का वर्णन नहीं बल्कि उसकी छाया का भी मानवीकरण किया है और उस 'छाया' में अपना अतीत प्रेम का परिचय दिया है।

इस प्रकार के स्वतंत्र वर्णन में अंग्रेजी के रोमाण्टिक कवियों का प्रभाव इन कवियों पर स्पष्ट रूप से पड़ा है। आधुनिक हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्राप्त प्रमुख प्रकृति के स्वतंत्र चित्रों का विश्लेषण, उदाहरण सहित यहाँ प्रस्तुत किया जाता है। :

काश्मीर सुषमा : हिन्दी काव्य क्षेत्र में प्रकृति का आलम्बनात्मक चित्र श्रीधर पाठक की कविताओं में मिलता है। पंडित रामचन्द्र शुक्ल ने पाठक के 'गुनवन्त हेमन्त' को प्राकृतिक वस्तुओं को एक आधार मानकर हिन्दी काव्य क्षेत्र में 'ट्रू रोमाण्टिसिज़्म' की खोज की है और पाठकजी को हिन्दी स्वच्छन्दतावाद का प्रवर्तक ठहराया है। पाठकजी के पूर्व यद्यपि भारतेन्दु ने गंगा और जमुना को स्वतंत्र महत्व प्रदान किया था लेकिन उनको वह सफलता नहीं मिली जो पाठकजी को प्राप्त हुई थी। अतः सफल स्वतन्त्र प्रकृति चित्रण का श्रेय श्रीधर पाठक से मानना उचित है। पाठक प्रकृति के उपासक थे। प्रकृति के रम्य स्थलों का वर्णन प्रायः इनकी कविताओं में मिलता है। प्रायः पाठकजी ने प्रकृति चित्रण में

मानवीकरण-पद्धति अपनायी है। काश्मीर के प्राकृतिक दृश्यों में कवि आनन्द मग्न हो जाते हैं और उसमें मानवीय व्यापारों का अनुभव करते हैं। प्रकृति को नारी का रूप प्रदान करके, उसके कार्यकलापों का वे सुन्दर वर्णन करते हैं। काश्मीर में प्रकृति रूपी नारी एकान्त में बैठकर निज रूप सँवारती है। पल-पल में अपना वेश बदलती है। क्षण-क्षण में नवीन सौन्दर्यपूर्ण छवि धारण कर लेती है। निर्झरों में प्रकृति के विविध रंगीन चित्रों का रूप प्रतिबिंबित दीख पड़ते हैं। ऐसा लगता है, प्रकृति रूपी सुन्दरी स्वयं अपनी छवि को स्वच्छ निर्झर रूपी दर्पण में देख-देखकर अपना श्रृंगार कर रही हो।

"प्रकृति यहाँ एकान्त बैठि निज रूप सँवारति,
पल पल पलटति भेष छनिक छवि छिन छिन धारति।
विमल अंबु सर मुकुरन महि मुख बिंब निहारति,
अपनी छवि पै मोहि आपहि तन-मन वारति।।"(1)

प्रकृति को सुन्दर युवती के रूप में यहाँ प्रस्तुत किया गया है। प्रकृति को सचेतन आलंबनात्मक नारी के रूप में देखने की प्रवृत्ति इसके पूर्व के काव्य में विरले ही मिलती है।

एक अन्य स्थल पर पाठकजी ने 'व्योम' को 'बाला' के रूप में चित्रित किया है। इनकी व्योम रूपी बाला सुमंजु वीणा बजाती है। गीत गाती है। उस गीत में सुरीली गुंजार आ रही है। उस बाला के हर स्वर, पद में नवीनता एवं प्रवीनता है। उसकी लय निराली है और उसकी नयी तान प्रेममय दीखती है। प्रबोधन, विनय और दया की भावनाएँ उसमें मिलती हैं। वह बाला समस्त ब्रह्माण्ड को अपनी दो उँगलियों में नचा रही है।

"कहीं पै स्वर्गीय कोई बाला सुमंजु वीणा बजा रही है।
सुरों के संगीत की सी कैसी सुरीली गुंजार आ रही है।
हरेक स्वर में नवीनता है हरेक पद में प्रवीनता है
निराली लय है औ' लीनता है अलाप अद्भुत मिला रही है

---

1. 'काश्य कमल' - काश्मीर सुषमा

कभी नयी तान प्रेम मय है, कभी प्रकोपन, कभी विनय है
दया है, दाक्षिण्य का उदय है अनेक नायक बना रही है।
समस्त ब्रह्माण्ड भर को मानों दो उँगलियों पर नचा रही है।"(1)

इस कविता में स्वतंत्र प्रकृति चित्रण के साथ नवीन मानव प्रेम की भावनाओं की अभिव्यक्ति अत्यन्त नवीन ढंग से की गयी है। अतः इसमें स्वच्छन्दतावाद के नये स्वरों को सुना जा सकता है।(2) यहाँ प्रकृति को केन्द्र बनाकर उसमें कल्पना के सहारे मानवीय भावनाओं का आरोप किया गया है। प्रकृति में मानवीय भावनाओं के आरोप में, हिन्दी साहित्य के अन्य कालों के कवियों और पाठकजी में, मूल भावना एवं संचारी भाव एक प्रतीत होने पर भी दृष्टिकोण में स्पष्ट अन्तर है। पाठकजी के पूर्व की कविताओं में प्रकृति मानवीय भावनाओं का अनुसरण करती थी। अतः गौण स्थान ही प्रकृति को मिली थी। लेकिन पाठकजी ने प्रकृति का अलग अस्तित्व दिखाकर, उसे सजीव बना दिया है। शताब्दियों से मानव की भाव शृंखलाओं से आबद्ध प्रकृति को इन्होंने मुक्त किया। मानव की अनुगामिनी प्रकृति इनके काव्य में मानव की स्वामिनी बन गयी।(3)

<u>फूल: उषा और चपला</u> : स्वच्छन्दतावादी कवि ने प्रकृति के विभिन्न अंगों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की है। 'फूल' का वर्णन यद्यपि अन्य पूर्ववर्ती कवियों ने भी किया है, किन्तु उसका संबंध उन्होंने मानवीय भावनाओं से जोड़ दिया था। लेकिन रामनरेश त्रिपाठी उसको स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करते हुए उसके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करते हैं —

"हा ! यह फूल किसी दिन अपनी अनुपम सुन्दरता से गर्वित
आया था जग में उमंग से किसी वासना से आकर्षित
पर देखा क्या? क्षण भंगुर सुख आया और मृत्यु का संकट
मुरझा गया हताश अति सौरभ निश्वास छोड़कर।"(4)

---

1. कविता और कविता – पृष्ठ 74-75 सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान – प्रथम संस्करण 1967 – 'राजकमल प्रकाशन'।
2. वही – पृ. 9
3. डॉ. किरण कुमारी गुप्त : हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण – पृ. 301-302 – II संस्करण सं. 2014, सम्मेलन, प्रयाग
4. आधुनिक कवि : राम नरेश त्रिपाठी III आवृत्ति – सन् 1964 – पृ. 14, साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

साधारण फूलों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को अत्यन्त नवीन ढंग से स्वच्छन्दतावादी कवि ने व्यक्त किया है। राम नरेश त्रिपाठी ने प्रकृति को सहचरी, देवी, कल्याणी के रूपों और साध्य तथा साधन के रूपों में भी देखा है। प्रकृति के प्रति इनका संस्कारगत मोह रहा। ये प्रकृति के पुजारी थे। इस कवि के लिए प्रकृति सदा सुन्दरी है। अतः इन्होंने चपला और उषा में भी नारीगत भावनाओं का अनुभव किया है। चपला और उषा को देखकर इन्हें ऐसा लगता है कि विशाल आकाश में बिजली किसी प्रियतम से मिलती है और उषा भी रोज़ किसी प्रियतम के लिए श्रृंगार करके उठा करती है।

"घन में किस प्रियतम से चपला
करती है विनोद हँस-हँसकर?
किसके लिए उषा उठती है,
प्रति दिन कर श्रृंगार मनोहर?"(1)

बिजली और उषा को नवयौवना के रूप में वर्णन करके कवि ने प्रकृति में भी स्वच्छन्द प्रेम की भावनाओं का अनुभव किया है। अतएव प्रकृति, प्रेम और कल्पना के द्वारा मानवीकरण - का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत पंक्तियों में मिलता है। यहाँ प्रकृति मानवीय भावनाओं की स्वामिनी बन गयी है, अनुगामिनी नहीं।

श्री जयशंकर प्रसाद की मुक्तक कविताओं में प्रकृति के अनेक स्वतंत्र चित्र उपलब्ध होते हैं। अतः स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रधान लक्षण 'प्रकृति का स्वतंत्र चित्रण' इनसे पल्लवित होने लगता है। प्रसाद ने प्राकृतिक वस्तुओं एवं दृश्यों का आलम्बनात्मक वर्णन कानन कुसुम, झरना और लहर में किया है।

प्राची की महा-क्रीडा : प्राची को सुन्दरी के रूप में चित्रित कर उसकी महाक्रीड़ाओं का वर्णन प्रस्तुत पंक्तियों में किया गया है। प्रातःकाल होते-होते पिछली पूर्णिमा रात की चाँदनी का अन्त होना,

---

1. 'आधुनिक कवि : रामनरेश त्रिपाठी' III आवृत्ति, सन् 1964 - पृष्ठ 8, साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

नक्षत्रों के समूहों का अपना प्रकाश खोना, पक्षी का कलरव, मलयानिल का चलना आदि प्रातः काल की स्वाभाविक घटनाएँ हैं। कवि की कल्पना है कि विहंगम के गीत किसी के आने की सूचना देते हैं और मन की व्यथाओं को हरने के लिए मलय-मारुत भी प्रातःकालीन समय चला आता है। इस प्रकार प्रस्तुत कविता में प्रातःकालीन सौन्दर्य का एक संश्लिष्ट चित्र अत्यन्त काल्पनिक ढंग से उपस्थित किया गया है। देखिए —

"सुन्दरी प्राची, विमल ऊषा से मुख धोने को है
पूर्णिमा की रात्रि का शशि अस्त अब होने को है
तारका का निकर अपनी कान्ति सब खोने को है
स्वर्ण-जल से अरुण भी आकाश-पट धोने को है
गा रहे हैं ये विहंगम किसके आने की कथा।
मलय-मारुत भी चला आता है हरने को व्यथा।"(1)

जल-विहारिणी : 'कानन कुसुम' में प्रसाद ने कानन के प्राकृतिक दृश्यों को अत्यन्त निकट से देखकर उनका वर्णन किया है। क्योंकि प्रकृति से संबंधित सभी कविताएँ असल में कानन के कुसुम ही हैं। प्रस्तुत कविता में कानन की छटा का एक मनोहरपूर्ण वर्णन उपलब्ध होता है। लगता है कि कवि ने कल्पना के सहारे वन के प्राकृतिक दृश्यों में नये नये रंग भरकर, उन्हें नया कलेवर प्रदान कर दिया है। देखिए :

"चन्द्रिका दिखला रही है क्या अनुपम-सी छटा।
खिल रही हैं कुसुम की कलियाँ सुगन्धों की घटा।
सब दिगन्तों में जहाँ तक दृष्टि-पथ की दौड़ है
सुधा का सुन्दर सरोवर दीखता बेजोड़ है।"(2)

सरोवर के तट पर रम्य कानन की छटा अनोखी दीख पड़ती है। चन्द्रिका की किरणें, लता और निकुंजों में निहित तिमिर को भगाकर, वातावरण को उज्ज्वल बनाती हैं। कानन का वातावरण शान्त है, मन को

1. प्रसाद - 'कानन कुसुम' - पृ. 15 VIII संवत् 2033, भारती भण्डार प्रकाशन
2. वही - पृ. 47

सुख प्रदान करनेवाला है और यहाँ भय नहीं है।[1] क्योंकि,

"प्रकृति अपने नेत्र ताल से निरखती है छटा।
घिर रही है घोर एक आनंद धन की-सी घटा।।"[2]

यहाँ कानन में सुंदर विहंगम अपने पंखों को फैलाकर आकाश में उड़ रहा है मानो एक महा मत्स्य जल-धारा में खेल रहा है।

"पंख फैलाकर विहंगम उड़ रहा आकाश में
या महा इक मत्स्य है, जो खेलता जल-धार में।।"[3]

वलित कुमुदिनी : आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति की छटा का वर्णन करते करते कभी-कभी उसके प्रति सहानुभूति भी प्रकट करता है। उसके लिए आँसू भी बहाने लगता है। काल-चक्र की नियति की गति पर विचारने लगता है। इस दृष्टि से 'वलित कुमुदिनी' विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिसके प्रति कवि प्रसाद ने अपनी सहानुभूति प्रकट की है। कवि आरंभ में वलित कुमुदिनी की महिमामयी स्थिति को इस प्रकार व्यक्त करते हैं —

"अहो! यही कृत्रिम क्रीड़ा सर-बीच कुमुदिनी खिलती थी
हरे लता-कुंजों की छाया जिसको शीतल मिलती थी
इन्दु-किरण की चूल छड़ी जिसका मकरन्द गिराती थी
चण्ड दिवाकर की किरणें भी पता न जिसको पाती थीं।।"[4]

यह कुमुदिनी शीत पवन के मधुर स्पर्श से सिहर उठा करती थी, श्यामा के नवीन संगीत को सुना करती थी, स्वच्छ निर्मल सरोवर में छोटी-छोटी स्वर्ण मछलियाँ, कुमुदिनी को घेरकर अपने निश्छल,

---

1. कानन कुसुम - पृ. 47 YIII सं. 2033 भारती भण्डार
2. वही - पृ. 49
3. वही - पृ. 48
4. वही - पृ. 60

स्वच्छ, गहरे आन्तरिक प्रेम भाव को व्यक्त किया करती थीं। कुमुदिनी का सौरभ सरोवर में पूर्ण रूप से फैलता है। इस प्रकार मन को लुभानेवाली कुमुदिनी,

"किसी स्वार्थी मतवाले हाथी से हा ! पद-दलित हुई
वही कुमुदिनी, ग्रीष्मताप-तापित रज में परिमिलित हुई
छिन्न-पत्र मकरन्द हीन हो गयी न शोभा प्यारी है
फूटी कण्टकाकीर्ण मार्ग में, कलिचक्र गति न्यारी है।"[1]

इस प्रकार प्रसाद के कानन कुसुम में आनन्द के कुसुम भी हैं और पददलित कुमुदिनी भी। स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा के पूर्व कुमुदिनी नारियों की सुन्दरता के वर्णन में उपमा के रूप में काम आती थी। उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि ने उसकी दलित स्थिति को देखकर रोया है और उसकी अनुभूतियों को अपनी ओर से व्यक्त किया है। कुमुदिनी का अलग अस्तित्व दिखाकर कवि ने अपनी स्वच्छन्दतावादिता का परिचय दिया है। इस दृष्टि से 'कानन कुसुम' के अन्य प्रकृति के चित्र भी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के प्रमाण सिद्ध होंगे, क्योंकि, प्रकृति तो प्रसाद के लिए सुन्दर है और परम उदार भी।[2]

किरण : साधारण रूप से कवि सूर्य अथवा चाँदनी का वर्णन करते समय किरणों का उल्लेख करता है। लेकिन कवि प्रसाद ने किरणों का स्वतंत्र अस्तित्व दिखाकर, उसको प्रकृति का यथार्थ वर्णन किया है। कवि प्रसाद यहाँ किरणों को संबोधित करके विविध प्रश्न करते हैं। किरण भूमि पर प्रार्थना सदृश झुकी रहती है। मधुर मुरली की तरह मौन रहती है। कवि को, किरण, किसी अज्ञात विश्व की विकल वेदना की दूतिका की तरह प्रतीत होती है —

"धरा पर झुकी प्रार्थना सदृश
मधुर मुरली-सी फिर भी मौन,

---

1. कानन कुसुम - पृ. 61 VIII सं. 2033, भारती भण्डार, इलाहाबाद।
2. प्रसाद - झरना - पृ. 39, प्रकृति है सुन्दर, परम उदार

किसी अज्ञात विश्व की विकल-
वेदना-दूती-सी तुम कौन?"[1]

सुन्दर सरस हिलोर उठाकर प्रकृति को किरण अनंत आनंद प्रदान करती है, और स्वर्ग तथा भू-लोक को भी मिलाती है। कवि को पता नहीं लगता कि ऐसी रहस्यमयी किरण कौन है? अतः कवि अन्त में किरण को संबोधित करके कहते हैं –

"हे! चपल! ठहरकर कुछ विश्राम कर लो। क्योंकि
अनन्त शून्य पथ पर तुम तो चल चुकी हो![2]

यहाँ 'विकल वेदना की दूती सी' कहकर मानवीय भावों का आरोप किरण में किया गया है। कवि की विस्मय भावनाएँ भी यहाँ स्पष्ट हैं।

सागर : प्रसाद ने प्रकृति में प्रायः मानुषिक सौन्दर्य का अनुभव किया है। प्रकृति के संश्लिष्ट चित्रों को प्रस्तुत करने में इनकी प्रतिभा खूब मुखरित हो उठी है। सागर का चित्रण प्रस्तुत करते हुए, उससे प्रातःकालीन लालिमा और आकाश के एक रंगीन चित्र का अंकन भी उन्होंने किया है। सागर अपनी सहज गंभीरता को त्यागकर, लहरों के मीपण हासों एवं अश्रुधारों में युग-युग की मधुर कामना के कथन को ढीला कर देता है। क्योंकि वह अपनी प्रेमिका हिम शैल बालिका को देख लेता है। देखिए –

"पिंगल किरनों-सी मधु लेखा
हिम-शैल बालिका को तूने कब देखा!
कलरव संगीत सुनाती
किस अतीत युग की गाथा गाती आती।"[3]

प्रेमिका का आगमन मिलन की सूचना देता है –

आगमन अनन्त मिलन बनकर –

---

1. झरना – पृ. 27 । – 1976 प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी
2. वही – पृ. 28
3. प्रसाद – लहर – पृष्ठ 15 । ४।। संवत् 2021 भारती भण्डार.

बिखराता फेनिल तरल सोल।
हे सागर संगम अरुण नील। "(1)

कवि ने सागर के चित्र में स्वच्छन्द प्रेम की भावनाओं को भी व्यक्त किया है। सागर को नायक, हिम-शैल को बालिका अर्थात् नायिका के रूप में प्रस्तुत कर प्रकृति के विस्तृत अंग को केन्द्रित करके कल्पना के द्वारा एक रंगीन चित्र कवि ने यहाँ खींचा है।

उषा : 'लहर' के प्रकृति-चित्रों में 'उषा' का वर्णन अत्यन्त श्रेष्ठ बन पड़ा है। प्रकृति के रमणीय पक्ष को कवि ने यहाँ प्रस्तुत किया है। उषा को संबोधित करके कवि कहते हैं कि हे ! उषा ! जागो ! रात बीत गयी है। तारों के निकर अंबर-पनघट में डूब रहे हैं। पक्षी कलरव कर रहा है। फिर भी तुम अब तक सोई हुई हो ! तुम्हारी आँखों में विहाग भरा हुआ है।

" बीती विभावरी जाग री !
अंबर-पनघट में डुबो रही -
तारा - घट उषा - नागरी ।
खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लायी -
मधु-मुकुल नवल-रस गागरी।
अधरों में राग अमन्द पिये,
अलकों में मलयज बंद किये -
तू अब तक सोयी है आली !
आँखों में भरे विहाग री ! "(2)

इस प्रकार उषा का रमणीय एवं रंगीन चित्र अन्यत्र विरले ही मिलता है।

1· प्रसाद - लहर - पृ· 15 प्रस्तुत गीत पुरी में मकर संक्रान्ति 1988 वि· को लिखा गया था ।
2· प्रसाद - लहर - पृ· 19 VII सं· 2021 भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद·

मधुकरी । आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि ने न केवल प्रकृति से प्रेरणा ली है बल्कि उसको अत्यन्त गंभीर एवं निकटतम रूप से निरीक्षण भी किया है। प्रकृति के सूक्ष्माति सूक्ष्म उपकरण और उसके व्यापार इन कवियों के अनुराग के विषय बन गये हैं। हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति का उपासक है। वह उससे इतना हिल मिल गया है कि प्रकृति उसके जीवन का साथी बन गयी है। इन कवियों के प्रकृति चित्रण में मानव और प्रकृति का एकात्म्य हो गया है। प्रकृति की साधारण वस्तु होते हुए भी काव्य में सदा प्रयुक्त मधुकरी का मधुर राग उनको मुग्ध कर देता है। इस दृष्टि से पंत की 'मधुकरी' का चित्रण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कवि मधुप सुकुमारी से स्वर्ग के उसके मीठे गान सिखाने की प्रार्थना करता है। कुसुम के चुने कटोरों से कुछ कुछ मधुपान कराने की कामना भी करता है। मधुकरी नवल कलियों को झूम-झूमकर, प्रसूनों के अधरों को चूम चूमकर अपना पाठ सीखती है। इस सीखे पाठ और उसके केसर गान को कवि सुनना चाहता है। मधुकरी से मधुपान की प्रार्थना करते हुए कवि कहता है –

"चूम चूनकर, सखि ! सारे फूल
सहज बिंध कर, निज सुख दुख भूल,
सरस रचती हो ऐसा राग
धूल बन जाती है मधुमूल,
पिला दो ना, तब हे सुकुमारि !
इसी से थोड़े मधुमय गान,
कुसुम के चुने कटोरों से
करा दो ना, कुछ कुछ मधुपान !"(1)

इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी कवि मधुकरी से हिल-मिल जाना चाहता है। अपने पूर्व के कवियों की तरह प्रकृति को द्वितीय स्थान न देकर कवि ने प्रथम स्थान दे दिया है।

---

1. पंत – पल्लव – पृष्ठ 76-77 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन।

नक्षत्र : निशा काल में स्वच्छन्दतावादी कवि एकान्त में बैठे बैठे आकाश की ओर देखकर, नक्षत्रों को अत्यन्त सूक्ष्म निरीक्षण करता है। वह अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा प्रकृति के नक्षत्रों की विविध सक्षम प्रतिमाओं को रूपान्वित करता है। नक्षत्रों को देखकर विविध प्रकार से उनका संबोधन करता है। कभी उसको नक्षत्र स्तब्ध विश्व के अपलक चिन्मय लगता है और कभी कभी अज्ञात देश के नाविक, अनन्त के हृत्कंपन तथा नव प्रभात के अस्फुट अंकुर प्रतीत होते हैं। उन्हें असंख्य भाग्यों के धारक, असीम छवि के सावन, अक्षय निधि के आश्वासन और विश्व सुकवि के सजग नयन आदि विविध रूपों में देखते हैं। शशि के प्रिय सहचर नक्षत्रों को बीते दिवसों की समाधि की संज्ञा प्रदान करते हुए उनको आकाश सुमन कहते हैं –

" ए नश्वरता के लघु बुद्बुद,
काल चक्र के विद्युत् कन,
ए स्वप्नों के नीरव चुंबन
तुहिन दिवस, आकाश सुमन !"(1)

प्रकृति की विस्तृत वस्तुएँ नक्षत्रों को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करके कवि ने विविध प्रकार की कल्पनाएँ की हैं। कवि अन्त में नक्षत्रों से प्रार्थना करता है कि अन्धकारमय उनके उर में वे आवें और छिप जावें। प्रकृति के शान्त, निश्छल वातावरण को अत्यन्त गहन रूप से देखकर कवि ने कई रोमाण्टिक कल्पनाओं का सर्जन किया है। इस प्रकार प्रकृति और कल्पना का अद्वितीय समन्वय इस कविता में हुआ है।

बादल : स्वच्छन्दतावादी काव्य-धारा के पूर्व प्रेम की मनोवृत्तियों को उद्दीप्त करने के लिए बादल और मोर के नृत्य को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति पायी गयी थी। लेकिन आधुनिक स्वच्छन्दता-वादी कवि अन्य प्रकृति के अंगों की तरह बादल को भी अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के अनुरूप कविताओं में स्थान दिया है। प्रस्तुत कविता में बादल स्वयं अपनी आत्म-कथा कहते हैं। सुमित्रानन्दन

---

1. 'पंत' – पल्लव – पृ. 116 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन.

'पन्त' अपनी कल्पना के पंखों द्वारा प्रकृति के अन्य उपादानों से बादलों का संबंध स्थापित करते हैं। लेकिन मानवीय भाव श्रृंखलाओं से इनका कोई संबंध नहीं है। बादल स्वयं अपना परिचय देते हुए कहते हैं कि वे सुरपति के अनुचर हैं और जगत्प्राण के सहचर हैं। ये मेघदूत की सजल कल्पना और चातक पक्षी के प्रिय जीवनधर हैं। ये बादल –

कभी चौकड़ी भरते मृग-से
भू पर चरण नहीं धरते,
मत्त मतंगज कभी झूमते,
सजग शशक नभ को चरते,[1] हैं और कभी कभी

अचानक भूतों की तरह महा आकार धारण करके कड़क-कड़ककर हँसते हैं जिससे सारा संसार थर्रा उठता है। कभी कभी समयानुकूल ये बादल अपने स्वर्ण पंखों को फैलाकर द्रुत मारुत से भी बातें करते हैं और

संध्या का मादक पराग पी,
झूम मलिन्दों-से अभिराम,
नभ के नील कमल में निर्भय
करते हम विमुग्ध विश्राम,[2] करते हैं।

कवि ने बादलों की कल्पनाओं में रम्यता है क्योंकि बादल सागर के धवल हास हैं, जल के धूम, गगन की धूल, अनिल फेन, ऊषा के पल्लव, वारि वसन, वसुधा के मूल[3] हैं।

कवि ने 'बादल' का आलम्बनात्मक चित्र प्रस्तुत करते हुए, उसके कार्यकलापों का वर्णन अपनी कल्पना के द्वारा, प्राकृतिक धरातल पर ही करके, हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में नवीनता का प्रतिपादन किया है। बादल का यह वर्णन स्वच्छन्दतावादी काव्य में एक नया मोड़ प्रस्तुत करता है।

1· पंत – पल्लव – पृ· 123 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2· वही – पृ· 125
3· वही – पृ· 126

उषा और सन्ध्या। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्राकृतिक दृश्यों में नारी के सौन्दर्य का अनुभव किया है। क्योंकि इन्होंने प्रकृति को सजीव सत्ता रखनेवाली नारी के रूप में देखा है। प्रातःकालीन लालिमा में नारी के अरुण अधर, दौड़ती हुई लहरों में नारी की चंचलता और सूखे हुए पेड़ में नारी के उदासीपन को देखने की प्रवृत्ति इन कवियों में पायी जाती है। कभी उनको उषा गुलाब की तरह खिलती है और सन्ध्या सुन्दरि का रूप धारण कर लेती है। नील कूल पर नभ के जग उषा की कल्पना करते हुए कवि कहते हैं —

"तुम नील कूल पर नभ के जग,
उषे ! गुलाब-सी खिल आयीं !
अलसायी आँखों में भरकर
जग के प्रभात की अरुणाई।"(1)

सन्ध्या के समय उसे सुन्दरि के रूप में इस प्रकार प्रश्न करते हैं —

"कौन, तुम सुन्दरि कौन?
व्योम से उतर रही चुपचाप
छिपि निज छाया छवि में आप
सुनहला फैला केश कलाप
मधुर मंथर मृदु मौन
कहो, एकाकिनी कौन?
मधुर मंथर तुम मौन !"(2)

इस प्रकार कवि को उषा आँखों में अलसायी भरकर गुलाबसी आती है और सन्ध्या सुन्दरि, व्योम से चुपचाप मौन से नीचे उतरती है। यहाँ कवि ने उषा और सन्ध्या को नारी के रूप में सजीव देखा है और अमूर्त को मूर्त रूप देकर चैतन्य प्रदान किया है।

---

1. सुमित्रानन्दन पंत - ज्योत्स्ना - पृ. 10। चतुर्थ आवृत्ति 1978 - राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
2. पल्लविनी - पृ. 209, 210 - राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली - IV परिवर्धित संस्करण - संवत 20 20

जुगनू :- हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने न केवल प्रमुख प्रकृति के अंगों का वर्णन किया है बल्कि उसके सामान्य अंगों को भी अपनी कविताओं में स्थान दिया है। इस दृष्टि से पंत के विषय-चुनाव में नवीनता है। कवि पन्त जुगनुओं को अपनी कविताओं में स्थान देकर अपनी स्वच्छन्दता-वादी भावना का परिचय दिया है। बुझ बुझकर चमकनेवाले जुगनुओं का सौन्दर्य रात्रि वेला में मन को लुभानेवाला है। अतः कवि उनके प्रति आकर्षित हुए हैं। कवि के जुगनू अपनी आत्म-कथा स्वयं कहते हैं —

"जगमग-जगमग हम जग का मग,
ज्योतित प्रति पग करते जगमग!
हम ज्योतित-शलभ, हम कोमल भ्रम,
हम सहज सुलभ दीपों के नभ!
चंचल, चंचल, बुझ-बुझ, जल-जल,
शिशु-उर पल-पल, हरते छल-छल।"(1)

'यमुना' और 'तरंग' : हिन्दी-काव्य-क्षेत्र में कृष्ण भक्ति शाखा के कवियों ने कृष्ण और गोपिकाओं के संयोग और वियोग के सिलसिले में यमुना का खूब वर्णन किया है। उनकी 'यमुना' नायक-नायिका की प्रेम भावनाओं को उद्दीप्त करती थी। लेकिन उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रहा। आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि 'निराला' यमुना को केन्द्रित करके अतीत की याद हमें कराते हैं। कवि यमुना से पूछते हैं —

"बता, कहाँ अब वह वंशी वट?
कहाँ गये नट नागर श्याम?
चल-चरणों का व्याकुल पनघट
कहाँ आज वह वृन्दा धाम?"(2)

---

1. पल्लविनी - पृष्ठ : 258 । परिवर्धित सं० 2020 वि० राजकमल प्रकाशन
2. निराला - परिमल - पृष्ठ 33 प्रथम बार 1978 दिसंबर - राजकमल प्रकाशन

"कहाँ मुर के रूप-बाग के
दाड़िम, कुन्द, विकच अरविन्द,
कदली, चम्पक, श्रीफल, मृग शिशु
खंजन, शुक, पिक, हंस, मिलिन्द?"(1)

यमुना की लहरों में कवि मधुर तान सुनते हैं और उसे देखकर ऐसा लगता है कि वह किसी अतीत शिशु के साथ आँख मिचौनी खेल रहा हो। कवि ने नदी के वर्णन के साथ साथ उसकी तरंगों का चित्र भी प्रस्तुत किया है। 'तरंग' में कवि ने मानवीय भावनाओं का अनुभव किया है। पता नहीं ये तरंगें अपने चंचल चरणों को बढ़ा-बढ़ाकर किससे मिलने जा रही हैं। कभी-कभी ये अपना भाव बदलती हैं, हँसती हैं और करों को मलती हैं। अपने को सजधज कर अपनी बाहों को बढ़ाकर, हृदय खोलकर किसको यह आलिंगन करने जा रही है? देखिए —

"किस अनन्त का नीला अंचल हिला-हिलाकर
आती हो तुम सजी मण्डलाकार?
एक रागिनी में अपना स्वर मिला-मिलाकर
गाती हो ये कैसे गीत उदार? ...
क्यों तुम भाव बदलती हो -
हँसती हो, कर मलती हो?
बाहें अगणित बढ़ी जा रहीं हृदय खोलकर
किसके आलिंगन का है यह साज?"(2)

तरंग को नायिका का रूप प्रदान करके, उसकी प्रेम-भावनाओं को भी कवि ने यहाँ व्यक्त किया है। तरंगों का भाव बदलना, हँसना, करों का मलना, सजधज कर आलिंगन करने जाना — जैसी कल्पनाएँ अत्यन्त रोमाण्टिक हैं। 'नील' अंचल प्रेम का प्रतीक है। अतः प्रकृति को लेकर प्रेम, कल्पना, सौन्दर्य

---

1. निराला - परिमल - पृष्ठ 45 । 1978 राजकमल
2. वही - पृ. 60

जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का सुन्दर संघात भी इस कविता में उपलब्ध होता है।

ओस की बूंद और पंकज कली : महादेवी वर्माजी की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक रूप से उपलब्ध होती हैं। उनकी समस्त कविताओं में वैयक्तिक पीड़ा, वेदना, और दुःखानुभूतियाँ प्रमुख स्थान रखती हैं। कतिपय प्रकृति के स्वतंत्र चित्र मिलते हैं जिनमें कवयित्री की वेदना ही मुखरित है। इस दृष्टि से इनकी 'ओस की बूंद' कविता उल्लेखनीय है। सरल मोती के तरह किसी नक्षत्र लोक से टूटकर इस विश्व के शतदल पर अज्ञात रूप से ओस की बूंद गिर पड़ी। नादान बूंद का कोई नाम नहीं है। जीवन से भी यह अनजान है। इसे जन्म से ही विरह की वेदना सहनी पड़ी। अतः इसके जीवन में मिलन का कोई प्रसंग नहीं है। आगे ओस की बूंद का परिचय देखिए —

"यह शैशव सा परिचय हीन
पलक-दोलों में पल भर झूल,
कपोलों पर जो ढुल चुपचाप
गया कुम्हला आँखों का फूल,
एक ही आदि-अंत की साँस —
कहे वह क्या पिछला इतिहास !"(1)

इस बूंद को अपने देश का भान नहीं है। अतएव यह अपनी पहिचान बताने में भी असमर्थ है। ओस की बूंद के प्रति कवयित्री अपनी हृद्‌गत वेदनामयी सहानुभूतियों को अत्यन्त मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। अन्य स्थल पर महादेवी की पंकज-कली भी वेदना में पली सी प्रतीत होती है। पता नहीं, किस विदेशी मलयानिल पवन के अंक में रहकर, उसकी भुजाओं से मिलकर, यह पंकज-कली

1. महादेवी वर्मा - 'यामा' - पृष्ठ 95 (रश्मि से)
पंचम संस्करण सन् 197 ।
भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद

सम ने उन्मुक्त उर के अस्तित्व को खो चुकी है। फिर भी यह किसके लिए व्रत रखकर तप कर रही है —

"रवि से झुलसते मीन दृग
जल में सिहरते मृदुल पग।
फिर व्रतव्रती तू तापसी
जाती न सुख दुख से छली?
तू अमर होने नम धरा के
वेदना-पथ से चली!
पंकज कली! पंकज कली!"(1)

इस प्रकार पंकज कली की कल्पना अपनी वैयक्तिक अनुभूति के अनुरूप अत्यन्त स्वच्छन्दता से कवयित्री ने की है।

पत्थर : विकास कालीन स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति के महान् एवं विस्तृत उपादानों जैसे सागर, बादल, नक्षत्र, प्रभात, सन्ध्या का चित्रण प्रस्तुत किया है।लेकिन हिन्दी का नव स्वच्छन्दतावादी कवि राम कुमार वर्मा प्रकृति के साधारण 'पत्थर' के स्वभाव का वर्णन करके अपनी स्वच्छन्द भावना का परिचय देते हैं। उनके लिए पत्थर अटल नींव का स्मारक है और खण्डहर का कुण्ठित इतिहास है। वह ऐसा पदाघात अतिथि है जिसको न भूख लगती है न प्यास। अतः कवि उसको संबोधित करते हुए कहते हैं —

"अटल नींव के स्मारक ! खण्डहर के कुण्ठित इतिहास
पदाघात के अतिथि ! न तुमको लगी भूख या प्यास !"(2)

न जाने यह पत्थर कितने आघातों को सहनकर रहा है। सिर्फ इसको गिरने का ही अभ्यास है। तूफ़ानों के आने पर भी एक सांस भी नहीं लेता है। बीते युगों के विषाद के कारण यह निरुपाय और चुपचाप

---

1. सान्ध्य गीत से - महादेवी वर्मा - यामा - पृ. 225 - V 1971 भारती भण्डार
2. कवि श्री रामकुमार वर्मा - पृ. 42 । सं. 2029 सेतु प्रकाशन.

पड़ा रहता है। यह बहुत युगों से अभिशाप से कपा हुआ प्रतीत होता है। इसलिए लगता है कि युतक ने ही इसकी सृष्टि की है। प्रकृति के पत्तों तक में स्पंदन जगे हैं जिससे अतीत भी जीवित हो उठा है और इन्द्र धनुष के रंगत स्वरों में नभ भी गीत गा रहा है। लेकिन सदा यह पत्थर मौन रहता है। अतः कवि पत्थर को उसकी अपनी अतीत की याद कराते हुए कहते हैं —

"जागो, क्या तुम भूल गये? अपना वह रूप प्रचण्ड?
जब लपटों के बाहु बने तुम तोड़ धरा के द्वार,
फैल गये थे पृथ्वी पर बनकर ज्वाला की धार?
पहले थे तुम अग्नि, आज पत्थर हो, हो पाषाण,
फिर आया तूफान, वीर ! तुम में आये क्या प्राण?"(1)

अन्त में कवि अपने जोशपूर्ण शब्दों के द्वारा, पत्थर को वीर बताते हुए, उसमें विद्रोह और प्राण का संचार कराते हैं।

गजरे तारोंवाले : प्रकृति के विशाल रंगमंच में नभ से भू तक की समस्त वस्तुओं की ओर अद्यतन हिन्दी कवि दृष्टिपात करता है। पत्थर को उत्साहित करनेवाला यह कवि रात्रि-वेला में रजनी को बालिका के रूप में मानकर गजरे तारों को बेचने के लिए आयी नारी के रूप में कल्पना करता है। समस्त संसार सो रहा है। मानव की उत्सुकतापूर्ण आँखें नींद में मग्न हैं। इस वेला में रजनी बालिका तारों को लेकर बेचने चल पड़ती है। कवि का कथन है कि सुनी रात में इन सारी निधियों को कुम्हलाने नहीं देना चाहिए। इन तारों को निर्झर के निर्मल जल में धोते समय लहरें आकर इन्हें चूमें तो किंचित् भी विचलित होने की आवश्यकता नहीं है। अगर प्रभात तक कोई आकर मोल न लें तो उन सब गजरे तारों को फूलों पर ओस के रूप में बिखरा देने का आदेश कवि देते हैं और रजनी से कहते हैं —

"यदि प्रभात तक कोई आकर,
तुम से हाय, न मोल करे।

1· कविश्री रामकुमार वर्मा - । सं 2029 - पृ· 42, सेतु प्रकाशन

तो फूलों पर ओस-रूप में,
बिखरा देना सब मजरे। "(1)

कली : हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों की प्रकृति कभी-कभी अपनी आत्म-कथा स्वयं अत्यन्त मार्मिक शब्दों में कहती है। देखिए, कली अपनी वेदना और अनुभूतियों को कैसे स्वयं प्रकट करती है —

"देव, मैं प्रभात की प्रमोदिनी प्रभाती हूँ
वायु की तरंग पर सौरभ में गाती हूँ। "(2)

इस जगत् में कठोर दुःख, पीड़ा और पापों की छाया है। लेकिन कली के लिए दो दिन का अभिसार है। सदा लतिका के बन्धन में बन्धिनी हुई रहती है। स्वतंत्र होते ही कुम्हलाती है। उसके जीवन का नाम ही बन्धन है। कली स्वयं कहती है —

"बन्धन ही एक मेरे जीवन का नाम है,
रेशम सी देह स्नेह-भरी पाती हूँ।
हाय ! कुछ देर और जीवन ही रखते,
मैं पदत्तिक्त पर देखो, मुरझाती हूँ। "(3)

कलियों के लिए दो दिन की चाँदनी, फिर अन्धेरी रात है। वेदना भरी इस दुनिया में कल खिल-कर आज मिट जाती है। कलियों के प्रति कवि ने अपनी सहानुभूति प्रकट की है। प्रकृति वर्णन में यथार्थता बोध इन पंक्तियों की विशेषता है। कवि की आन्तरिक वैयक्तिक भावनाएँ अप्रत्यक्ष रूप से यहाँ अभिव्यक्त हुई हैं।

1· रामकुमार वर्मा - आधुनिक काव्य संग्रह - पृष्ठ : 78, नवाँ संस्करण शक 1881
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
2· कुछ कविता से - रामकुमार वर्मा - गजरे तारों वाले । - 1966, पृ· 27 ।, किताब महल, इलाहाबाद
3· वही - पृ· 27 ।

'प्रकृति की स्वतंत्रता ही इच्छित है'। अतः हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति के विशाल रंगमंच में प्रकृत विस्तृत एवं दुर्गम वस्तुओं से लेकर, साधारण से साधारण वस्तुओं तक का स्वतंत्र चित्र अत्यन्त स्वच्छन्दतापूर्वक खींचा है। वह समुद्र को नवीन ढंग से देखता है –

"चूर्ण-चूर्ण हो रही हँसी नीले अपार अधरों की,
झाग फूटकर धवल-धवल फूलों से बिखर रहा है।"(1)

कभी-कभी इन कवियों को चाँदनी भी जल पर गीत लिखने लगती है – युगों से लिखनेवाली उस चाँदनी के गीत-संगीत को सिन्धु सुन रहा है –

"चाँदनी लिखने लगी जल पर रुपहले गीत
लहरियों में उभर आया अतल का संगीत॥
लिख रही है वह युगों से, सुन रहा है सिन्धु।
इन्दु की मुस्कान, लहरों पर सुधा के बिन्दु॥"(2)

इस दुनिया में मिट्टी का साम्राज्य ही है। आकाश की तरह मिट्टी का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। अतः अद्यतन हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवि मिट्टी की महिमा का गान करता है। बारंबार कुचलने पर भी मिट्टी नहीं मिटती। सूरज के धूप में तपती है, आँधी के आने पर उड़ती है, पानी के बरसाने पर गल जाती है और इस पर फसलें उगती हैं, कट जाती हैं। सौ बार बनने मिटने पर भी यह मिट्टी अविनश्वर है। क्योंकि –

"मिट्टी की महिमा मिटने में,
मिट-मिट हर बार सँवरती है,

1· दिनकर– कोयला और कवित्व – पृष्ठ 20 । जनवरी 1964 उदयाचल प्रकाशन
2· नरेन्द्र शर्मा – कदलीवन – पृ· 18 – 1 · 1954 किताब महल, इलाहाबाद

मिट्टी-मिट्टी पर मिटती है
मिट्टी मिट्टी को रचती है।"[1]

कवि नश्वर स्वर से अनश्वर गीत गाता है और उसका उच्छ्वास अमर हो जाता है। उसी प्रकार मिट्टी के गल जाने पर भी उसका विश्वास अमर हो जाता है।

"कवि मिट जाता लेकिन उसका उच्छ्वास अमर हो जाता है,
मिट्टी गल जाती है पर उसका विश्वास अमर हो जाता है।"[2]

कवि के उच्छ्वास की तुलना, साधारण मिट्टी के विश्वास से करके, कवि ने अपनी विद्रोहात्मक स्वच्छन्दता का परिचय दिया है। क्योंकि ये दोनों शाश्वत हैं। कवि ने प्रकृति की साधारण मिट्टी की महिमा का गान करके उसके स्थान को ऊँचा कर दिया है।

स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का तिरोभाव कभी नहीं होता, लेकिन उनके रूप-रंग में भिन्नता अवश्य आ जाती है। एक ओर सामाजिक परिस्थितियाँ, दूसरी ओर कवि की वैयक्तिक अनुभूतियाँ, दोनों इन प्रवृत्तियों के पीछे सदा काम करती हैं। सप्तक के कवियों ने भी प्रकृति का स्वतंत्र वर्णन किया है। लेकिन उनमें वह सरसता का अभाव है जो विकासकालीन कवियों में उपलब्ध होती है। क्योंकि विकासकालीन कवियों की वैयक्तिक अनुभूतियाँ, उनकी अद्भुत कल्पनाएँ, इन कवियों की अनुभूतियों और कल्पनाओं से अवश्य भिन्न हैं। प्रथम तार सप्तक के कवि के लिए प्रभात फूटता है। देखिए —

"फूटा प्रभात, फूटा विहान,
बह चले रश्मि के प्राण, विहग के गान, मधुर के स्वर
झर-झर, झर-झर।
प्राची का यह अरुणाभ क्षितिज,
मानों अंबर की सरसी में

---

1. कवि श्री शिवमंगल 'सुमन' - पृ.74 - 1 - 1954, मिट्टी की बारात, 2026 वि. सेतु प्रकाशन
2. वही - पृ.75

फूला कोई रक्तिम गुलाब, रक्तिम सरसिज।
अब दिशा-दिशा
सस्मित विस्मित
खुल गये द्वार, हँस रही उषा।"(1)

और तीसरे सप्तक के कवि के लिए सूरज अपनी सुनहली किरणों को नहीं बरसाता। उसके लिए सूरज फीका प्रतीत होता है। देखिए —

"सुबह हुई तो
सूरज फीका - फीका निकला।
वातायन की हवा नहीं गाती थी गीत।
सजे हुए गुलदानों के रक्तिम गुलाब,
क्या जाने क्यों पड़ते जाते थे
प्रतिक्षण पीत।"(2)

नयी कविता और सप्तक के कवि प्रकृति का वर्णन नहीं करता, वह उसे अपने जीवन और संवेदना के साथ संपृक्त नहीं करता और न उससे प्रभावित मन:स्थितियों को उसके साथ अभिव्यक्त करता। वह केवल जीवन अथवा अपने अस्तित्व के प्रसार में प्रत्येक अनुभूत क्षण की संवेदना को प्रेषणीय बनाता है। इसी कारण वह प्रभाव चित्रों और बिंब चित्रों का सर्जन करता है। जिनमें उसकी संवेदना के साथ बाह्य प्रकृति एक रूप हो जाती है।(3) अतएव इसमें कोई शक नहीं है कि प्रकृति के आलंबनात्मक चित्रण में जितनी सफलता विकासकालीन कवियों को मिली, उतनी अन्य कालीन कवियों को कदाचित् ही मिली है। कुलमिलाकर श्रीधर पाठक, प्रसाद, पंत, निराला, रामकुमार वर्मा जैसे कवियों ने प्रकृति के प्रत्येक अंग को चाहे सत्यात्मा हो अथवा असाधारण, अत्यन्त निकट से निरीक्षण किया है और

1· भारतभूषण अग्रवाल - तारसप्तक III - 1970 पृष्ठ 98 - भारतीय ज्ञान पीठ, वाराणसी
2· कीर्ति चौधरी की कविता अनुपस्थिति से। अज्ञेय द्वारा संपादित तीसरा सप्तक - पृ· 50 - तृतीय संस्करण 1967 - भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी
3· डॉ· रघुवंश-प्रकृति और काव्य - पृ· 402 II - 1960, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली·

उनका सफल वर्णन किया है। प्रकृति के स्वतंत्र चित्रण के अतिरिक्त हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने पृष्ठभूमि, उद्दीपनात्मक, अलंकारात्मक, दूतिका — जैसे विभिन्न रूपों में भी व्याख्यान अपने अपने काव्यों में वर्णन किया है। प्रकृति के चित्रात्मक और संवेदनात्मक चित्र भी इनकी कविताओं में मिलते हैं।

प्रेम :

स्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रेम निश्छल एवं स्वच्छन्द है भले ही कुछ कवियों के प्रेम वर्णन में लौकिकता का सा आभास मिलता हो। इन्होंने प्रेम को शरीर की भूख न समझकर एक आदर्श एवं रहस्यमयी चेतना समझा है। अतः स्वच्छन्दतावादी कवियों के प्रेम को एक प्रकार से 'प्लेटानिक लव' की संज्ञा दी गयी है जो एक रागात्मक संबंध के रूप में कविताओं में अवतरित हुआ है। यह आदर्श प्रेम, प्रेम का वह पवित्र रूप है जिसमें प्रेमियों के बीच कोई शारीरिक संबंध नहीं रहता बल्कि एक दूसरे के प्रति एक अनन्य आकर्षण बना रहता है। दूसरे शब्दों में इनकी कविताओं में प्रेम का उदात्तीकरण हो गया है। फिर भी इन कवियों की कविताओं में प्रेम का लौकिक रूप अप्रत्यक्ष रूप से मिलता है जिसकी अभिव्यक्ति प्रकृति के अंगों के द्वारा हुई है। क्योंकि इन्होंने अपनी मनोवृत्ति के अनुकूल प्रेम को अभिव्यक्त किया है। प्रेम की कविता में इन्होंने कुछ परिवर्तन भी किया है। इनकी प्रेम की कविता स्वानुभूति निरूपिणी है।[1] अतः यहाँ परिवर्तन का तात्पर्य प्रेम के उदात्तीकरण से है। इनका प्रेम स्वानुभूतिपूर्ण होने के कारण इनकी प्रेम की कविताओं में अनेकरूपता मिलती है। प्रमुख रूप से हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम के तीन रूप मिलते हैं —

1. प्रेम का अलौकिक रूप,
2. प्रेम का उदात्त रूप
3. प्रेम का लौकिक रूप।

---

1. डॉ॰ केसरी नारायण शुक्ल — आधुनिक काव्य धारा — चतुर्थ आवृत्ति 1961 पृष्ठ 132, नन्दकिशोर एण्ड संस, वाराणसी

इन दोनों का विश्लेषण पृथक्-पृथक् यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

प्रेम का अलौकिक रूप :—

प्रेम का अलौकिक रूप आदि वाङ्मय से लेकर आज तक के साहित्य में उपलब्ध होता है। समय की माँग और कवियों की वैयक्तिक अनुभूतियों के अनुसार इसके रूपों में भिन्नता प्रतीत होने पर भी उसके मूल का संबंध आत्मा और परमात्मा से है। आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम के इस अलौकिक रूप को हम यत्रतत्र देख सकते हैं। प्रमुख रूप से प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा और रामकुमार वर्मा की कविताओं में यह द्रष्टव्य है।

स्वच्छन्दतावादी कवि प्रसाद अत्यन्त दिव्य प्रियतम रूपी परमात्मा का दर्शन करना चाहता है। वह अपनी कठिनाइयों को उल्लेख करते हुए प्रियतम से उस अलौकिक द्वार खोलने की प्रार्थना करता है, ताकि उसका दर्शन एवं मिलन हो। शीतलता का भार लेकर पश्चिमी मारुत अत्यन्त वेग से चल रहा है। कवि की आँखों में धूल लगी है और उसके पद काँटों से बिंधा हुआ है। अतः अपार दुख हो रहा है। बहुत दुःखों को सहन करके, किसी तरह भूला-भटका वह प्रियतम के द्वार तक पहुँच जाता है। कवि प्रियतम के पैरों से लिपट जाना चाहता है। रो-रोकर द्वार खोलने की प्रार्थना करता है :-

"पैरों हो से लिपटा-लिपटाकर धूँगा निज पद निर्धार,
अब तो छोड़ नहीं सकता हूँ, पाकर प्राप्य तुम्हारा द्वार।
सुप्रभात मेरा भी होवे, इस रजनी का दुख अपार,
मिट जावे जो तुमको देखूँ, खोलो प्रियतम ! खोलो द्वार।।"(1)

कवि को न जाने कितने कष्टों को सहना पड़ा और न जाने कितनी मंजिलों को पार करना पड़ा। अन्त में द्वार खुल जाता है, प्रियतम का दर्शन मिल जाता है और उसका मिलन प्रिय से हो जाता है। इस

1. प्रसाद - झरना - पृष्ठ 21 - प्रथम संस्करण - 1976, प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी।

मिलन के कारण स्वर्ग भी मेदिनी से मिल रहा है। देखिए —

"इस हमारे और प्रिय के मिलन से
स्वर्ग आकर मेदिनी से मिल रहा;
कोकिलों का स्वर विपंची नाद भी
चन्द्रिका, मलयज पवन, मकरन्द औ'
मधुप माधविका कुसुम से कुंज में
मिल रहे, सब साज मिलकर बज रहे
आज इस हृदयाब्धि में, क्या क्या कहूँ।"(1)

आज इस महा मिलन के समय संपूर्ण प्रकृति हँस रही है। तारिकाएँ नील नभ में फूल की झालर बनकर शोभती हैं। विशाल अंतरिक्ष में मधपूर्ण सौरभ से वायु मण्डल को तहें मिल रही हैं। चन्द्र अपने करों से पीयूष वर्षा कर रहा है। इस प्रकार प्राकृतिक वस्तुओं का मिलन प्रेम के अलौकिक पक्ष को पुष्ट करता है।

आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रायः अलौकिक प्रेम का कथन अप्रत्यक्ष रूप से भी हुआ है। प्रकृति प्रेम, सौन्दर्य, कल्पना के बीच इन कवियों के रहने पर भी इनके कवि हृदय में उस विराट् के प्रति अनन्य प्रेम भावना रही है। पंत के लिए प्रियतम पथ प्रदर्शक है और अत्यन्त प्रकाशमान देव है। अतः वह अपने अनन्य अलौकिक प्रियतम देव से मिलना चाहता है और उसे दर्शन को प्यास है। दर्शन-दान की कामना करते हुए कहता है —

"कहाँ दूर हो मेरे ध्रुव !
हे पथ-प्रदर्शक ! द्युतिमान !
युगों से करता यह अभियान
देव, कब दोगे दर्शन दान !"(2)

1· प्रसाद - झरना - पृ·52 । 1975 प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी
2· पंत - पल्लव - पृ· 121 VIII 1977, राजकमल प्रकाशन·

इन पंक्तियों में कवि की आत्मा उस अनन्य अलौकिक परमात्मा देव के दर्शन के लिए तड़पती है। अतः वह अत्यन्त विनम्र होकर परमात्मा रूपी देव से दर्शन की प्रार्थना करता है। कभी-कभी कवि भिखारी बनकर ईश्वर से प्रेम की भीख माँगता है। उसके द्वार पर खड़े पुकार उठता है —

"द्वार भिखारी आया है, भिक्षा दो, भिक्षा, सुन्दर !"(1)

पुकारते पुकारते उसका कण्ठ क्षीण हो जाता है। अतः प्यास बुझाने के लिए प्रेम का पानी माँगता है —

" प्यास लगी है पानी दो,
पानी दो, जीवन जलधर !
स्नेह अश्रु जल से अविरल
धो दो मेरा मल, निर्मल !
तप्त हृदय शीतल कर दो,
शीतल कर दो, आत पहर! " (2)

कवि परमात्मा से अपनी आत्मा को निर्मल बनाने की प्रार्थना करता है और उसके तपे हुए हृदय के लिए शीतलता माँगता है। यहाँ कवि का संबोधन जैसे — सुन्दर, हिमाकर, दयानिधान, आत-पहर, जीवन जलधर, परमात्मा को सूचित करते हैं।

कवि की स्थिति बहुत दयनीय हो जाती है। अब उसे थाली भर सुन्दर मणिमुक्ता की आवश्यकता नहीं है जिसकी प्रार्थना उसने आरंभ में की थी।(3) स्नेह से अब जो कुछ प्रिय से मिलता है वही तड़पती हुई आत्मा के लिए पर्याप्त है। अतः वह प्रिय से कहता है —

"किन्तु इसलिए आया है प्रिय !
वह तुमने अपनाया है,

---

1. पंत - वीणा - ग्रन्थि - पृ. 13 नवीन संस्करण 1972 - राजकमल।
2. वही - पृ. 13
3. वही - पृ. 13 ".. आये मुक्त ! शुचि मुक्ता दो,
मुक्ता दो, थाली भर-भर!

स्नेह सहित तुम जो कुछ दोगे,
वह कृतार्थ होगा सत्वर !"(1)

कवि को अब तक कुछ नहीं मिला। आत्मा के लिए परमात्मा को प्यासा है और दर्शन की चाह है। लेकिन वह अलौकिक सत्ता सदा अगोचर और अदृश्य रहती है। इसलिए आँखें मूँदकर आत्मा जब परमात्मा के गुण-गान करती है तब दर्शन मिल जाता है। अतः कवि प्रियतम का स्वागत करते हुए कहता है —

"तुम अदृश्य हो, दृग अगम्य हो,
किसे छिपाये हो छविमान !
मेरे स्वागत मेरे हृदय में
प्रियतम ! आओ, पाओ स्थान !
जब मैं अपने नयन मूँदकर करती प्रियतम के गुणगान,
तब किस पथ से आ तुम मुझको देते हो नित दर्शन दान?"(2)

दर्शन के उपरान्त कवि प्रिय से प्रार्थना करता है कि वह सदा उसके हृदय में छिपे रहे —

"अपने काले पट में मेरा
प्रिय ! लपेट मरकर म्लान
रंग रहित होकर छिप रहना
मुझको भी बतला दो प्राण !"(3)

इस प्रकार के संगम के बाद कवि प्रत्यक्ष रूप से अपने को आत्मा और प्रियतम को परमात्मा मानकर दोनों का संबंध इस प्रकार स्थापित करता है —

"बताऊँ मैं कैसे सुन्दर !

1• पंत - वीणा - ग्रंथि - पृष्ठ 20 - नवीन संस्करण 1972 - राजकमल
2• वही - पृ• 34
3• वही - पृ• 35

पद हूँ मैं तुमरो सब भाँति?
जलद हूँ मैं, यदि तुम हो स्वाति,
सुधा तुम ! यदि मैं चातक पाँति! "(1)

निराला ने प्रकृति के विभिन्न अंगों को लेकर आत्मा और परमात्मा का संबंध स्थापित किया है और प्रेम के अलौकिक रूप को व्यक्त किया है। अपने को आत्मा और ईश्वर को परमात्मा के रूप में कवि ने देखा है। इस दृष्टि से उन की कविता 'तुम और मैं' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यहाँ 'तुम' परमात्मा और 'मैं' आत्मा के प्रतीक हैं। अगर परमात्मा हिमालय-शृंग, हृदय उच्छ्वास, प्रेम, योग, प्राण, सुदृष सच्चिदानन्द ब्रह्मा, कण्ठहार, पद्य, अंबर और यश है तो आत्मा क्रमशः सुर-सरिता, कविता, शान्ति, सिद्धि, काया, मनमोहिनी माया, वेणी काल नागिनी, रेणु, दिग्वसना और प्रकृति है। कवि आगे कहते हैं —

तुम नभ हो, मैं हूँ नीलिमा,
तुम शरत-काल के बाल-इन्दु
मैं हूँ निशीथ-मधुरिमा।
तुम शिव हो मैं हूँ शक्ति
तुम रघुकुल - गौरव रामचन्द्र
मैं सीता अचला भक्ति ! "(2)

महादेवी वर्माजी ने अपने अलौकिक प्रेम की भावनाओं को प्रायः वेदनामय आँसू के द्वारा ही प्रकट किया है। इस प्रकार की भावनाएँ अन्य कवियों की अपेक्षा इनकी कविताओं में कुछ अधिक व्यक्त हैं। अपना संबंध प्रियतम से स्थापित करते हुए नवीन ढंग से अपनी अलौकिक प्रेम की भावना को इस प्रकार से व्यक्त करती हैं —

" मैं कंपन हूँ तू करुण राग
मैं आँसू हूँ तू है विषाद,

---

1. पंत - वीणा - ग्रन्थि - पृ. 36 - नवीन संस्करण 1972 - राजकमल प्रकाशन
2. निराला - परिमल । बार 1978 पृष्ठ 65 राजकमल प्रकाशन

मैं मदिरा तू उसका खुमार
मैं छाया तू उसका आधार।"(1)

प्रियतम से उनका जो मिलन हुआ वह सपना नहीं है। क्योंकि उस अलौकिक मिलन के कारण प्रकृति के फूलों में प्रियतम का हास और उनके आँसू भरे हुए हैं। देखिए —

"कैसे कहती हो सपना है
अलि ! उस मूक मिलन की बात?
भरे हुए अब तक फूलों में
मेरे आँसू उनके हास !"(2)

अन्त में प्रिय से उनका मिलन होने के बाद, प्रिय उन्हीं की आत्मा में समा जाता है।

"तुम मुझ में प्रिये ! फिर परिचय क्या।"(3)

स्वच्छन्दतावादी कवि का मिलन उस अलौकिक प्रिय से हो जाता है और इसी मिलन को वह जीवन का अन्त समझता है। अतः कोकिला से प्रार्थना करता है कि इस मिलन के गीत को जीवन पर्यन्त वह गाती रहे। देखिए —

"मैं तुम से मिल गया प्रिये
यह जीवन का अन्त
इसी मिलन का गीत कोकिले !
गा जीवन पर्यन्त !"(4)

---

1. महादेवी वर्मा - यामा - पृ. 33 - 1971 भारती भण्डार
2. वही - पृ. 3
3. नीरजा से - महादेवी वर्मा - यामा - पृ. 146 । पाँचवाँ संस्करण सन् 1971, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।
4. रामकुमार वर्मा - नभ के तारों वाले - पृ. 70 (रूपराशि से) - प्रथम संस्करण 1966, किताब महल, इलाहाबाद.

इस प्रकार प्रेम का अलौकिक रूप हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी और रामकुमार वर्मा की कविताओं में प्रमुख रूप से मिलता है। पंत की कविताओं में अत्यन्त अप्रत्यक्ष एवं सूक्ष्म ढंग से इसका रूप मिलता है। निराला, महादेवी और रामकुमार वर्माजी की कविताओं में इसका रूप प्रत्यक्ष रूप से मिलता है। क्योंकि ये तीनों कवि भारतीय आध्यात्मवाद एवं सर्वात्मवाद पर विश्वास करनेवाले हैं। समग्र रूप से प्रेम का अलौकिक रूप हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में, प्रेम के अन्य रूपों की तुलना में अपेक्षाकृत कम मात्रा में दृष्टिगत होता है।

प्रेम का उदात्त रूप :

प्रेम के उदात्त रूप का तात्पर्य उस आदर्श अर्थात् मानसिक अथवा हार्दिक प्रेम से है जिसका संबंध शरीर से नहीं है। हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों की प्रेम-भावना मानव जीवन के आदर्शों पर चलती है और जीवन के तत्वों को स्पष्ट करती है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवि प्रेयसी के लिए तड़प तड़पकर अपनी दु:खानुभूतियों को व्यक्त करके कभी आँसू बहाता है और कभी-कभी हँस-हँसकर प्रेमिका का सौन्दर्य-चित्र खींचता है। लेकिन कदापि यह प्रेम वासना का नग्न रूप धारण नहीं करता। क्योंकि बौद्धिकता के अत्यधिक आग्रह ने इस युग के प्रेम को प्लेटानिक तत्व[1] अधिक बना दिया है जो अपनी प्रकृति में न लौकिक है और न अलौकिक वरन् मात्र एक रागात्मक संबंध के रूप में हमारे सम्मुख आता है।[2] इनके प्रेम में प्रेमास्पद के प्रति अनन्यता के भाव स्पष्ट रूप से प्रकाशमान दीखते हैं। इस युग का कवि प्रेमिका के रूप, गुण, स्वभाव का वर्णन करके उसके सान्निध्य का सा अनुभव करता है, लेकिन प्रेमिका निकट नहीं रहती। इन कवियों का ध्येय विलास नहीं, बल्कि शुद्ध प्रेम है और इनके प्रेम के सामीप्य में स्नेह, सहानुभूति, सौन्दर्य आदि उन्नत भावनाओं का प्रसार मिलता है। अतः स्थूल वासनाओं से कविता को मुक्त करके, देह की दुर्बलता पर जोर न देकर हृदय का बल और

---

1. Plato's love is essentially non-Physical. It is not an absence of physical attachment, but it's sublimation -J.Fem

2. परशुराम चतुर्वेदी : हिन्दी काव्य धारा में प्रेम प्रवाह के आधार पर। साधना विशेषांक : साहित्य सन्देश - पृ॰ 13 - जुलाई - अगस्त 1968 - लेखक : डा॰ रामकृष्ण चतुर्वेदी

मन के संयम पर इन्होंने जोर दिया है। इन कवियों के लिए प्रेम ही जीवन है। आधुनिक स्वच्छन्दतावादी प्रेम परंपरागत नहीं वरन् अंग्रेजी प्रेमाख्यानों में वर्णित प्रेम की भांति स्वच्छन्द और सूक्ष्म है।(1) कुल-मिलाकर हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रेम के एक आदर्श साम्राज्य स्थापित करना चाहा और स्थापित कर दिया। रामनरेश त्रिपाठी का प्रेम वर्णन वैवाहिक जीवन के पश्चात् आरंभ होकर प्रायः विकसित होकर विश्व प्रेम में परिणत हो जाता है। पंत का ग्रन्थि वाला प्रेम वर्णन प्रथम दर्शन में आरंभ होकर अन्त में, प्रेमिका का ग्रन्थि बन्धन अन्य पुरुष के साथ हो जाने से करुण असफलता में परिवर्तित हो जाता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम का यह उदात्त रूप श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त और महादेवी वर्मा की कविताओं में प्रमुख रूप से मिलता है।

श्रीधर पाठक ने अपनी काव्य कृति 'एकान्तवासी योगी' में प्रेम को वासना के रूप में प्रदर्शित न करके मानवीय वृत्ति के सूक्ष्म स्वरूप में प्रतिष्ठित किया। इसका प्रभाव परवर्ती अनेक लघु काव्यों पर पड़ा। प्रसाद का 'प्रेम पथिक', रामनरेश त्रिपाठी का 'मिलन' और पंत की 'ग्रन्थि' इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं। रामनरेश त्रिपाठी ने अपने काव्य में सूक्ष्म प्रेम की भावनाओं को सफलतापूर्वक उद्घाटन किया। उनका वैयक्तिक प्रेम गतिशील होकर क्रमशः समाज, देश और विश्व प्रेम में परिणत हो गया है। इन्होंने अपनी कविताओं में स्वच्छन्द प्रेम की महत्ता को समय-समय पर व्यक्त किया है। इनके लिए सूक्ष्म प्रेम ही जीवन का सार है और केवल विरह ही सच्चे प्रेम को मिठास है। प्रेम के संबंध में उनके कतिपय विचार ध्यान देने योग्य हैं —

"मनुष्य के हृदय में सूक्ष्म प्रेम ही सार है।"(2)

"प्रेम अहा ! अति मधुर प्रेम का मन्दिर हृदय हमारा है।"(3)

---

1. कृष्णलाल : आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास - पृ० 64 - तृतीय संस्करण 1952, हिन्दी परिषद, विश्व विद्यालय, प्रयाग
2. आधुनिक कवि : रामनरेश त्रिपाठी - पृ० 116 - 111 - 1964 सम्मेलन
3. वही - पृ० 119

"चाहे वह नर का हो चाहे परमेश्वर का
केवल विरह रचे प्रेम की मिठास है।"[1]

इनके लिए सूक्ष्म प्रेम विचित्र वस्तु है और जगत् में एक अद्भुत शक्ति है। इन्हीं प्रेम सिद्धान्तों का प्रचार इन्होंने अपने काव्यों में किया।

प्रसाद की कविताओं में प्रायः स्वच्छन्द, सूक्ष्म प्रेम का उदात्त रूप ही उपलब्ध होता है। उनका काव्य 'प्रेम पथिक' इस दृष्टि से श्रेष्ठ है।

प्रेम पवित्र पदार्थ, न इसमें कहीं कपट की छाया हो,
इसका परिमित रूप नहीं जो व्यक्ति मात्र में बना रहे[2]

पथिक के प्रेम में वासना की गन्ध नहीं है, वरन् पवित्रता है। वह अपनी प्रेमिका चमेली से हृदय से मिलना चाहता है न कि गले लगाकर। वह चमेली से बीती बातों को भूल जाने के लिए कहता है और मन को धोकर स्वच्छ बन जाने की कामना करता है।

"आओ गले नहीं प्रस्तुत हम हृदय-हृदय से मिल जायें
जीवन पथ में सरिता होकर उस सागर तक दौड़ चलें।"
"चलो मिलें सौन्दर्य-प्रेमनिधि में"

तब कहा चमेली ने —

"जहाँ, अखण्ड शान्ति रहती है - वहाँ सदा स्वच्छन्द रहें!"[3]

इन कवियों के प्रेम का यह उदात्त रूप प्रायः विरह, वेदना और पीड़ाओं में मिलता है और उन्हीं में विकसित भी होता है। कवि सदा सर्वदा प्रियतम को याद करता रहता है। क्योंकि

---

1. आधुनिक कवि। रामनरेश त्रिपाठी - पृ. 145 - III - 1964, सम्मेलन।
2. प्रसाद - प्रेम पथिक - पृ. 22 III - 1976 - भारती भण्डार
3. वही - पृ. 32

सकल वेदना प्रियतम के स्मरण से विस्मृत हो जा ती है। अगर मानव को स्वच्छन्द प्रेम मिल जाए तो वह कभी नहीं रोता और उसे समस्त विश्व का बोध भी हो जाता है। नये-नये कौतुक दिखला-कर प्रियतम जितनी दूर भी चला जाए तो भी प्रेम का चंचल हृदय उसके निकट होता ही जाता है।

"नये-नये कौतुक दिखलाकर
जितना दूर किया चाहो
उतना ही यह दौड़-दौड़ कर
चंचल हृदय निकट होता। "(1)

प्रेमी कवि प्रियतम के पास पहुँचकर उससे आलिंगन करना नहीं चाहता वरन् मानसिक मिलन चाहता है। उसे प्रियतम के हृदय में केवल एक जगह उपलब्ध करने की लालसा है ताकि उसको सुख मिल जाए।

"यह नहीं मिलना कहता सखे
मिलन तो मन का मन से सही ...
पर मुझे निज क्षुद्र उदर में
जगह दो, उसमें सुख मैं रहूँ। "(2)

अतएव स्वच्छन्दतावादी मधुकर को फूलों का रस लेने की लिप्सा नहीं, प्रत्युत वह फूलों का केवल दर्शन चाहता है और उनसे हृदय से मिलना चाहता है। प्रियतम का प्रेम हलाहल के समान होने पर भी कवि उसे सुख से पीता है, विरह में तड़पता है। क्योंकि तड़प-तड़पकर मरने के लिए ही वह जी रहा है। प्रेम-पिपासा में पड़कर मृग भ्रम में मरीचिका की आशा में जिस प्रकार दौड़-दौड़कर थक जाता है उसी प्रकार प्रेमी का हृदय खूब भटक चुका है। अतः वह प्रियतम से निवेदन करता है —

"मेरे मरुमय जीवन के हे सुधा-स्रोत ! दिखला जाओ।
अपनी आँखों के आँसू से इसको भी नहला जाओ। "(3)

---

1. कानन कुसुम - प्रसाद - पृ. 67 VIII - सं. 2033 - भारती भण्डार
2. वही - पृ. 8। 'गंगा सागर' के माध्यम से प्रेम के उदात्त रूप को कवि ने यहाँ दिखाया है।
3. प्रसाद - झरना - पृ. 43 - । - 1976 प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी।

निराशा में आकर कवि वेदनामय शब्दों में एक मधुमय चुंबन की प्रार्थना करता है ताकि उसका मुख चुप हो जाए -

"डरो नहीं, जो तुमको मेरा उपालंभ सुनना होगा।
केवल एक तुम्हारा चुंबन इस मुख को चुप कर देगा।"(1)

निवेदन से काम न चलने पर कवि वीणा से प्रार्थना करने लगता है कि वह पंचम स्वर में बजकर इस विश्व में मधुर मधु बरसा दें और उसी वर्षा में प्रियतम का आगमन हो। इतने प्रयत्न करने पर भी कवि प्रियतम को तृप्त नहीं कर सका। सब व्यर्थ हो गया है। निर्दय न होकर दया की दृष्टि डालने की प्रार्थना प्रियतम से पुनः करता है और विरह में तपे हुए प्रेमी की हालत को सोच लेने का निवेदन करता है। केवल निराश होकर अन्त में प्रियतम से जैसा मन में आवे वैसा कर देने का अनुनय विनय करता है —

"तो क्या क्षुब्ध न होगे तुम — यह सोच लो,
फिर, जैसा मन में आवे वैसा करो।"(2)

कवि का हृदय अत्यन्त क्षुब्ध हो उठा है। उनके मन में न जाने कितनी बीती स्मृतियाँ हैं। आशा-निराशा, मिलन-विरह, वेदना और पीड़ा, सुख और दुख — सब एक रूप में एकत्रित होकर अब आँसू के रूप में बह रहे हैं। 'आँसू' कवि की वैयक्तिक अनुभूतियों का सुन्दर प्रकाशन है। वेदना की अति के कारण 'आँसू' पर अलौकिकता का आक्षेप लगाये जाने पर भी उसका आलम्बन लौकिक ही है। इसका आलम्बन केवल छाया संकेतों के द्वारा ही प्रकट हुआ है। प्रियतम सामने प्रस्तुत न होकर केवल आभास मात्र देता है। अतः आँसू का प्रेम अशरीरी है। आँसूकार ने आदर्श प्रेम की ही कल्पना की है जो अपनी प्रकृति में न अलौकिक और न लौकिक। इसके मूल में लौकिक प्रवृत्ति के रहते हुए भी विरह की स्मृतियों के रंग में प्रेम का उदात्तीकरण कर दिया गया है। कवि की अन्तर्मुखी दुखानुभूतियों की

---

1. प्रसाद - झरना - पृ. 43 - । - 1976 प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी - ।
2. वही - पृ. 35

प्रधानता ने शारीरिक प्रेम को मानसिक प्रेम में उन्नयन कर दिया है। कवि प्रसाद के लिए प्रेम की सच्ची प्रकृति आत्म समर्पण है। अतः उन्होंने प्रेम के लौकिक रूप को वासना के नग्न रूप में हमारे सम्मुख प्रस्तुत नहीं किया। क्योंकि प्रेम को प्रकट कर देने से उसका मूल्य समाप्त हो जाता है। उनके जीवन में एक मधुर स्वप्न और मनोहर कल्पना रही है, जिसे उन्होंने आजीवन संजोने का प्रयत्न किया है। उस प्रीति की पवित्रता को प्रसाद ने जीवन का सर्वस्व समर्पित कर जीवित रखा था। अतः वे नीरव प्रेम के उपासक रहे।[1] अतएव नीरव प्रेम-पीड़ा उनके आँसू में स्पष्ट रूप से दिखायी देती है।

कवि के हृदय में स्मृतियों की एक बस्ती रही है जिसमें वेदना की पीड़ा भी रही और मधुर प्रेम की पीड़ा भी। प्रियतम अपने शशि मुख पर घूँघट डालकर, अंचल में दीप छिपाते हुए कौतूहल से आया। आकर उसने कवि के मन के सब रसों को पी लिया है। कवि को त्याग कर चला गया है।

"लहरों में प्यास भरी है
है भँवर पात्र भी खाली
मानस का सब रस पीकर
लुढ़का दी तुमने प्याली।"[2]

हृदय रूपी प्रेम की प्याली को लुढ़का देने से हिमशीतल प्रणय अनल बनकर विरह में जल रहा है। उस विरह विष को भी कवि पी लेता है। पीने के बाद वही विष नयनों में मदिरा बन जाता है —

"विष प्याली जो पी ली थी वह मदिरा बनी नयन में
सौन्दर्य पलक प्याले का अब प्रेम बना जीवन में।"[3]

---

1. प्रेम शंकर - प्रसाद का काव्य - पृ. 40 । सं. 2012 वि. भारती भण्डार.
2. प्रसाद - आँसू - पृ. 28 - 1 - 1976 प्रसाद प्रकाशन - अध्ययन संस्करण
3. वही - पृ. 32

प्रेम का यह रंग हृदय में ऐसा रंग गया है जिसे छुड़वाने पर भी छूटता नहीं है। अतः कवि अपने प्रियतम को संबोधित करके कहते हैं —

" मेरी अनामिका संगिनि ! सुन्दर कठोर कोमलते !
हम दोनों रहे सखा ही जीवन-पथ चलते चलते। "(1)

और अन्त में आदर्श प्रेम के मंच पर मानव जीवन के विरह मिलन के परिणय की कामना कवि इस प्रकार करता है —

" मानव जीवन वेदी पर परिणय हो विरह मिलन का
दुख सुख दोनों नाचेंगे है खेल आँख का मन का। "(2)

कुलमिलाकर 'आँसू' आदर्श प्रेम के देवता पर की गयी अर्चना है।

'ग्रन्थि' में आदर्श एवं स्वच्छन्द प्रेम की स्थापना की गयी है। स्वच्छन्द प्रेम की व्याख्या प्रस्तुत करते हुए पंतजी कहते हैं कि निश्चित होकर अचानक अपने हृदय को, प्रेम से, प्रियतम को जो अर्पण करता है वही सच्चे रूप में प्रेमी है। देखिए —

" बस, बिना सोचे, अचानक, प्रेम को
हृदय जिसने हो न अर्पण कर सका;
प्रेम ही का नाम जप, जिसने नहीं
रात्रि के पल हों गिने, प्रतिशब्द से
चौंककर, उत्सुक नयन जिसने उधर
हो न देखा, - प्यार क्या उसने किया? "(3)

कवि के लिए प्रेम भोला भाव है, चपल और अज्ञान है। वह हृदय को छीनकर किसी अपरिचित के हाथों में सौंप देता है। इस प्रकार सौंप देने के कारण प्रेमी को प्रेम से वंचित होना पड़ता है।

---

1. प्रसाद : 'आँसू' अध्ययन संस्करण - पृ. 69, 1-1976 - प्रसाद मन्दिर प्रकाशन, वाराणसी
2 वही - पृ. 46
3. पंत - वीणा - ग्रन्थि - पृ. 119 नवीन संस्करण 1972, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-6

उसको कहीं भी आश्रय नहीं मिलता। सिर्फ वेदना और पीड़ा मिलती हैं। उसका हृदय रो उठता है। रो-रोकर कंगाल बन जाता है। अतः प्रेमी असफल होकर निराशावान बन जाता है। प्रकृति को वेदनामय शब्दों में इस प्रकार आदेश देता है –

"शैवलिनि ! जाओ, मिलो तुम सिन्धु से,
अनिल ! आलिंगन करो तुम गगन को,
चन्द्रिके ! चूमो तरंगों के अधर,
उडुगणो ! गाओ, पवन वीणा बजा!"(1)

'ग्रन्थि' में कवि ने प्रेम-कथा को दुखात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। अतः विरह में प्रेम का उदात्त रूप मिलता है। प्रायः स्वच्छन्दतावादी कवियों के इस प्रकार का प्रेम विरह में ही खूब मुखर उठा है। इस प्रेम में नारी के सौन्दर्यांकन के कारण लौकिकता का आभास रहते हुए भी वासना का नग्न रूप यहाँ नहीं है। मानसिक प्रेम का स्पष्टीकरण इस कृति में हुआ है। अतः ग्रन्थि में प्रेम का उदात्त अर्थात् आदर्श रूप मिलता है। कवि पंत अन्यत्र भी मानव के मनोरंजन के लिए नवीन स्फूर्ति, नवीन उन्मेष, नवीन हाव-भावों की मानसी प्रतिमाएँ गढ़ना चाहते हैं। मनुष्य की रुचि को मार्जित कर उसे आदर्श सौन्दर्य, आदर्श प्रेम सिखाना चाहते हैं।(2)

स्वच्छन्दतावादी कवि सिर्फ प्रिया को देखना चाहता है। वह प्रिया को देखता रहता है। कवि की चितवन थकी हुई है। दग्ध हृदय के अगणित व्याकुल भावों को कवि की मौन दृष्टि की भाषा ही व्यक्त करती है। वियोग की ज्वाला में तप-तपकर कवि का हृदय उज्ज्वल हो गया है। कठिन साधना के फलस्वरूप उसका प्रणय पावन हो गया है। यहाँ तक कि उनके नयनों में अश्रु भी नहीं आते। केवल उनकी मौन दृष्टि ही, चिर निर्मल अन्तस्थ भावनाओं को व्यक्त करती है। देखिए –

"मैं न कभी कुछ कहता,
बस, तुम्हें देखता रहता !

---

1. पंत – वीणा – ग्रन्थि – पृ. 127 – नवीन संस्करण 1972, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली-6
2. पंत – ज्योत्स्ना – पृ. 28 – चतुर्थ आवृत्ति 1978 – राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2

तप-वियोग की चिर ज्वाला से
कितना उज्ज्वल हुआ हृदय यह,
पिष्ट कठिन साधना-शिला से
कितना पावन हुआ प्रणय यह, "(1)

कवि की मौन दृष्टि से प्रभावित होकर कवि की प्रिया बारंबार अपनी करुणा की किरणों से उसके क्षुब्ध हृदय को पुलकित कर देती है। कभी कभी कवि के मन में प्रविष्ट होकर निरन्तर व्यथाओं को बढ़ाती है। इतना होने पर भी अन्त में प्रिया कवि के जीवन में नव प्रभात भर देती है।

" भर देते हो
बार-बार प्रिय, करुणा की किरणों से
क्षुब्ध हृदय को पुलकित कर देते हो।
कुसुम-कपोलों पर वे लोल शिशिर-कण,
तुम किरणों से अश्रु पोंछ लेते हो,
नव प्रभात जीवन में भर देते हो। "(2)

आधुनिक हिन्दी काव्य-क्षेत्र में महादेवी वर्मा वेदना और पीड़ा के प्रतीक हैं। उनका प्रेम भी इन्हीं से फलवित होता है। दुःखात्मक पीड़ा अत्यन्त अधिक मात्रा में होने के कारण उनकी प्रेम-भावनाओं में प्रायः प्रेम का उदात्त रूप ही मिलता है।

इधर कवयित्री मतवाली खड़ी रहती है, लेकिन इनका प्रियतम अलबेला-सा उधर खड़ा रहता है। इनकी आँखों में ढलकर प्रिय की छवि मोती की तरह उजली बन गयी है। मन-ख्यालों में इनकी परछाई विद्युत की तरह है। प्रिय के दीप नभ में है, पर इनका स्नेह प्रिय में ही जलता है। कवयित्री का कथन है कि उनके मधुबन की कलियों में प्रिय का स्मित लुटता रहता है और उनके मन की मादकता

1. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' - परिमल - पृ. 49-50 - प्रिया से - प्रथम बार प्रकाशित 1978
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली-2

2. वही पृष्ठ : 91

प्रिय की मधुशाला में बिकती जा रही है। अतएव वह अलि को संबोधित करके अपने सूक्ष्म पवित्र प्रेम को इस प्रकार व्यक्त करती हैं —

"मुझे न जाना अलि ! उसने
जाना इन आँखों का पानी,
मैंने देखा उसे नहीं
पदध्वनि है केवल पहचानी,
मेरे मानस में उसकी स्मृति
भी तो विस्मृति बन आती,
उसके नीरव मन्दिर में
काया भी छाया हो जाती,
क्यों यह निर्मम खेल सजनि ! उसने मुझ से खेलाता है?"(1)

प्रियतम इनके सामने न आने पर भी अपनी काल्पनिक वैयक्तिक अनुभूतियों के द्वारा कवयित्री उनकी पदध्वनि को पहिचानकर अपनी सूक्ष्म मानसिक प्रेम की भावनाओं को व्यक्त करती हैं। प्रिय को न देखने पर भी उनमें प्रिय समा गये हैं। अतएव मन के आन्तरिक मंच में ही प्रेम का व्यापार चलता है। इस व्यापार में उनका निर्मम दर्पण टूट जाता है। इस दर्पण के परदे में ही कवयित्री और उनका प्रिय आँख-मिचौनी का खेल खेला करते थे। दर्पण के टूट जाने से कवयित्री स्वयं अपनापन खो बैठती है —

आज कहाँ मेरा अपनापन,
तेरे छिपने का अवगुण्ठन,
मेरा बन्धन तेरा साधन,
तुम मुझमें अपना सुख देखो
मैं तुम में अपना दुख प्रियतम। "(2)

---

1. नीरजा से - महादेवी वर्मा - यामा - पृ. 163 - पाँचवाँ संस्करण 1971, भारती भण्डार, लीडर प्रेस
2. वही - पृ. 172

इस प्रकार महादेवी वर्मा की कविताओं में प्रेम का यह उदात्त रूप प्रचुर मात्रा में मिलता है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि विकासकालीन स्वच्छन्दतावादी कवियों में प्रेम का यह उदात्त रूप ही मुख्यतया मिलता है। इसका श्रेय प्रसाद को ही दिया जा सकता है क्योंकि इनकी समस्त कृतियों में इस प्रकार के आदर्श मानसिक प्रेम की भावनाएँ, प्रेम में आत्म-समर्पण की भावनाएँ[1] मिलती हैं। इनके स्वच्छन्द प्रेम में तन का विलास नहीं, वरन् मन की स्वच्छन्दता उपलब्ध होती है। क्योंकि,

"जिसने अनुभव किया प्रेम की पीड़ा का आनन्द।
उनसे बढ़ है कौन जगत् में सुखी और स्वच्छन्द॥"[2]

प्रेम का लौकिक रूप :

लौकिक प्रेम का तात्पर्य उस साधारण शारीरिक प्रेम से है जिसमें काम-वासना का नग्न रूप मिलता है। स्वच्छन्दतावादी कवि ने संयोग की स्थिति में जो लौकिक सुख का अनुभव किया था, उसका स्मरण वह विरह में करता है। इस प्रकार के प्रेम में प्रिय-प्रिया के शारीरिक आदान-प्रदान का उल्लेख मिलता है। वासना से मुक्त हुए बिना परंपरागत काम की भावनाओं एवं चेष्टाओं का

1·(i) 'पागल रे! वह मिलता है कब
उसको तो देते ही हैं सब' ... लहर ·· पृ· 36 VII सं· 2021, भारती भण्डार·

(ii) देवसेना स्कन्दगुप्त से कहती है — 'नाथ! मैं आपकी ही हूँ, मैंने अपने को दे दिया है, अब उसके बदले कुछ लिया नहीं चाहती।' XVआवृत्ति सं· 2021 ·· प्रसाद – स्कन्दगुप्त ·V अंक पृ· 135 – भारती भण्डार

(iii) 'इस अर्पण में कुछ और नहीं केवल उत्सर्ग छलकता है,
मैं दे दूँ और न फिर कुछ लूँ इतना ही सरल झलकता है।'
·· लज्जा सर्ग, 'कामायनी' पृ· 113, 13 वीं· आवृत्ति सं· 2024 भारती भण्डार

2· रामनरेश त्रिपाठी – मिलन से – आधुनिक कवि – पृ· 18, 19 III 1964 – सम्मेलन, प्रयाग

वर्णन कवियों ने किया है। विरह में सुख-स्यारा, मन की उमंग झर जाती है। असह्य पीड़ा देकर प्रिया चली जाती है। प्रिया के समीप रहने पर शीतलता मिलती है, दूर होने पर तन में ज्वाला धधक उठती है। अतः कवि मोती हुई लौकिक प्रेम की चेष्टाओं का वर्णन इस प्रकार करता है।

"किन्तु दूसरे ही क्षण उसकी नीरवता से व्याकुल होकर
अपने अधर रख दिये मैंने उसके अरुण वर्ण अधरों पर
चौंक उठी वह, किन्तु जानकर मेरी व्याकुलता का कारण
विद्युत् सी खिल-खिला पड़ी वह हाय ! भूलता नहीं एक क्षण।"(1)

विरह में ही सच्चा प्रेम पलता है और यही उसका अन्तिम गुण भी है। प्रसाद कृत 'आँसू' में प्रेम का आदर्श रूप प्रमुख रूप से मिलने पर भी कहीं कहीं लौकिकता का रूप भी मिलता है। प्रियतम के सम्मुख न आने पर भी 'आँसू' कवि की वैयक्तिक प्रेमानुभूतियों का विरह काव्य है। अतः कवि इसमें छिप न सका और यत्र तत्र उनकी लौकिक प्रेम की भावनाएँ स्पष्ट रूप से, परंतु सांकेतमयी भाषा में व्यक्त हुई हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

"शीतल ज्वाला जलती है ईंधन होता दृग जल का
यह व्यर्थ सांस चल चलकर करती है काम अनिल का।
परिरंभ कुंभ की मदिरा निश्वास मलय के झोंके
मुखचन्द्र चांदनी जल से मैं उठता था मुँह धोके।
तेरे आलिंगन कोमल मृदु अमर-बेलि सा फैले
धमनी के इस बन्धन में जीवन ही हो न अकेले।"(2)

'आँसू' काव्य के मूल में लौकिकता है, विरह में वह मानसिक बन गयी है और वेदना, पीड़ाओं की अति से कहीं-कहीं वही अलौकिकता का रूप भी धारण कर गया है।

---

1. 'आधुनिक कवि' - राम नरेश त्रिपाठी, पृ० 26 - III संस्करण - सन् 1964 - हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

2. 'आँसू' अष्टम संस्करण - पृ० 10, 27, 73 : 1976 - प्रसाद प्रकाशन

प्रसाद की 'कामायनी' में प्रेम का लौकिक रूप सर्वमान्य मिलता है। चिन्ता के उपरान्त मानव के मन में आशा उठती है, श्रद्धा का आगमन होता है। अतः काम की वह मूल शक्ति उठ खड़ी होती है।

वह मूल शक्ति उठ खड़ी हुई अपने आलस का त्याग किये,
परमाणु बाल सब दौड़ पड़े जिसका सुन्दर अनुराग लिये।(1)

ईस की भावनाएँ उत्पन्न होते ही मन में वासना की चिनगारियाँ छूटने लगती हैं और उसकी ज्वालाएँ धधकने लगती हैं। अतः मनु और श्रद्धा का मिलन तन-मन से हो जाता है।

गिर रहीं पलकें, झुकी थी नासिका की नोक,
भ्रू लता थी कान तक चढ़ती रही बेरोक।
स्पर्श करने लगी लज्जा ललित कर्ण कपोल
खिला पुलक कदंब सा था भरा गद्गद् बोल।(2)

यहाँ प्रेम के लौकिक रूप को संकेतों से ऐसा कवि ने व्यक्त किया है ताकि उसमें अश्लीलता न आ जाए। नारी ने अपना सब कुछ खो दिया, अपने को अर्पण कर दिया। अतः प्रेम की सच्ची प्रकृति पुष्पित हुई। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि दूसरी पंक्तियों में भी प्रेम के संकेतमय यह लौकिक रूप आदर्श बन गया है।(3)

प्रियतम और प्रियतमा की उत्सुकता पूर्ण दृष्टियाँ एक दूसरे से मिलती हैं। नायक विह्वल होकर नायिका को आलिंगन-पाश में बाँध लेता है और दोनों के मुख झुक जाते हैं। अधर पर मधुर अधर धरकर चुंबन की वर्षा होने लगती है। देखिए —

तुम मदिरा अधर पर मधुर अधर
धरते, झरते हिम-कण झुर झुर-

1. कामायनी - पृ 80, काम सर्ग से 13 वीं आवृत्ति - सं 2024 वि. भारती भण्डार
2. वही - पृ. 102 वासना सर्ग
3. वही - पृ. 102 वासना सर्ग की अन्तिम पंक्तियाँ

मोती के चुंबन से चूकर
मृदु मुकुलों के सस्मित मुख पर।"(1)

इस प्रकार कभी कभी विकासकालीन स्वच्छन्दतावादी कवियों की कविताओं में प्रेम का रूप वासना के नग्न रूप में मिलता है। अन्य स्थल पर भी कवि का हृदय लौकिकता के मद में आकर मधुवन की नायिका के प्रत्येक अंग से नायक के अंग को मिलाना चाहता है। क्योंकि नायिका की देह में पुलक, उरों में भार, भ्रुवों में भंग, दृगों में बाण, अधरों में अमृत, हृदय में प्यार, गिरा में लाज और उसके प्रणय में मान है। नायिका के सौन्दर्य से मुग्ध होकर नायक तन-मन से उससे समा जाता है।

मिले अधरों से अधर समान,
नयन से नयन, गात से गात,
पुलक से पुलक, प्राण से प्राण,
भुजों से भुज कटि से कटि शात।(2)

प्रकृति के दिन-रात, जल-पृथ्वी का सौन्दर्य भिन्न-भिन्न होने पर भी उनका बन्धन स्वर्गीय है। प्रेम में जाति-पाति की बात नहीं रहती। प्रिय और प्रेयसी दोनों भिन्न वर्ग, भिन्न जाति, भिन्न रूप के होने पर भी एक दूसरे से प्रेम कर सकते थे। अतः प्राणों से वे एक हो गये। एक दिन मधुर प्रभात के समय प्रिय, प्रेयसी के गृह द्वार पर आया, हाथ बढ़ाकर निमंत्रण दिया और प्रेयसी गुरुजनों से मुक्त होकर, प्रिया के साथ चल पड़ी। दोनों सामाजिक बन्धनों से अवश्य मुक्त हो गये, परन्तु लौकिक प्रेम के द्वार पर बाहुओं के बन्धन से मुक्त नहीं हुए। देखिए —

रूप के द्वार पर
मोह की माधुरी

---

1. मधुवन से - गुंजन - पंत - पृ. 61 दशम संस्करण सं. 2018, भारती भण्डार
2. पंत - ज्योत्स्ना - पृ. 27 - चतुर्थ आवृत्ति 1978 - राजकमल प्रकाशन

कितने हो बार पी मूर्छित हुए हों, प्रिय,
जागती मैं रही,
गह बाँह, बाँह में भर सँभाला तुम्हें।[1]

इसी प्रकार अन्य स्थलों पर कवि ने मानव के लौकिक प्रेम की प्रवृत्तियों को प्रकृति के सुकोमल अंगों के द्वारा प्रकट किया है। कवि ने जुही की कली को नायिका और मलयानिल पवन को नायक के रूप में वर्णन करके प्रेम के लौकिक रूप को व्यक्त किया है। स्नेह-स्वप्न-मग्न-अमल-कोमल-तनु तरुणी सुहाग भरी जुही की कली विजन-वन-वल्लरी पर दृग बन्द किये शिथिल पत्रांक में सोती थी। वासन्ती निशा के होने पर भी नायक मलयानिल पवन उसके पास नहीं रहा। उधर पवन को मिलन की याद आ गयी। अतः वह उपवन, कुंज, लता, पुंजों को पारकर केलि-क्रीड़ा करने के लिए अपनी प्रिया के पास आ पहुँचा। निद्रावस्था में कली पवन के आगमन को जान न सकी। नायक पवन ने कली के सुकोमल कपोलों को चूमा। फिर भी वह जागी नहीं। अतः नायक को निर्दयपूर्ण व्यवहार करना पड़ा। उस व्यवहार को देखिए —

निर्दय उस नायक ने
निपट निठुराई की
कि झोंकों की झड़ियों से
सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,
मसल दिये गोरे कपोल गोल,
चौंक पड़ी युवती —
चकित चितवन निज चारों ओर फेर
हेर प्यारे को सेज - पास,
नम्र मुख हँसी - खिली,
खेल रंग प्यारे संग।[2]

---

1 निराला - अनामिका - पृ० 9 V। 1979, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
2 निराला - परिमल - पृ० 144 - । - 1978 - राजकमल प्रकाशन

कपोलों को चूमना, गौर कपोलों को मसलना आदि मानवीय प्रेम की भावनाओं को प्रकृति के अंगों पर आरोपित करके कवि ने स्पष्ट रूप से प्रेम के लौकिक पक्ष को प्रमाणित किया है। इनकी अन्य कविता 'शेफालिका'(1) में भी इस प्रकार के प्रेम को देखा जा सकता है।

अद्यतन हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवि अभिलाषा की भावुकता से प्रिया की छवि को मोल करना चाहता है। सुख का आदान-प्रदान करना चाहता है। प्रिया को एक खिलौना बनाकर उससे जी भरकर सुख से खेलना चाहता है। पल-भर जीवन में हँस-हँसकर सुख पाना चाहता है।

पल भर जीवन - फिर सूनापन
पल-भर तो लो हँस-बोल प्रिये !
कर लो निज प्यारे अधरों से
प्यारे अधरों का मोल प्रिये।(2)

तन सिहर रहा है, मन व्याकुल हो रहा है। अतः यौवन की मधुशाला में कवि अपने प्रेम की प्यास को बुझाना चाहता है।

यौवन की इस मधुशाला में है प्यासों का ही स्थान प्रिये !
फिर किसका भय? उन्मत्त बनो है प्यास यहाँ वरदान प्रिये।(3)

आज का कवि पौराणिक पात्रों को लेकर अपने काव्य में प्रेम के लौकिक रूप को दिखाता है। उनके लिए निष्काम काम-सुख स्वर्गीय पुलक है। उनकी नायिका अधरों का चुंबन पाने और फूलों की छाँह तले अपने अधरों को सुधा, नायक को पिलाने के लिए स्वर्ग से पृथ्वी तक आ पहुँचती है। यहाँ प्रेम का लौकिक रूप वासना का नग्न रूप धारण कर लेता है। नायक के गाढ़ालिंगन में कसी हुई

---

1. निराला - परिमल - पृ. 146 - 1 - 1978 राजकमल प्रकाशन
2. प्रेम संगीत से - भगवतीचरण वर्मा - त्रिपथगा के फूल - पृ. 133 - साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद
3. वही - पृ. 133

नायिका की प्रार्थना इस प्रकार है —

"कसे रहो, बस, इसी भाँति, उत्-पीड़क आलिंगन में
और जलाते रहो अधर-पुट को कठोर चुंबन से !
किन्तु, आह ! यों नहीं, तनिक तो शिथिल करो बाँहों को;
निष्पेषित मत करो, यदपि, इस मधु-निष्पेषण में भी।"(1)

आधुनिक नव-स्वच्छन्दतावादी कवियों की कविताओं में प्रेम का यह लौकिक रूप ही प्रमुख रूप से मिलता है। संयोग और वियोग में यही रूप उनको भाया है। संयोग में आलिंगन बद्ध प्रिया के अधरों का पान करता है और वियोग में उसी लौकिक भावनाओं की मधुर याद करने लगता है। अद्यतन कवि की नायिका अपनी प्रेममयी भावनाओं को स्वयं नायक से व्यक्त करती है। बुलबुल बनकर, सुनहले सुख के गीत नायक के प्रति गाती है। नायक, नायिका को अपनी ओर खींचकर, अपनी बाहों में कसकर, मधुर अधरों पर अधर धरते हुए चुंबन की वर्षा बहाने लगता है। क्योंकि कवि का कथन है —

"प्रेमियों को बाँधने में बाहु बन्धन-सा न कोई
और दृढ़ बन्धन, सुनो नादान !
प्रेम की सौ प्रतिज्ञाएँ - प्रेम - चुंबन-सा
न कोई और सच्चा वचन — ऐसा जान।"(2)

प्रेम का रूप अलौकिक हो अथवा लौकिक, उसका परिहास नहीं होना चाहिए। क्योंकि प्रेम नयनों में भरा हुआ उत्साह, और उस में उत्पन्न एक पुलकित चाह है। उपर्युक्त प्रमुख दृष्टान्तों से विदित होता है कि स्वच्छन्दतावादी काव्य के उद्भव एवं विकास काल में प्रेम का आदर्श रूप और अलौकिक रूप भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है। लेकिन स्वच्छन्दतावादी काव्य के अद्यतन काल का प्रेम लौकिक है।

1· दिनकर - उर्वशी - पृ· 62 तृतीय अंक V 1973 उदयाचल प्रकाशन
2· नरेन्द्र शर्मा - मनोकामिनी - पृ· 12 - प्रथम संस्करण 1978 - नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

सौन्दर्य :— स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य का महत्वपूर्ण स्थान है। सौन्दर्य को कविता में स्पष्ट करना स्वच्छन्दतावादी कवियों का महान धर्म सा है। स्वच्छन्दतावादी कवि की आन्तरिक अनुभूतियाँ विकसित होकर प्रकृति और नारी में सौन्दर्य के रूप में अभिव्यक्त हुई हैं। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रमुख रूप से दो प्रकार के सौन्दर्य मिलते हैं। एक प्राकृतिक सौन्दर्य, और दूसरा नारी का सौन्दर्य। प्राकृतिक सौन्दर्य दुर्जेय है और नारी का सौन्दर्य विजित है। दोनों ईश्वर प्रदत्त होने पर भी एक अविनश्वर है और उसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। दूसरा नश्वर है, फिर भी कवियों ने उस नश्वर नारी के सौन्दर्य को अनश्वर कविताओं में वर्णन करके उसकी महत्ता को घोषित किया है। सौन्दर्य के इन दोनों रूपों का विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है।

प्राकृतिक सौन्दर्य :— अन्यत्र उल्लिखित प्रकृति के स्वतंत्र चित्रों में प्राकृतिक सौन्दर्य निहित है। लेकिन प्रबन्ध काव्यों में उपलब्ध प्रकृति चित्रणों में, उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। प्रकृति के विभिन्न अंगों के सम्मिलित रूप को प्राकृतिक सौन्दर्य कहा जा सकता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रायः प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रेरणा ली है। प्रकृति इन कवियों की जीवन संगिनी बनकर इनके साथ सदा रही है। श्रीधर पाठक स्वयं प्रकृति के पुजारी थे। साधारण शब्दों में प्रकृति के गंभीर चित्र खींचने में पाठकजी अत्यन्त कुशल प्रतीत होते हैं। उनके लिए प्रकृति का मुख शान्त है। सन्ध्याकालीन वर्णन में 'रजनी का उदय, बाल शशि का आना' जैसे संश्लिष्ट चित्र सुन्दर बन पड़े हैं। देखिए :

"विजन वन प्रान्त था, प्रकृति मुख शान्त था
अटन का समय था रजनी का उदय था
प्रसव के काल की लालिमा में लसा
बाल शशि व्योम की ओर था आ रहा।"(1)

---

1. श्रीधर पाठक – सान्ध्य अटन

सन्• 1920 में राम नरेश त्रिपाठी दक्षिण के रामेश्वरम् की यात्रा पर गये थे। समुद्र को पहले-पहल वहीं उन्होंने देखा था। उस समय उनको इतना हर्ष हुआ कि समुद्र के तट में दोनों पैर डालकर एक शिला पर विमुग्ध सा होकर बहुत देर तक बैठे बैठे समुद्र को अत्यन्त गंभीरता पूर्वक देख रहे थे। इसी से प्रेरणा लेकर उन्होंने जो कविता लिखी, उन्हें पथिक के पहले सर्ग में स्थान दिया था।[1] तमिलनाडु के रामेश्वरम् के समुद्र का वर्णन देखिए —

"प्रतिक्षण नूतन वेष बनाकर रंग-बिरंग निराला।
रवि के सम्मुख थिरक रही है नभ में वारिदमाला।।
नीचे नील समुद्र मनोहर, ऊपर नील गगन है।
घन पर बैठ बीच में विचरूँ यही चाहता मन है।"[2]

भक्तजी प्रकृति के साथ सदा क्रीड़ा करना चाहते थे। प्रकृति से इनका जन्मजात स्नेह था। निरन्तर वे हरे भरे खेतों की छटा देखकर जी हल्का किया करते थे। कुलमिलाकर प्रकृति की पाठशाला में वे जीवन का पाठ पढ़ते थे।[3] प्रकृति इनकी सहचरी रही। अगर जीवन अभिनय में प्रकृति अभिनेत्री रही तो ये अभिनेता रहे। इन्होंने प्रकृति के प्रत्येक अंग को भावाविष्ट बना दिया है। प्रकृति को इन्होंने नारी के रूप में भी देखा है। 'सन्ध्याभिसारिका' का एक रंगीन चित्र इस दृष्टि से उल्लेखनीय है —

"है सन्ध्या नाची झूम रही,
अब तक करती नभ लाली है।
कुंग ममा के पग लूनी के,
छिप करके कहीं चढ़ा ली है।"[4]

1• आधुनिक कवि : रामनरेश त्रिपाठी : पृ 11, III - 1964, सम्मेलन प्रकाशन
2•"आधुनिक कवि - रामनरेश त्रिपाठी - पृ•74 - III 1964 - सम्मेलन प्रयाग
3• आधुनिक कवि - गुरुभक्त सिंह 'भक्त' - पृष्ठ 3 प्रथम संस्करण सन्• 1967, सम्मेलन
4• वही - पृ•93 'नूरजहाँ' काव्य से•

प्राकृतिक सौन्दर्य के आधार पर, आधुनिक काव्य-क्षेत्र में गुप्तजी और हरिऔध की कृतियों में भी स्वाभाविक रूप से स्वच्छन्दतावाद की प्रवृत्तियाँ उपलब्ध होती हैं। इनकी प्रकृति संबंधित प्रवृत्तियाँ स्वच्छन्दता की ओर मुड़ती प्रतीत होती हैं। इस दृष्टि से 'पंचवटी', 'प्रिय प्रवास' और 'वैदेही वनवास' उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। वर्णन परंपरागत प्रतीत होने पर भी एक प्रकार की नवीनता का आभास मिलता है। 'पंचवटी' का श्रीगणेश प्राकृतिक धरातल पर हुआ है जैसे जल और थल में चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं, अवनि और अम्बरतल में स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है। पंचवटी की गोदावरी नदी का तट भी ताल दे रहा है। देखिए —

"चारु चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल-थल में,
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है अवनि और अंबरतल में।

× × ×

गोदावरी नदी का तट यह ताल दे रहा है अब भी,
चंचल-जल कल-कल कर मानो तान दे रहा है अब भी!"(1)

निःसन्देह इस प्रकार का प्राकृतिक सौन्दर्य स्वच्छन्दतावादी गुणों से युक्त है।

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रायः अपनी काव्य कृति का शुभारंभ प्रकृति वर्णन से किया है। प्रेम पथिक 'सन्ध्या की, हेमाभ तपन की किरणें' से(2) और 'कानन कुसुम' 'सान्ध्य नीलिमा'(3) से आरंभ हुए हैं। प्रसाद जैसे गंभीर कवि के लिए प्रकृति भी सदा गंभीर प्रतीत होती थी। प्रकृति की बड़ी गोद में बैठकर प्रसाद सदा उसके समग्र सौन्दर्य को निरीक्षण किया करते थे। प्रकृति की समस्त वस्तुएँ जैसे आकाश, नीरव, सन्ध्या, प्रभात, चपला, रजनी उनको हमेशा आकर्षित करती रहीं। प्रकृति के

---

1. मैथिली शरण गुप्त - 'पंचवटी' - पृ. 5, 13 - इक्कतरवाँ संस्करण - सं. 2035
साहित्य सदन चिरगाँव - झाँसी
2. प्रसाद - प्रेम पथिक - VIII 1976 पृष्ठ 7 - भारती भण्डार
3. प्रसाद - कानन कुसुम - पृ. 11 - 1979 - प्रसाद मन्दिर प्रकाशन.

कण कण को वे सजीव देखा करते थे। हरे भरे विटप डालो के मकरन्द मय कुसुम, उनको मद से पूर्ण कामिनी के नेत्र प्रतीत होते थे।[1]

"आकाश श्री-सम्पन्न था, नव नीरदों से था घिरा
सन्ध्या मनोहर खेलती थी, नील पट तम का गिरा
यह चंचला चपला दिखाती थी कभी अपनी कला
ज्यों वीर वारिद की प्रभामय रत्नावली मेखला।"[2]

प्रकृति कवि की वेदना में भी साथ दिया करती थी। कवि अपने सुख-दुख, आशा-निराशा विरह-मिलन, जीवन-मृत्यु में भी प्रकृति के अंगों को याद किया करते थे। प्रियतम के विरह में उनको अंबर के तारों को गिनना पड़ता था। तड़पते हुए हृदय में भी प्रकृति के प्रति उनका क्या अनुराग रहा, स्वयं निम्नलिखित पंक्तियाँ व्यक्त करती हैं --

"जब नील निशा अंचल में हिमकर थक सो जाते हैं
अस्ताचल की घाटी में दिनकर भी खो जाते हैं।
नक्षत्र डूब जाते हैं स्वर्गङ्गा की धारा में
बिजली बन्दी होती जब कादम्बिनी की कारा में।"[3]

कवि प्रसाद ने प्रकृति के प्रायः सभी अंगों को प्रतीकों के रूप में 'आँसू' काव्य में स्थान दिया है। लगता है कि इससे विरह में भी एक प्रकार से प्रकृति की सुन्दरता आ गयी है।

स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में यद्यपि प्रकृति के अनुरंजनकारी रूप ही प्रमुख रूप से मिलते हैं, तथापि अल्प संख्यक होते हुए भी उग्र एवं विरुद्ध रूप का वर्णन भी प्राप्त होते हैं। इस ओर प्रसाद का

---

1. प्रसाद - कानन कुसुम - पृष्ठ : 58 VIII सं. 2033 - भारती भण्डार प्रकाशन
"हर ओर हरियाली विटप-डाली कुसुम से पूर्ण हैं मकरन्दमय, ज्यों कामिनी के नेत्र मद से पूर्ण हैं।"
2. प्रसाद - कानन कुसुम - पृ. 58 VIII सं. 2033 भारती भण्डार
3. प्रसाद - आँसू अध्ययन संस्करण - पृ. 59 - I - 1976, प्रसाद प्रकाशन

योगदान महत्वपूर्ण है। प्रसाद ने प्रकृति के रमणीय दृश्यों के साथ-साथ कामायनी में उसका भैरव रूप का भी वर्णन किया है। महा-प्रलय के समय पंचभूत[1] के भैरव मिश्रण का संहारक रूप देखिए —

"पंचभूत का भैरव मिश्रण,
शंपाओं के शकल-निपात,
उल्का लेकर अमर शक्तियाँ
खोज रहीं ज्यों खोया प्रात।"[2]

बारंबार भीषण रव से काँपती हुई धरती को देखकर आलिंगन के हेतु मानों नील व्योम नीचे उतर रहा है। दूसरी तरफ सागर की लहरें क्रूर काल के जालों की भाँति चल रही हैं।

"उधर गरजती सिन्धु लहरियाँ कुटिल काल के जालों सी,
चली आ रहीं फेन उगलती फन फैलाये व्यालों सी।"[3]

प्रकृति के भयानक रूपों में भी प्रसाद ने मानवीय भावनाओं से पुष्ट किया है। उन्होंने काँपती हुई धरती को नायिका, आलिंगन के हेतु आनेवाला नील व्योम को नायक, का रूप दिया है। सिंधु की लहरियों को 'फेन फैलाये व्यालों' का रूप प्रदान करके कवि ने प्रकृति की सुन्दरता को द्विगुणीभूत कर दिया है। इस प्रकार का भयंकर प्राकृतिक सौन्दर्य हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में अन्यत्र नहीं मिलता।

पंचभूत का भैरव मिश्रण का अन्त हो गया। गरजती लहरियाँ, थिरकती हुई वसुन्धरा, धधकती हुई ज्वालामुखी पर्वतों की ज्वालाएँ अब शान्त हो गयीं। विजयिनी उषा अपनी सुनहली किरणों को बरसाकर निर्मल आकाश में उदित हो रही है। पुनः प्रकृति अपनी सुन्दरता को दिखाकर हँस रही है —

"उषा सुनहले तीर बरसाती
जय-लक्ष्मी सी उदित हुई,

---

1. पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश
2. प्रसाद - कामायनी। पृ. 22, चिन्ता सर्ग से - XIII आवृत्ति सं. 2024 - भारती भण्डार
3. वही - पृ. 22

उधर पराजित काल रात्रि भी
        जल में अन्तर्निहित हुई।
वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का
        आज लगा हँसने फिर से। "(1)

इस प्रकार 'कामायनी' में प्राकृतिक सौन्दर्य के रमणीय एवं भीषण दोनों रूपों का सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है।

कविता करने की प्रेरणा पंत को सब से पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली जिसका श्रेय इनकी जन्म-भूमि कूर्मांचल प्रदेश को है। बचपन से ये घण्टों एकान्त में बैठकर प्राकृतिक दृश्यों को एकटक देखा करते थे और कोई अज्ञात आकर्षण, इनके भीतर एक अव्यक्त सौन्दर्य का जाल बुनकर इनकी चेतना को तन्मय कर देता था।(2) प्रकृति इनके लिए सजीव नारी है। वसन्त काल में फैली हरियाली में इनको प्रकृति अपनी सुन्दरता को दिखाकर अकेली खेल रही है। प्रकृति की उषा की मृदु लाली में क्रीड़ा, कौतूहल, कोमलता, मोद, मधुरिमा, हास, विलास, लीला, विस्मय, अस्फुटता, भय, स्नेह, पुलक, सुख, सरल, हुलास— जैसे गुणों का अनुभव करते हुए कवि प्रकृति से पूछता है —

" किसका पूजन करती पल पल
        बाल चपलता से अपनी ?
मृदु कोमलता से वह अपनी,
        मधु ऋतु की तरु डाली में — "(3)

स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति के साधारण अंगों में भी सौन्दर्य का अनुभव करता है। गोरी मटरों पर फिरनेवाली चंचल तितलियाँ उनको परियों की तरह लगती हैं। सावन कालीन प्रकृति का एक रंगीन चित्र यहाँ प्रस्तुत है —

" गोरी मटरों पर परियों सी सुरंग तितलियाँ फिरती चंचल

1• प्रसाद – कामायनी – पृ• 31 आशा सर्ग से XIII सं• 2024 – भारती भण्डार
2• आधुनिक कवि – पंत – 2 पर्यालोचन – पृ• 1, 2, 3 X1 आवृत्ति सम्मेलन
3• पंत – पल्लव – पृ• 88 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन •

कृत्रिम नगरों से, ग्रीष्म में, ग्राम प्रकृति-श्री रंग के स्थल।
सावन घटा सुहाती काली, हँसती सोने की हाली। "(1)

कभी कभी स्वच्छन्दतावादी कवि जलाशय के किनारे बैठकर वहाँ के प्राकृतिक वातावरण को निरीक्षण करता है। वहाँ का वातावरण कुहरामय है। वहाँ के नीले पत्ते, आम की डाल, जुगनू, मलयानिल पवन, नारियल और ताड़ का पेड़, पपीहा, सियार, सरोवर, लहरें, नभ के तारे — जैसी प्राकृतिक वस्तुएँ कवि को आकर्षित करती हैं। इस प्रकार का प्राकृतिक सौन्दर्य एक नये मोड़ का प्रतीक है। क्योंकि इस वर्णन में प्रायः प्रकृति के सामान्य अंगों का उल्लेख मिलता है। कल्पना की कमी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। निराला का यह वर्णन प्रकृति के प्रति उनके सहानुभूतिमय भाव को प्रकट करता है। देखिए —

"जलाशय के किनारे कुहरी थी,
हरे-नीले पत्तों का घेरा था,
पानी पर आम की डाल झुकी हुई,
गहरे अन्धकार का डेरा था,
किनारे सुनसान थे, जुगनू के दल चमके यहाँ-वहाँ चमके
वन का परिमल लिये मलय बहा, नारियल का पेड़ हिले क्रम से,
ताड़ खड़े ताक रहे थे सब को, पपीहा पुकार रहा था छिपा,
लहरें उठती थीं सरोवर में तारा चमकता था अन्तर में। "(2)

प्रकृति में कार्यकलापों का अनुभव करना स्वच्छन्दतावादी कवियों की परंपरागत प्रवृत्ति है। कवयित्री महादेवी वर्मा प्राकृतिक सौन्दर्य में भी वेदना और पीड़ा का आरोप कर देती हैं। इन्होंने

---

1. पंत - लोकायतन - पृ. 69
1964 - राजकमल प्रकाशन
2. निराला - अपरा - पृ. 164
५। सं. 2032 भारती भण्डार

प्रभात, सन्ध्या, दिन और निशि का एक संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। कवयित्री ने इन चारों में मानव के कार्यकलापों की कल्पना की है। देखिए –

"स्मित ले प्रभात आता नित
दीपक ले सन्ध्या जाती,
दिन ढलता सोना बरसा
निशि मोती दे मुस्काती।"(1)

स्वच्छन्दतावादी कवि प्रभात काल में प्रकृति के प्रत्येक अंग को अपने-अपने कार्यकलापों में मग्न देखता है। मृदु पल्लव, विहगों के वृन्द, सुमन, भ्रमर और समीर ने अपने अपने कार्यों को सुचारु रूप से करके प्रभात-कालीन सौन्दर्य को बढ़ा रहे हैं। प्रभात की प्रकृति को वस्तुओं के संयोग से प्रभात कालीन सौन्दर्य और भी सुन्दर लगता है।

"सोनी लतिका के मृदु पल्लवों ने ताल दी है,
विहगों के वृन्द ने भी गायन सुनाया है।
सहज सजीले सुमनों ने आँख खोल देखा,
भ्रमर भिखारी भीख माँगने को आया है।
सेवक समीर ने विनीत मन्द चाल से आ
स्वामिनी लता को धीरे से हिला जगाया है।"(2)

प्रभातकालीन प्राकृतिक सौन्दर्य अगर कवि को मुग्ध करता है तो रात्रिकालीन सौन्दर्य उसे मद में डाल देता है। निशाकाल में शान्तिमय वातावरण में कवि को चाँद, नक्षत्र, गगन आकर्षित करते हैं। अतः कवि प्रकृति की शोभा का पान करता है –

"नीचे पृथ्वी पर वसन्त की कुसुम-विभा छायी है,
ऊपर है चन्द्रमा द्वादशी का निर्मल गगन में।

---

1. रश्मि से – महादेवी वर्मा – यामा – पृ॰ 88 V 197। भारती भण्डार
2. कवि श्री रामकुमार वर्मा – पृ॰ 32 – । सं॰ 2029 सेतु प्रकाशन॰

खुली नीलिमा पर विकीर्ण तारे यों दीप रहे हैं,
चमक रहे हों नील चीर पर बूटे ज्यों चांदी के। "[1]

प्रकृति के सौन्दर्य के प्रति कवियों की दृष्टि परिस्थिति के अनुकूल बदलती आ रही है। किसी कविता करनेवाला कवि किसी भी काल अथवा समय का हो अवश्य प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रेरणा लेता है। 'तार सप्तक' का कवि भी यही समझता है कि प्राकृतिक सौन्दर्य ही उसके काव्य का विषय हो सकता है। मालवे के विस्तीर्ण मनोहर मैदानों में से घूमती हुई क्षिप्रा की रक्त-भव्य राशि और विविध द्रुम वृक्षों की छायाएँ उनके किशोर कवि की आद्य सौन्दर्य-प्रेरणाएँ हैं।[2] लेकिन 'तार-सप्तक' का कवि सन्ध्या को न प्रेयसि के रूप में देखता है और न सुन्दरी के रूप में, वरन् उसे उदास प्रतीत होता है। डूबती सन्ध्या का एक चित्र यहाँ उपस्थित है —

"डूबती निस्तब्ध सन्ध्या,
ग्रीष्म की तपती दुपहरी, प्रबल आंधियों के पश्चात्,
सुनसान क्लान्त उदास सन्ध्या! "
बस ऊँचाई का नहीं है
भूमि के समय प्रणय में योग,
इसलिए,
हलकी प्रलम्बित मौन छायाएँ गिराता
छिप गया सूरज कहीं पर दूर,
और थककर चूर
दिन सोने लगा शशि की गहरी उदासी में। "[3]

---

1. "दिनकर - उर्वशी - पृ॰5 प्रथम अंक - V 1973 उदयाचल, पटना-4
2. गजानन मुक्तिबोध का वक्तव्य से । तार सप्तक - पृष्ठ 5 तृतीय संस्करण 1970 , भारतीय ज्ञान पीठ, वाराणसी
3. नेमिचन्द्र की कविता - तार सप्तक - पृ॰56, 57 III 1970 भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी॰

डूबती सन्ध्या के प्रति 'तार सप्तक' कवि की सौन्दर्यानुभूतियाँ इनके पूर्वकालीन कवियों की सौन्दर्यानुभूतियों से अवश्य भिन्न प्रतीत होती हैं। इसका मूल कारण कवियों की वैयक्तिक अनुभूति है जिससे अन्य सभी प्रवृत्तियाँ बदल जाती हैं।

बादल, ऊषा, चाँदनी, सूरज, सन्ध्या, यामिनी, छाया, ज्योत्स्ना, पर्वत, विद्युत, नक्षत्र, किरण, क्षितिज, नदी, सागर, लहर, तट, मधुकरी, कली, तितली, भ्रमर, मधुप निकर, लता, पराग, पतझड़, मलयानिल पवन, जुही, कोकिल, चातक, चकोर, पपीहा, मृग, विहग, तरुवर, कुंज, कुसुम, बूंद, ओस की बूंद — आदि प्राकृतिक उपादानों को सूचित करनेवाले शब्द अथवा इनसे मिलते-जुलते शब्दों का प्रयोग हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में बारंबार हुआ है जिससे प्रकृति की सुन्दरता में एक नवीन रंग आ गया है। प्रकृति को सूचित करनेवाले इन शब्दों का प्रयोग प्रमुख से विकासकालीन स्वच्छन्दतावादी कवियों ने किया है। अतएव प्राकृतिक सौन्दर्य विकास काल में अन्य कालों की अपेक्षा खूब मुखर उठा है।

<u>नारी का सौन्दर्य</u>। — सौन्दर्य का नाम लेते ही मानव का ध्यान नारी की ओर आकर्षित होता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवि नारी के सौन्दर्य को सरसता प्रदान करता है। इन कवियों ने अपनी-अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के अनुरूप नारियों का सौन्दर्यांकन किया है। इस प्रकार के अंकन में इन्होंने प्रायः प्रकृति के विभिन्न अंगों का सहारा लिया है। अतः इनकी नारियों का सौन्दर्य प्रकृति और कल्पना को साथ लेकर कविता में अग्रसर होता है। कहीं-कहीं इनका नारी-सौन्दर्य मांसल शृंगार को उद्दीप्त करता है। समय-समय पर इन्होंने नारी के प्रत्येक अंग की प्रकृति के अंगों से तुलना की है। कवि की दृष्टि गाल, दृग, नाक, अधर, उरोज, नाभि, जंघ इत्यादि पर तीक्ष्ण रूप से पड़ जाती है। कवि को सन्देह उत्पन्न हो जाता है कि वह कोई फुलवारी है या नारी? देखिए —

"अलि अलकावलि, गुलाब गाल, कंज दृग
किंशुक-सी नाक, कोकिला सी किलकारी है।
पल्लव अधर, कुन्द रदन, कपोत ग्रीवा,
श्रीफल उरोज, रोम-राजी लता प्यारी है।

वापि नाभि, कदली जघन, रंग चंपक सा

मृदुल सिरिस-सी सुरभि सुखकारी है।

ऐसी मनोहारी वृन्दावन में निहारी,

कौन जाने वह कोई फुलवारी है कि नारी ! "[1]

विकासकालीन कवि को नारी नैसर्गिक सुषमापूर्ण युवती बन गयी है। उस युवती का मुख 'मणिवाले फणियों का मुख' है। कवि वियोग में संयोगकालीन उसकी सुन्दरता को स्मरण करता है :

"थी किस अनंग के धनु की वह शिथिल शिंजिनी दुहरी

अलबेली बाहुलता या तनु छवि सर की नव लहरी ?

चंचला स्नान कर आवे चन्द्रिका पर्व में जैसी

उस पावन तन की शोभा आलोक मधुर थी ऐसी ! "[2]

कभी कभी कवि को प्रियतम की आभा इन्द्रधनु सी[3] लगती है। इन्द्रधनुषसी आभावाली नायिका नील परिधान पहनी हुई है। उस परिधान के बीच नायिका के सुकुमार, कोमल, अधखुला अंग प्रकट हो रहा है। ऐसा लगता है, मेघों के बीच गुलाबी रंग का, बिजली का फूल खिला है।

" नील परिधान बीच सुकुमार

खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,

खिला हो ज्यों बिजली का फूल

मेघ-बन बीच गुलाबी रंग। "[4]

---

1. आधुनिक कवि : रामनरेश त्रिपाठी - पृ. 109 - III 1964 सम्मेलन प्रयाग।
2. अश्रु अध्ययन संकेत - पृ. 24 : I 1976 प्रसाद प्रकाशन
3. 'अब इन्द्रधनुष सी आभा' - वही - पृ. 34
4. कामायनी - पृ. 54 - श्रद्धा सर्ग XIII सं. 2024 - भारती भण्डार.

और उस अद्वितीय मुख के पास घुँघराले बाल घिर रहे हैं जो उसकी सुन्दरता और भी द्विगुणित करते हैं।

"घिर रहे थे घुँघराले बाल अंस अवलंबित मुख के पास
नील घन-शावक से सुकुमार सुधा भरने को विधु के पास।"(1)

अन्यत्र नारी की बिखरी हुई अलकें तर्क जाल की तरह कवि को दृष्टिगत होती है।

"बिखरी अलकें ज्यों तर्क जाल
वह विश्व मुकुट सा उज्ज्वलतम शशिखंड सदृश था स्पष्ट भाल
दो पद्‌म पलाश चषक से दृग देते अनुराग विराग ढाल
गुंजरित मधुप से मुकुल सदृश वह आनन जिसमें भरा गान
वक्षस्थल पर एकत्र धरे संसृति के सब विज्ञान ज्ञान।"(2)

कवि की पैनी दृष्टि घुँघराले बाल, बिखरी अलकों पर ही नहीं, प्रत्युत गर्भवती नारी पर भी पड़ती है। नारीत्व पर विश्वास रखनेवाला वह कवि नारी की गर्भावस्था का सौन्दर्य - वर्णन अत्यन्त गौरवपूर्ण ढंग से करता है जिसमें नैतिकता और आदर्श की छटा भी हो जाती है।

"केतकी गर्भ सा पीला मुँह
आँखों में आलस भरा स्नेह,
कुछ कृशता नई लजीली थी
कंपित लतिका सी लिये देह !
मातृत्व बोझ से झुके हुए बँध रहे पयोधर पीन आज,
कोमल काले ऊनों की नव पट्टिका बनाती रुचिर साज !"(3)

---

1. कामायनी - पृ. 55 - श्रद्धा सर्ग XIII सं. 20 24 - भारती भण्डार
2. वही - पृ. 176 - इड़ा सर्ग
3. वही - पृ. 150 - ईर्ष्या सर्ग

इस प्रकार के वर्णन में प्रसाद की स्वच्छन्दता और नवीनता की दृष्टि मिलती है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में नारी की गर्भावस्था का सौन्दर्य-चित्र अन्य स्थल पर दिखायी नहीं पड़ता। इस क्षेत्र में वे अकेले हैं, उनका कवि अकेला है, उनका नारी-सौन्दर्य चित्र अकेला है। इनके नारी-सौन्दर्य में अश्लीलता की गन्ध नहीं है। इस प्रकार का वर्णन पूर्ववर्ती वर्णन से अलग होकर स्वच्छन्दता की ओर मुड़ता है। जिस प्रकार प्रसाद में आदर्श प्रेम की भावनाएँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं उसी प्रकार उनका नारी-सौन्दर्य वर्णन भी आदर्श है। इसके कारण ये अन्य सह-स्वच्छन्दतावादी कवियों से भिन्न प्रतीत होते हैं। कुलमिलाकर प्रसाद का स्वच्छन्द प्रेम और आदर्श सौन्दर्य ने हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य-जगत् में एक नया द्वार खोल दिया है। सच तो यह है कि प्रसादजी मानुषिक सौन्दर्य, विशेषतः रमणीय सौन्दर्य और तारुण्य रोमान्स के कवि थे। उनका प्राकृतिक सौन्दर्य-चित्र भी मानुषिक सौन्दर्य से ही संश्लिष्ट है।(1)

नारी के नवीन गुलाब रंगीन गालों को देखकर स्वच्छन्दतावादी कवि का मन प्रणय के लिए लालायित हो उठता है। उसकी प्रिया का सौन्दर्य बाढ़ की तरह छलकता है। 'ग्रन्थि' का कवि-हृदय प्रिय के सौन्दर्य में डूब जाता है। क्योंकि उसका सौन्दर्य —

"लाज की मादक सुरा सी लालिमा
फैल गालों में, नवीन गुलाब-से
छलकती थी बाढ़ सी सौन्दर्य की।
अधखुले सस्मित गढ़ों से, सीप से।"(2)

सा प्रतीत होता है। कवि की कल्पनाओं में नारी का सौन्दर्य 'ग्रन्थि' में खूब प्रफुल्लित हो उठा है —

"देख रति ने मोतियों की लूट यह,
मृदुल गालों पर सुमुखि के लाज से

---

1. शान्ति प्रिय द्विवेदी - युग और साहित्य - पृ. 278 ।।। 1958 मार्च, इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद
2. पंत वीणा - ग्रन्थि - पृ. 102, नवीन संस्करण 1972 राजकमल प्रकाशन.

लाज सी दी स्वरित लगवा, कद कर
अधर विद्रुम द्वार अपने कोप से।"[1]

कवि की नारी अनिन्द्य सुन्दरी है। आलोक-किरण आनन, उषा-स्मित कपोल, विशाल नील-नभ नयन, प्रलम्ब, पक्ष्मिल पलकें, विद्युत्-रेखाओं-सी भृकुटि, प्रवाल-प्रवाल अधर, मुक्तातप दशन, लम्बी सौन्दर्य- शिखाओं-सी उँगलियाँ, आलोक-रेखाओं की आँधी-बाँह कंचुकी, कदंब-गेंद-से उठे उरोज,[2] उसकी सुन्दरता को और भी बढ़ा रहे हैं। लगता है, नारी के सौन्दर्य अंकन में जितनी इस कवि की कल्पनाएँ खेलती हैं उतनी अन्य स्वच्छन्दतावादी कवियों की नहीं।

स्वच्छन्दतावादी कवि निराला के लिए नारी सत्य साधना कविता, कल्पना लतिका, कमल-कामिनी और कोमल चरण-गामिनी है। उनकी प्रेयसी तन्वी है और प्रथम वसन्त में खिला हुआ नव पुष्प है — प्रेयसी का सौन्दर्यांकन कवि ने इस प्रकार किया है —

"घेर अंग-अंग को
लहरी तरंग वह प्रथम तारुण्य की,
ज्योतिर्मयिलता-सी हुई मैं तत्काल
घेर निज तरु-तन।
खिले नव पुष्प जग प्रथम सुगन्ध,
प्रथम वसन्त के गुच्छ गुच्छ।"[2]

इनकी नारी अद्वितीय सुन्दरी है। वह सौन्दर्य-सरोवर की एक तरंग है और नव वसन्त की किसलय कोमल लता है। इसी लिए इन्होंने अतीत शूर्पणखा को भयंकर राक्षसी रूप न देकर नारी का रूप प्रदान करके इस क्षेत्र में अपनी स्वच्छन्द भावना का परिचय दिया है। अत्यन्त नवीन ढंग से कवि ने शूर्पणखा का सौन्दर्यांकन किया है। 'पंचवटी - प्रसंग' की शूर्पणखा के रूप को देखकर प्रकृति की

1• पंत - वीणा - ग्रन्थि - पृ• 106 - नवीन संस्करण 1972 - राजकमल प्रकाशन
2• पंत - ज्योत्स्ना - पृ• 22-23 चतुर्थ आवृत्ति 1978 - राजकमल प्रकाशन
3• निराला - अनामिका - पृ• 1 1 VI 1979, भारती भण्डार•

सारी सौन्दर्य-राशि लज्जा से सिर झुका लेती है। वायु के झकोरे से लेकर वन की लताएँ तक सब झुक जाती हैं और नजर बचा लेती हैं। इसके अनुपम स्वरूप को देखकर स्वयं प्रकृति सुन्दरी अपने अंचल से मुख को छिपा लेती है। शूर्पणखा की सुन्दरता का वर्णन करते-करते कवि न थके, बल्कि उनकी कला को पाकर स्वयं सुन्दरता लज्जित हो जाती है। रूप गर्विता शूर्पणखा स्वयं कहती है -

"देख यह कपोत-कण्ठ
बाहु-वल्ली कर-सरोज
उन्नत उरोज पीन-क्षीण कटि -
नितम्ब-भार-चरण सुकुमार -
गति मन्द-मन्द
छूट जाता ध्यान ऋषि-मुनियों का,
देखो - भोगियों की तो बात ही निराली है।"(1)

नारियों के सौन्दर्य चित्रों में अन्य सब स्वच्छन्दतावादी कवियों की तुलना में निराला ने अपेक्षाकृत कम प्रकृति और कल्पना का सहारा लिया है। फिर भी इनमें कला का चमत्कार अधिक होने के कारण इनका सौन्दर्य-वर्णन कविता में अधिक मुखर उठा है।

महादेवी वर्मा की कविताओं में यत्र तत्र नारी की सुन्दरता का आभास मिलता है। लेकिन इस प्रकार के रूप चित्रों में भी अलौकिक प्रकृति पायी जाती है। रूपसि के केशों का वर्णन देखिए -

"रूपसि तेरा घन-केश-पाश!
श्यामल श्यामल कोमल कोमल
लहराता सुरभित केश-पाश!"(2)

---

1. निराला - परिमल - पृ० 191 - प्रथम बार 1978 - राजकमल प्रकाशन
2. नीरजा से - महादेवी वर्मा - यामा - पृ० 144 - V 1971 - भारती [illegible]

इनकी कविताओं में अन्तर्निहित नारी का सौन्दर्य, इनकी वैयक्तिक अनुभूतियों का साधन मात्र है। साध्य नहीं।

शृंगार : मौलिक शृंगार की पृष्ठभूमि पर अद्यतन हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों के नारी-रूप की चित्र-सृष्टि हुई है। प्रेम के जाल में फँसकर भावुकतापूर्ण अपनी नायिका को विभिन्न रूपों में देखने लगता है —

"तुम मृग नयनी, तुम पिक बयनी, तुम छवि की परिणीता सी,
अपनी बेसुध मादकता में भूली सी मधमाता सी,
शत शत मधु के शत-शत सपनों की पुलकित परछाई-सी;
मलय-विचुम्बित तुम ऊषा की अनुरंजित अरुणाई-सी,(1)

इस रूप को देखकर कवि का मन चंचल हो उठता है। उसकी समझ में नहीं आ रहा है कि यह नारी इतनी सुन्दर कैसी हो गयी है और उसको यह ज्ञात नहीं है कि एक मूर्ति में किस भाँति सारी सिद्धियाँ सिमट गयी हैं। सर्प के मुख से अभी-अभी बाहर निकलनेवाली मणि की तरह उसकी नग्न तन की कान्ति चमक रही है। वह नारी रति की मूर्ति, रमा की प्रतिमा है। कुलमिलाकर वह रूपसी नारी सब से मनोहरपूर्ण प्रकृति का चित्र है। देखिए —

"इन कपोलों की ललाई देखते हो?
और अधरों में हँसी यह कुन्द सी, जुही-कली-सी?
गौर चम्पक-यष्टि सी यह देह श्लथ पुष्पाभरण से,
स्वर्ण की प्रतिमा कला के स्वप्न-साँचे में ढली सी?
"यह तुम्हारी कल्पना है, प्यार कर लो!
रूपसी नारी प्रकृति का चित्र है सब से मनोहर!"(2)

1· प्रेम संगीत से। भगवतीचरण वर्मा – विस्मृति के फूल – पृ· 117 – साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद। भारती भण्डार द्वारा वितरित

2·दिनकर – उर्वशी – पृ· 48 √ 1973 उदयाचल प्रकाशन·

यह रूपसी नारी कवि की मनोकामिनी बन जाती है। क्योंकि उसका रूप वृन्त पर उत्फुल्ल लाल गुलाब की तरह है।

"कामिनी का रूप, जैसे वृन्त पर
उत्फुल्ल लाल गुलाब —
अभी जिसको छू न पाया हो
बनाव-दुराव का बर्ताव।"(1)

दिन बदलता गया। कामिनी का रूप भी बदलता गया। अब वह साधारण नारी बन गयी। क्योंकि वह अब दो बच्चों की माँ है, गृहस्थी का भार भी उस पर है। फिर भी रंग-बिरंगी दुनिया से उसका मन खिन्न नहीं उठता। अब भी उसका सौन्दर्य चमक रहा है।

"मुझमें तो अब भी यौवन है अब भी अंगों में एक पुलक,
अब भी अधरों में अरुणाई, अब भी पुतली में एक चमक,
अब भी कम्पित कुच कलश देख आँखें जाती हैं फिसल-फिसल,
अब भी आलिंगन चावपूर्ण मेरा मन हो उठता चंचल।"(2)

सौन्दर्य प्राकृतिक हो अथवा नारीगत, इसका स्वर सर्वत्र गूँजता है। इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। देखिए :

"सौन्दर्य जो रूप में नहीं
थिरकते रक्त में नहीं
मस्तिष्क में नहीं,
कहीं इनके पार से
बरसाता है अणु-अणु, पल पल में

---

1. नरेन्द्र शर्मा – मनोकामिनी – पृ. 5 । 1978 नेशनल पब्लिशिंग हाउस
2. प्रलय सृजन से – दुनिया का यौवन – आज के लोकप्रिय कवि शिवमंगल सुमन – 1 – 1972 पृ. 60 – राजपाल एण्ड संस

बचन में, दृष्टि में
शब्द में : और उसके पार से
कहीं शब्द अर्थ में
दुख-सा मौन सा
अपरिमित सुख की चेतना में
सनता मनता है।"(1)

कल्पना : स्वच्छन्दतावादी कवि कल्पना पर सब से ज्यादा बल देता है। अगर स्वच्छन्दतावादी काव्य की आत्मा प्रकृति है तो प्रेम उसकी चेतना है, सौन्दर्य उसका जीवन है और इन तीनों को मिलानेवाली कड़ी है कल्पना। कल्पना ही इन तीनों प्रवृत्तियों को रंग प्रदान करती है। अपनी आन्तरिक वैयक्तिक अनुभूतियों को काल्पनिक ढंग से स्वच्छन्दतावादी कवि अभिव्यक्त करता है। हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों को कल्पना के उपादान कहना उचित जंचता है। इन्होंने कल्पना का सहारा लेकर प्रकृति के प्रत्येक कण को सजीव बना दिया है और इसी कारण इनकी प्रकृति कभी नारी बनी रहती है और नारी कभी प्रकृति बन जाती है। जैसे पंत के सौन्दर्य-चित्रों में प्रकृति मनुष्य बन गयी है और प्रसाद के सौन्दर्य-चित्रों में मनुष्य प्रकृति बन गया है।(2) आकाश से अवनी तक प्राय: सभी प्राकृतिक वस्तुएँ इनकी कल्पना से चेतन बन गयी हैं।

जब स्वच्छन्दतावादी कवि प्रकृति से खेलने की ठान लेता है तब उसे कल्पना का सहारा लेना पड़ता है। कल्पना के कारण कभी इनकी कची- नायिका को मृदु कलियाँ चूटकी बजा-बजाकर बहलाती हैं और कभी कोमल प्रभात किरणें हिमकण में नहलाती हैं।(3) कल्पना द्वारा ईश्वरीय प्रतिमा से

---

1. सौन्दर्य - शमशेर बहादुर सिंह - कविता और कविता - पृ. 419-420 - सं. कृष्णनाथ मदान - 1 - 1967 - राजकमल।
2. शान्तिप्रिय द्विवेदी - युग और साहित्य - पृ. 279 - III - 1958 - मार्च, इण्डियन प्रेस
3. मृदु कलियाँ चूटकी बजा बजाकर बच्चे को बहलाती हैं।
कोमल प्रभात किरणें हिमकण में नहा नहा नहलाती हैं। — नूरजहाँ काव्य से —
आधुनिक कवि 'भक्त' - पृ. 126 - 1 - 1967 - सम्मेलन का प्रकाशन.

प्रकृति के साधारण, लेकिन उज्ज्वल लघु अंग 'ओस' की कल्पना अत्यन्त सरस ढंग से कवि करता है। 'ओस' की आत्मकथा को कवि की कल्पना में देखिए।

" मोती मुझको बतलाते हो, वह कठोर है नहीं मृदुल
द्रवित हृदय सी मैं सरसा हूँ, नव पल्लव से भी कोमल
आती हूँ नभ से मैं प्रतिनिधि, जाता रवि जब अस्ताचल
गाकर नीरव गीत नाचती, बन अप्सरा सदृश चंचल
पड़ी देख मुझको निद्रा में उषा जगाती है
रक्त रंग की विमल चूनरी, सूर्य किरण पहनाती है। "(1)

इन पंक्तियों को ध्यान से निरीक्षण करने पर विदित होता है कि कल्पना में भी सरसता है। ओस मृदुल है, कठोर नहीं। सूर्य-किरणों के कारण ओस में रक्त रंग का दीख पड़ना स्वाभाविक है। 'ओस' को लेकर भक्त-जी ने प्रकृति के विविध रंगीन बिंबों की रचना करके हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में एक नया मोड़ प्रस्तुत किया है। क्योंकि इनके परवर्ती कवियों ने इसी ओस की कल्पना अपनी-अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के अनुरूप की है।(2) कल्पना का अति विकास तालीन कवियों में भी उपलब्ध होता है।

---

1. 'आधुनिक कवि' - 'भक्त' - पृ. 42 - 1 - 1967 - सम्मेलन का प्रकाशन.

2. (अ) ओस के प्रति । ' किस अकलुष जग से उतरे
तुम प्रतनु ओस !
ऐसी आभा देखी नहीं किसी ने !
सस्मित तुम से है प्रभात-जग,
स्वर्गिक मोती, अतुल कोष!
किसकी यह कल्पना? तुम्हें जो दिया बना
उज्ज्वल, कोमल, चंचल निर्मल निर्दोष। '
-सुमित्रानन्दन पंत - युगवाणी - पृ. 94 - 1 -1959 - राजकमल प्रकाशन

(आ) ओस के प्रति । 'तितली के नश्वर वर्षण!
ओस! (वारि की पृथ्वी) - ठहरो!
मेरी पृथ्वी पर वो क्षण?
किंचित् स्पर्श असह्य तुम्हें, ओ कोमल ! यह कैसा प्रण?
एक बूँद ही के तन में - कितना अथाह है आकर्षण -'
- 'निशीथ से' - डा. रामकुमार वर्मा - गजरे तारोंवाले - पृ. 16 9 प्रथम संस्करण 1966
किताब महल, इलाहाबाद.

तारा, चंद्र, रजनी, उषा को लेकर विविध प्रकार की कल्पनाएँ की गयी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि रोमांटिक कल्पना के युग में प्रवेश कर रहा है। ऐसी एक कल्पना देखिए —

"ताराओं की माला कबरी में लटकाये, चन्द्रमुखी
रजनी अपने शान्ति-राज्य आसन पर आकर बैठ गयी।"(1)

अपने आलस के साथ धीरे-धीरे रजनी बीत रही है। वन-विहंगों के कलरव से निद्रा टूट जाती है। रवि रूपी प्रिय का कर पकड़कर उषा प्रेयसी उठ रही है —

'मिटी मलिनता, रवि - कर पाकर उषा उठ खड़ी हुई अहो,
जैसे प्रिय-कर का अवलंबन किये प्रेयसी उठती है।"(2)

वैयक्तिकता का एक पहलू कल्पना, प्रसाद की कविताओं में दर्शनीय है। प्रियतम के प्रतिबिंब को प्राची के अरुण मुकुर में वे देखते हैं और अलसायी हुई उषा में वे अपनी आँखों के तारे का दर्शन करते हैं —

'प्राची के अरुण मुकुर में सुन्दर प्रतिबिंब तुम्हारा
उस अलस उषा में देखूँ अपनी आँखों का तारा।"(3)

निश्छल, स्वच्छन्द प्रेम को याद करते-करते कवि अपनी कल्पना के पंखों के द्वारा नयी दुनिया को सज-कर उस दुनियाँ में पलायन करना चाहते हैं जहाँ सांझ-सी जीवन छाया ढलती है। अतः कवि नाविक से प्रार्थना करता है —

"ले चल वहाँ भुलावा देकर,
मेरे नाविक ! धीरे धीरे !
जिस निर्जन में सागर लहरी

---

1. प्रसाद - प्रेम पथिक - पृ॰ 12 VIII 1976, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
2. वही - पृ॰ 24
3. आँसू - अध्ययन संस्करण - पृ॰ 67 - I - 1976 प्रसाद प्रकाशन॰

अंबर के कानों में गहरी —
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे ! "[1]

कानन कुसुम, झरना के प्रकृति वर्णन में प्रकृत कल्पनाएँ, वेदनामयी 'आँसू' की कल्पनाएँ और 'लहर' की मधुर मधुर कल्पनाएँ, कामायनी में आकर, पुष्पित होकर नव-विकसित हो उठी हैं। क्योंकि कामायनी की कथा-श्रृंखला मिलाने के लिए कहीं-कहीं थोड़ी बहुत कल्पना को भी काम में ले आने का अधिकार प्रसाद नहीं छोड़ सके।[2] 'प्रेम पथिक' में प्रसाद को रजनी अपने शान्ति-रम्य आसन पर बैठती हुई प्रतीत हुई और उन्होंने लहर में कोमल कुसुमों की मधुर रात[3] और अपलक जागती हुई रात [4] की कल्पना की। परन्तु कामायनी तक आते आते वे अपनी कल्पना शक्ति से रजनी के कार्यकलापों का वर्णन भी करने लगते हैं। रजनी को संबोधन करने में भी नवीनता है —

"आह ! पगली ! चुप होने में तू क्यों इतनी चतुर हुई?
कज्जल जननी ! रजनी तू क्यों अब इतनी मधुर हुई? "[5]

जब कामना रूपी नायिका सिन्धु के तट पर, सन्ध्याकालीन तारा रूपी दीपक लेकर आती है, तब उसकी स्वर्ण रंगीन साड़ी को फाड़कर रजनी हँस रही है —

"जब कामना सिन्धु तट आयी
ले सन्ध्या का तारा दीप,

1· प्रसाद 'लहर' - पृ· 14 VII सं· 2021 - भारती भण्डार
2 कामायनी - आमुख - पृ· 8 XIII सं· 2024 भारती भण्डार
3· प्रसाद - लहर - पृ· 25 VII सं· 2021 भारती भण्डार
4· वही - पृ ·31
5· कामायनी - पृ· 46 - आशा सर्ग - XIII सं· 2024 - भारती भण्डार

पहन सुनहली साड़ी उसकी

तू हँसती क्यों अरी प्रतीप?"(1)

यहाँ सन्ध्या की सुनहली साड़ी का तात्पर्य, सन्ध्या-कालीन सूर्य की किरणों से बुनी हुई साड़ी से है। रजनी में मानवीय भावनाओं का आरोप स्वयं स्पष्ट है। इन पंक्तियों में प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति और कल्पना का सुन्दर संगम हुआ है। रजनी की मधुरता में प्रेम अप्रत्यक्ष रूप से छिपा हुआ है। क्योंकि नायक-नायिका के लिए रात्रि प्रायः मधुर हुआ करती है। रात्रि के लिए 'आह कृपणे ! इन्द्रजाल जननी !' के सम्बोधन में व्यंजनापूर्ण सौन्दर्य अन्तर्निहित है। सन्ध्या प्रकृति का एक आकर्षक रूप है। इन तीनों को कल्पना ने खूब सजाया और सँवारा है। अतः प्रमुख रोमाण्टिक प्रवृत्तियों का संघात इन पंक्तियों में उपलब्ध होता है।

कोमल किसलय अंचल की नन्हीं कलिका सी, नीरवनिशीथ की लतिका सी, पुलकित कदंब की माला, नारी की स्वतंत्रता छीननेवाली लज्जा की कल्पना प्रसाद जैसे गंभीर व्यक्ति के लिए असंभव नहीं है। यौवन के आवेग संयमित करनेवाली लज्जा का मानवीकृत भाव(2) कवि कल्पना की चातुरता का प्रतीक है और स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में एक अनमिल रंगीन कल्पना है। लज्जा अपना परिचय स्वयं देती है —

" मैं रति की प्रतिकृति लज्जा हूँ

मैं शालीनता सिखाती हूँ,

---

1. कामायनी - पृ. 46 - आशा सर्ग - XIII सं. 20 24 - भारती भण्डार

2. 'श्रद्धा के हृदय में उदित लज्जा-वृत्ति कामायनी में 'छायामूर्ति' के रूप में चित्रित है। लज्जा अपने को रति की प्रतिमूर्ति कहती है। अतएव स्पष्ट है कि कवि ने इस सर्ग में लज्जा का मानवीकरण किया है। नारी-रूप में उपस्थित होकर श्रद्धा की शंकाओं को समाधान प्रस्तुत करती है। श्रद्धा के अन्तरिक हृदय में ही ये सब विवाद चलते हैं। इन सब का आधार कवि की कल्पनाएँ हैं।

मतवाली सुन्दरता पग में
नूपुर सी लिपट मनाती हूँ।"(1)

पंत की पूर्वादि्ष कविताओं का आधार कल्पना ही है। कल्पना इनकी कविताओं में सम्राज्ञी बनकर स्वच्छन्दतापूर्वक विहार करती है। प्रकृति के प्रत्येक कण इनकी कल्पनाओं से सजीव हो उठी हैं। इनकी काव्य कृति 'पल्लव' में कल्पना अपनी मन-पसन्दी क्रीड़ाएँ करती है। क्योंकि इनका पल्लव कल्पना के विह्वल बाल हैं। इसमें दिवस की स्वर्ण किरणों का रंग, उषा का स्वर्ण सुहाग, निशा का तुहिन अश्रु, श्रृंगार, सांझ का निःस्वन राग, सुकुमार नवोढ़ा की लज्जा और तरुतम सुन्दरता की आग(2) का वर्णन हुआ है जो कल्पना से वेष्टित हैं। प्रायः प्रकृति और नारी को लेकर इन कवियों की कल्पनाएँ कविताओं में व्यक्त हुई हैं। लेकिन यहाँ पंत ने "'अनंग' जिसका कोई अंग नहीं है" की कल्पना करके अपनी स्वच्छन्द भावना का परिचय दिया है। अनंग होते हुए भी यह विश्व अभिनय का नायक और अखिल सृष्टि का सूत्रधार है। हर मानव के उर के कंपन में व्याप्त अनंग को, कवि अपने मानस की तरंग में पुनः साकार बन जाने की कामना करता है। पंत अनंग के प्रभुत्व की कल्पना इस प्रकार करते हैं—

"प्रथम कल्पना कवि के मन में
प्रथम प्रकंपन उडुगन में,
प्रथम प्रात जग के आँगन में
प्रथम वसन्त विभा वन में
प्रथम वीचि वंकिम चितवन में प्रथम तड़ित् चुंबन घन में,
प्रथम गान तव कूक गगन में फूटा, नव यौवन तन में।"(3)

---

1. कामायनी – पृष्ठ 111 लज्जा सर्ग XIII – सं 2024 – भारती भण्डार
2. पंत – पल्लव – पृ. 52 VIII 1977 – राजकमल प्रकाशन
3. वही – पृ. 78, 79

नवयुवतियाँ और अनंग का संबंध स्थापित करते हुए जो कल्पना कवि ने की है उसमें रम्यता है। क्योंकि असल में बाल युवतियाँ अनंग को चाहती हैं और स्वागत भी करती हैं —

"बाल युवतियाँ तान कान तक चल चितवन के बंदनवार,
देव ! तुम्हारा स्वागत करतीं खोल सतत उत्सुक दृग द्वार।"(1)

पंत प्रकृति में ही नहीं, वरन् कभी कभी 'स्याही के बूँद' में भी अपनी कल्पना के द्वारा मानवीय भावों का आरोप किया है। गीत लिखते समय अचानक स्याही की बूँदें सुकुमार गोल के रूप में लेखनी से गिर पड़ीं। गिरी हुई उस बूँद के गुणों में कवि मानवीय भावों की कल्पना करते हैं —

"अर्ध निद्रित-सा, विस्मृत-सा,
न जागृत-सा, न विमूर्छित-सा,
अर्धजीवित-सा औ' मृत-सा
न हर्षित-सा, न विमर्षित-सा,
गिरा का है क्या यह परिहास?"(2)

स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में निराला की कल्पनाएँ अत्यन्त नवीन प्रतीत होती हैं। इन्होंने प्रकृति और नारी के अतिरिक्त आध्यात्मिक पक्ष से संबंधित माया को लेकर विविध कल्पनाएँ की हैं। 'माया' से तरह-तरह के प्रश्न भी करने लगते हैं। कभी माया का संबंध मानव के चित्त से जोड़ते हैं और कभी प्रकृति से उसका तादात्म्य स्थापित करते हैं। देखिए —

"तू किसी के चित्त की कालिमा
या किसी कमनीय की कमनीयता
या किसी दुःख-दीन की है आह तू
या किसी तरु की तन्वी वनिता-लता?"(3)

---

1. पंत - पल्लव - पृ. 83 VIII 1977 - राजकमल प्रकाशन
2. वही - पृ. 139
3. निराला - परिमल - पृ. 74 - प्रथम बार - 1978 - राजकमल।

कवि कल्पना करता है कि क्या माया यामिनी है या वसन्त? शकुन्तला है अथवा मेनका? नागिनी है या रागिनी? अपने को सँवारकर कहीं-कहीं प्रकृति तनकर नृत्य करनेवाली चंचल नायिका है क्या? इस प्रकार कवि विविध प्रश्नों के रूप में माया की कल्पना करते हुए अन्त में माया से पूछते हैं —

"सृष्टि के अन्त। कहो मैं तू क्यों
है किसी के भोग-भ्रम की साधना,
या कि लेकर सिद्धि तू आगे खड़ी
त्यागियों के त्याग की आराधना?"(1)

माया को लेकर की गयी अद्भुत कल्पनाएँ निराला की स्वच्छन्द भावना को सूचित करती हैं। अन्य स्थल पर निराला ने कविता को नारी का रूप प्रदान किया है। सन्ध्या कालीन समीर रूपी नायक का कविता रूपी सुन्दरी संग चुपचाप बातें करते जाना, उसको देखकर मुस्कराना जैसी प्रवृत्तियाँ रोमाण्टिक कल्पना के आमास प्रतीत होती हैं। शिला खण्ड पर बैठी हुई कविता-सुन्दरी को देखिए —

"शिला-खण्ड पर बैठी वह,
नीलांचल मृदु लहराता था —
मुक्त-कच सन्ध्या-समीर-सुन्दरी-संग
कुछ चुप-चुप बातें करता जाता
और मुस्कराता था।"(2)

महादेवी वर्मा की कविताओं में कल्पनाएँ स्वाभाविक रूप से प्रयुक्त हुई हैं। इनके वेदना-मय आँसुओं में कल्पनाएँ भी भीगी हुई प्रतीत होती हैं। रोमाण्टिक कवियों की भाँति इनका सबकुछ कल्पना नहीं है। अतः कल्पना इनकी कविताओं में एक साधन के रूप में काम करती है। कहीं-कहीं इनकी कविताओं में कल्पना का अति मिलता है। जैसे पीड़ा का हृदय से टकराना, नक्षत्रों का पिघलना, आकाश का काँपना इत्यादि।'उदधि और नभ के प्रेम'(3) की कल्पना अत्यन्त रोमाण्टिक प्रतीत होती

---

1. निराला - परिमल - पृ. 75 - प्रथम बार 1978 - राजकमल
2. वही - पृ. 10।
3. 'उदधि नभ को कर लेगा प्यार' - यामा - पृ. 284-197। भारती भण्डार।

अन्य सह कवियों की तरह इन्होंने भी सन्ध्या और प्रभात में मानवीय भावनाओं का आरोप किया है। देखिए –

"जब सन्ध्या ने आँसू में
अंजन से हो मसि घोली,
तब प्राची के अंचल में
हो स्मित से चर्चित रोली,
कली अपलक स्वप्नों में
दिन का उन्मीलन भी हो।"(1)

अद्यतन रोमाण्टिक कवि प्रेमानुभूतियों में डूबकर, विभिन्न मानसिक तरंगों एवं उमंगों में अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा उस दिन के प्राकृतिक वातावरण को याद करता है जिस दिन इनके अपलक नयनों में उन्माद छाया हुआ था। विस्मृति की बातें आज इनके सूने उर में जाग-कर उठ रही हैं और न जाने कितने युगों के बाद इनकी सुखद स्मृतियाँ आज कल्पना के सहारे व्यक्त हो रही हैं।

"उस दिन सरिता खेल रही थी नक्षत्रों के साथ,
और निशा के आलिंगन में पुलकित थे निशिनाथ,
वैभव की मस्ती में हँसती थी चाँदनी की रात,
झूम रही थी पगली कुमुदिनी करके ऊँचा माथा।"(2)

रामकुमार वर्मा ने अपने पूर्वार्द्ध कवि जीवन में पंत सदृश कल्पना को विशेष महत्व प्रदान किया था। कल्पना के वे उपासक रहे। रचनात्मक धरातल पर ही नहीं, काव्य सिद्धान्त की दृष्टि से भी इनकी कल्पना संबंधी मान्यताएं महत्वपूर्ण हैं। इन्होंने अपनी परवर्ती रचनाओं में कल्पना

---

1. महादेवी वर्मा – यामा – पृ. 182 V.1971 – भारती भण्डार
2. भगवतीचरण वर्मा – विस्मृति के फूल – पृ. 94 – साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद.

तुलना में अनुभूति को अधिक महत्व प्रदान किया है। पीले रंग को लेकर इनके द्वारा की गयी कल्पनाएँ नवीन हैं। 'पीलेपन' को देखकर संबोधित करते हुए वे कहते हैं —

"ओ ! पीलेपन !
तुम से हो तो जीवित हैं
मुकुलित वसन्त का मंजुल यौवन !
प्राची करती है सज्जित, तुम से —
प्रिय रवि का रंजित आसन !
ओ ! पीलेपन !"(1)

पीले रंग का महत्व यहाँ तक है कि स्वर्ण भी इसके द्वारा नव आभूषण बनता है। अतीत श्याम मुरारी के कटि के पट पर इसी रंग ने शासन किया था। नव परिणीता कौउ कलियों को प्रियतम बनकर यही रंग चूमा करता है। अन्त में कवि अपने यौवन के कुसुमों को भी आलिंगन करने के लिए पीलेपन से प्रार्थना करता है —

"आओ, मेरे यौवन के कुसुमों
का तो कर लो आलिंगन !
ओ पीलेपन! "(2)

सन्ध्या, ऊषा, तारा, आकाश, ओस, निशा, दिन, पीलेपन आदि को लेकर स्वच्छन्दतावादी कवियों ने विविध प्रकार की कल्पनाएँ की हैं और लज्जा, अनंग और माया भी इनकी कल्पना से श्रेष्ठ बन गये हैं। इस प्रकार इन कवियों के सामने कल्पना का एक आदर्श रूप रहा। लेकिन समय की माँग के अनुसार आज का कवि प्रकृति के सामने, लेकिन बाह्य पदार्थ गेहूँ की कल्पना नहीं करता, प्रत्युत उनको 'सोच' की कल्पना करके कल्पना के क्षेत्र में एक नवीन अर्पण प्रवृत्ति को अपनाया है। विकासकालीन

1· कविश्री रामकुमार वर्मा - पृ· 53 - 1 - सं· 2029 - सेतु प्रकाशन
2· वही - पृ· 54

कवियों की सी रसात्मकता प्रस्तुत पंक्तियों में न मिलने पर भी साधारण भाषा में, साधारण शैली के द्वारा असाधारण रूप से गेहूं की बालियों का रूप देकर उनकी भावनाओं को उनके ही द्वारा व्यक्त किया गया है। गेहूं और उनकी सोच की कल्पना को देखिए —

" कांप रहीं खेतों में गेहूं की बालियां
मेंड़ पर बैठा है भूमिजन चिलम पीता, खांसता।
सोचती हैं बालियां —
यहां से हमें तोड़ तोड़
कहां ले जाएंगे,
जलाएंगे होली में (गाएंगे गालियां बजाएंगे तालियां)
या कि हमें जोड़-जोड़
खेती हर अनजान
बेचेंगे किसी लाभकर्मी निरे खुदगर्ज बनिये को
(बेचेंगे यह कपास, वह जूट, हाय हमें ही क्यूं!) (1)

उपरोक्त प्रमुख उद्धरणों से विदित होता है कि कृतकालीन कवियों की कल्पनाएं स्वाभाविक रहीं। विकास कालीन कवि कल्पना जीवी और स्वप्न दर्शी रहा। अतः उनकी कविताओं में कल्पना की उड़ानें प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। प्रायः इन्होंने अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा प्रकृति में मानवीय भावनाओं का आरोप किया है। बौद्धिकता के अत्यधिक आग्रह ने अद्यतन कवियों की कल्पनाओं में यथार्थ को समावेश कर दिया है।

1• प्रभाकर माचवे की कविता ' गेहूं की सोच '
तार सप्तक – पृष्ठ : 136 III संस्करण 1970 – भारतीय ज्ञान पीठ, वाराणसी•

अनुभूति : अनुभूति के बिना कविता का कोई अस्तित्व नहीं है और कल्पना के बिना उसका कोई महत्व भी नहीं है। अतः अनुभूति कविता की वह आदि प्रेरणा है जो कवि के मन में अति तीव्र रूप से मिलती है। अनुभूति की तीव्रता स्वच्छन्दतावादी कवियों की प्रमुख विशेषताओं में से है जो इनकी कविताओं में या तो प्रेम के सिलसिले में व्यक्त होती है अथवा प्रकृति, कल्पना में पल्लवित होती है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कविताओं में यह अन्तर्भूत प्रवृत्ति प्रायः दुःखात्मक रूप में अभिव्यक्त हुई है। हिन्दी कवि प्रिया के विरह में तड़प-तड़प कर रोता है, आँसू बहाता है और अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को कविता के रूप में परिणत कर देता है। अतः विरहजन्य दुःखानुभूति ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कविताओं में सच्ची अनुभूति का रूप धारण कर लेती है। इसका प्रधान कारण इनका प्रेम अशरीरी है, आदर्श एवं मानसिक है।

स्वच्छन्दतावादी कवियों की अनुभूतियाँ दुःख, वेदना, पीड़ा, आँसुओं में तीव्रता पकड़ती हैं। 'क्यों जीवन-धन!' कहकर कवि प्रियतम के अन्यायपूर्ण व्यवहार पर पछताता है। कवि उन्हें लिखना चाहता है लेकिन लिख नहीं पाता। क्योंकि उसकी लेखनी घिस रही है और पत्र भी कंपित जा रहा है। कवि का प्रियतम औरों के प्रति प्रेम दिखाता है लेकिन उस पर नहीं। इसके लिए कवि दुःखित नहीं होता। क्योंकि उसने अपने को प्रियतम के पास सौंप दिया है। कवि कुछ नहीं माँगता, केवल उसकी आँखों में निवास करना चाहता है। इस प्रकार कवि अपनी दुःखानुभूतियों को प्रियतम से यों व्यक्त करता है —

"कुछ मत दो, अपना ही जो मुझे बना लो, यही करो।
रक्खो जब तक आँखों में, फिर और ठौर पर नहीं ढरो।।
कोर बरौनी का न लगे हाँ, इस कोमल मन को मेरे
पुतली बनकर रहें चमकते, प्रियतम ! हम दृग में तेरे।।"(1)

---

1. प्रसाद - कानन कुसुम - पृष्ठ 83 - 'प्रियतम' V III सं. 2033 - भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

लेकिन प्रियतम कवि को उपेक्षा की दृष्टि से देखता है। इससे कवि का मन दुःखित हो उठता है और उसका हृदय जलता है। कवि की दुःखानुभूतियाँ तीव्र हो जाती हैं और प्रियतम से न मिलने का आदेश देता है –

"जलन छाती की बड़ी सहता हूँ,
मिलो मत मुझ से यही कहता हूँ,
बड़ी हो दया तुम्हारी
तुम रहो शीतल हमें जलने दो,
तमाशा देखो हाथ मलने दो,
तुम्हें है शपथ हमारी।।"(1)

प्रियतम के न मिलने के कारण अत्यन्त वेदना(2) कवि के हृदय में उमड़ रही है। वेदना का अति कवि की अनुभूतियों को और भी दुःखात्मक बना देता है। अतः कवि वेदना को ठहर जाने की धमकी देता है –

"न मुझ से अड़ना, वहाँ का लड़ना;
प्राण है केवल मेरा अस्त्र।
वेदने, ठहरो! कलह तुम न करो,
नहीं तो कर दूँगा निःशस्त्र।"(3)

---

1. प्रसाद – झरना – पृ० 72 । – 1976 – प्रसाद मन्दिर प्रकाशन
2. वेदना को इन कवियों ने पीड़ा के अतिरिक्त अनुभूति, संवेदना तथा बोध के अर्थ में भी प्रयुक्त किया है।
   – हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास – पृ० 139 – प्रथम संस्करण – सं० 2028 – नागरी प्रचारिणी सभा
3. प्रसाद – झरना – पृ० 73 – । – 1976 – प्रसाद मन्दिर प्रकाशन, वाराणसी

कल्पना की वेदनाएँ, दुःखानुभूतियाँ 'आँसू' में आकर खूब मुखर उठती हैं। आँसू की दुखानुभूतियाँ और कुछ नहीं, केवल प्रसाद की वैयक्तिक दुःखानुभूतियों का सुन्दर प्रकाशन है। क्योंकि इनके हृदय में हाहाकार स्वरों में वेदनामयी अनुभूतियाँ चौदहों भुवन में गूंज रही हैं —

"विकल वेदना फिर आई
मेरी चौदहों भुवन में
सुख कहीं न दिया दिखाई
विश्राम कहाँ जीवन में।"(1)

कवि को जीवन में सुख नहीं मिला, विश्राम का नामोनिशान तक नहीं रहा। उसका कोई नहीं है। अतः वेदना को ही वह चिर-जीवन संगिनी बना लेता है —

"तुम ! अरे, वही हाँ तुम हो मेरी चिर-जीवन-संगिनि
दुखवाले दग्ध हृदय की वेदने ! अश्रुमयी रंगिनि !"(2)

प्रसाद की अनुभूतियाँ 'लहर' में आनन्द मनाने लगीं। दुःखानुभूतियाँ सुखात्मक अनुभूतियों के रूप में अब परिवर्तित हो गयीं। लहर का कवि अपनी बीती मधुर चाँदनी रातों की याद करते करते सुख का अनुभव करते हैं। क्योंकि उनका प्रियतम आया, उनको सुख दिया, आलिंगन में आते-आते मुस्काकर भाग गया। अपनी बीती हुई सुखानुभूतियों को कवि अत्यन्त काल्पनिक ढंग से व्यक्त करता है। क्योंकि तीव्र अनुभूतियों का आवेग सदा काल्पनिक हुआ करता है। उनकी ये अनुभूतियाँ गंभीर, व्यापक और महत्वपूर्ण हैं।

"उज्वल गाथा कैसे गाऊँ मधुर चाँदनी रातों की।
अरे खिल-खिलाकर हँसते होनेवाली उन बातों की।
मिला कहाँ वह सुख जिसका मैं स्वप्न देखकर जाग गया?

---

1. प्रसाद - आँसू - पृ. 116 - अध्ययन संस्करण - 1 - 1976 प्रसाद प्रकाशन
2. वही - पृ. 75

आलिंगन में आते-आते मुस्काकर जो भाग गया।
जिसके अरुण-कपोलों की मतवाली सुन्दर छाया में।
अनुरागिनी उषा लेती थी निज सुहाग मधुमाया में। "(1)

कल्पना के पल्लव काल में पंत ने कहीं कहीं अपनी अनुभूतियों को अत्यन्त तीव्र रूप से व्यक्त किया है। इनकी अनुभूतियाँ दुःख और वेदना के कारण खूब मुखर उठती हैं। कवि को पहले वियोगी होना चाहिए, तभी उनके गीतों में आह भरी अनुभूतियाँ मिलेंगी। कवि की अपलक आँखों में उनके उर के सुरभित अश्रुवास उमड़ रहे हैं। आँखों में आँसू का तार बह रहा है। उनका गान भी गीला पड़ गया है। कवि को पता नहीं लगता कि यह विरह है अथवा वरदान! उनकी कल्पनाओं में भी वेदना कसक रही है। दुःखित होकर अपनी अनुभूतियों को कवि इस प्रकार व्यक्त करता है —

"हाय, किसके उर में उतारूँ अपने उर का भार!
किसे अब दूँ उपहार गूँथ यह अश्रुकणों का हार! "(2)

उनकी अनुभूतियाँ इतनी तीव्र हो उठती हैं कि वे अपने हृदय को भी रोने का आदेश देते हैं —

"हृदय! रो, अपने दुख का भार!
हृदय! रो, उनका है अधिकार
हृदय! रो यह जड़ स्वेच्छाचार,
शिशिर का सा समीर संचार। "(3)

कवि मन में बारंबार अनुभव करके अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करता है। उनकी दुःखमयी अनुभूतियों का अन्त नहीं होता। वेदना को ले निमंत्रण देकर स्वयं गीत गा-गाकर कवि अपने जीवन को ही

---

1. प्रसाद - लहर - पृ. 11 - VII आवृत्ति - सं. 2021 - भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद.
2. पंत - पल्लव - पृ. 62 - VIII - 1977 राजकमल प्रकाशन
3. वही - पृ. 67

उसको अर्पित करना चाहता है —

"आज वेदने ! आ, तुझको भी
गा-गाकर जीवन दे दूँ —
हृदय खोलकर रो-रोकर"(1)

बहुत रोने के उपरान्त कवि कल्पना का सहारा लेकर प्रेम की सजल सृष्टि में सुख का अनुभव करना चाहता है। ग्रन्थि में उसको इस सुख का अनुभव होता है और वह अपनी सुखात्मक अनुभूतियों को अत्यन्त मनोहर ढंग से व्यक्त करता है।

"शीश रख मेरा सुकोमल जाँघ पर,
शशि कला सी एक बाला व्यग्र हो
देखती थी म्लान मुख मेरा, अचल,
सदय, भीरु अधीर, चिन्तित दृष्टि से।"(2)

अब इनकी सुखानुभूतियाँ असफल प्रेम के कारण दुःखात्मक रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। इससे प्रकृति के पक्षी भी रोने, तरसने और तड़पने लगते हैं। कवि प्राकृतिक पक्षियों में भी प्रेम की विफलता का अनुभव करता है। निराशापूर्ण वातावरण छा रहा है। इधर चकोर रो रहा है, उधर चातक तरस रहा है। मधुप बिंधकर तड़प रहा है। 'संसार का यही नियम है' कहकर कवि अपनी दुःखमयी वेदना को इस प्रकार व्यक्त करता है —

"देख रोता है चकोर इधर, वहाँ
तरसता है तृषित चातक वारि को,
वह, मधुप बिंधकर तड़पता है यही
नियम है संसार का, रो, हृदय, रो!"(3)

---

1. वीणा - ग्रन्थि - पृ. 9 नवीन संस्करण 1972 - राजकमल प्रकाशन
2. पंत वीणा - ग्रन्थि - पृ. 100 नवीन संस्करण 1972 राजकमल
3. वही - पृ. 128

'सरोज स्मृति' निराला की वैयक्तिक दुःखानुभूतियों की वेदनामय अभिव्यक्ति है। अपनी बेटी की अकाल मृत्यु पर कवि ने अपनी बीती हुई स्मृतियों को कविताबद्ध कर दिया है।

"धन्ये, मैं पिता निरर्थक था,
कुछ भी तेरे हित न कर सका!"(1)

कहकर कवि का दिल तड़प उठता है। सरोज के शैशव काल से लेकर मरण तक के काल की वेदना मेरे शब्दों में व्यक्त किया गया है —

"वह लता वहीं की, जहाँ कली
तू खिली, स्नेह से हिली, पली,
अन्त भी उसी गोद में शरण
ली, मूँदे दृग वर महामरण!"(2)

कवि का जीवन कथा ही दुखमयी रही —

"दुख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूँ आज, जो नहीं कही!"(3)

अन्तिम पंक्तियों में उनकी दुःखानुभूति, अत्यन्त तीव्रता पकड़ती है —

"कन्ये, गत कर्मों का अर्पण
कर करता मैं तेरा तर्पण।"(4)

निराला की कविताओं में अनुभूति का दूसरा पक्ष सुखात्मक अनुभूतियाँ भी उपलब्ध होती हैं। मिलन और प्रेम दोनों मिलकर मानव की अनुभूतियों को सुखमय एवं सौन्दर्यमय बनाते हैं।

---

1. निराला - अनामिका - पृ॰ 122 - VI - 1979 - भारती भण्डार
2. वही - पृ॰ 137
3. वही - पृ॰ 137
4. वही - पृ॰ 138

कवि को सैकत-सी गोरी बाला की स्मृति आ जाती है। कवि को वन के उस मनोरम वातावरण की याद आ जाती है; जहाँ वह सुन्दरी वन के फूलों को चुन-चुनकर अपने लघु अंचल बड़े चाव से रखती थी। वे सोचते हैं कि न जाने वह किसके लिए अपने हाथों में फूलों की सुन्दर माला ले आयी थी और किसको पहनायी थी। उनके स्मृति-पटल में प्रिया के विविध रंगीन बिंबों के चित्र आकर नृत्य करने लगते हैं —

"मृदु सुगन्ध-सी कोमल दल फूलों की,
शशि किरणों की-सी वह प्यारी मुस्कान।
स्वच्छन्द गगन-सी मुक्त, वायु सी चंचल,
खोयी स्मृति की फिर आयी-सी पहचान।"(1)

कवि निराला ने न सिर्फ सुख-दुःख से संबंधित अनुभूतियों को व्यक्त किया है बल्कि उनके मूल में अन्तर्निहित विद्रोहात्मक अनुभूतियों को भी व्यक्त किया है। कभी इनकी इस प्रकार की अनुभूतियाँ बादल-राग के रूप में गरजती हैं और कभी-कभी श्यामा के रूप में प्रस्फुटित होती हैं। इस प्रकार की भावनाएँ भविष्यजात प्रतीत होने पर भी कवि के मन में बार-बार बाढ़ की तरह उमड़ा करती हैं और समय पाकर अनुभूतियों के रूप में कविता में स्थान पाती हैं। क्योंकि अनुभूतियाँ सामान्य रूप से कवि की आत्मीय भावनाएँ और निजी अनुभव ही हैं जो चाहे शारीरिक हों अथवा मानसिक या दृष्टिगत, प्रायः काल्पनिक ढंग से साहित्य में व्यक्त हुआ करती हैं। कवि इस प्रकार की विद्रोहात्मक अनुभूतियों को 'आवाहन' में व्यक्त किया है। श्यामा 'शक्ति' का प्रतीक है और जब शक्ति भैरवी-रूप धारण कर लेती है तब दुनियाँ में अट्टहास-उल्लास का नृत्य होने लगता है। सिर्फ एक बार श्यामा को नाचने का आदेश देते हैं —

"एक बार बस और नाच तू श्यामा !
अट्टहास-उल्लास नृत्य का होगा जब आनंद,

---

1. परिमल - पृ. 95 - I बार 1978 - राजकमल.

"विश्व की इस वीणा के टूटेंगे सब तार,
बन्द हो जाएँगे ये सारे कोमल छन्द,
सिन्धु-राग का होगा तब आलाप —
उत्ताल-तरंग-भंग कह देंगे —"(1)

महादेवी वर्मा के गीत उनके आत्म-निवेदन को सूचित करते हैं। अतः इनमें आत्मानुभूति की तीव्रता मिलती है। इनकी कविताओं में वैयक्तिकता से ओतप्रोत दुःखानुभूतियाँ शीर्ष-स्थान रखती हैं। प्रियतम के विरह में कवयित्री दुःख के सागर में डूब जाती हैं। इनके मन में वेदना की पीड़ा इतनी तीव्र हो जाती है कि पीड़ा में ही प्रियतम को ढूंढती है और प्रियतम में ही पीड़ा को ढूंढना चाहती है —

"पर शेष नहीं होगी यह मेरे प्राणों की क्रीड़ा,
तुम को पीड़ा में ढूंढा और तुममें ढूंढूंगी पीड़ा।"(2)

और पीड़ा ही उनके प्यारी मीत बन जाती है और उनकी दुःखानुभूतियों की ज्वाला नवनीत बन जाती हैं। उनके दुःख की कोई सीमा नहीं रहती। अन्त में मृत्यु ही उनका नवजीवन बन जाती है —

"जहाँ विष देता है अमरत्व जहाँ पीड़ा है प्यारी मीत
अश्रु हैं नैनों का श्रृंगार जहाँ ज्वाला बनती नवनीत,
मृत्यु बन जाती नवजीवन
वहीं रहता नीरव भाषा।"(3)

कभी कभी सुख-दुःख मिश्रित अनुभूतियाँ भी इनकी कविताओं में मिलती हैं। यथा —

"एक घड़ी ला दूँ प्रिय मैं भी मधुर वेदना से भर अन्तर,
दुख हो सुखमय सुख हो दुखमय उपल बनें पुलकित से निर्झर।"(4)

---

1. परिमल - पृ. 115 । बार - 1978 - राजकमल
2. महादेवी वर्मा - यामा - पृ. 32 V 1971 - भारती भण्डार - लीडर प्रेस
3. वही - पृ. 57 (नीहार से)
4. वही - पृ. 156 (नीरजा से)

मधुर वेदना के कारण कवि की आँखों में नीर भरा हुआ है और हृदय में अत्यन्त पीड़ा हो रही है। वेदना को संबोधित करके अपनी दुःखमयी स्वानुभूति को इस प्रकार कवि व्यक्त करता है —

"वेदने, सुनो मेरे वाणी,
हृत्खण्ड जलाओ कल्याणी !
तुम जिस प्रदेश की हो रानी
कर दो वह भस्म, न दो पानी
तब निकले छोले तीन चार !"(1)

कवि की दुःखमयी वैयक्तिक अनुभूति इतनी तीव्रता पकड़ती है और भी रोना चाहता है और दुःखों की झोपड़ी में ही सोना चाहता है —

"भाई, छोड़ो नहीं, मुझे खुलकर रोने दो !
यह पत्थर का हृदय आँसुओं से धोने दो!
रहो प्रेम से तुम्हीं मौज से मंजु महल में
मुझे दुखों की इसी झोपड़ी में सोने दो।"(2)

प्रेमिका के विरह में कभी-कभी कवि अपनेपन को भी खो बैठता है। क्योंकि उसमें निहित आशा-निराशा सुख-दुख को कवि हँस-हँसकर, रो-रोकर भूल चुका है। सब कुछ भूल चुका है। लेकिन वेदनामयी पीड़ा को कवि सहन नहीं कर पाता। अतः पीड़ा को भी विलीन करके स्वयं पीड़ा में ही विलीन हो जाता है —

"मैं करके पीड़ा को विलीन
पीड़ा में स्वयं विलीन हुआ।"(3)

---

1. डॉ॰ लक्ष्मी नारायण दुबे – बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' व्यक्ति और काव्य – I – 1964 पृ॰ 260 में उद्धृत 'नवीन की कविताएँ। हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद
2. माखनलाल चतुर्वेदी – आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि – पृ॰ 29 V –1973, राजपाल एण्ड संस प्रकाशन॰
3. प्रेम संगीत से – भगवतीचरण वर्मा – विस्मृति के फूल – पृ॰ 152 – साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद॰

अद्यतन स्वच्छन्दतावादी कवियों में लौकिक प्रेम की भावनाएँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती हैं। कवि अपनी प्रिया के विरह में रो उठता है। अतः इनके प्रेम में वैयक्तिकता की स्पष्ट छाप मिलती है। प्रिया से कवि की प्रार्थना है कि वह उनकी भूलों को भूल जाए। स्वयं कवि अपनी पीड़ा को भूलना चाहता है। दोनों बीती हुई बातों को भूल जाएँ और केवल दोनों का संबंध स्मृति ही रहे। केवल याद ही दोनों का सहारा हो सकती है। कवि की दुःखानुभूतियों को देखिए —

"तुम मेरी भूलों को भूलो, मैं अपनी पीड़ा को भूलूँ,
तुम बीती बातों को भूलो, मैं भी उन बातों को भूलूँ,
फिर इतना भी संबंध न हो —
तुम मुझे याद कर लो, हँस लो,
मैं तुम्हें याद कर लूँ रो लूँ।"(1)

कवि को भूलने में ही प्रेमिका को अगर सुख मिले तो भूल जाने की कामना करता है कवि। लेकिन स्वयं कवि भूल नहीं पाता। वह अपना और प्रिया का संबंध किसी न किसी रूप में स्थापित करना चाहता है। स्वयं दुःख की बरसात बनना चाहता है और प्रिया से कहता है —

"तुम बन जाओ ज्योति अधर की, मैं आँखों का नीर बनूँ,
तुम मधु की मादकता बन लो मैं पतझड़ की पीर बनूँ
तुम बन जाओ तृप्ति - कुँआरी ज्वाला का मैं गात बनूँ
तुम अब पूनम-सी मुस्काओ मैं दुःख की बरसात बनूँ।"(2)

दुख की वर्षा में भीगने के कारण कवि के हृदय को वेदर्द होने लगता है, लेकिन वह दर्द बिना कुछ कहे मौन रहता है। अतः कवि दुखानुभूतियों में डूबकर वेदर्द से प्रश्न करने लगते हैं —

"पूछता हूँ, कौन हो तुम? कौन हो तुम?
ओ निठुर वेदर्द, क्यों यों मौन हो तुम?"(3)

1· नरेन्द्र - प्रवासी के गीत - पृ·80 IV सं· 2009 भारती भण्डार
2· रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' - आज के लोक प्रिय कवि - पृ·99-100 - I -1960, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6
3· जानकी वल्लभ शास्त्री - आधुनिक कवि - 14 - पृ·53 - I - 1973, सम्मेलन प्रकाशन

कवि विरह को सहन नहीं कर पाता और उससे रहा नहीं जाता। अत: तीव्र स्वर में बोल उठता है —

"आज अपने में रहा नहीं जाता है,
आज सपने में बहा जाता नहीं है,
चाहता जो वह कहा जाता नहीं है,
यह विरह अब तो सहा जाता नहीं है।"(1)

अद्यतन कवि शिव मंगल सुमन अपने अन्तर्द्वन्द्व की अनुभूतियों को अपने काव्य-संकलन 'हिल्लोल' में गीतों के रूप में बांधते हैं। अनुभूति की भूमि पर इनकी कविताएँ अपने वैभव को विस्तार करती हैं। अपने उर में निहित व्यथाओं और दु:खानुभूतियों को इन्होंने अपनी कविताओं में अत्यन्त तीव्र रूप में व्यक्त किया है। इनकी व्यथा इतनी तीव्र हो जाती है कि यह उन सब-का आभार प्रकट करता है जिन्होंने उनको इस व्यथा को प्रदान किया था। उनकी वेदनामयी दु:खानुभूतियों का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है —

"आभारी हूँ मैं उन सब का
दे गए व्यथा का जो प्रसाद
जिस जिससे पथ पर स्नेह मिला —
उस उस राही को धन्यवाद।"(2)

इस प्रकार उपर्युक्त प्रमुख दृष्टान्तों से विदित होता है कि हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में अनुभूतियों के अन्तर्गत सुखात्मक, सुख-दुख मिश्रित और दु:खात्मक अनुभूतियाँ उपलब्ध होती हैं। कतिपय तीव्र विद्रोहात्मक अनुभूतियाँ तो निराला की कविताओं में मिलती हैं। दु:खानुभूति की मात्रा तो इनमें प्रचुर है। वे प्राय: कवियों की वैयक्तिक वेदना और पीड़ा से संबंधित हैं। अत:

---

1. जानकीवल्लभ शास्त्री कृत 'शिप्रा' से – आधुनिक कवि – 14 पृष्ठ 53 – प्रथम संस्करण 1973, सम्मेलन प्रकाशन

2. प्रलय सृजन से। शिवमंगल सुमन – आज का लोकप्रिय कवि – पृ. 64 – 1 – 1972, राजपाल एण्ड सन्स् प्रकाशन.

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में अनुभूति की तीव्रता का तात्पर्य कवि की वैयक्तिक विरहमयी दुःखानुभूतियों से लिया जा सकता है।

व्यक्तिवाद :-

श्रीमद्भागवत् गीता में कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा था — 'कुल और वृक्ष मैं हूँ, कहनेवाला, करनेवाला, मरने वाला, मारनेवाला मैं ही हूँ। राजा-प्रजा और समस्त जीवों में अन्तर्भूत अनुभूति मैं ही हूँ। हर्ष, विषाद, सुख-दुःख-पाप-पुण्य में भी मैं हूँ।' यहाँ 'मैं' का सम्बन्ध 'अहं' से है और इस 'अहम्' का तात्पर्य व्यक्तिवादी भावना से है। साहित्य को साहित्यकार के व्यक्तित्व से काटकर देखने की प्रवृत्ति को सिद्धान्त रूप में जितनी भी सही माना जाए, व्यावहारिक रूप से कदापि उचित नहीं लगता। यही व्यक्तिवादी भावना स्वच्छन्दतावाद का मूल है। इस व्यक्तिवादी चेतना से ही कवि की बुद्धि तीव्र होती है और उसमें स्वातंत्र्य की लालसा बनी रहती है। इसके कारण कवि की अनुभूतियाँ, कल्पनाएँ बदलती हैं, नये रूप-रंग धारण कर लेती हैं। स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति के प्रति जो नवीन दृष्टिकोण मिलता है, उसका मूल कारण कवि की वैयक्तिकता ही है। नवीनता, विद्रोह, मानववादी भावनाएँ - सामाजिक होते हुए भी कवि की वैयक्तिक भावना इनमें अप्रत्यक्ष रूप से काम करती है। स्वच्छन्दतावादी कविताओं में उपलब्ध प्रवृत्तियों में तथा उनकी पूर्ववर्ती कविताओं की प्रवृत्तियों में, जो भिन्नता और मौलिकता पायी जाती है, उसका श्रेय व्यक्तिवाद को ही है। क्योंकि मौलिकता का अभाव व्यक्तित्व का बाधक है, जो कवि के लिए अत्यन्त आवश्यक है। बिना व्यक्तित्व दिखलाये कवि-प्रतिपत्ति किसी को नहीं मिल सकती। वह व्यक्तित्व चाहे भाव में हो, छन्द में हो, या प्रकाशन-रीति में हो, पर कविता में हो जरूर। जिसकी कविता में व्यक्तित्व नहीं, उसे कवि नहीं, अनुकरणकर्ता कहना चाहिए।'[1]

---

1. मुकुटधर पाण्डेय का लेख 'काव्य स्वातंत्र्य' से। उद्धृत - डॉ प्रेमशंकर —हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ.74 - 1 - 1974 - मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

आधुनिक हिन्दी कवियों की तीव्र व्यक्तिवादी भावनाओं के कारण, उनके भाव, छन्द तथा उनकी भाषा और प्रकाशन-शैली में भी स्वच्छन्दता पायी जाती है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में व्यक्तिवाद एक ऐसा आधारभूत सिद्धान्त है जिसके बिना इसका कोई महत्व नहीं है। अतएव यह निर्विवाद है कि संपूर्ण हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य व्यक्तिवाद का सुन्दर प्रकाशन है। हिन्दी का विकासकालीन स्वच्छन्दतावादी काव्य वस्तुनिष्ठ न होकर व्यक्तिनिष्ठ है और उसमें व्यक्ति का मूल्य ही प्रतिनिधि का काम करता है।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में श्रीधर पाठक का प्रकृति-प्रेम, उनका स्वतंत्र आलम्बनात्मक प्रकृति-चित्रण, छन्द, पद-विन्यास, वाक्य-विन्यास आदि में जो नयापन मिलता है, वह उनके व्यक्तित्व का ही प्रतीक है। रामनरेश त्रिपाठी का वैयक्तिक प्रेम क्रमशः विकसित होकर विश्व प्रेम में परिणत होना, उनकी वैयक्तिक भावनाओं को सूचित करता है। प्रसाद की वैयक्तिक गंभीरता उनकी कृतियों में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। कवि अपनी वैयक्तिक भावनाओं को प्राकृतिक वस्तुओं से तुलना करता है अर्थात् कवि की व्यक्तिवादी भावनाओं और प्रकृति के गुणों में समानता दिखायी गयी है। कवि की मनोवृत्तियाँ, अन्तःकरण रूपी नवीन मनोहर नीड़ अर्थात् हृदय में खग-कुलों की तरह सो रही हैं। नील गगन की तरह उसका हृदय शान्त है। बाह्य प्रकृति और कवि की आन्तरिक प्रकृति दोनों सोती हैं।(1) इस प्रकार प्राकृतिक वस्तुओं के साथ कवि अपनी वैयक्तिक भावनाओं को स्थापित करते हुए, इस प्रकार के प्राकृतिक वातावरण को अपने जीवन का प्रथम प्रभात समझता है। प्रस्तुत

---

1. 'मनोवृत्तियाँ खग-कुल-सी थीं सो रहीं,
अन्तःकरण नवीन मनोहर नीड़ में।
नील गगन-सा शान्त हृदय भी हो रहा,
बाह्य आन्तरिक प्रकृति सभी सोती रहीं।

— 'कानन कुसुम' - पृ॰ 21, VIII सं॰ 2033, भारती भण्डार

कविता में कवि प्राकृतिक गुणों और अपनी वैयक्तिक गुणों का एक-दूसरे पर आरोपित करते हुए दोनों में समानता का अनुभव करता है —

"सद्य:स्नात हुआ फिर प्रेम-सुतीर्थ में
मन पवित्र उत्साहपूर्ण भी हो गया,
विश्व विमल आनन्द-भवन-सा बन रहा
मेरे जीवन का वह प्रथम प्रभात था।"(1)

'कानन कुसुम' और 'झरना'(2) में संकलित यह कविता प्रसादजी की व्यक्तिवादी भावनाओं का एक उत्कृष्ट उदाहरण समझा जा सकता है। क्योंकि प्रकृति भी इनके व्यक्तित्व की तरह गंभीर हो गयी है।

'आँसू' प्रसाद की वैयक्तिक पीड़ाओं का ही एक संघात है। अतः इस काव्य में 'मैं', 'मेरा' जैसे व्यक्तिवादी सूचक शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है। देखिए —

"ये सब स्फुलिंग हैं <u>मेरी</u> इस ज्वाला गयी जलन के
कुछ शेष चिह्न हैं केवल <u>मेरे</u> उस महा मिलन के।"(3)

"<u>मेरे</u> क्रन्दन में बजती क्या वीणा"(4)

"कहता <u>मैं</u> क्या! कहा नी"(5)

"<u>मैं</u> बलखाता जाता था।"(6)

"<u>मेरे</u> इस मिथ्या जग के"(7)

"<u>मैं</u> झलता उठा"(8)

1· प्रसाद - कानन कुसुम - पृ· 22 III - 1933 भारती भण्डार
2· प्रसाद - झरना - पृ· 20 - I - 1976 - प्रसाद प्रकाशन
3· आँसू - पृष्ठ सं· 9 - अध्ययन संस्करण - I - 1976, प्रसाद प्रकाशन
4· वही - पृ· 14
5· वही - पृ· 15
6· वही - पृ· 15
7· वही - पृ· 16
8· वही - पृ· 17

"मैं अपलक नयनों से निरखा करता उस छवि को"(1)

"मेरा विश्वास घना था।"(2)

"मेरे जीवन की उलझन बिखरी थीं उनकी अलकें"(3)

"मुक्ताक्त चाँदनी जल से मैं उठता था मुँह धोके"(4)

"मैं कोरे आँख निरखता पथ, प्रात समय सो जाता"(5)

"मेरे छवि की परछाई"(6)

"मैं सिहर उठा करता हूँ बरसाकर आँसू धारा"(7)

"मैं व्यर्थ प्रतीक्षा लेकर गिनता अम्बर के तारे"(8)

"मेरा भी कोई होगा"(9)

"क्यों छलक रहा दुख मेरा ऊषा की मृदु पलकों में"(10)

"हाँ, उलझ रहा सुख मेरा संध्या की घन अलकों में"(11)

"वेदना विकल फिर आई मेरे चौदहों भुवन में"(12)

1• आँसू – पृ• 18 – 1 – 1976 – अध्ययन संस्करण – प्रसाद प्रकाशन
2• वही – पृ• 24
3• वही – पृ• 25
4• वही – पृ• 27
5• वही – पृ• 32
6• वही – पृ• 33
7• वही – पृ• 36
8• वही – पृ• 36
9• वही – पृ• 36
10• वही – पृ• ~~36~~ 47
11• वही – पृ• 47
12• वही – पृ• 53

"मेरे आहों में जागो सुस्मित में सोनेवाले"(1)

"मंगल किरणों से रंजित मेरे सुन्दरतम जागो"(2)

"मेरे अंतरिक्ष संगिनि"(3)

"मेरे चिर-जीवन-संगिनि"(4)

लहर में प्रसाद की व्यक्तिवादी भावना निम्नांकित पंक्तियों में स्पष्ट होती है।

"सुनकर क्या तुम भला करोगे मेरी भोली आत्म-कथा?

अभी समय भी नहीं - थकी सोयी है मेरी मौन व्यथा।"(5)

'कामायनी' में आकर कवि की व्यक्तिवादी भावनाएँ प्रसंगानुकूल पात्रों के द्वारा अभिव्यक्त हुई हैं। कामायनी का मनु जब आणव मल(6) से ग्रस्त हो जाता है तब उसमें 'मैं' की भावना वैयक्तिक 'अहं' का प्रतीक बन जाता है।

"मैं हूँ, यह वरदान सदृश क्यों लगा गूंजने कानों में

मैं भी कहने लगा, 'मैं रहूँ' शाश्वत नभ के गानों में।"(7)

---

1. आँसू - पृ. 65 - अध्ययन संस्करण - 1 1976 - प्रसाद प्रकाशन
2. वही - पृ. 65
3. वही - पृ. 69
4. वही - पृ. 75
5. लहर - पृ. 11 - VII 2021 - भारती भण्डार
6. त्रिक् दर्शन में, जो शैव दर्शन का एक विशिष्ट प्रकार है, 'अज्ञान' को 'मल' कहा गया है, जो जीवों का 'बन्ध हेतु' है। इस 'मल' के कई प्रकार माने गये हैं। जैसे- आणव मल, कार्म मल और मायीय मल। जीवात्मा इन्हीं तीन प्रकार के मलों से आच्छन्न रहती है। इन मलों में आणव मल सब से बड़ा बन्धहेतु माना गया है। आणव मल स्वातंत्र्य शक्ति के अनुचित अभ्युदय से पैदा होता है।
   — हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - पृ. 154 - 1 - सं 2028 (दशम भाग)
7. कामायनी - पृ. 35 - आशा सर्ग - XIII सं. 2024 - भारती भण्डार

कामायनीकार ने कथा शृंखला के अनुसार स्वयं अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है। नारी के प्रति उनकी वैयक्तिक भावनाओं को देखिए —

" नारी ! तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास रजत नग पग तल में, "(1)

प्रसाद नारीत्व पर अपार विश्वास रखनेवाले साहित्यकार हैं। श्रद्धा पात्र को ऊँचा स्थान प्रदान करना ही कामायनी का प्रधान ध्येय है। अतः कवि ने नारी का पक्ष लेकर श्रद्धा के द्वारा अपनी वैयक्तिक भावनाओं को व्यक्त किया है। इस कारण नारी की 'अहं' प्रवृत्ति कामायनी में मिलती है। भावी सन्तान की कल्पना करते हुए श्रद्धा कहती है —

" सूना न रहेगा यह मेरा लघु विश्व कभी जब रहोगे न,
मैं उसके लिए बिछाऊँगी फूलों के रस का मृदुल फेन "(2)

'मेरी छाती से लिपटा', (3) 'मेरे पीछा पर छिड़केगा' (4) और 'देखूँगा अपना चित्र मुख' (5) जैसी पंक्तियों में श्रद्धा की 'अहं' की भावनाएँ प्रकाशमान दीखती हैं। श्रद्धा के इन वैयक्तिकतापूर्ण शब्दों से मनु का मन क्षुब्ध हो उठता है और उसकी 'अहम्' अर्थात् व्यक्तिवादी चेतना जागृत हो उठती है और बोल उठता है —

" यह जलन नहीं सह सकता मैं
चाहिए मुझे मेरा ममत्व,

---

1. कामायनी – पृ. 114 – लज्जा सर्ग – XIII सं. 20 24 भारती भण्डार
2. वही – पृ. 159 – ईर्ष्या सर्ग
3. वही – पृ. 160
4. वही – पृ. 160
5. वही – पृ. 160

इस पंचभूत की रचना में

मैं रमण करूँ बन एक तत्व। "(1)

इस प्रकार मनु की व्यक्तिवादी भावनाएँ संघर्ष सर्ग(2) में भी अति तीव्र रूप से व्यक्त हुई हैं।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य का घोषणा पत्र 'पल्लव प्रवेश' में पंत की आवेशमयी व्यक्तिवादी प्रवृत्ति मुखर उठी है। 'वियोगी होगा पहिला कवि'(3) 'मेरा पावस ऋतु सा जीवन'(4) 'सजल मेरा सोने का गान'(5) जैसी पंक्तियों में पंत की व्यक्ति भावनाएँ अन्तर्निहित हैं। कवि अपने बचपन, यौवन और जीवन की तुलना गुलाब के फूल से करके अपने वैयक्तिक गुणों को उस पर आरोपित करते हैं और गुलाब के गुणों को स्वयं ग्रहण कर लेते हैं। देखिए —

" मुसकुराते गुलाब के फूल !

कहाँ पाया मेरा बचपन? —

सुमन, मेरा भोला बचपन? "(6)

1· प्रसाद – कामायनी पृ· 161 – XIII आवृत्ति सं· 2024 – भारती भण्डार का प्रकाशन

2· किन्तु स्वयं भी क्या वह सब कुछ मान लूँ मैं,
तनिक न मैं स्वच्छन्द, स्वर्ण सा सदा गलूँ मैं।
जो मेरे है सृष्टि उसी से भीत रहूँ मैं,
क्या अधिकार नहीं कि कभी अविनीत रहूँ मैं? – कामायनी – पृ· 198 संघर्ष सर्ग
(ii) 'हके ! मुझे वह वस्तु चाहिए
जो मैं चाहूँ, – वही – पृ· 202

3· पंत – पल्लव – पृ· 62 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन

4· वही – पृ· 62

5· वही – पृ· 118

6· वही – पृ· 129

यहाँ कवि ने अपने वैयक्तिक गुण को गुलाब पर आरोपित किया है और आनेवाली पंक्तियों में गुलाब के गुण को कवि स्वयं ग्रहण कर लेता है।

"कुहाँ-सा था मेरा बचपन !
कुहाँ-सा है मेरा यौवन !
कुहाँ-सा हो मेरा जीवन !"[1]

'वीणा' में उपलब्ध व्यक्तिवादी भावनाओं में 'अहं' की मात्रा कम है। कवि 'ग्रन्थि' में आकर प्रेम से वंचित हो जाता है और कंगाल बन जाता है। उनकी व्यक्तिवादी भावनाएँ अभाव सहित हैं।

आज मैं कंगाल हूँ - क्या यह प्रथम
आज मैंने ही कहा?[2]

मैं अकेला विपिन में बैठा हुआ ...

कहीं कहीं पंत ने गीतों के प्रति अपने हृदयानुराग को वैयक्तिकतापूर्ण शब्दों में व्यक्त किया है —

भूलो न अपना ध्यान ....
गीत मेरे उठ सायं प्रात,
गान हों मेरे मेरे प्राण
अखिल प्राणों से मेरा गान।[3]

इस प्रकार पंत की कविताओं में उपलब्ध व्यक्तिवादी भावनाएँ उनके व्यक्तित्व के अनुरूप कोमल और शान्त प्रतीत होती हैं।

---

1. पंत - पल्लव - पृ. 129, 130 - VIII 1977 राजकमल प्रकाशन
2. पंत - वीणा - ग्रन्थि - पृ. 136 नवीन संस्करण 1972 - राजकमल
3. पंत - गुंजन - पृ. 106 × सं. 2018 भारती भण्डार

निराला में यह व्यक्तिवादी भावना अत्यन्त तीव्र है। इनका वैयक्तिक जीवन निराशा-मय रहा। अतः इनकी कविताओं में बीच बीच इस प्रकार की वैयक्तिक भावनाएँ मिलती हैं। यथा—

"हो गया व्यर्थ जीवन,
मैं रण में गया हार।"(1)

निराला ने अपनी कविता 'हिन्दी के सुमनों के प्रति पत्र' में अपना आत्म-परिचय इस प्रकार दिया है —

"ईर्ष्या कुछ नहीं मुझे, यद्यपि मैं ही वसन्त का अग्रदूत,
ब्राह्मण-समाज में ज्यों अछूत मैं रहा आज यदि पार्श्वछवि।"(2)

'सरोज स्मृति' उनके व्यक्तिगत जीवन का एक दुःखात्मक अंग है। दुखित निराशावान होने पर भी इनके अन्तरंग में विश्वास सदा एक कोने में रहता था। अतः उनकी कविताओं में आशा-पूर्ण व्यक्तिवादी भावनाएँ भी यत्र-तत्र मिलती हैं। देखिए —

"अभी न होगा मेरा अन्त !
अभी-अभी ही तो आया है
मेरे वन में मृदुल वसन्त —
अभी न होगा मेरा अन्त !
मेरे ही अविकसित राग से
विकसित होगा बन्धु दिगन्त —
अभी न होगा मेरा अन्त।"(3)

---

1. निराला - अनामिका - पृ. 86 - वन बेला VI 1979 - भारती भण्डार
2. वही - पृ. 118
3. परिमल - पृ. 93-94 - प्रथम बार 1978 राजकमल

जीवन के ढलते ढलते कवि निराला अकेले पड़ जाते हैं और समझते हैं कि उनके दिवस की सन्ध्या-बेला निकट आ रही है —

" मैं अकेला,

देखता हूँ, आ रही,

मेरे दिवस की सन्ध्या बेला। "(1)

कवि को अब पता नहीं है कि उसने आज तक क्या किया है? और विश्व को दिया क्या है? वेदनासे भरे हुए उनके शान्त वैयक्तिक शब्दों को 'आराधना' में सुन सकते हैं —

" न जाना, मैंने किया क्या,

कहाँ से मैंने लिया क्या,

विश्व को मैंने दिया क्या,

लगा है अवरोह अब तक ! "(2)

'आवाहन', 'बादल राग', 'जागो फिर एक बार' जैसी विद्रोहात्मक कविताओं में इनके विद्रोहपूर्ण व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप मिलती है।

महादेवी वर्मा की कविताओं में उनकी वैयक्तिक भावनाएँ ही प्रमुख स्थान रखती हैं। इनकी कविताओं में 'मैं मेरा' जैसे व्यक्तिवाद को सूचित करनेवाले शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है। 'याम' में संकलित कविताओं में से कुछ प्रमुख दृष्टान्त यहाँ प्रस्तुत हैं।

"क्या अमरों का लोक मिलेगा

तेरी करुणा का उपहार?

रहने दो हे देव ! अरे

यह मेरा मिटने का अधिकार! "(3)

1· निराला - अपरा - पृ· 55-56 X। संस्करण सं· 2032, भारती भण्डार का प्रकाशन

2· निराला - आराधना - पृ· 56 तृतीय संस्करण सं· 2031, भारती भण्डार लीडर प्रेस, इलाहाबाद

3· महादेवी - 'यामा' - पृ·7 पाँचवाँ संस्करण 197। - भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद

मैं हूँ रानी मतवाली,
मेरी आँखें सोती हैं।(1)
उनसे कैसे छोटा है मेरा यह भिक्षुक जीवन?(2)
मेरा छोटा सा जीवन(3)
मैं कंपन हूँ, मैं आँसू हूँ, मैं मदिरा और मैं छाया।(4)
मेरे जीवन की जागृति(5)
मैं दिन को ढूँढ रही हूँ, जुगनू की उजियाली में(6)
अलि कैसे उनको पाऊँ?(7)

बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ।
कूल भी हूँ कूलहीन प्रवाहिनी भी हूँ।
दूर तुमसे हूँ अखण्ड सुहागिनी भी हूँ।
नील घन भी हूँ सुनहली दामिनी भी हूँ।
अधर भी हूँ और स्मित की चाँदनी भी हूँ।(8)

मेरे सब सब में प्रिय तुम, किससे व्यापार करूँगी मैं?(9)
मैं प्रथम रश्मि सी कर शृंगार(10)
बन्दिनी बनकर हुई मैं बन्धनों की स्वामिनी सी।(11)
मैं नीर भरी दुख की बदली(12)

---

1. महादेवी वर्मा-यामा - पाँचवाँ संस्करण - 1971 - भारती भण्डार - इलाहाबाद - पृ. 10
2. वही - पृ. 17
3. वही - पृ. 26
4. वही - 33
5. वही - पृ. 46
6. वही - पृ. 89
7. वही - पृ. 111
8. वही - पृ. 143
9. वही - पृ. 176
10. वही - पृ. 190
11. वही - पृ. 223
12. वही - पृ. 233

अद्यतन स्वच्छन्दतावादी कवियों में 'मैं' की भावना प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है। वह अपनेपन का दावा करता है। इन कवियों का 'अहं' का भाव अभाव मन से प्रस्त प्रतीत होता है। क्योंकि इन कवियों में स्वातंत्र्य की लालसा है। यह कवि कभी अपने को सागर का गर्जन समझता है और कभी जीवन का किलव। वह अपने को समर्थ एवं महान् समझता है।

"मैं हूँ समर्थ, मैं हूँ महान् !
कितना नीचा मेरा मस्तक
कितना ऊँचा आसमान।
मैं सागर का गर्जन हूँ,
मैं जीवन को किलव हूँ।"(1)

इन कवियों की व्यक्तिवादी भावनाएँ बादलों के बीच की छोटीसी फटन में भी कूद पड़ती हैं —

"बादलों के बीच छोटी-सी फटन है
ज्यों, गुलाबी रंग का परदा कहीं से फट गया हो !
इस फटन के बीच से होकर अगर मैं कूद जाऊँ,
कौन गिरने से उधर मुझको संभालेगा?"(2)

'कचन' की कविताओं में उनके व्यक्तिवादी स्वर सर्वत्र गूँजते हैं। कवि अपना 'आत्म-परिचय' इस प्रकार देता है —

"मैं जग जीवन का भार लिए फिरता हूँ
मैं निज उर के उद्गार लिए फिरता हूँ
मैं निज रोदन में राग लिए फिरता हूँ

---

1. भगवतीचरण वर्मा - त्रिपुरति के फूल - पृ. 4, 129 साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद।
2. दिनकर - कोयला और कवित्व - पृ. 9 - 1 - 1964 जनवरी, उदयाचल

मैं खण्डहर का भाग लिए फिरता हूँ।
मैं दुनिया का हूँ एक नया दीवाना।"(1)

कवि अपने 'एकान्त संगीत' में अपनी वैयक्तिक भावना को इस प्रकार व्यक्त करता है –

"मरना तो होगा ही मुझको,
जब मरना था तब मर न सका!
मैं जीवन में कुछ न कर सका।"(2)

अतः बच्चन की चेतना एकान्त व्यक्तिवादी है।(3)

अज्ञेय की प्रारंभिक कविता 'उड़ चल हारिल' में हारिल पक्षी उनकी व्यक्तिवादी विद्रोह-चेतना का प्रतीक है। इनकी रहस्यवादी कविताओं में भी इनकी व्यक्तिवादी भावनाएँ प्रकट होती हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में इनके 'अहं' के भाव का तीव्र रूप मिलता है।

"मैं उस असीम शक्ति से
संबन्ध जोड़ना चाहता हूँ–
अभिभूत होना चाहता हूँ
जो मेरे भीतर है
शक्ति असीम है
मैं शक्ति का एक अणु हूँ,
मैं भी असीम हूँ।"(4)

---

1. बच्चन – आज का लोक प्रिय हिन्दी कवि – पृ. 41-42 IX 1976 राजपाल एण्ड सन्स
2. वही – पृ. 59
3. नगेन्द्र : आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ – पृ. 80 V 1979, नेशनल
4. सं. डॉ. कृष्णनाथ मदान – कविता और कविता – पृ. 30 – I – 1967, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 6

सदा व्यक्तिवाद साहित्यकार से जुड़ा हुआ रहता है। अतः इसका कोई अन्त नहीं है। हिन्दी की नयी कविताएँ भी इसका अपवाद नहीं हैं। 'तीसरा सप्तक' के कवियों में भी इस प्रकार के व्यक्तिवादी स्वर कुछ हैं। 'तीसरा सप्तक' का कवि अपने को नया कवि कहता है। देखिए —

"मैंने कब कहा कि मेरा धर्म है
मर्म सहलाकर व्यथा सुला देना
मैंने कब कहा कि मेरा कर्म है?
मैं नया कवि हूँ - इसी से जानता हूँ
सत्य की चोट बहुत गहरी होती है,
मैं नया कवि हूँ।"(1)

इस प्रकार प्रमुख दृष्टान्तों से ज्ञात होता है कि हिन्दी का स्वच्छन्दतावादी काव्य, दूसरे शब्दों में व्यक्तिवादी काव्य है।

अन्य प्रवृत्तियाँ :

नवीनता, विद्रोह और मानववाद

पुरातनता के प्रति विद्रोह करना ही नवीनता है। नवीनता और विद्रोह दोनों क्रमिक रूप से विकसित होकर मानववाद का रूप धारण कर लेते हैं। स्वच्छन्दतावादी काव्य में ये तीनों तत्व अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में ये तीनों प्रवृत्तियाँ साथ-साथ चलती हैं। अतएव इन तीनों का समन्वित विश्लेषण उपयुक्त प्रतीत होता है।

1. 'मैंने कब कहा' कविता - सर्वेश्वरदयाल सक्सेना - तीसरा सप्तक' - पृ 218
तृतीय संस्करण 1967, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी

आलोच्य कालीन कवि गुरुभक्त सिंह 'भक्त' ने अपने महाकाव्य 'नूरजहाँ' में परम्परागत अथवा किसी पौराणिक पात्र को प्रमुखता न देकर मानवी नूरजहाँ को नायिका बनाकर अपनी मानवतावादी भावना का परिचय दिया है। मानव की विभिन्न मनोवृत्तियों को लेकर, मनुष्यता के मनोवैज्ञानिक इतिहास का प्रतिपादन 'कामायनी' में किया गया है। इस दृष्टि से हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में ही नहीं, वरन् सम्पूर्ण हिन्दी काव्य क्षेत्र में यह एक नवीन प्रयत्न है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी कवि ने हिन्दी काव्य क्षेत्र में नवीनता का उद्घाटन करके समय की माँग के अनुरूप अपनी मानवतावादी भावनाओं को भी व्यक्त किया है। उनका आदर्श केवल गृह अथवा देश नहीं है प्रत्युत समग्र विश्व है। विश्व को ध्यान में रखकर इनकी मानववादी भावनाएँ विकसित हुई हैं। अतः हिन्दी का कवि विश्व मानववाद की स्थापना करना चाहता है। विषमता की पीड़ा से व्यस्त इस महान विश्व को बदलना चाहता है। कवि मानव को विधाता का मंगल वरदान सुनाकर शक्तिशाली विजयी बनाने का प्रयत्न करता है। कवि कामना करता है कि निरुपाय विकलतापूर्वक बिखरे हुए शक्ति के विद्युत्कणों का समन्वय हो जाए ताकि समस्त मानवता विजयिनी हो जाए।(1) कवि मानव को हँसाकर सुखी बनाना चाहता है और उसी के द्वारा दूसरों को भी हँसाकर अपने सुख को विस्तृत कर लेने का आदेश देता है। स्वयं जीकर दूसरों को भी जिलाने की मंगल कामना करता है।(2) इस प्रकार कवि की

1· विषमता की पीड़ा से व्यस्त हो रहा स्पन्दित विश्व महान्,
यही दुःख सुख विकास का सत्य यही भूमि का मधुमय दान। — 'कामायनी' श्रद्धा सर्ग - पृ· 62
'और यह क्या तुम सुनते नहीं विधाता का मंगल-वरदान—
शक्तिशाली हो, विजयी बनो विश्व में गूँज रहा जय गान।' — श्रद्धा सर्ग - पृ· 65
'समन्वय उसका करे समस्त विजयिनी मानवता हो जाए।' — श्रद्धा सर्ग - पृ· 67

2· औरों को हँसते देखो मनु हँसो और सुख पाओ,
अपने सुख को विस्तृत कर लो सब को सुखी बनाओ। — 'कर्म सर्ग' - पृ· 140
जीने दे सब को फिर तू भी सुख से जी लो। — 'संघर्ष सर्ग' - पृ· 209
— प्रसाद — कामायनी XIII सं· 2024 - भारती भण्डार

मानवतावादी भावना व्यापक रूप धारण करके आनन्दमयी बन जाती है —

"देखो नहीं यहाँ कोई भी नहीं पराया"
हम अन्य न और कुटुम्बी
हम केवल एक हमीं हैं,
तुम सब मेरे अवयव हो
जिसमें कुछ नहीं कमी है।"[1]

'पंत' कृत 'पल्लव' स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में बिलकुल नये गुणों को साथ लेकर आया है। यह कवि पुराने फैशन को किसी पसन्द नहीं करता और उसे बिलकुल आउट आफ डेट बताता है।[2] अतः वह 'नव सम्पत्ति' का आग्रह करता है —

"नव छवि, नव रंग के केलि किसलय
नव वय के अलि, नव कुसुम चय,
मधुर प्रणय नव, नव मधु संचय
जग मधुछत्र विशाल सुपूरन —"[3]

सर्वत्र नवीनता लाने हेतु कवि विद्रोह करता है और युग का नृत्य चाहता है ताकि भूतल कृतकृत्य हो जाए —

"नृत्य करो, नृत्य करो
शिशिर समीर
मरुत अधीर
प्रलयंकर नृत्य करो
मृत्यु से न स्पर्श करो

---

1. प्रसाद - कामायनी - पृ. 295 - XIII - सं. 2024 - भारती भण्डार
2. पंत - पल्लव - पृ. 24 - पल्लव प्रवेश VIII 1977, राजपाल।
3. पल्लविनी - पृ. 213 - चतुर्थ परिवर्धित - सं. 20 2[illegible] - राजपाल

ताण्डव गति नृत्य करो।
भूतल कृतकृत्य करो।"[1]

कवि परिवर्तन चाहता है। क्योंकि परिवर्तन से ही विश्व में उत्थान-पतन की संभावनाएँ हैं। अतः परिवर्तन को सम्बोधित करके कवि कहता है —

'अहे निष्ठुर परिवर्तन !
तुम्हारा ही ताण्डव नर्तन विश्व का करुण विवर्तन !
तुम्हारा ही नयनोन्मीलन, निखिल उत्थान, पतन।
जगत् का अविरत हृत्कंपन, तुम्हारा ही भय सूचन।"[2]

महान् परिवर्तन होने के उपरान्त कवि चाहता है कि समाज में स्थित रूढ़ि-रीतियाँ नष्ट-भ्रष्ट हो जाएँ। मानव को श्रेणी-वर्गों में विभक्त करने की प्रवृत्ति अदृश्य हो जाए। इस प्रकार मानववाद पर विश्वास करते हुए कवि एक आदर्श समाज की कल्पना करता है।[3] मानव को हृदय के विश्वास और मानवपन को न खोने का वे आदेश देते हैं। क्योंकि मानव पृथ्वी का वासी है और वसुधैव कुटुंब का प्रवासी है। कवि को नये मनुष्य में परम विश्वास है। यह अल्प प्राण युग है लेकिन वह महाप्राण में विश्वास करता है और उन्हें मानव चेतना पर विश्वास है।[4] कवि को विहग, सुमन सुन्दर लगता है और मानव सब से सुन्दरतम लगता है।[5]

---

1. 'युगवाणी' – पन्त । – पंत – 'युगवाणी' – पृ. 118 व 119, IV– 1959, राजकमल
2. पंत – 'पल्लव' – पृ. 143 व 144 VIII 1977 – राजकमल
3. 'रूढ़ि रीतियाँ जहाँ न हों आराधित,
   श्रेणी वर्ग में मानव नहीं विभाजित!
   धन बल से हो जहाँ न जन-श्रम शोषण,
   पूरित भव जीवन के निखिल प्रयोजन।' .. पंत .. 'युगवाणी' से।
4. साहित्य सन्देश.. पृ. 30 । .. फरवरी 1968..पंत का वक्तव्य.. हरिवंशप्रिया महापात्र द्वारा उद्धृत
5. 'सुन्दर हैं विहग, सुमन सुन्दर,
   मानव ! तुम सब से सुन्दरतम।'
   — पंत – पल्लविनी – पृ. 322 IV – सं. 2020 राजकमल प्रकाशन.

क्योंकि मानव कवि के मन का मानव है और उसके गानों के गाने हैं और उसे अपने मानस का स्पन्दन समझता है।[1] इस प्रकार मानव को सराहते हुए कवि गूंज उठता है —

" गूंजे जग ध्वनि से आसमान -
सब मानव मानव है समान। "[2]

और कोकिल से ऐसा गान सुनना चाहता है जिससे जीर्ण पुरातन नष्ट-भ्रष्ट होकर नवल मानव-पन पल्लवित हो जाए —

" गा, कोकिल, बरसा पावक कण!
नष्ट भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन,
ध्वंस भ्रंश, जग के जड़ बंधन।'
पावक-पग धर आए नूतन,
हो पल्लवित नवल मानवपन। "[3]

निराला की कविताओं में इन प्रवृत्तियों का सुन्दर समन्वय मिलता है। इन्होंने कथ्य-शैली के क्षेत्र में नवीनता का प्रतिपादन किया था। कवि कामना करता है कि सभी क्षेत्रों में नूतन अनुराग संचरित होवें और प्राचीनता बिखरकर झर जाएँ —

" गरज-गरज घन अन्धकार में गा अपने संगीत,
बन्धु, वे बाधा-बन्ध-विहीन,
आँखों में नव जीवन की तू अंजन लगा पुनीत,
बिखर झर जाने दे प्राचीन। "[4]

निराला की विद्रोही रचनाएँ धारा, आवाहन, बादल-राग, जागो फिर एक बार जैसी कविताओं में चमकती हैं। धारा के बहने के कारण आज सारे बन्धन ढीले पड़ गये हैं और प्राण

1. 'तुम मेरे मन के मानव, मेरे गानों के गाने;
मेरे मानस के स्पन्दन, प्राणों के चिर पहिचाने। "
— पंत - 'गुंजन' - पृ. 35 X सं. 2018, भारती भण्डार
2. पंत - ज्योत्स्ना - पृ. 66 IV 1978 - राजकमल प्रकाशन
3. पंत का युग पथ - पृ. 10 - 11 - 1964 - भारती भण्डार, इलाहाबाद
4. निराला - अनामिका - पृ. 67 VI - 1979, भारती भण्डार

मुक्त हो गया है, सारा क्रन्दन रुक गया है। क्योंकि धारा बेरोक-टोक से बह रही है —

देखते नहीं? — वेग से हहराती है —
नग्न प्रलय का-सा ताण्डव हो रहा —
चाल कैसी मतवाली — लहराती है।
प्रकृति को देख, मीचती आँखें,
त्रस्त खड़ी है — अर्राती है। "(1)

और इनके किसलय के बादल अपना सिर ऊँचा करके नव-जीवन की ओर ताक रहे हैं —

"नव जीवन की, ऊँचा कर सिर,
ताक रहे हैं, ऐ किसलय के बादल!
फिर फिर!"(2)

निराला मानवतावादी थे। उन्होंने अपनी मानवतावादी भावनाओं को यत्रतत्र अपनी कविताओं में प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त किया है। उनके लिए —

"मानव मानव से नहीं भिन्न
निश्चय हो श्वेत, कृष्ण अथवा,
वह नहीं क्लिन्न;"(3)

और —

"सब में हैं श्रेष्ठ, धन्य मानव,
'धन्य, श्रेष्ठ मानव'!"(4)

कहकर अपने मानवतावादी दृष्टिकोण को स्पष्ट रूप से घोषित किया है। समाज के द्वारा उपेक्षित, तिरस्कृत दुःखी पददलिता विधवा, दो टूक कलेजे को करते पछताते हुए पथ पर आनेवाला भिक्षुक तथा

---

1. निराला - परिमल - पृ. 113 - प्रथम बार 1978 - राजकमल
2. वही - पृ. 138
3. निराला - अनामिका - पृ. 19 VI 1979 भारती भण्डार
4. वही - पृ. 24 व 25

इलाहाबाद के पथ पर पत्थर तोड़नेवाली के प्रति सहानुभूतिपूर्ण वर्णन प्रस्तुत करके इन्होंने अपनी मानववादी एवं लोक भावनाओं को स्पष्ट किया है। आप ने पंचवटी प्रसंग में राक्षसी शूर्पणखा को मानवी-सुन्दरी रूप प्रदान करके न केवल अपनी मानववादी भावना का परिचय दिया है बल्कि इन्होंने अपनी नवीनता, विद्रोहात्मकता एवं स्वच्छन्दता को भी घोषित कर दिया।

'मेरे लिए तो मनुष्य एक सजीव कविता है'(1) कहकर महादेवी ने अपनी मानववादी भावना को व्यक्त किया है। स्वच्छन्दतावाद का कवि अत्यन्त तीव्र रूप से विप्लव गायन करता है। कवि की भावनाओं में विद्रोह की ज्वालाएँ फूट पड़ती हैं। इन पंक्तियों में स्वच्छन्दतावाद का मूल स्वर विद्रोह की भावनाएँ स्पष्ट रूप से झलकती हैं।

'कवि, कुछ ऐसी तान सुनाओ जिससे उथल-पुथल मच जाए,
एक हिलोर इधर से आए एक हिलोर उधर से आए -
बरसे आग, जलद जल जाए, भस्मसात् भूधर हो जाए
नभ का वक्षस्थल फट जाए, तारे टूक-टूक हो जाएँ।"(2)

कवि आज के मानव को उसके स्वयं के गुणों को याद दिलाता है। मानव अपने जीवन का प्रेम तत्व, दया, त्याग का मूल्य अब तक नहीं अनुमान कर सका। खेद की बात है कि वह स्वयं अपने अधिकारों के प्रति उदासीन है और स्वयं निहित मानवता को भी पाने में असमर्थ पा रहा है। अतः मानव को चाहिए कि वह अपनी मानवता को पहिचाने और विकसित करें। देखिए -

'है प्रेम तत्व इस जीवन का, यह तत्व न अब तक जान सका!
तू दया-त्याग का मूल्य अरे अब तक न यहाँ अनुमान सका!
तू अपने ही अधिकारों को अब तक न हाय पहचान सका।
तू अपनी ही मानवता को अब तक है मानव पा न सका।'(3)

---

1. 'याम' - पृष्ठ 16 - महादेवी वर्मा की अपनी बात - V 1971, भारती भण्डार
2. कवि श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' पृ. 50 - सेतु प्रकाशन, झाँसी (1 सं. 2026)
3. भगवतीचरण वर्मा - विस्मृति के फूल - पृ. 93 'मानव' से, साहित्य केन्द्र इलाहाबाद.

'दिनकर' कृत 'हुंकार' में क्रान्तिकारी भावनाएँ अत्यन्त तीव्र रूप से व्यक्त हुई हैं। समाज में प्रचलित अन्यायों को पदच्युत करनेवाली प्रवृत्तियाँ इसमें मिलती हैं। विश्व साहित्य में क्रान्ति पर जितनी कविताएँ हैं, दिनकर की 'विपथगा' उनमें से किसी के भी समकक्ष आदर का स्थान पाने की योग्यता रखती है।(1) प्रतीत होता है कि कवि ने क्रान्ति को अत्यन्त निकट से देखा है और उसने उसे उपयुक्त नाम भी प्रदान कर दिया है — विपथगा ! विपथगा क्यों? वह स्वयं कहती है —

" मुझे विपथगामिनी को न ज्ञात
किस रोज किधर से आऊँगी?
झन-झन-झन-झन-झन-झन झनन-झनन
मेरी पायल झनकार रही तलवारों की झनकारों में,
अपनी आगमनी बजा रही मैं आप क्रुद्ध हुंकारों में ..."(2)

कवि 'बच्चन' की कविताओं में इन प्रवृत्तियों का सुन्दर संचार मिलता है। वे पुराना गीत, पुरानी गाथा को भूल जाने का आदेश देते हैं मानव को। दुःखों का राग और दुर्दिन की कहानियों को भूलकर नया-जीवन बिताने की कामना करता है। वीणा के द्वारा अपना नया सन्देश मानव तक कवि पहुँचाता है —

" भूल तू जा अब पुराना गीत, ओ, गाथा पुरानी,
भूल तू जा अब दुखों का राग दुर्दिन की कहानी,
ले नया जीवन नई झनकार वीणा बोलती है
छू गया है कौन मन के तार वीणा बोलती है।"(3)

1· दिनकर – हुंकार की भूमिका – पृ·7 – बेनी पुरी ·· उदयाचल प्रकाशन
2· वही – पृ·75 व 72
3· बच्चन – आज का लोकप्रिय हिन्दी कवि – पृ·7। IX 1976, राजपाल एण्ड सन्स·

'बच्चन' का 'हालावाद' आध्यात्मिक विद्रोह और नव-जीवन का प्रतीक है। इनकी मधुशाला मानवता का मन्दिर है जिसमें आर्य, आर्येतर — सभी बिना भेद-भाव के प्रवेश कर सकते हैं।

"सब आर्य-प्रवर आ सकते हैं सब आर्येतर आ सकते हैं,
इस मानवता के मन्दिर में सब नारी-नर आ सकते हैं।"[1]

ये मानवतावाद के कट्टर पक्षपाती हैं। उनका कथन है कि मैंने मानव के हृदय को देखा है। मेरी कविता के विषय हैं, मनुष्य के दुःख, सुख, शोक, विषाद, हर्ष, विमर्ष, संघर्ष — उसके मन-प्राणों का मन्थन।[2] अतः वह अपनी 'प्रणय-पत्रिका' में गूँज उठता है —

"मैं मानव हूँ और रहूँगा,
इतना ही मेरा दावा है।"[3]

इस प्रकार बच्चन की कविताओं में नवीनता, विद्रोह और मानववाद का सुन्दर समन्वय मिलता है जिसका मूल आधार व्यक्तिवाद है।

आधुनिक कवि 'शिवमंगल सुमन' नयी कामना, नयी भावना, नूतन सन्देश, नयी प्रेरणा, नव कल्पना एवं नूतन परिवेश द्वारा मानव जीवन की विषमताओं को ध्वंस करके धरा को मुक्त करना चाहता है। उद्वेलित कवि नव-जीवन की नयी ज्योति का आह्वान करता है —

"नव-जीवन की नयी ज्योति का
नया सबेरा, नया तराना
नहीं पुराना, नहीं पुराना
नया राग है नया राग है।"[4]

---

1. कवि श्री बच्चन - पृ. 11 - 1 सं. 2026 - सेतु प्रकाशन
2. बच्चन का वक्तव्य — वहीं पृ. 2
3. 'बच्चन' आज का लोकप्रिय हिन्दी कवि - पृ. 86 - नवाँ संस्करण 1976 - राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली
4. कवि श्री शिवमंगल सुमन - पृ. 46 - 1 - 2026 सेतु प्रकाशन, — कविता - नई आग से.

कवि जाति वर्ग की छोटी-छोटी दीवारों को तोड़कर मानवता का धर्म बनाने का आदेश मनुष्य को देता है। क्योंकि नयी फसल बोने का दिन आ गया है और इतिहास नया मोड़ ले रहा है।

"जाति वर्ग की छोटी-छोटी दीवारों को तोड़ो
मानवता का धर्म बनेगा, गोड़ो, मिट्टी गोड़ो।
नयी फसल बोने का दिन है क्योंकि बीज बिखराओ,
नया मोड़ इतिहास ले रहा आगे कदम बढ़ाओ।"(1)

इन पंक्तियों में नवीनता, विद्रोही बनकर मानवतावाद की स्थापना करती है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने इस क्षेत्र में नवीनता का प्रतिपादन किया है। विद्रोह की भावनाएँ निराला और बच्चन में प्रमुख रूप से मिलती हैं। ये मानवतावादी भावनाएँ तत्कालीन परिस्थितियों की उपज है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य के अद्यतन काल की कविताओं में मानवतावाद ने अत्यन्त तीव्र एवं व्यापक रूप धारण कर लिया है।

आ. कलागत प्रवृत्तियाँ :

काव्य-रूप, भाषा, शैली और छन्द

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रमुख रूप मुक्तक है। लेकिन फिर भी कुछ प्रबन्ध काव्यों में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक रूप से दृष्टिगोचर होती हैं। उदाहरण — 'कामायनी'। लोक-जीवन का महाकाव्य 'लोकायतन' में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक रूप से मिलती हैं। एकान्तवासी योगी, उजड़ ग्राम, श्रान्त पथिक — अनुवादित खण्ड काव्य हैं। मिलन, पथिक, स्वप्न — खण्ड काव्य हैं। प्रेम पथिक, महाराणा का महत्व लघु प्रबन्ध रचनाएँ हैं। 'आँसू' एक पर्यायिकबद्ध-

1. कवि श्री शिवमंगल सुमन - पृ. 48 और 45, कविता 'नया मोड़' से — 1 20 26
सेतु प्रकाशन — कविता - नई आग से।

काव्य है जिसमें कथा विशेष का निर्वाह न होकर कवि के भाव और विचारों को क्रमपूर्वक निरूपित किया गया है।[1] 'ग्रन्थि' प्रगीतात्मक प्रबन्ध शैली में लिखित अतुकान्त प्रणयमूलक खण्ड-काव्य है। निराला कृत 'तुलसीदास' को चरितमूलक खण्ड काव्य के अन्तर्गत रखा गया है।[2] 'अनामिका' में संकलित 'सरोज स्मृति' शोकगीति है और 'राम की शक्ति पूजा' पौराणिक आख्यानक गीति है। 'परिमल' में संकलित 'पंचवटी प्रसंग' लघु काव्य नाट्य रचना है। स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण से लिखित 'निशीथ' को प्रणयमूलक खण्ड काव्य के अन्तर्गत रखा गया है। 'उर्वशी' काव्य नाट्य है। 'कानन कुसुम', 'झरना', 'लहर', 'पल्लव', 'वीणा', 'युगान्त', 'युगवाणी', 'युगपथ', 'परिमल!, 'अनामिका', 'गीतिका', 'आराधना', 'गीति-गुंज', 'यामा' आदि प्रमुख स्वच्छन्दतावादी रचनाएँ मुक्तक हैं। अतः मुक्तक रचनाएँ ही हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की श्रेष्ठ प्रतीत होती हैं। इसके अतिरिक्त यथा-स्थान उल्लिखित अद्यतन रचनाएँ प्रायः मुक्तक हैं। इनके काव्य में सूक्ष्म परिमार्जित खड़ी बोली का प्रयोग मिलता है और उसमें चित्रात्मकता की प्रधानता है। शैली की दृष्टि से हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रमुख रूप से सांकेतिक शैली, अलंकृत शैली, गुम्फितशैली और सरलशैली का प्रयोग किया है। इस काल में मुक्तछन्दों का विशेष प्रयोग हुआ है।[3]

विशेष अलंकार :-

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में स्वाभाविक रूप से रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा जैसे परंपरागत अलंकारों का प्रयोग मिलता है। लेकिन पाश्चात्य रोमाण्टिक काव्य-धारा के प्रभाव में आने के कारण आधुनिक हिन्दी कवियों ने कुछ विशिष्ट अलंकारों का प्रयोग किया है जिससे उनकी कविताओं में

1• हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - पृ• 40 - 1•20 28 × भाग, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

2• वही - पृ• 39 - पंत की 'ज्योत्स्ना', 'रूप-नाट्य' है।

3• प्रथम अध्याय में इसका विस्तृत उल्लेख है।

एक विशेष प्रकार की कलात्मकता का आविर्भाव हो गया है। इससे काव्य का सौष्ठव द्विगुणित हो गया है। स्वच्छन्दतावादी काव्य के विकास काल में इस प्रकार के रोमांटिक अलंकारों का प्रयोग प्रमुख रूप से मिलता है। इनके प्रयोग से विकासकालीन हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में एक विशिष्ट प्रकार की नवीनता और मौलिकता उपलब्ध होती है।

मानवीकरण :—

अपनी सूक्ष्म प्रतिभा का आश्रय लेकर प्रकृति के विभिन्न अंगों पर मानवीय भावों एवं व्यापारों को आरोपित करके उनके कार्यकलापों का वर्णन कल्पनात्मक ढंग से करने की कवि-प्रवृत्ति को मानवीकरण की संज्ञा दी जा सकती है। इस प्रकार के प्रयोगों से निर्जीव-सजीव अर्थात् अमूर्त-मूर्त बन जाता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रसाद, पंत और निराला ने इसका सफल प्रयोग किया है। प्रायः इन्होंने प्रकृति में नारी की सुन्दरता का अनुभव किया है।

अपनी कल्पना-शक्ति से कवि 'सन्ध्या'(1) को सुन्दरी का रूप दे दिया है जो मेघमय आसमान से परी की तरह धीरे-धीरे नीचे उतर रही है —

"दिवसावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह सन्ध्या-सुन्दरी परी सी
धीरे धीरे, "

उसके श्यामरंगीन अंचल में चंचलता का कोई आभास नहीं है और उसके दोनों अधर मधुर-मधुर प्रतीत होते हैं —

"अलसता की-सी लता
किन्तु कोमलता की वह कली

---

1. निराला - परिमल - पृ. 104 व 105 प्रथम बार 1978 - राजकमल

सखी नीरवता के कन्धे पर डाले बाँह,
छाँह-सी अम्बर-पथ से चली। ५

सन्ध्या सुन्दरी के कार्यकलापों को देखिए —

"मदिरा की वह नदी बहाती आती,
थके हुए जीवों को वह सस्नेह
प्याला वह एक पिलाती,
सुलाती उन्हें अंक पर अपने,
दिखलाती फिर विस्मृति के वह कितने मीठे सपने
अर्धरात्रि की निश्चलता में हो जाती है वह लीन,

सन्ध्या सुन्दरी अदृश्य होकर 'अम्बुजाल जननी' बन जाती है और अपना घूँघट उठाकर मुस्कराती हुई ठिठकती सी चली आ रही है —

घूँघट उठा देख मुसक्याती
किसे ठिठकती सी आती[1]

चली आनेवाली रात्रि को नारी के रूप में संबोधित करते हुए कहते हैं —

पगली हाँ सम्हाल ले कैसे
छूट पड़ा तेरा अंचल
देख बिखरती है मणिराजी
अरे उठा बेसुध चंचल ।।

फटा हुआ था नील वसन क्या ओ यौवन की मतवाली ।
देख, अकिंचन जगत लूटता तेरी छवि भोली भाली।[2]

---

1 प्रसाद - कामायनी - पृ॰ 47 - 'आशा सर्ग - XIII सं॰ 2024 - भारती भण्डार
2॰वही - पृ॰ 48

इन पंक्तियों में प्रयुक्त 'पगली', 'यौवन की मतवाली' दोनों शब्द रात्रि के लिए हैं। 'अंचल' और 'नील वसन' आकाश और 'मणिरजों' तारओं को सूचित करते हैं। उसका नील-वसन फट जाने के कारण, रात्रि रूपी नायिका की भोली-भाली छवि को यह अकिंचन जगत् लूट रहा है। रात्रि के लिए प्रयुक्त 'पगली', 'यौवन की मतवाली' 'उसकी भोली भाली छवि' मानवीकरण को सिद्ध करती हैं।

अन्य स्थल पर कवि रात्रिकालीन तारक मण्डल से युक्त चाँदिनी को पूर्ण सुन्दरी का रूप प्रदान करके इस प्रकार वर्णन करते हैं।

"तारा-हीरक-हार पहनकर, चन्द्र मुख-
दिखलाती, उतरी आती थी चाँदिनी
(शाही महलों के ऊँचे मीनार से)
जैसे कोई पूर्ण सुन्दरी प्रेमिका
मन्थर गति से उतर रही हो सौध से।"(1)

यहाँ चाँदिनी को पूर्ण सुन्दरी प्रेमिका के रूप में वर्णन किया गया है। चाँदिनी रूपी प्रेमिका तारा-हीरक हार पहनकर अपना चन्द्र-मुख दिखलाती हुई मन्थर गति से सौध से उतर रही है। 'सौध से, मन्थर गति से उतरना' नायिका की गंभीर चाल का द्योतक है।

पंत की 'छाया' सजीव नारी बन गयी है। इसमें कवि ने मानवीय भावनाओं का अनुभव किया है। कवि 'छाया' से प्रश्न करता है -

"कहो, कौन हो दमयन्ती सी
तुम तरु के नीचे सोयी?
हाय! तुम्हें भी त्याग गया क्या
अलि! नल सा निष्ठुर कोई!"(2)

---

1 'प्रसाद - महाराणा का महत्व - पृ॰ 18-19 V सं॰ 2031, भारती भण्डार
2॰ पंत - पल्लव : पृ॰ 10। VIII 1977 - राजकमल प्रकाशन

कभी कवि को छाया चमकती प्रतीत होती है और कभी भिखारिणी लगती है। कभी कभी कवि उसे अस्पृश्य, अदृश्य अप्सरा का रूप प्रदान कर देता है। देखिए :

"सखि ! भिखारिणी सी तुम पथ पर
फैलाकर अपना अंचल
सूखे पातों ही को पा क्या
प्रमुदित रहती हो प्रतिपल?
ऐ अस्पृश्य, अदृश्य अप्सरि ! यह छाया तन, छाया लोक,
मुझको भी दे दो मायाविनि, उर की आँखों का आलोक!"[1]

इस प्रकार उपर्युक्त मुख्य दृष्टान्तों से स्पष्ट है कि स्वच्छन्दतावादी कवियों को मानवीकरण पद्धति में पूर्ण सफलता मिली है।

विशेषण विपर्यय :—

दो तत्वों के संसर्ग से एक का गुण दूसरे में आरोपित हो जाना ही विशेषण विपर्यय है। यह काव्य भाषा को चित्रमय और अर्थ-व्यंजक बना देता है। काव्य में कलात्मकता और चित्रमय व्यंजना को अभिवृद्धि भी इससे होती है। यह एक लाक्षणिक प्रयोग है। इसका प्रयोग अत्यधिक सूक्ष्म रूप से कविताओं में हुआ करता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावाद के विकास कालीन कवियों ने इसका प्रयोग सफलतापूर्वक किया है। प्रमुख उदाहरणों का विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत है —

1. "धमनियों में वेदना सा रक्त का संचार"[2]

'धमनियों में रक्त का संचार' हो सकता है, लेकिन 'वेदना सा' नहीं हो सकता। अर्थात् वेदना के गुण को धमनियों के रक्त संचार में आरोपित किया गया है। यहाँ रक्त का संचार ने वेदना के गुण को ग्रहण कर लिया है।

1. पंत - पल्लव - पृ. 103-104 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन
2. कामायनी - पृ. 97 - वासना सर्ग XIII 2. 24 वि. भारती भण्डार.

2. 'प्रतिमा में सजीवता सी'[1]

यहाँ प्रतिमा सजीव नहीं हो सकती। मानव का यह धर्म या गुण, इसने ग्रहण किया है। अर्थात् मानव की सजीवता के गुण को प्रतिमा में आरोपित किया गया है।

3. 'शैशव की निद्रित स्मिति सी'[2]

यहाँ स्मिति निद्रित नहीं हो सकती, शैशव के इस गुण को इसने ग्रहण किया है। अर्थात् स्मिति में निद्रा के गुण को यहाँ आरोपित किया गया है।

4. 'तुम्हारे स्वर्णज्वाल-सी तान'[3]

'तान' स्वर्णज्वाल नहीं हो सकती। तान ने स्वर्णज्वाल के गुण को ग्रहण कर लिया है।

5. इन पर प्रभात ने फेंक आकर 'सोने का पानी'[4]

6. 'इस मीठी सी पीड़ा में' डूबा जीवन का प्याला'[5]

7. 'फूलों का गीला सौरभ पी बेसुध सा हो मन्द समीर'[6]

उपरोक्त उदाहरणों में क्रम संख्या 4-7 तक में क्रमशः पानी सोने का नहीं हो सकता, इसने सोने के गुण को ग्रहण कर लिया है। पीड़ा मीठी नहीं हो सकती, इसने मिठास के गुण को ग्रहण कर लिया है।

---

1. 'आँसू' पृ. 20 - । अध्ययन संस्करण 1976 - प्रसाद प्रकाशन
2. पल्लव - पृ. 102 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन
3. वही - पृ. 117
4. 'यामा' - पृ. 46 - V 1971 - भारती भण्डार
5. वही - पृ. 61
6. वही - पृ. 85

'गीला सौरभ' में सौरभ का विशेषण गीला है। लेकिन सौरभ तो कभी गीला नहीं हो सकता। यहाँ 'गीला' 'सौरभ' दो तत्व हैं। दोनों का संसर्ग यहाँ हुआ है। 'गीलेपन' को सौरभ पर आरोपित किया गया है। अतः विशेषण का विपर्यय यहाँ पर हुआ है। इसलिए यह विशेषण विपर्यय सिद्ध होता है।

उपर्युक्त अन्य सभी उदाहरणों में दोनों तत्वों का मिलन होता है और एक का गुण दूसरे में आरोपित भी हुआ है। अतः विशेषण विपर्यय प्रमाणित होते हैं।

ध्वन्यर्थ व्यंजना : (ONA MATO POEIA)

ऐसे शब्दों का प्रयोग करना जिससे शब्दों को सुनते ही कार्यव्यापार अथवा वस्तु का ध्वनन हो उसको हम ध्वन्यर्थ व्यंजना कह सकते हैं।

Formation of names or words from sounds that resemble those associated with the object or action to be named, on that seem naturally suggestive of it's qualities.

उदाहरण :—

1. "बीती विभावरी जाग री !

 खग-कुल कुल-कुल-सा बोल रहा,

 किसलय का अंचल डोल रहा,

 लो यह लतिका भी भर लायी —

 मधु मुकुल नवल-रस गगरी।" प्रसाद .. 'लहर'

2. "जगमग-जगमग हम जग का मग

 ज्योतित प्रतिपग करते जगमग !

चंचल, चंचल, कुश, कुश, जल जल
शिशु-उर पल पल हरते छल-छल
झिल मिल-झिल मिल, स्वर्णिल, पिंगल
आभा हिल मिल, भरते झिल मिल।"
—'पंत' - 'ज्योत्स्ना' से·

3· "गरज-गगन के गान! गरज गंभीर स्वरों में,
भर अपना सन्देश उरों में, औ' अधरों में,
बरस धरा में, बरस सरित, गिरि, सर, सागर में
हर मेरा संताप, पाप जग का क्षण भर में।"
— 'पंत' - 'पल्लव' उच्छ्वास·

उपरोक्त तीनों उदाहरणों में ऐसे शब्दों का प्रयोग हुआ है, जिन को सुनते ही तत्संबंधित कार्य-व्यवहार, व्यापार और वस्तु के ध्वनन होते हैं। प्रथम दृष्टान्त में 'उषा' के कार्य-व्यापार, दूसरे में 'जुगनू का बोध और तृतीय में गगन और उसके कार्य व्यापारों का भास होता है। अतः तीनों में ध्वन्यर्थ व्यंजना का निर्वाह सफलतापूर्वक हुआ है।

इस प्रकार तीनों विशिष्ट रोमाण्टिक अलंकारों के कारण हिन्दी विकासकालीन स्वच्छन्दता-वादी काव्य में चित्रमयता, ध्वनिव्यंजना और भाव व्यंजना का अद्भुत समन्वय मिलता है। अतः कला की दृष्टि से आधुनिक काव्य में एक नवीनता और मौलिकता मिलती है। आधुनिक काव्य को हम कला और गीति काव्य का युग कह सकते हैं।(1)

1· डॉ· कृष्ण लाल - आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास - पृ· 148 - 111 - 1952 -
हिन्दी परिषद, विश्वविद्यालय, प्रयाग·

पंचम अध्याय

प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन :

तुलना के मानदण्ड :-

तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्यों के विकास-क्रमों का उल्लेख करके उनकी तुलना करते हुए यह बतलाया जा चुका है कि इन दोनों में कुछ महत्वपूर्ण समानताएँ हैं और असमानताएँ भी। तमिल और हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों का अध्ययन करने के उपरान्त यह विदित होता है कि इन दोनों में कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं जिनकी तुलना संभव है। यद्यपि प्रवृत्तियाँ कहीं-कहीं समान-सी प्रतीत होती हैं तोभी कवियों की वैयक्तिक अनुभूतियों के विभिन्न रूप, अभिव्यक्ति की प्रणाली, कल्पना आदि में अवश्य थोड़ा-बहुत अन्तर रहता है। हमको उस कवि की तुलना ऐसे अन्य कवियों से करनी चाहिए, जिन्होंने उसी या उन्हीं विषयों पर लेखनी चलायी हो, एक ही प्रकार की समस्याओं पर विचार किया हो और जो एक ही प्रकार की स्थिति में रहे हों, अथवा लक्ष्य विशेष जिन्हें हमारा मन एक दूसरे से अलग न कर सके।[1]

1. श्यामसुन्दरदास : साहित्यालोचन - पृ. 53 अठारहवाँ संशोधित संस्करण सं. 2029, इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद.

इस सिद्धान्त के आधार पर इन दोनों में प्राप्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर कुछ प्रमुख एवं महत्वपूर्ण दृष्टान्तों को यहाँ उद्धृत करके उनका तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। क्योंकि तुलना ही उच्चतर और श्रेष्ठतर आलोचना का जीवन और प्राण है।[1] एक दूसरे से तुलना करने से ही विषय स्पष्ट होता है और मौलिकता का प्रतिपादन भी होता है।

साम्य प्रवृत्तियाँ : वस्तुगत एवं भावगत :

प्रकृति : नक्षत्र :

हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति को मानव की भाव-श्रृंखलाओं से मुक्त करके स्वतंत्र रूप से देखा है। दोनों की कविताओं में प्रकृति का स्वतंत्र रूप मिलता है। एकान्त में बैठकर हिन्दी और तमिल के कवियों ने शान्त वातावरण में, निशा-काल में नभ में चमकनेवाले नक्षत्रों को अत्यन्त मौन से दृष्टिपात करके, उनके वैभव पर अपने-अपने कल्पनात्मक विचारों को व्यक्त किया है। इस दृष्टि से हिन्दी कवि सुमित्रानन्दन 'पंत' और तमिल कवि भारतीदासन् की कविताएँ क्रमशः नक्षत्र और विण्मीन (नक्षत्र) विशेष रूप से तुलनीय है।

'पंत' ने निशा-काल में जागनेवाले नक्षत्रों को देखकर विविध रूपों में उनका संबोधन किया है। उस अनन्य छवि के समुदाय, उनके लिए अज्ञात देश के नाविक, अनन्त हृत्कंपन, नव प्रभात के अस्फुट अंकुर और निद्रा के रहस्य कानन प्रतीत होते हैं। कभी-कभी कवि को नक्षत्र असंख्य भाग्यों के धारक, असीम छवि के सावन, अक्षय निधि के आश्वासन और विश्व सुकवि के सजग नयन के रूपों में दीख पड़ते हैं।[2]

---

1. रोन्ट्सबैरी

2. ऐ अज्ञात देश के नाविक,
ऐ अनन्त के हृत्कंपन,
नव प्रभात के अस्फुट अंकुर
निद्रा के रहस्य कानन।
ऐ असंख्य भाग्यों के धारक, ऐ असीम छवि के सावन,
ऐ अक्षय निधि के आश्वासन विश्व सुकवि के सजग नयन।
— पंत : पल्लव - पृ. 114, 115 -VIII संस्करण 1977, राजकमल प्रकाशन

इसी प्रकार तमिल कवि वाणीदासन् ने भी नक्षत्रों को देखकर, विविध रूपों में उनकी कल्पना की है। नक्षत्रों के आगमन के पूर्व के प्राकृतिक वातावरण का वर्णन कवि ने यहाँ किया है। सन्ध्या के उत्तरार्द्धकाल में सूर्य की स्वर्ण किरणें पर्वतों के बीच चमक रही हैं जिससे लताएँ स्वर्ण-मयी दीख रही हैं। सूरज की किरणों के अस्त होते-होते विहंगों के समुदाय कलरव करते हुए, अपने-अपने निवास स्थान लौट रहे हैं। पश्चिम दिशा में अन्धेरा छा रहा है। दूसरे ही क्षण में इधर-उधर नक्षत्रों का आगमन होकर, फिर समस्त नभ में उनकी भीड़ लग जाती है। माला के लिए चुने हुए कुन्द के फूल, रेशमी वस्त्र में जड़ित मोती, चमकनेवाला हीरा, सागर में उत्पन्न मोती, प्रवालों का वन, स्वर्ण प्रतिमा की खिलखिलाहट आदि विविध रूपों में वाणीदासन ने नक्षत्रों की कल्पना की है। दोनों के वर्णन में पर्याप्त समानताएँ दृष्टि गोचर होती हैं। पंत ने नक्षत्रों को शशि के प्रिय सहचर कहा है और वाणीदासन ने 'चन्द्रिनी-रानी के विहार करते समय, सम्राट के पीछे जानेवाली भीड़ सी' नक्षत्रों की तुलना करके नवीन कल्पना की है। दोनों का वर्णन देखिए —

कह दो हे शशि के प्रिय सहचर,
निशानाथ दें दर्शन दान ![1]

"चन्द्रिका सम्राज्ञी विहार करते समय
सम्राट के पीछे जानेवाली भीड़ सी।"[2]

दोनों ने नक्षत्रों को सुमन के रूप में देखा है

"ऐ स्वप्नों के नीरव चुंबन
तुहिन विवस, अम्बर सुमन।"[3]

---

1. पल्लव - पृ. 116 'नक्षत्र' VIII 1977 राजकमल प्रकाशन
2. पेण्णरसि निलाप् पेण्णाळ् वेळियिल् कदाल
पेर अरसार पिन सेल्लुम कूट्टम पोल् —
— वाणीदासन - एलिल कुरतम् पृ. 36 - I 1970 विल्लि प्रकाशन, मद्रास.
3. पल्लव - पृ. 116

"चाँद और सूर्य के लिए तरसनेवाले
सुन्दर सुमन है नक्षत्र !"(1)

नक्षत्रों के सिलसिले में पंत सूर, तुलसी और मीरा का स्मरण करते हैं - जैसे

"सूर सिन्धु, तुलसी के मानस
मीरा के उल्लास अजान ;"(2)

उसी प्रकार वाणीदासन भी नक्षत्रों को अतीत तमिल राजाओं के द्वारा विसर्जित छोटे सिक्के(3) कहकर उसकी तुलना पैसों से करते हैं। इस प्रकार दोनों कवि नक्षत्रों के वर्णन में अतीत की याद करते हैं। नक्षत्रों के प्रति दोनों की कल्पनाएँ अत्यन्त रोमान्टिक हैं। दोनों ने नक्षत्रों को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान किया है। कविता के नामकरणों में भी समानता है।

मुरझाया फूल और वाड़िय मलर :-

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने कभी-कभी प्रकृति के अंगों के प्रति सहानुभूति भी प्रकट की है। हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने 'फूल' के प्रति अपनी अपनी सहानुभूतियों को प्रकट करके उसके लिए आँसू बहाये हैं। इस दृष्टि से महादेवी वर्मा की कविता 'मुरझाया फूल' और वाणीदासन की कविता 'वाड़िय मलर' (मुरझाया फूल) तुलनीय है। दोनों की वैयक्तिक अनुभूतियों में भी पर्याप्त समानताएँ उपलब्ध होती हैं। दोनों ने फूल का स्वतंत्र अस्तित्व दिखाया है।

---

1. तिगंटक्कूम परिदिक्कूम येंगुकिन्र
तिरु मलर काळ, किन मीनकाळ !
— वाणीदासन - एळिल कुरतम् — पृ. 36

2. पंत - पल्लव - पृ. 115 - VIII 1977, राजकमल प्रकाशन

3. तमिल वेन्दर देळिक्ट्ट चिन्न कासो । (पृ. 35)
— एळिल कुरतम् । 1970 - विडिल प्रकाशन, मद्रास

दोनों की भावनाएँ मुरझाये फूल के प्रति एक सी हैं। शैशव में जब यह सुमन कली के रूप में था तब पवन इसे अपने अंक में लेकर खिलाता था और मुस्कराता था। कली के पुष्पित होते ही उसकी चारों ओर भौंरे मधु के लिए मँडराने लगे। महादेवी वर्मा का वर्णन इस प्रकार है —

खिल गया जब पूर्ण तू – मंजुल सुकोमल पुष्पवर,
लुब्ध मधु के हेतु मँडराते लगे आने भ्रमर !
लोरियाँ गाकर मधुप निद्रा विवश करते तुझे,
यत्न माली का रहा – आनंद से भरता तुझे। [1]

तमिल कवि वाणीदासन ने भी मुरझाये फूल को देखकर अपनी संवेदनाओं को इस प्रकार व्यक्त किया है —

मँडराते मँडराते आनेवाले छोटे छोटे
भौंरों की सुन्दरता को देखकर, या
उन भौंरों का मधुर मधुर गीत सुनकर,
तुमने अपना मधु और सौरभ सब कुछ दान कर दिया –
उन भौंरों को – अपने को न्योछावर भी कर दिया !
पवन में तुमने नृत्य किया। उस हिलने में सुख का अनुभव किया !
हाय ! थक गये ! मुरझाकर गिर पड़े !
अब तुम्हारे बारे में ये लोग क्यों नहीं सोचते? [2]

1· महादेवी वर्मा – 'यामा' – पृ· 29 V 197 । भारती भण्डार·

2· तेडिवन्द वैन्द पूक्कळे | आडि नाय वाट्टिल, कब
चिर वण्डिन एलिलैक कण्डो, | अरैविनिल तिळैत्ताय, सोर्न्दाय,
पाडिय पाट्टैक केट्टो | वाडि नी उदिर्न्दाय ! उन्नै
उन्नै नी कोडुत्ताय कोळ्ळै? | मक्कळ येन निनैप्पदिल्लै?

— 'एल्लिल ओवियम्' – पृ· 66 तृतीय संस्करण 1977 पुदुवै तमिल कविञर मन्रम् प्रकाशन, पुदुवै।

महादेवी वर्मा भी इसी प्रकार फूल की वेदना को व्यक्त करती हैं –

कर दिया मधु और सौरभ दान सारा एक दिन
किन्तु रोता कौन है तेरे लिए दानी सुमन?(1)

दोनों कविता के अन्त में फूल को धैर्य बंधाते हुए कहते हैं और स्वार्थी लोगों की निन्दा करते हैं –

मत व्यथित हो फूल ! किसको सुख दिया संसार ने?
स्वार्थमय सब को बनाया – है यहाँ करतार ने।(2)

भौरों का सा स्वार्थी लोग
जो अपने सुख को महत्व देते हैं –
अगर विरोध करेंगे तो भी – (हे फूल !)
मैं नहीं लिखूंगा ! लिखता ही रहूँगा (तेरे प्रति)(3)

इस प्रकार मुरझाये फूल के प्रति हिन्दी और तमिल कवियों की संवेदनाएँ और सहानुभूतियाँ समान दृष्टिगोचर होती हैं।(4)

1· महादेवी वर्मा – 'यामा' – पृ· 30 v 197। भारती भण्डार
2· वही – पृ· 30
3· वण्डिनम पोल सत्यम
मकिऴ वोन्रे करुम मक्कऴ
तण्डैक्कु वन्दिट्टालुम
तयंगिड़ेन, ऎऴुदुवेन नान ! – एस्लि ओवियम – पृ· 68
4· उल्लिखित दोनों कविताएँ अँग्रेज़ी के रोमाण्टिक कवि विलियम ब्लेक की कविता 'अस्वस्थ गुलाब' से बहुत कुछ समानता रखती हैं।

O Rose, thou art sick!
The invisible worm
That flies in the night,
In the howling storm,
Has found out thy bed
of crimson joy,
And his dark secret love
Does thy life destroy. SICK RO

-- The Romantic Imagination - Page 44 - C.M.Bowra
VIII Impoession 1978 Oxford Press, London

उषा :-

तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति के श्रेष्ठ अंग उषा में मानुषिक सौन्दर्य का आरोप किया है। उषा का मानवीकरण करके उसके अद्वितीय सौन्दर्य का वर्णन अत्यन्त नवीन ढंग से किया है। इन दोनों की उषा नारी बन गयी है। इस दृष्टि से भारती और पंत की उषा का वर्णन श्रेष्ठ है। अपनी अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के अनुसार इन दोनों ने उषा को देखा है। लेकिन दोनों में मानवीय पक्ष की प्रधानता है। भारती की उषा का वर्णन देखिए :

फूलों की सी स्मितवाली उषा जियो !
उषा की वन्दना हम करते हैं।
वह अनिन्द्य सुन्दरी है
वह आकृति है और स्पष्टता प्रदान करनेवाली है
वह जीवन देती है, उत्सुकता प्रदान करती है।
वह जियो !
वह मधु है दर्शन रूपी-मधुप उसे चाहता है।
वह अमृत है। वह मरनेवाली नहीं है। वह शाश्वत है।[1]

---

1. मलरकळ पोल नगैक्कुम उषै वाऴ्क।
उर्पियै नाङ्गळ तोऴुकिन्रोम।
अवळ तिरु।
अवळ् विळिप्पु तरुकिन्राळ, तेळिवु तरुकिन्राळ।
अवळ वाऴ्क।
अवळ तेन। सिवृग वन्डु अवळै विरुम्बुकिन्रतु।
अवळ अमुदम्।
अवळ् इरप्पदिल्लै।

— भारती की कविताएँ - पृ॰423 - द्वितीय संस्करण 1978 अगस्त, पूम्बुहार प्रसुरम्, मद्रास।

पंत ने प्रकृति को नारी के रूप में देखकर, ऊषा की मृदु लाली में क्रीड़ा, कौतूहल, कोमलता, मोद, मधुरिमा, हास, विलास, लीला, विस्मय, अस्फुटता, भय, स्नेह, पुलक, सुख, सरलता, हुलास आदि गुणों का आरोप किया है। देखिए —

क्रीड़ा, कौतूहल, कोमलता, मोद, मधुरिमा हास-विलास
लीला विस्मय अस्फुटता भय स्नेह पुलक, सुख हुलास
ऊषा की मृदु लाली में।(1)

अगर एक की ऊषा में स्मिति है तो दूसरी की ऊषा में हास; एक मधु है तो दूसरी मधुरिमा। एक में अलौकिकता है तो दूसरे में नारी सुलभ लौकिक गुण और एक गंभीर है तो दूसरी सरल। इतना होते हुए भी दोनों ने ऊषा को नारी का रूप दे दिया है।

सरोज और सेन्तामरै : हिन्दी और तमिल के कवियों ने मन को आनन्द प्रदान करनेवाले सरोज को परंपरागत रूप में न देखकर अर्थात् नारी के मुख से संबंध न जोड़कर स्वतंत्र रूप से देखा है और उसका वर्णन किया है। हिन्दी क्षेत्र में प्रसाद ने सरोज और तमिल क्षेत्र में भारती दासन ने 'सेन्तामरै' (लाल सरोज) का वर्णन किया है। प्रसाद का सरोज सूर्य के अभ्युदय से प्रफुल्ल होकर सरोवर में खिल रहा है —

अरुणाभ्युदय से हो मुदित मन प्रशान्त
सरसी में खिल रहा है
प्रथम पत्र का प्रसार करके सरोज
अलि-गन से मिल रहा है।(2)

कवि का कथन है कि मानव को सुपाठ सरोज से मिलता है। उसके उत्सर्गपूर्ण कार्यों की प्रशंसा करते हुए कवि कहते हैं —

"तुम्हें हिलावे भी जो समिरन, तो पावे परिमल प्रमोद-पूरित

---

1. पंत - पल्लव - पृ. 88 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन
2. प्रसाद - कानन कुसुम - पृ. 42 VIII 2033 वि. भारती भण्डार का प्रकाशन 'सरोज'

तुम्हारा सौम्य है मनोहर, तरंग कहकर उछल रहा है।
तुम्हारे केसर से हो सुगन्धित परागमय हो रहे मधुव्रत !(1)

भारतीदासन ने लाल सरोज के प्रत्येक अंग की सुन्दरता का वर्णन प्रस्तुत किया है। जैसे : उसके पत्र, कुसुम, दल। इसके अतिरिक्त उन्होंने सरोज से संबंधित जल, पानी की बूंदों का वर्णन भी किया है।

सीधी जमीन पर
आंखों को आकर्षित करनेवाली हरे रंग की थाली में,
असंख्य प्रकाशमयी मोतियों की बिखराहट सी —
सरोवर-जल में, विराजमान सरोज पत्र
के ऊपर स्वच्छ जल की बूंदों को, मैंने देखा।(2)

कवि आगे सरोज के प्रत्येक दल का वर्णन अत्यन्त सरस ढंग से करते हैं। देखिए :

एक दल कचे का कपोल !
एक दल नेत्र से तुलनीय है
एक दल अपने प्रियतम रूप को देख-देखकर

1• प्रसाद – कानन कुसुम – पृ• 43 VIII सं• 2033 भारती भण्डार•
2• कण्डेन् तरैयिल मोट्टु
कवळर पच्चैत्तट्टिल
एण्णाद ओळि मुत्तुक्कळ्
इरैवदुपोल कुळत्तुट-
रुम्मीरिले पचक्क
तामरै इलैयुम, मेले
तेम्मीरिन तुळियुम कण्डेन। — अभ्रकिन सिरिप्पु
—तेन्तामरै – पृ• 26 XVI 1980 तेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै, तमिलनाडु

मुस्कराने वाले प्रफुल्लित अधर ! और
एक दल हृदय है। दूसरा
दान दे देने से अकाम रहेलो है। "(1)

इस प्रकार कविता के शीर्षकों में पर्याप्त समानता मिलने पर भी उसके वर्णन में विभिन्नताएं पायी जाती हैं। जहाँ प्रसाद का वर्णन सामान्य है वहाँ भारतीदासन का वर्णन सरोज के प्रत्येक अंग को लेकर विशेष कल्पना लोक को प्रस्तुत करता है। इतना होते हुए भी दोनों की कविताओं के अन्त में व्यक्तिवादी भावना स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। देखिए — जब प्रसाद कहते हैं —

'विशेष का हो तुम पर
यही हृदय से निकल रहा है। '(2)

तब भारतीदासन सरोज पर मुग्ध होकर कहते हैं —

'एन्नै नान इऴन्देन'(3) अर्थात् ('मैं अपने को खो गया।')

---

1. ओरिवळ कुळ्वैक्कनम्!
ओरिवळ विऴिएय ओक्कुम
ओरिवळ तन मणाळन
उवविनै क्कण्डु मक्कु
पुरिक्कुम उदडु ! मद्रुम
ओरिवळ पोलार नेंजम!
वाश्चिचकन्द
उळ्ळ कैयाम मद्रोन्! — अऴहिन सिरिप्पु - पृ. 28

2. कानन कुसुम - पृ. 43 - VIII ऋ 33 भारती भण्डार

3. अऴहिन सिरिप्पु - पृ. 29 : XVI 1980 - रोन्तमिल निलैयम्।

मध्याह्न :-

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने न केवल प्रभात और सन्ध्या का वर्णन किया है, बल्कि उनकी दृष्टि मध्याह्न पर भी पड़ी है। तपनेवाले मध्याह्न का एक चित्र प्रसाद और भारतीदासन ने खींचा है। दोनों के वर्णन में दिनकर की किरणें आग की तरह चमकती हैं। हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य में इस प्रकार का वर्णन एक नवीनता का प्रतीक है। प्रसाद के ग्रीष्म कालीन मध्याह्न का चित्र यहाँ प्रस्तुत है –

'विमल व्योम में देव-दिवाकर अग्नि चक्र से फिरते हैं
किरण नहीं, ये पावक के कण जगती-तल पर गिरते हैं
छाया का आश्रय पाने को जीवन-मंडली गिरती है
चण्ड दिवाकर देख सती-छाया भी छिपती फिरती है।' (1)

भारतीदासन ने 'अलक' नामक कविता के शीर्षक के अन्तर्गत मध्याह्न का एक ज्वाला-मुखी चित्र प्रस्तुत किया है –

'दिन आकाश में सूर्य की किरणें
फैलती थीं। मेघों के समूह ने
तरह-तरह के चित्रों को उत्पन्न किया,
हाथियों के समूह ! तपनेवाले माणिक्य के झरने।
नील रंग के विविध चित्र ! धूम की भीड़ !
ज्वाला मुखी पहाड़े।(2)

---

1. प्रसाद – कानन कुसुम – पृ. 30 VIII 1933 भारती भण्डार

2. पकल वानिल कदिरिन वीच्चु
पचवटु ! मुकिलिनंगळ
वगै वगै ओवियंगळ
वळ्ळिनन : यानैक्कूट्टम तह तह एनुम माणिक्क अरुविकळ
नील वान ! पुकै क्कूट्टम ! एरिमलैकळ।
– अष्ठकिन सिरिप्पु – पृ. 35 XVI 1980 सेन्तमिल निलैयम.

मध्याह्न वेला में सूरज की किरणों और बादलों का एक काल्पनिक चित्र यहाँ हमें मिलता है।

दोनों के भावों में यद्यपि असमानताएँ मिलती हैं, फिरभी दोनों में मध्याह्न के स्वाभाविक गुणों का वर्णन मिलता है। प्रसाद के वर्णन में चण्ड दिवाकर को देखकर 'सती छाया' भी छिपती फिरती है। इसमें मानवीकरण का प्रयोग कवि ने किया है। मध्याह्न वेला में भारती-दासन को मेघों के समूह 'हाथियों की भीड़' सा प्रतीत होता है। अतः इनकी कविताओं में 'छाया' और मेघों के 'समूह' सजीव बन गये हैं। दोनों के चित्रों में प्रकृति का आलम्बनात्मक रूप मिलता है।

चींटी :-

हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्रों में विषयों के चुनाव में नवीनता दृष्टिगोचर होती है। अतः इन दोनों की काव्यगत प्रवृत्तियाँ स्वच्छन्दता की ओर मुड़ती हैं। इन दोनों भाषाओं के कवियों ने प्रकृति के साधारण लघु अंग, भूमि पर विचरनेवाली, चींटियों का वर्णन किया है। इस दृष्टि से पंत की 'चींटी' और भारतीदासन् की 'चींटी की तपस्या' का वर्णन अत्यन्त रोचक है। अपनी-अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के अनुरूप चींटी का वर्णन करने पर भी, इन दोनों के चित्रों में स्वाभाविकता है। पंत की चींटी पिपीलिका की पाँति है —

'चींटी को देखा?
वह सरल विरल काली रेखा
तम के तागे-सी जो हिल डुल
चलती लघु पद पल पल मिल जुल
वह है पिपीलिका की पाँति—'(1)

---

1 . सुमित्रानन्दन पन्त - युगवाणी - पृ. 27, IV संस्करण 1959 - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली .

भारतीदासन की चींटियाँ क्रमिक रूप से एक ही पंक्ति में चल रही हैं। रास्ते में न जाने कितनी रुकावटें आती रहीं। वे शान्त चित्त हो, सब को संभालकर चल रही हैं। वे मनुष्यों की तरह हिचकती नहीं, डरती नहीं, वरन् अपने पथ में क्रम से चलती जा रही हैं। देखिए –

'चींटियाँ चल रही थीं –
रास्ते को छोटे पत्थर ने रोका –
फिसली चढ़-उतर चींटियाँ चल रही थीं।
डिबिया पथ में रही ;
घूमकर जानेवाला मनुष्य सा न होकर –
बिना रुकावट का अनुभव किये,
डिबिया पर चढ़कर – पुनः उतरकर
चींटियाँ चल रही थीं।'(1)

इसी प्रकार रास्ते की दीवार को भी पार करती जा रही थीं।

दोनों का दृष्टिकोण चींटियों के प्रति अलग-अलग होने पर भी उनको अपनी कविताओं में स्थान देकर अपनी स्वच्छन्द भावनाओं का परिचय इन कवियों ने दिया है।

चाँदनी और वैशिष्ट्य :-

हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने चाँदनी को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान किया है। चाँदनी में इन्होंने मानवीय भावनाओं का अनुभव किया है। इनकी चाँदनी मानवीय-

---

1. एऱुम्बुकळ नडन्दु कोण्डिरुन्दन, वऴियिल
सिक्कल तडुत्ततु, एैरि इऱंगी
एऱुम्बुकळ नडन्दु कोण्डु इरुन्दन ! पेट्टि
कुऱुक्किल किडन्ददु : सुट्टिक्कोण्डु
पोगुम मनिदरिन निलै पेरामल
वऴि कोणामल, वरि कोणामल
पेट्टि मेल एैरिपिन पुरम इऱंगी
एऱुम्बुकळ नडन्दु कोण्डु इरुन्दन। – पृ. 57 'एऱुम्बिन तवम्'
भारतीदासन - कुयिल पाडलकळ । 1977 – पूम्पुहार प्रसुरम, मद्रास.

भावनाओं की अनुगामिनी नहीं है प्रत्युत मानवीय भावनाएँ इसकी अनुगामिनी हैं। पंत प्रत्यक्ष रूप से चाँदनी में नारी की सुन्दरता का आरोप कर दिया है। नीले नभ के शतदल पर बैठी हुई चाँदनी को कवि ने इस प्रकार वर्णन किया है।

नीले नभ के शतदल पर वह बैठी शारदा हासिनि,
मृदु करतल पर शशिमुख धर,
नीरव अनिमिष एकाकिनि !
दिन की आभा दुलहिन बन,
आई निशि-निभृत शयन पर,
वह छवि की छुई मुई सी
मृदु मधुर लाज से मर मर।
जग के दुख दैन्य शयन पर यह रुग्णा जीवन बाला,
रे कब से जाग रही, वह आँसू की नीरव माला।[1]

इस प्रकार पंत की चाँदनी पूर्णतया नारी बन आयी है। भारती की चाँदनी भी नारी है, वह मन को आनन्द प्रदान करनेवाली है। कोमल मेघों में छिपी हुई है। उस पर भारती के विविध विचार देखने लायक है। पहले वे चाँदनी का संबोधन करते हैं —

सीमाहीन आकाश और सागर के बीच उदित होनेवाली
ओ चाँदनी !
मन को लुभाकर आँखों को आनन्द प्रदान करनेवाली
ओ चाँदनी ![2]

---

1. पंत – पल्लविनी – पृ. 240-243 IV परिवर्धित सं. 2020 – राजकमल प्रकाशन

2. एल्लै इल्लादोर वानक्कडलिडै वेण्णिलावे !
विळिम्बु कमलम् अळिप्पदोर नोवेन्निल वृवे वेण्णिलावे!
वेण्णिलावे – ओ ! श्वेत चाँदनी
– पृ. 170 – भारती की कविताएँ II 1978 – पूम्पुहार प्रसुरम, मद्रास।

और बाद में उसकी सुन्दरता का वर्णन करने लगते हैं —

मृदुल मेघों के परदे में छिपी हुई, ओ चांदिनी !

तेरा शारीरिक सौन्दर्य खूब दीख पड़ रहा है, ओ चांदिनी !

कवि के कथन पर लज्जित होकर वह अपने तन को पूर्ण रूप से छिपा लेती है। तब कवि कहता है —

मेरे शब्दों को सुनकर, लज्जित होकर

ओ चांदिनी ! – तुमने

अपने ज्योतिपूर्ण वदन को पूर्ण रूप से छिपा लिया है

ओ चांदिनी !

अतः कवि चांदिनी से क्षमा की याचना करता है और प्रार्थना करता है कि वह अपनी सुन्दरता को दिखाकर अन्धकार को दूर करें।

इस नीच ने जो कार्य किया है उसे

क्षमा कर दो चांदिनी ! – अंधेरे

को दूर करके तुम अपना सौन्दर्य दिखाओ

ओ चांदिनी !

---

1. मेल्लिय मेघात तिरस्कृळ   मेरिंदडम वेन्निलावे ! – उन्नन
मेनियंदु मिगे पट्ट कणुदु वेन्निलावे !
सोल्लिय वार्त्तैयल नाणुट्रे पोलुम वेन्निलावे ! – निन
सोति वदनम मुमुदुम मरैत्तने वेन्निलावे !
पुल्लियन सैयद पिळै पोरुत्ते अळ वेन्निलावे ! इरुळ
पोंगिद्कुरैयदु निनदु एल्लि काट्टुदि वेन्निलावे।

— भारती की कविताएँ – पृ॰ 172 – II 1978 अगस्त, पूम्बुकार प्रसुरम – मद्रास॰

इस प्रकार दोनों ने अपनी-अपनी रुचि के अनुकूल चांदनी की कल्पना की है। नामकरण में समानता है किन्तु भावों में भिन्नता है।

बादल :-

हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों के लिए बादल प्रिय विषय है। इन कवियों ने प्रकृति के इस अंग को लेकर विविध प्रकार की कल्पनाएँ की हैं। एक का बादल सुरपति का अनुचर है तो दूसरे का बादल लोगों के जीवन का मूल है। एक की बदली सागर के तन को छूनेवाली है तो दूसरे की विद्रोह का रूप धारण कर लेती है। बादल से संबंधित कविताओं में इन कवियों की निजी भावनाएँ स्पष्ट रूप से मिलती हैं। इस दृष्टि से पंत का बादल, निराला का बादल-राग, वाणीदासन और सुरदा के 'मुकिल' विशेष रूप से उल्लेखनीय एवं तुलनीय हैं। हिन्दी कवि पंत का बादल अपना परिचय इस प्रकार देता है —

सुरपति के हम ही हैं अनुचर, जगत्प्राण के भी सहचर,
मेघदूत की सजल कल्पना चातक के प्रिय जीवनधर।
हम सागर के धवल हास हैं, जल के धूम, गगन की धूल
अनिल फेन, ऊषा के पल्लव, वारि वसन, वसुधा के मूल।(1)

अगर पंत का बादल चातक के जीवन धर और जगत्प्राण के सहचर हैं तो वाणीदासन का बादल दक्षिणी पवन, कुंद की लता का जीवन धर है और जगत को प्राण देनेवाला है। तमिल कवियों ने बादल का परिचय स्वयं देते हुए उसकी महत्ता को घोषित करके उसकी कल्पना भी की है। वाणीदासन का बादल पर्वतों के बीच जन्म लेता है। उनको संबोधित करते हुए कवि कहते हैं —

पर्वतों के बीच तुम्हारा जन्म हुआ - तुम
कुंद-फूलों के बीच पल्लवित हुए ...

---

1. पंत - पल्लव - पृ. 122, 126 - VIII 1977 राजकमल प्रकाशन।
'बादल कविता'

दक्खिनी हवा के प्राण हो तुम !
कुन्द लता के जीवन धर हो तुम !
नभ में विचरनेवाले चंद्र-सूर्य के प्राण हो तुम !
लोगों के जीवन तुम ही हो !
तुम ही मूल हो ! असीम सुख, समृद्धि तुम ही हो !
लोगों के प्राण तुम हो हो ! तुम जियो! (1)

तमिल कवि सुरता बदली की वन्दना करते हुए कहते हैं —

उदधि-तन को छूनेवाली, दीर्घ पर्वत पर लेटनेवाली,
वर्षा-धन देनेवाली पर्वत पुत्री,
बीच-बीच गरज गरज अम्बर रंग रो आनेवाली,
कड़ी धूप को दूर कर शीतल राहत आनेवाली !(2)
तुम्हारे हम वन्दना करते हैं !

1• मलैहकै पिरन्दाय । मुलै पुविकै वळन्दाय,
तेन्रलुक्कु उयिर नी ! मुल्लै चिरकोडिक्कु उयिर नी !
वानमश्लै तिकळुम तिंगळ ञायिरुक्कु उयिर नी।
मक्कळ ओन्रिय वाळवुम नीए ! उरि पोरुळ नीए !
इन्बम तुन्बम वळमुम नीए ! कुडिक्कु उयिर नीए !
वाळी! — पृष्ठ । 25
— 'एलिल ओवियम्' — वाणीदासन ॥। 1977 पुदुवै तमिल कविञर मन्रम, पुदुवै

2• कडलुडल तोडुबवळे, नेडुमले तुइलबवळे
निधि तर मलै मकळे,
इडै इडै इडियुड ने इरळ निर एल्लुड मै
कोडु वेयल तुयर केड वे कुळिरोडु वन्दनेए।
सुरता — तेन मले — पृ॰ 15— चतुर्थ संस्करण 1977, सुरदा पदिप्पकम्
प्रकाशन॰

उपर्युक्त तीनों बादलों से भिन्न होकर निराला का बादल-राग पूर्ण रूप से स्वच्छन्दता की ओर उन्मुख होता है। न वे बादल की कल्पना करते हैं और न इनके बादल अपना परिचय स्वयं देते हैं। इनके बादल भी कहीं की तरह क्रान्ति के प्रतीक हैं। धूम-धाम मचानेवाले हैं। सभिल कवियों के बादल कोमल प्रतीत होते हैं, लेकिन इनके बादल कठोर ही नहीं वरन् विप्लव के नव-जल-धर हैं। इनके बादल गरजने लगते हैं —

"झूम-झूम मृदु गरज-गरज घन घोर!
राग-अमर! अम्बर में भर निज रोर!"

अतः निराला में भी वे गूँज उठते हैं —

"अरे वर्ष के हर्ष!
बरस तू, बरस-बरस रसधार!
पार ले चल तू मुझको,
बहा, दिखा मुझको भी निज
गर्जन-भैरव संसार!
उथल पुथल कर हृदय —
मचा हलचल —
चल रे चल, —
मेरे पागल बादल!"(1)

निराला ने बादल को वर्ष के हर्ष, ऐ निर्बन्ध, ऐ उद्दाम, अपार कामनाओं के प्राण, बाधा रहित विराट, ऐ विप्लव के प्लावन, ऐ सम्राट, वज्र-घोष से ऐ प्रचण्ड, आतंक जमानेवाले, सिन्धु के अश्रु कहकर संबोधन किया है। 'बादल' के इस वर्णन में प्रत्यक्ष रूप से कुछ समानताएँ मिलती हैं जैसे पंत के बादल सागर के धवल हास हैं तो रुद्रा की काली सागर के तन को छूने-

---

1• निराला - परिमल - पृ॰ 133, 34 व 35 - । 1978 राजकमल प्रकाशन

वाली है। पंत का बादल वसुधा के मूल हैं और वाणीदासन का बादल भी लोक-प्राण हैं। इस प्रकार विषय का चुनाव एक होने पर भी अभिव्यक्त करने की प्रणाली, उनकी कल्पनाएँ, बादल के प्रति उनकी भावनाएँ अवश्य भिन्न हैं। सब से बड़ी विशेषता यह है कि भिन्न काल, भिन्न परिस्थितियों में पलने पर भी तमिल और हिन्दी कवियों की दृष्टि बादल पर पड़ी है, और उल्लिखित चारों कवियों ने बादल को स्वतंत्र रूप से देखकर उसे मानवीय भावनाओं से मुक्त किया है।

उषा और संध्या का आगमन :

हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने 'उषा के आगमन' और 'संध्या के उतरने' का वर्णन अत्यन्त रोचक ढंग से किया है। इनके वर्णन में कल्पना का अति मिलता है। पन्त की उषा, आँखों में अलसायी लेती हुई गुलाब की तरह खिलकर आती है —

"तुम नील कुसुम पर नभ के जग,
उषे ! गुलाब-सी खिल आयीं।
अलसायी आँखों में भरकर
जग के प्रभात की अरुणाई।"(1)

लेकिन वाणीदासन ने प्रभात कालीन वातावरण का एक सुन्दर चित्र प्रस्तुत करते हुए उषा का स्वागत किया है —

"श्वेत चाँदनी पश्चिम दिशा में,
प्रकाश मन्द होकर डूबती है,
सूरज प्राची दिशा में मुस्कराता है,
और मयूर गीत गाते हैं,

---

1. पन्त - 'ज्योत्स्ना' - पृ. 10 - चतुर्थ आवृत्ति 1978 राजकमल प्रकाशन.

कुन्द-फूलों का सौरभ फैलता है,

शीतल हवा फूलों के सौरभ लेकर चलती है,

पेड़ों की शाखाएँ हिलती हैं, पुष्पित होकर, उषा आती है।"(1)

'सन्ध्या' को हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने रूपसी और सुन्दरी के रूप में देखा है। जैसे :

"मौन तुम सुन्दरि कौन?

व्योम से उतर रही चुपचाप ..."(2)

और -

"दिवसावसान का समय

मेघमय आसमान से उतर रही है

वह सन्ध्या-सुन्दरी परी-सी

धीरे-धीरे,"(3)

लेकिन तमिल कवि सन्ध्या को न रूपसी के रूप में देखता है और न सुन्दरी के रूप में। वह प्रकृति की लीलाओं का उल्लेख करते हुए सन्ध्या के आगमन का वर्णन अत्यन्त रोचक ढंग से करता है :

"मुस्कराहट-सी कुन्द-कली को पुष्पित कर,

फूलों की सुगन्ध में भ्रमर-जाति को बेहोश कर,

कन्याओं के मृदुल मन को तरसाकर,

मधु से वेष्टित सरोज को बन्द कर,

छोटे श्याम कोकिल को गीत गाने को कहकर,

स्वच्छ सागर जल को अन्धा बनाकर,

---

1. वाणीदासन - एलिल् ओवियम् - 1 - 1970, किल्ली प्रकाशन, मद्रास (पृष्ठ 39 'काले प्रभात)

2. पल्लविनी - पृ. 209 IV सं. 2020 - राजकमल प्रकाशन

3. निराला - परिमल - पृ. 164 - 1 - 1978 राजकमल प्रकाशन.

मेरे मन को इन राबों में लुभाकर,
रजनी को अपना आगमन सूचित करते हुए आती है संध्या।"(1)

इस प्रकार उषा और संध्या को लेकर दोनों कवियों की कल्पनाएँ खूब मुखर उठी हैं। इनमें हिन्दी कवियों ने प्रायः उषा और संध्या में नारी-सौन्दर्य का अनुभव किया है। तमिल कवियों की दृष्टि में समस्त प्रकृति उषा और संध्या को अलंकृत करती है।

प्रेम :

हिन्दी और तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेम के अलौकिक और लौकिक दोनों रूप मिलते हैं। भाषा-प्रेम तमिल की विशेषता है। हिन्दी क्षेत्र में प्रेम का उदात्त रूप प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। यहाँ दोनों काव्य में प्राप्त राष्ट्र-प्रेम के रूपों की तुलना की जाती है। भारती और निराला ने, आत्मा और परमात्मा का संबंध स्थापित करते हुए, अपनी अलौकिक प्रेम भावनाओं को व्यक्त किया है। इस दृष्टि से भारती की कविता 'कण्णम्मा एन कादली' - 6 और निराला की कविता 'तुम और मैं' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। दोनों कवियों ने अपने को आत्मा और ईश्वर को परमात्मा के रूप में वर्णित किया है। कण्णम्मा भारती के लिए परमात्मा का प्रतीक है। अपना और कण्णम्मा का संबंध स्थापित करते हुए भारती कहते हैं -

"तुम हो उजाली, मैं हूँ आँखें,
तुम हो वीणा, मैं हूँ उँगलियाँ,

---

1. पुन्नै पोल मल्लिकैएय मलर वैत्तु
पू मातिक्षल अम्बिकन्नते मर्यम वैत्तु
कन्नियरकळ इळमनत्ते गैम वैत्तुक
कळ वोळुगुम तामैरएय पूक वैत्तु
चिन्न वोव कडंग कुहलै पाव वैत्तुर
तेळ्ळिय नील कडल अलैएय आड वैत्तु
एन मनत्ते इवैकळिल तोय वैत्तु,
इरवुक्कु वरवु उरैत्तु अम्मे माली। - पृ. 8
- पल्लवम् - माणिक्कम - आयरम पू। - 1963 - पारि निलैयम।

तुम वर्षा हो, मैं हूँ नाचने वाली मोरनी,
तुम चांदिनी हो, मैं सागर हूँ,
तुम प्रेम हो, मैं हूँ चुम्बक,
मेरे लिए तुम प्राण हो, तेरे लिए मैं नाड़ि हूँ।"(1)

भारती के अलौकिक प्रेम में रहस्यवाद अन्तर्निहित है। इसी प्रकार निराला ने अपने को आत्मा मानकर परमात्मा के प्रति अपने रहस्यात्मक अलौकिक प्रेम को इस प्रकार व्यक्त किया है —

"तुम योग और मैं सिद्धि,
तुम प्राण और मैं काया,
तुम शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्मा
मैं मनोमोहिनी माया।
तुम नभ हो मैं नीलिमा।
तुम शिव हो, मैं हूँ शक्ति।"(2)

दोनों कवियों की रहस्यात्मक भावनाओं में प्रेम का अलौकिक रूप स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। दोनों के विषय और भावों में भी पर्याप्त समानता है। जैसे —

"तुम प्रेम हो, मैं हूँ चुम्बक" — भारती
"तुम प्रेम और मैं शान्ति" — निराला

1· 'पायुमोळि नी एनक्कु, परक्कुम विळि नानुनक्कु,
वीणैयडि नी एनक्कु, मेवुम विरल नानुनक्कु,
वानमपै नी एनक्कु, वण्ण मइल नानुनक्कु,
वेण्णिलवु नी एनक्कु, मेवुकडल नानुनक्कु,
कादलडि नी एनक्कु, कान्दमडि नानुनक्कु,
नल उयिर नी एनक्कु, नाड़ि यडि नानुनक्कु," - पृ· 307 - 308
— कण्णम्मा एन कादली - 6 "भारतीयार कविताएँ" - 1978 पूम्पुहार प्रसुरम्।
(योग)

2· निराला - परिमल - पृ·64, 65। - 1978 राजकमल।

"तुम तप्रभा हो और मैं हूँ नाद्रि" — भारती

"तुम प्रभा और मैं काया" — निराला

भारती ने स्वयं कविता के आरंभ में ही 'कण्णम्मा एन कादली-6' को 'योग' कहा है।(1) निराला की पंक्तियाँ भी इसी योग को प्रमाणित करती हैं, जैसे :

"तुम योग और मैं सिद्धि
तुम शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्मा
मैं मनोमोहिनी काया।"

दोनों का मूल तत्व 'अलौकिक प्रेम' ही है। प्रियतम प्रेमिका के मन में रहता है। अतएव परिचय की आवश्यकता नहीं है। मन रूपी गृह में प्रियतम निवास करते हैं इस कारण प्रियतम को भुलाया नहीं जा सकता। इस तत्व को हिन्दी की कवयित्री महादेवी वर्मा और तमिल कवि भारतीदासन ने, दोनों ने अपनी-अपनी कविताओं में व्यक्त किया है। महादेवी का प्रिय उन्हीं में रहते हैं। अतः वह कहती हैं —

"तुम मुझ में प्रिय ! फिर परिचय क्या?
हारूँ तो खोऊँ अपनापन,
पाऊँ प्रियतम में निर्वासन
जीत बनूँ तेरा ही बंधन।"(2)

भारतीदासन की नायिका अपने प्रियतम को याद करती है। उसे भुला नहीं पाती और सो भी नहीं सकती। क्योंकि नायक उसी के मन में निवास करता है। नायिका कहती है —

"मन गृह में वह रहता है।
भूलकर कैसे सो सकती हूँ?"(3)

---

1. भारतीयार कविताएँ - II 1978 अगस्त - पूम्बुकार प्रसुरम। 'कण्णम्मा एन कादली-6'- पृ. 307
(कण्णम्मा मेरी प्रेमिका-6) (योग)

2. महादेवी- 'याम' - पृ. 146-147 V 1971 भारती भण्डार

3. 'मन वीट्टिनिल अवन इरुक्किरान
मरन्दु उरंगुवदु एप्पडि ?" - पृ. 76
—भारतीदासन - कादल पाडलकळ (प्रेम की कविताएँ) - I - 1977, पूम्बुकार प्रसुरम, मद्रास

अपना और प्रियतम का संबंध स्थापित करते हुए महादेवी कहती हैं —

"चित्रित तू मैं हूँ रेखा-क्रम
मधुर राग तू मैं स्वर-संगम,
तू असीम मैं सीमा का भ्रम,
काया छाया में रहस्य मय।
प्रेयसि प्रियतम का अभिनय क्या!" (1)

इसी प्रकार भारतीदासन ने भी अपना संबंध प्रेमिका से स्थापित किया है। देखिए :

मैं	-	वह (स्त्री)
प्राण	और	तन
फूल	और	सुगन्ध
मधु	और	मधुरता
हँसी	और	सन्तोष
चाँदनी	और	शीतलता
किरण	और	प्रकाश (2)

अतएव स्पष्ट है कि महादेवी और भारतीदासन, दोनों ने प्रिय और प्रियतम का सम्बन्ध स्थापित करने में एक ही प्रकार की पद्धति को अपनाया है। विषमता इस बात की है कि महादेवी का प्रेम अलौकिक है और भारतीदासन का प्रेम अलौकिक सा दीखते हुए भी सर्वथा लौकिक है।

सौन्दर्य :

हिन्दी और तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में सौन्दर्य के प्रमुख दो रूप मिलते हैं अर्थात् प्राकृतिक सौन्दर्य और नारी का सौन्दर्य। इन दोनों के सौन्दर्य वर्णन में पर्याप्त समानताएँ दृष्टिगोचर

---

1. महादेवी - यामा - पृ. 147 - 1971 - भारती भण्डार

2. नानुम अवळुम् ! उयिरुम उडलुम, पूवुम मणमुम
तेनुम इनिप्पुम, सिरिप्पुम मकिळ्वुम, तिंगळुम कुळिरुम
कदिरुम ओळियुम — पृ. 100 कावल पाडलकळ - 1977 - एन्बुकार प्रसुरम्

होती हैं। बुद्ध जन्म के समय के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन महादेवी वर्माजीर कविमणि, दोनों ने किया है। दोनों के वर्णन में पर्याप्त समानताएँ मिलती हैं। दोनों की कविताओं में प्रकृति शान्त है। दोनों का संदर्भ भी एक ही है। दोनों की कविताओं में सरोज, सरिता और शान्तिपूर्ण वातावरण का उल्लेख मिलता है। दोनों का प्राकृतिक सौन्दर्य महापुरुष बुद्ध से संबंधित है। महादेवी वर्मा का प्रकृति-चित्र देखिए —

"नभ निरभ्र से वृष्टि हुई नव पंकज संकुल कन्दन-सुरभित
विहग और मृग दल दोनों ने रोक दिया कलरव कोलाहल
शान्त तरंगों में बहता था शान्त भाव से सरिता का जल।
शान्त दिशाएँ स्वच्छ हो गयीं नील गगन था स्वच्छ मेघ बिन,
पवन-लहरियों पर तिरता था दिव्य लोक के तूर्यों का स्वन।"(1)

कविमणि ने अपनी काव्य कृति 'आसिय ज्योति' में इस प्रकार का वर्णन किया है। इनका वर्णन दुनिया की भलाई को सूचित करता है। इनके वर्णन में प्रकृति के सभी अंग सरस दीख पड़ते हैं। देखिए:

" नीरस तरुवर सरस बन गये - सर्वत्र
सूखे कुएँ में भी पानी भर आये ;
वन-श्मशान सब प्रफुल्लित दीख पड़े
सरोवर में श्रेष्ठ सरोज पुष्पित हुआ
सर्वत्र शान्ति छा गयी - प्रेम - साम्राज्य का उदय हुआ।
सागर, पर्वत, जंगल — सबों में अज्ञात नयी
सुगन्ध फैलाकर मधुर दक्षिणी पवन चलने लगा।"(2)

1· महादेवी वर्मा कृत - बुद्ध चरित से। आज के लोक प्रिय हिन्दी कवि - महादेवी वर्मा - पृ· 110
तृतीय संस्करण 1975, राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

2· कडलुम मलैयुम, काडुम मेडुम, पूवुलगरियात पुदुमणम कमळ,
इनिय तेन्रल एळुन्दु वीसियदु। आसिय ज्योति ·· पृ· 11-12
15 वाँ संस्करण 1979 पारि निलैयम·

सौन्दर्य के क्षेत्र में 'सौन्दर्य' को ही देवता के रूप में देखकर भारती ने स्वच्छन्दतावादी काव्य में अपनी स्वच्छन्द भावना का परिचय दिया है। इस प्रकार का वर्णन हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में नहीं दिखायी पड़ता। फिरभी निराला कृत 'तुलसीदास' की नायिका की सुन्दरता को शारदा के रूप में परिवर्तित-सा दिखाया गया है। अतः इन दोनों में समानता दिखाने का प्रयत्न यहाँ किया जाता है। पहले भारती के सौन्दर्य देवता को लें जिसकी आरंभिक पंक्तियों में नारी की सुन्दरता का वर्णन किया गया है। कवि कहते हैं —

"चाँदनी के प्रकाश काल में एक स्वप्न दृश्य मैंने देखा,
उम्र सोलह साल की होगी - नव यौवन युवती,
उदित होती हुई पूर्ण चाँदनी सा प्रकाशमय मुख,
मुस्काती हुई नयी चन्द्रिका सी आभा !
बिजली सी आकृति वाली (कान्ति वाली) !"(1)

स्वप्नावस्था में भारती ने नवयुवती का सौन्दर्य वर्णन किया है। लेकिन युवती के जगाने पर उनको पता चला कि वह साधारण युवती नहीं है बल्कि साक्षात् सौन्दर्य रूपी देवता ही है। कवि उससे आध्यात्म संबंधित प्रश्न करके ज्ञान प्राप्त करते हैं और उनका मोह रूपी परदा हट जाता है।(2)

विरह में जलते हुए तुलसीदास मोहपूर्ण आँखों में अर्थात् एक प्रकार से स्वप्नावस्था में अपनी पत्नी को बाह्य-रूप-सौन्दर्य को देखते हैं —

बिखरी छूटी शफरी - अलकें,
निष्पात नयन-नीरज-पलकें,
भावातुल पृथु उर की छलकें उपशमित।,(3)

1• मंगियदोर निलविनिले कनविल हद् कण्डेन
वयद् पदिनारु वयस्सुम इळवयद् मंगे,
पोंगि वरुम वेण्निलउ पोन्र वोळि मुखमुम
पुन्नगैवन पुदुनिलवुम पोट्टु वरुद तोट्टम
तुंग मणि मिन पोलुम वडिवत्ताळ कद् — पृ• 225 — सौन्दर्य देवता — भारतीयार कविताएँ
2• इसका विस्तृत विश्लेषण - तृतीय अध्याय में हुआ है।
3• निराला - तुलसीदास : अपरा - पृ• 173 XI सं• 21, 32

यहाँ तुलसीदास की पत्नी रत्नावली का सौन्दर्यांकन साधारण नारी को दृष्टिकोण में रखकर कवि ने किया है। पत्नी के मुँह से –

"धिक्! आये तुम यों अनाहूत,
धो दिया श्रेष्ठ कुल-धर्म धूत,
राम के नहीं, काम के सूत कहलाए!"(1)

ऐसे शब्दों को सुनकर तुलसीदास जाग्रत हो जाते हैं। मोहावस्था अर्थात् स्वप्नावस्था की, उनकी पत्नी की सुन्दरता को, अब जाग्रतावस्था में 'शारदा नील वसना' के रूप में देखते हैं। तत्काल ही उनका मोह रूपी पर्दा हट जाता है। देखिए –

"जागा जागा संस्कार प्रबल,
रे गया काम तत्क्षण वह जल,
देखा, वामा वह न थी, अनल-प्रतिमा वह,
इस ओर ज्ञान, उस ओर ज्ञान,
हो गया भस्म वह प्रथम भान
छूटा जग का जो रहा ध्यान, जड़िमा वह!"(2)

ध्यान से अनुशीलन करके तुलना करने से पता चलता है कि भारती और तुलसीदास दोनों पहले स्वप्नावस्था अर्थात् मोहावस्था में साधारण युवती के बाह्य-रूप सौन्दर्य को देखते हैं। भारती को देवता जगाती है और दोनों में वार्तालाप होता है। अन्त में उनका मोह रूपी पर्दा हट जाता है और उनको देवता की कृपा मिल जाती है। तुलसीदास की मोहावस्था पत्नी की भर्त्सना से मिट जाती है और जाग्रत होकर सब ओर ज्ञान का अनुभव करते हैं और पत्नी को ही शारदा के रूप में देखते हैं। भारती की युवती असल में देवता ही है। लेकिन भारती उसको स्वप्नावस्था में साधारण युवती के रूप में देखते हैं।

---

1. निराला – तुलसीदास – अपरा – पृ. 173 । सं. 2032, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद.
2. वही पृ. 174

फिर जागृत होकर देवता के रूप में देखते हैं। लेकिन तुलसीदास की पत्नी असल में सामान्य स्त्री ही है। अन्त में उनकी आँखों को शारदा के रूप में दिखाया गया है। अतः भारती की युवती सौन्दर्य देवता है और निराला की शारदा मानवी है। फिरभी दोनों का मूल सौन्दर्य है।

हिन्दी और तमिल स्वच्छन्दतावादी कवियों की दृष्टि नारी के अंग-प्रत्यंग पर रम गयी है। प्रस्तुत उदाहरण में दोनों की नायिकाएँ नहाती हैं। दोनों सखियाँ और अद्वितीय रूपसियाँ हैं। तमिल कवि की नायिका को देखकर नायक दाँतों तले उँगली दबाता है तो हिन्दी कवि की नायिका के सौन्दर्य को दूर से स्वयं ऋतुराज देखकर अधिक अधीर होता है। इस दृष्टि से निराला और भारतीदासन् की कविताएँ तुलनीय हैं। निराला की नायिका सरिता में नहाने के लिए 'तट पर' चलती है और चारों ओर देखकर सरिता में उतरती है —

"देख चतुर्दिक, सरिता में
उतरी तिर्यग्दृग, अविचल चित्त।
नग्न बाहुओं से उछालती नीर
तरंगों में डूबे दो कुमुदों पर
हँसता था एक कलाधर,
ऋतुराज दूर से देख उसे होता था
अधिक अधीर ..."(1)

सरोवर में नहानेवाली भारतीदासन की नायिका का वर्णन बहुतकुछ इसी प्रकार हुआ है —

"सरोज पुष्पित सरोवर में - सरोज सा
मुख को दिखाते हुए नहानेवाली
नायिका को देख नायक ने अपने मन को
न्योछावर कर दिया! श्वेत तन, कान्तिमयी आभा

---

1. निराला - अनामिका - पृ. 49-50 VI 1979 - भारती भण्डार.

देख मनमथ को ध्वंस करने के लिए
उसी उपवन में नायिका की प्रतीक्षा में रहा। "(1)

नहाने के उपरान्त दोनों नायिकाओं में जो सौन्दर्य है उसके वर्णन में पर्याप्त समानता है।

"वायु सेविका-सी आकर
पोंछे युगल उरोज, बाहु मधुसार।
सखी ने सब ओर
देख मन्द हँस, छिपा लिये उन्नत पीन उरोज,
उठाकर झुक वसन का छोर। "(2)

तमिल की नायिका –

"बादलों को चीर कर उदित होनेवाली
पूर्ण चाँदनी सी - भीगे तन से
वसन सँभालकर वह सखी तट पर आ पहुँची। "(3)

दोनों नायिकाओं का सौन्दर्य लौकिक प्रेम को उद्दीप्त करनेवाला है। मधुराज, मनमथ शब्दों का प्रयोग करके कवियों ने अपनी अपनी नायिका की सुन्दरता को उच्च शिखर पर पहुँचा दिया है। विषमता

1• भारतीदासन की कविताएँ - प्रथम भाग - पृ• 67 - 24 वाँ संस्करण 1980, सेन्तमिल निलैयम
नायक का नाम 'कृष्णन'
नायिका कोमळवल्ली है।

2• निराला - अनामिका - पृ• 51 । 1 - 1979, भारती भण्डार

3• मुकिलैक् किलित्तु वेळिवरुम् - ओर
मुधु मदि पोल, ननैन्दु वरुम् - तन
तुकिलिनैच् पट्रि सुरुक्கு कन्दाळ् ! — पृ• 67
— भारतीदासन की कवितायें - प्रथम भाग 24 वाँ संस्करण 1980 - सेन्तमिल निलैयम,
पुदुक्कोट्टै

इस बात की है कि निराला ने नायिका का वर्णन स्वतंत्र रूप से किया है जिसका संबंध किसी नायक अथवा प्रेम से नहीं है। लेकिन भारतीदासन की नायिका का सौन्दर्य प्रेम को अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित करता है। यहाँ सौन्दर्य प्रेम की पृष्ठभूमि को तैयार करता है। निराला ने प्रत्यक्ष रूप से 'उन्नत उरोज', 'नग्न बाहु' जैसे शब्दों का प्रयोग बिना संकोच के किया है, लेकिन तमिल कविता में प्रयुक्त भींगा तन और वसन संभालना में अप्रत्यक्ष रूप से नायिका का रूप-सौन्दर्य छिपा हुआ है।

अन्यत्र भी हिन्दी और तमिल कवियों के नारी सौन्दर्यांकन में पर्याप्त साम्य है। निराला की 'बहू' और सुरता की 'अहल्या' के सौन्दर्य-चित्र उल्लेखनीय हैं। अगर बहू सौन्दर्य-सरोवर की एक तरंग है तो अहल्या सौन्दर्य का विश्लेषण ही है। तमिल कवि का वर्णन नारी के प्रत्येक अंग को लेकर चलता है। दोनों ने नारी के रूप-वर्णन में प्रकृति और कल्पना का सहारा लिया है। निराला की बहू का रूप-चित्र यहाँ प्रस्तुत है।

"सौन्दर्य-सरोवर की वह एक तरंग
किन्तु नहीं चंचल प्रवाह - उद्दाम वेग -
संकुचित एक लज्जित गति है वह
प्रिय समीर के संग।
वह नव-वसन्त की किसलय-कोमल लता,
किसी विटप के आश्रय में मुकुलित।
किन्तु अवनता।
उसके खिले कुसुम-संभार
विटप के गर्वोन्नत वक्षःस्थल पर सुकुमार,
मोतियों की मानों है लड़ी
विजय के वीर हृदय पर पड़ी।"(1)

---

1. निराला - परिमल - पृ. 122 प्रथम बार 1978 सितंबर - राजकमल प्रकाशन.

सुरदा की नायिका अहल्या की सुन्दरता को देखकर स्वयं प्रकृति आश्चर्य में डूब जाती है। अन्य कमल सी मुखवाली नारियाँ अहल्या की सुन्दरता पर विजय पाने में असमर्थ होकर परदा पहनने लगती हैं। देखिए —

"अहल्या सौन्दर्य का एक विशेषण है।
श्वेत पूर्ण चंद्रिनी उसकी सुन्दरता को देख विस्मित होती थी।
उसका अंग, आँखों की पलकें, धनुष सा भृग,
लंबी लंबी अलकें, लाल लाल अधर
हाथ - पैर - तन - मुख
जैसे होने चाहिए, वैसे रहे।
तरुणी की चाल देख स्वयं हंस पक्षी लज्जित हो गयी थी।
सुन्दरी के कपोलों को देख मधुर आम-फलों ने मुँह फेर लिये,
सरोज सी मुखवाली नारियाँ इस आर्य नारी की सुन्दरता पर,
विजय न पाकर, स्वयं विजित होकर, परदा पहनने लगीं।"(1)

प्रकृति से नव-नव उपमाओं को लेकर नारी की सुन्दरता का वर्णन इन पंक्तियों में किया गया है। कभी-कभी हिन्दी और तमिल कवियों की नायिकाएँ अपने प्रत्येक अंग की सुन्दरता को प्रकृति के अंगों को प्रदान कर देती हैं। कवियों की कल्पना है कि इनकी नारियों का सौन्दर्य ही प्रकृति के अंगों की सुन्दरता की बढ़ाता है - ऐसी नवीन कल्पनाएँ भगवतीचरण वर्मा और सुरदा ने की है। भगवतीचरण वर्मा की प्रिया अपने गुणों एवं सौन्दर्य को अंबर की लाली, उषा, रवि-किरण, मलयानिल और शतदल को देती है। देखिए।

"अंबर की लाली को उस दिन तुमने ही था अनुराग दिया,
तुमने उषा को अपनी छवि, कलरव को अपना राग दिया,

---

1. अहलिएय एन्बाळ अंदिन विळक्कमाम!
वेण्णिला अवळैक्कण्डु वियक्कुमाम! ....
नयनंगळ नडै कण्डु नाणिट्टाम अन्नम।
कद्दव्रिक्कु मंगैयिन कन्नत्तैक्कण्डु ते माँगनिकळ तिरुंबिक्कोण्डनवाम्,
आरिय मंगैयिन अधरनै वेन्रिड मुडि यामल पोनदाल मुक्काडिट्टनराम!
— सुरदा - तेन मषै - पृ. 104-105 IV 1977 - सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास.

अपना प्रकाश रवि-किरणों को, अपना सौरभ मलयानिल को,
पुलकित शतदल को तुमने हो प्रिय, अपना मधुर पराग दिया। "(1)

यहाँ तमिल कवि की नायिका कुन्द के फूल को मुस्कराहट, श्याम मेघों को अलकें, धनुष को दृग, फूलों को आँखें और शतदल को अपने अरुण अधरों को देती है। देखिए —

" कुन्द-फूल को अपनी मुस्कराहट,
श्याम मेघों को अपनी अलकें,
धनुष को अपना दृग, फूलों को अपनी आँखें,
शब्दों को अपनी सुमधुरता, झरने को शीतलता,
शतदल को तुमने दिया अपने अरुण अधरों को,
सुन्दरता को हो, तुमने अपना सौन्दर्य दे दिया। "(2)

हिन्दी कवि की प्रेमिका पुलकित शतदल को अपना मधुर पराग देती है और तमिल की प्रेयसी अपने अरुण अधरों को प्रदान करती है। दोनों भाषाओं के कवियों की नायिकाएँ इस क्षेत्र में एक प्रतीत होती हैं।

कल्पना :

हिन्दी और तमिल कवियों ने अपनी अपनी प्रतिभा के अनुसार विविध प्रकार की कल्पनाएँ की है। कभी-कभी इनकी कल्पनाओं में भी एक प्रकार की समानता मिलती है। प्रसाद का नारी-

---

1. भगवतीचरण वर्मा - विस्मृति के फूल - पृ. 8 - साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद का प्रकाशन

2 'मुल्लैक्कु मुरुवल तन्दाळ मुकिलुक्कु कून्दल तन्दाळ
विल्लुक्कु पुरुवम तन्दाळ वेलुक्कु विऴिकळ तन्दाळ
चोल्लुक्कु तेन्तेन तन्दाळ सुनै नीरुक्कु कुळिर्च्चि तन्दाळ
अल्लिक्कु चेवाय तन्दाळ अऴकुक्के अऴकु तन्दाळ।

— सुधा - तेन मधि - पृ. 145 IV- 1977
सुधा पतिप्पकम्, मद्रास.

सौन्दर्य वर्णन और भारतीदासन की चाँदिनी[1] रूपी नायिका के सौन्दर्यांकन में की हुई कल्पनाओं में कुछ साम्य है। 'कामायनी' में श्रद्धा के रूप-सौन्दर्य का वर्णन करते हुए प्रसाद कल्पना करते हैं कि नील परिधान में उसका मृदुल अंग कुछ कुछ प्रकट हो रहा है। ऐसा लगता है, बादलों के बीच कोई गुलाबी रंग का, 'बिजली का फूल' खिल रहा है।

"नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघ - बन बीच गुलाबी रंग।"(2)

'बिजली का फूल' प्रसाद की अद्वितीय कल्पना का प्रतीक है। भारतीदासन चाँदिनी - नायिका के सौन्दर्यांकन में उसे आकाश रूपी उद्यान में पुष्पित 'एक विशिष्ट फूल' की कल्पना करते हैं। उसका अंग भी कुछ कुछ प्रकट हो रहा है। देखिए :

"नील परिधान में अपने तन को छुपाकर
'चाँदिनी' कहकर अपना प्रकाशमय मुख दिखाते हो।
संपूर्ण रूप को दिखाओगी तो, प्रेम की लूट में
यह दुनिया मिट जाएगी क्या ! - तुम
आकाश उद्यान में पुष्पित 'एक विशिष्ट फूल' हो क्या?"(3)

---

1. भारतीदासन की 'चाँदिनी' अप्रत्यक्ष रूप से काव्य की नायिका का प्रतीक है। इसका विस्तृत उल्लेख III अध्याय में प्राकृतिक सौन्दर्य के अंतर्गत है।

2. कामायनी - पृ. 54 श्रद्धा सर्ग XIII आ. 24 भारती भण्डार

3. नीलवान आडैक्कुळ उडल मैरैत्तु
 निला एन्र काट्टुकिन्राय ओळि मुगत्तै
 कोलमुळुवतुम काट्टिविट्टाल कादल कोळ्ळैयिले इव्वुलगम् सागुमो!
 वानच्चोलैयिले पूत्त तनिपूवो नी तान,
 — पुरट्चिक्कवि - भारतीदासन् कवितैगळ् - I 24 वाँ संस्करण 1980 लघुकाव्य से। सेन्तमिल निलैयम।

तमिल कवि ने सिर्फ 'विशिष्ट फूल'(1) की कल्पना की है। उसके रंग का उल्लेख उन्होंने नहीं किया। लेकिन प्रसाद ने 'बिजली के फूल' की कल्पना की है और उसका रंग 'गुलाबी' बता दिया है। दोनों के 'नील परिधान' नीले नभ के सूचक हैं। नीला रंग प्रेम का प्रतीक है। अतः इनमें प्रेम की ओर भी संकेत मिलता है।

कभी-कभी इन भाषाओं के साहित्यिकों की रोमांटिक कल्पनाओं के कारण रात्रि, 'कामना' की सुनहली साड़ी को फाड़ डालती है और रात्रि वेला में नीला वस्त्र पहनकर खड़ी रहनेवाली आकाश रूपी नारी की मोती माला को युवक चाँद खींच लेता है। इस दृष्टि से प्रसाद और भारतीदासन की निम्नलिखित पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं :

"जब कामना सिन्धु तट आयी ले सन्ध्या का तारा दीप,
फाड़ सुनहली साड़ी उसकी तू हँसती क्यों अरी प्रतीप?"(2)

इसी प्रकार निशा काल में प्रकृति को लेकर भारतीदासन की कल्पनाओं से मानव की लीलाएँ करती हैं।

"नील परिधान ओढ़कर- वहाँ
आकाश रूपी नारी खड़ी रही।
युवक श्वेत चाँद ने उसे देखा
उसकी मोती की माला को खींच लिया
मोती बिखरकर तारे बनकर चतुर्दिक प्रकाश देने लगीं।"(3)

---

1. अन्यत्र भारतीदासन ने नारी के सौन्दर्य वर्णन में बिजली वस्त्र की कल्पना की है।
"उडै एन्र मिन्नु रित" उलविडुम तंगत्तेर (बिजली वस्त्र पहनकर विहार करनेवाली) 'कायल पाडलकळ' : पृ. 26

2. कामायनी- पृ. 46 आशा सर्ग XIII सं. 20 24, भारती भण्डार.

3. नील उडै इनै पोर्त्ते - अंगु
निन्र इवदाळ उयर विण्णाळ
वालिम वेण्मदि कण्डान - मुत्तु मालैए यश कैक्कल इधुत्तु
नालु पुरमुम सिन्धि - ओळि नक्षत्तिरम कृष्णैयाकि।
— भारतीदासन कवित्त संग्रह द्वितीय भाग - पृ. 4 VIII 1977 पारिनिलैयम।

उल्लिखित प्रथम में रात्रि, कामना रूपी नायिका की सुनहली साड़ी को पकड़ती है और द्वितीय में युवक चाँद आकाश रूपी नारी की मोती-माला को खींच लेता है। दोनों कार्य निशा-काल में बलपूर्वक रात्रि और चाँद के द्वारा किये जाते हैं। इस प्रकार कल्पना के द्वारा प्रकृति की निर्जीव वस्तुओं को सजीव बनाकर उनके कार्यकलापों का वर्णन करने की प्रवृत्ति दोनों में पायी जाती है।

कल्पना के द्वारा इनकी प्रकृति पल-पल में अपना वेश बदलती है। इस दृष्टि से हिन्दी के श्रीधर पाठक, पंत और तमिल के भारतीदासन की पंक्तियाँ नीचे उद्धृत की जाती हैं।

"प्रकृति यहाँ एकान्त बैठि निज रूप सँवारति,
पल पल पलटति भेष छनिक छवि छिन छिन धारति।"(1)

पावस ऋतु थी, पर्वत प्रदेश,
पल पल परिवर्तित प्रकृति वेश !(2)

श्रीधर पाठक और पंत की इन पंक्तियों में प्रकृति पल पल में अपना वेश बदलती है। लेकिन भारतीदासन प्रकृति के अंग 'अँधेरे' को नारी का रूप देकर, उसकी दिन की साड़ी स्वर्ण रंगीन और रात्रि की, विविध रूप से अलंकृत श्वेत रेशमी से बनी हुई बताते हैं। इस प्रकार कवि की 'अन्धेरी' अकसर अपना वेश बदलती है। अतः कवि 'अन्धेरी' को संबोधित करते हुए कहते हैं —

"नभ से भू तक विस्मयकारी तुम्हारी देह को दृष्टिपात करता हूँ।
लेकिन तुम तो अकसर अपना
वेश, बदला करती हो।
हे अन्धेरी ! तुम्हारा दिवस-वस्त्र स्वर्ण-रंग का है,
निशा में तुम विविध रूप से अलंकृत रेशमी साड़ी पहनती हो।"(3)

---

1. श्रीधर पाठक – कश्मीर सुषमा से।
2. पंत-पल्लव – पृ. 55 VIII 1977 – राजकमल प्रकाशन.
3. विण्मुदल मण् वरैक्कुम् वियक्कुम् उन मेनि कण्डु कळित्ते इरुक्केन्, नीयो अडिक्कडि उडैयिल माट्रम् पण्णुवाय् इरुळे उन्रन् पकल उडै तंकच्चेलै वेण्पट्टिल इरवुच्चेलै मेल वेलै पाडेल्ल वोलवेन्!
— भारतीदासन – अधुकिन सिरिप्पु – पृ. 50 – XVI 1981 तेन्तमिल निलैयम्

संक्षेप में तीनों कवियों की प्रकृति सजीव नारियाँ बन गयी है, जो अपना वेश, कवियों की कल्पनाओं से बदलती रहती हैं। इस प्रकार उपरलिखित उद्धरणों से स्पष्ट है कि विभिन्न परिस्थितियों, स्थानों में पलते हुए भी इन कवियों की कल्पनाओं में पर्याप्त समानताएँ मिलती हैं। भावों की अभिव्यक्ति में थोड़ी बहुत भिन्नताओं के रहते हुए भी उनका मूल तत्व एक है।

अनुभूति :

हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रमुख रूप से दुःखात्मक अनुभूतियाँ उपलब्ध होती हैं। अनुभूतियाँ पूर्ण रूप से व्यक्तिवाद पर अवलम्बित है। अतः समानता इनमें ढूंढना अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है। फिर भी यत्र तत्र मिलनेवाली कुछ साम्य अनुभूतियों का उल्लेख यहाँ प्रस्तुत किया जाता है। वात्सल्य से वेष्टित विरहात्मक दुःखानुभूतियाँ आलोच्य कालीन काव्य में मिलती हैं। अपने पति नंद के साथ कृष्ण को न देखकर यशोदा की अनुभूतियाँ अत्यन्त तीव्र प्रतीत होती हैं। वह अपने पति से पूछती है —

"प्रिय पति ! वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है?
दुख जलनिधि डूबी का सहारा कहाँ है?
लख मुख जिसका मैं आज लौं जी सकी हूँ
वह हृदय हमारा नेत्र तारा कहाँ है?"(1)

इसी प्रकार एक माँ(2) की दुःखानुभूतियों को कविमणि ने भी व्यक्त किया है। मरे हुए पुत्र को जीवित कराने की प्रार्थना करते हुए अपनी दुःखानुभूतियों को वह माँ इस प्रकार व्यक्त करती है :

"मेरा बच्चा
न चुंबन देता है, न तुतली बोली बोलता है,
तुझे देख मेरा चित्त विचलित हो उठता है।

---

1. प्रिय प्रवास VII सर्ग में।
2. माँ सुजाता है जिसका बच्चा सर्प के डसने से मर जाता है।। उसे जीवित कराने की प्रार्थना करते हुए भगवान् बुद्ध से अपनी दुःखानुभूतियों को व्यक्त करती है।
—कविमणि – आसिय ज्योति

न मुख को देखता है, न स्तन्यपान करता है,

पुत्र की स्थिति देख, मन रहता नहीं है

पूर्ण चवि -सा मुख कुम्हलाकर,

रंग फीका पड़कर, मैं पेट को जला रहा है

मुस्कराहट न देख मेरी बुद्धि विचलित होती है।"(1)

दोनों में माँ की तीव्र विरहमयी दुःखानुभूतियाँ मिलती हैं। प्रथम में माँ से पुत्र का मिलन संभव है। लेकिन दूसरे में माँ-पुत्र के मिलन की कोई संभावना नहीं है। अतः द्वितीय में अनुभूतियों की तीव्रता है।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रेमी, प्रेमिका के विरह में तड़प-तड़पकर अपनी दुःखानुभूतियों को व्यक्त करता है। तमिल में भी इस प्रकार का वर्णन मिलता है। नायिका का प्रेमकथन अन्य पुरुष से हो जाता है। अतएव कवि-नायक चिल्ला उठता है, रो उठता है, आँसू बहाता है और अपनी वेदनामयी दुःखानुभूतियों को व्यक्त करने लगता है। देखिए :

"वेदना ! - कैसा करुण उद्गार है !

वेदना ही है अखिल ब्रह्माण्ड यह,

तुहिन में, तृण में, उपल में, लहर में,

तारकों में, व्योम में है वेदना !

वेदना ! - कितना विशद यह रूप है !"(2)

कवि प्रकृति के प्रत्येक कण में दुःख का अनुभव करता है। मधुप सिसककर तड़पता है और चातक तरसता है। अतः कवि समझता है कि विश्व का यही नियम है। इसलिए हृदय को भी खूब रोने का आदेश देता है। लेकिन तमिल नायक विरह में भी प्रकृति से उपमाओं को ढूँढ़कर नायिका की

---

1. कविमणि - असिय ज्योति - पृ. 80-81 पारि निलैयम XV 1979

2. पंत - वीणा - ग्रंथि - पृ. 133 नवीन संस्करण 1972 राजकमल.

कुदरता का वर्णन करते-करते उद्दीप्त होकर चिल्ला उठता है। प्रिया की याद करते-करते वह कहता है —

"तेरे अधरों को देखे तो शतदल को कोई नहीं देखेगा।
तेरे वस्त्र की नीलमणियों को देखे तो उदधि भी लज्जित होगी।
तेरे प्रकाशमय मुख को देखे तो उषा भी लज्जित होगी।
हाय प्रिये ! तुम चली गयी ! हे प्रिये !
तुम मेरे हृदय की दीप शिखा !"(1)

दोनों कवियों का ध्येय नायक की दुःखानुभूतियों को व्यक्त करना रहा है। पन्त की दुःखानुभूतियों में तीव्रता अधिक है। पंत प्रकृति के कण-कण में दुःख का अनुभव करते हैं और भारतीदासन का नायक, नायिका को कुदरता में प्रकृति की याद करते उद्दीप्त हो उठता है। प्रथम में प्रेम का उदात्त रूप मिलता है और दूसरे में प्रेम के लौकिक पक्ष को प्रधानता मिलती है।

व्यक्तिवाद :

व्यक्तिवाद स्वच्छन्दतावाद का दूसरा नाम है। यह भावना हर व्यक्ति अथवा साहित्यकार की निज संपत्ति होती है। हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य में इस क्षेत्र में कुछ साम्य भावनाएँ मिलती हैं। निराला और सुरता की अधोलिखित पंक्तियों में एक ही प्रकार की व्यक्तिवादी भावनाएँ दृष्टिगोचर होती हैं :

"ईर्ष्या कुछ नहीं मुझे, यद्यपि
मैं ही वसन्त का अग्रदूत !"(2) — निराला

1. चेंविदळ कण्डार मलरिदळुम काण्बारो
उडैच्चेलाम नीलमणि ! कडलो नाणुम
ओळि मुखते कण्डिट्टाल पहिदि नाणुम
मडिन्दायो सिर विळक्के ... — भारतीदासन - पाण्डियन परिसु - पृ. 163
XV 1978 सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै।
2. निराला - अनामिका - पृ. 118 - VI 1979 - भारती भण्डार.

सुल्ता की निम्नलिखित पंक्तियाँ थोड़ा बहुत उपरांकित पंक्तियों से मिलती-जुलती हैं —

"यश का मद मुझे किंचित् मात्र भी नहीं है,

ईर्ष्या भी नहीं है।

मैं एक कवि हूँ। उससे अधिक मैं देश का एक अच्छा व्यक्ति हूँ।"(1)

इस प्रकार की 'मैं कवि हूँ' की भावना 'तीसरा सप्तक' कवि में भी मिलता है। देखिए :

"मैं नया कवि हूँ —

इसी से जानता हूँ

सत्य की चोट बहुत गहरी होती है,

मैं नया कवि हूँ।"(2)

भारती ने प्रकृति के कण-कण में 'मैं' का अनुभव किया है। जैसे :

"आकाश में उड़नेवाला पक्षी हूँ,

भूमि पर विचरनेवाले जीव-जन्तु मैं हूँ।"(3)

वृक्ष, पवन, पानी, सागर, नक्षत्र, गगन, कीड़े, इत्यादि वस्तुओं में भी कवि ने 'मैं' का अनुभव किया है। अन्त में कवि का कथन है कि

"अहं रूपी मिथ्या को चलानेवाला मैं हूँ

ज्ञान रूपी प्रकाशमय गगन में उड़नेवाला मैं हूँ

समस्त वस्तुओं में निहित समष्टिगत

ज्ञान की प्रथम ज्योति मैं हूँ।"(4)

---

1. पुकळ वेरिए नक्कू पुळ्क्कियल्लुम
   इल्लै! सरसाकि पोरु मैयुम इल्लै!
   नानोर कविजन ! अदैविड
   नानोर नल्लवन इन्द नाट्टिले ! — सुल्ता — तुरैमुखम् — पृ. 154 ॥ 1978 सुल्ता पदिप्पकम्।
2. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना — तीसरा सप्तक — पृ. 218 सं. अज्ञेय ॥। 1967, भारतीय ज्ञानपीठ, (वाराणसी
3. भारतीयार कविताएँ — पृ. 188 — ॥ 1978 पूम्बुकार प्रसुरम्
4. नानेनुम पोय्यय नडत्तुवोन नान्,
   ज्ञानच्चुडरवानिल चेल्लुवोन नान्,
   आन पोरुळ्कळ अनैत्तिनुम ओन्राय
   अरिवाय विळंगु किदरज्योति नान्। — पृ. 189 — भारतीयार कविताएँ — ॥ 1978

ये पंक्तियाँ कवि के व्यक्तित्व के ऊपर ईश्वरत्व की विजय को बतलाती हैं। इसी प्रकार भगवतीचरण वर्मा की व्यक्तिवादी भावनाएँ भी विराट्[1] से संबंधित हैं। देखिए —

"हूँ स हूँ मैं, मैं हूँ सम्राट, वास्तविकता हूँ मैं हूँ भ्रान्ति,
पुरुष हूँ कहीं, प्रकृति हूँ कहीं, शान्ति हूँ कहीं, कहीं हूँ क्रान्ति,
चेतना हूँ, मैं हूँ उन्माद, साधना हूँ मैं और अशान्ति !"[2]

इस प्रकार व्यक्तिवादी भावनाओं में भी एक प्रकार का साम्य इन दोनों के काव्य में उपलब्ध होता है।

नवीनता, विद्रोह और मानववाद :

तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य में इन तीनों प्रवृत्तियों का सुन्दर संगम हुआ है। दोनों कवि नवीनता चाहते हैं, विद्रोह करके पुरातनता को ध्वंस करना चाहते हैं। इनके व्यक्तिवाद ने धीरे-धीरे विकसित होकर मानवतावाद का रूप धारण कर लिया है। दोनों कलाकार मानव को समानता प्रदान करना चाहते हैं और सर्वत्र नवीनता के पथ पर मानवतावाद की स्थापना करना चाहते हैं। दोनों के कवि नवीनता का प्रतिपादन करना चाहते हैं। तमिल कवि भारती चाहता है कि कविता में नव रस, नव विषय, नव-नव शब्दों का प्रयोग हो और वह ज्योतिमयी, नवीन, अनश्वर महान हो।[3] इसी प्रकार निराला

"नव गति, नव लय, ताल छन्द-नव,
नवल कण्ठ, नव जलद - मन्द्रख;
नव नभ के नव विहग-वृन्द को
नव पर नव स्वर"[4]

की प्रार्थना करते हैं।

---

1. 'यहाँ देखो तो रूप विराट्' — भगवतीचरण वर्मा। विस्मृति के फूल - पृ. 185, साहित्य केन्द्र प्रकाशन
2. वही - पृ. 185 - मधुकण से।
3. 'सुवै पुदिदु पोरुळ पुदिदु, वळम पुदिदु, चोल पुदिदु, सोतिमिक्क नव कविदै, एन्नाळुम अळियाद महा कविदै।' ... भारतीयार कविताएँ - पृ. 24।
4. निराला - गीतिका - पृ. 3 VIII सं. 2030 भारती भण्डार

दोनों साहित्यकार समाज की जाति-पाँति, रूढ़ि-रीतियों को तोड़कर, पुरातनता के प्रति विद्रोह करके नये आदर्श, समाज और नयी दुनिया की कल्पना करते हैं। हिन्दी कवि पन्त चाहते हैं --

"रूढ़ि रीतियाँ जहाँ न हो आधारित
श्रेणी वर्ग में मानव नहीं विभाजित।"[1]

इसी प्रकार भारतीदासन का शंखनाद भी गूँज उठता है —
"जाति-पाँति-रूढ़ियाँ-रीतियाँ - सब भेद मिट जाय;
विश्व में विचरित झगड़ों को धूल सी मिटायेंगे;
फिर नयी दुनिया की स्थापना करेंगे।"[2]

दोनों की कविताओं में अेक ही प्रकार के विद्रोह की भावनायें मिलती हैं। आर्थिक क्षेत्र में तमिल और हिन्दी के कवि समानता लाना चाहते हैं। हर मनुष्य को खाना दिलाना चाहते हैं। अगर खाना नहीं मिले तो संपूर्ण जगत का ध्वंस करना चाहते हैं। तमिल कवि अैसा नियम बनाना चाहता है कि जिससे हर मनुष्य को खाना मिल जाय।

"भविष्य में अैसा नियम बनायेंगे - उसे
जीवन भर पालन करेंगे;
अगर हर मनुष्य को खाना नहीं मिले तो
इस जगत को ही ध्वंस कर डालेंगे।

---

१. पंत - युगवाणी से।

२. जाति मद भेदंगळ् मूड वळक्कंगळ्
तांगि नीड्पेढ़ू वरुम् सण्डै मुलगिदनै
उदैइनिल तुरुंबुपोल् अलक्कळिप्पोम्, पिन्नर्
औौढ़ित्तिडुवोम्; पुदियदोर् उलगम् चेय्वोम्। - पृ. १४९.
- भारतीदासन कवितायें-। - २४वाँ संस्करण, १९८०.
सेन्तमिळ निलैयम्.

इस जगत् के सभी लोगों को -

पेट भर खाना देना चाहिए।"(1)

इसी प्रकार हिन्दी कवि जगत् में सर्वत्र व्याप्त विषमता की कहानी को ध्वंस करना चाहते हैं। अतः विद्रोही स्वर में गूँज उठता है —

"चाहता हूँ ध्वंस कर देना विषमता की कहानी

हो सुलभ सबको जगत में वस्त्र, भोजन, अन्न, पानी,

नव भवन निर्माण हित मैं जर्जरित प्राचीनता का

गढ़ ढहाता जा रहा हूँ ..."(2)

निराला ने भी अन्न की महत्ता को स्वीकार करते हुए कहा है —

"जीवन बिना अन्न के चिन्नाव

कैसे दुसह दुवार से करे निर्वाह"(3)

पंत भी हर मनुष्य को अन्न, वस्त्र सुलभ होने की कामना करते हैं —

"हो सहज स्नेह-संस्कृत स्वभाव,

उर में उमंग, उत्साह, चाव,

धन, अन्न, वस्त्र का मुक्त प्राव

हो एक विश्व जीवन महान्!"(4)

1· इनियोरु विदि सेय्वोम् - अदै

एन्द नाळुम् काप्पोम्,

तनियोरुवनुक्कु उणविलै निल - जगत्तिनै अळित्तिडुवोम्।

वयिट्रुक्कु चोरिड वेण्डुम - इंगु

वाळुम मनिदर्क्केल्लाम, — भारतीयार कविताएँ 41, 207

2· विश्वास बढ़ता ही गया है। — आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि 'शिवमंगल सुमन' पृ·75

I 1972 राजपाल एण्ड सन्स

3· निराला — अणिमा से।

4· पंत — ज्योत्स्ना — पृ· 66 IV 1978 राजकमल प्रकाशन ·

तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दता वादी कवियों की मानवतावादी भावनाएँ भी एक सी हैं। दोनों मानव मानव सम की भावना को समवेत स्वर में गाते हैं –

"सब एक कुल हैं सब एक जाति, वर्ण के हैं
सब लोग भारत के हैं।
सभी इस देश के राजा हैं।"(1) – भारती

"सब कण्ठों में एक गान –
मानव मानव सब हैं समान।"(2) – पंत

'मानव मानव सम' मानकर समाज के द्वारा सदा तिरस्कृत विधवा, भिक्षुक, भिखारिन, आदि पात्रों को उन्होंने सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से देखा है। इष्टदेव के मन्दिर की पूजा सी, दीपशिखा सी शान्त भाव में लीन, कुसुम-लाघव की स्मृति-रेखा-सी, टूटे तरु की छूटी लता सी दीन विधवा के प्रति निराला ने अपनी दुःखात्मक भावनाओं को व्यक्त किया है। उनका कथन है कि विधवा के दुःख का कोई छोर नहीं है।

"यह दुख वह, जिसका नहीं कुछ छोर है,
दैव अत्याचार कैसा घोर और कठोर है!
क्या कभी पोंछे किसी के अश्रु जल?
या किया करते रहे सब को विकल?"(3)

इसी प्रकार भारतीदासन ने भी विधवा की स्थितियों को अत्यन्त मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है –

"स्वर्ण की प्रतिमा" – आज विधवा बन गयी है।
मस्तक पर तिलक, अलकों में सुगन्ध फूल – अब मना है।

---

1. एल्लाइ-म ओर कुलम एल्लारुम ओरिनम
   एल्लारुम इन्नाट्टु मन्नर। – भारतीयार कविताएँ – पृ. 41 – III 1978
2. पंत – ज्योत्स्ना – पृ. 66
3. निराला – परिमल – पृ. 99 – I 1978 राजकमल।

'चन्द्रिका-सी', इसे सुवसन एवं भूषणों को तजना पड़ा।
इसे शुष्क वसुधा पर लेटना चाहिए,
इसे 'खाना' कम करना चाहिए।"(1)

इन कवियों ने भिक्षुक के प्रति भी सहानुभूतियाँ प्रकट करके अपनी मानवतावादी भावनाओं का परिचय दिया है। भिक्षुक की हालत देखिए —

"वह आता —
दो टूक कलेजे के करता पछताता
पथ पर आता!
घूँट आँसुओं को पीकर रह जाते
चाट रहे जूठी पत्तल वे सभी सड़क पर खड़े हुए
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।"(2)

तमिल कवि की भिखारिणी अपना परिचय इस प्रकार देती है —

"रात्रि भी प्रातःकाल में क्षमा हो जाती है
लेकिन अब तक हमारे क्षमा नहीं हुई है।
हमारी इस दुनिया में क्या है?
केवल झाड़ियाँ ही हैं।"(3)

इस प्रकार साधारण पात्रों के प्रति अपनी संवेदनाओं को व्यक्त करके अपनी मानवतावादी भावनाओं को इन्होंने स्पष्ट किया है।

---

1. भारतीदासन कविताएँ - प्रथम भाग - पृ. 118 - 24 वाँ - 1980 सेन्तमिल निलैयम्
2. परिमल - पृ. 103
3. कामराजन - कड़ुमलक्कळ - पृ. 33 IV 1980 तमिल पुस्तकालय।

<u>कला संबंधी प्रवृत्तियाँ :-</u>

कला के क्षेत्र में हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, ध्वन्यर्थ व्यंजना जैसे नवीन अलंकारों का प्रयोग किया है। दोनों ने प्रमुख रूप से मुक्तक कविताओं की रचना की है। दोनों की रचनाएँ शुद्ध साहित्यिक भाषा में हुई हैं। दोनों की भाषाओं में रसानुकूल ओज, प्रसाद, माधुर्य जैसे गुणों का प्रयोग हुआ है। दोनों की कविताओं में सरल एवं सुबोध शैली मिलती है। इन स्वच्छन्दतावादी कवियों का भाषा पर अपार अधिकार रहा है। उदाहरण के लिए —

"आ रही याद,
तूलिका नारियों के चित्रण की निरपवाद,
ब्राह्मण-प्रतिमा का अप्रतिहत गौरव-विकास,
वर्णाश्रम की नव स्फुरित ज्योति, नूतन विलास,
कामिनी-वेश नव, नवल केश, नव-नव कबरी,
नव-नव कम्पन, नव-नव तरंग, नव-नवल तरी,
नव-नव वाहन-विधि, वाहित वनिता जन-नव-नव,
नव-नव चिन्तन, रचना नव-नव, नव-नव उत्सव,
नूतन कटाक्ष, संबोधन नूतन उच्चारण,
नूतन प्रियता की प्रियतमता, समता नूतन, "(1) — निराला

"तिक्कॅल्लाम् परवुम् इनिय
तमिल् मॉळि वाळ्हवे !
...

"तिक्कनै कमरि, पच्चै
कन्नि पाषस्ताक्,
एक्काम वेड्गल वेक्का!
तिक्काम, विडुवले तिक्काम। "(2) — भारती

---

1. निराला – अपरा : पृष्ठ 180 XI सं॰ 2032 वि॰ भारती भण्डार
2. भारतीयार कविताएँ – पृ॰ 32 II 1978 पूम्बूकार प्रसुरम्

"कडल कोण्ड कुमरी नाट्टिल
कडल कोळ्ळाम "कुरिंजुत्तिट्टु,"
मिडल कोण्डुम, वेर नाट्टर
नेर्गवे विडामै कोण्डुम,
नडल कोण्डुम, विळिच्चल कोण्डुम,
नलंग कोण्डुम, मकिळ्च्चि कोण्डुम,
इडल कोण्डुम, अरमै कोण्डुम,
एलाग कोण्डु सिंगळ्वदने।"(1) — भारतीदासन

इन दोनों कवियों ने लोक भाषा से वेष्टित सरल शैली का प्रयोग किया है। जैसे —

"गुडु गुडु गुडु गुडु गुडुगुडु गुडु गुडु
नल्ल कालम वरुगुदु, नल्ल कालग वरुगुदु
जातिकळ चेरुदु, सण्डै गळ तोलैयुदु,
सोल्लडी, सोल्लडी, शक्ति, महा काली!
वेद पुरुत्तरक्कु नल्ल कुरि सोल्लु।
गुडु गुडु गुडु गुडु गुडु गुडु गुडु गुडु
सोल्लडि शक्ति, मलैयाळ भगवती,
धर्मम पेरुगुदु, धर्मम पेरुगुदु।" (2) — भारती

"वह तोड़ती पत्थर!
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर,
वह तोड़ती पत्थर।"(3) — निराला

---

1. कुरिंजुत्तिट्टु - पृ.5 IV 1977 पारि निलैयम्
2. भारतीयार कवितायें - पृ. 216 II 1978 पूम्बुकार प्रसुरम्
3. निराला - अनामिका - पृ.81 VI 1979 भारती भण्डार

दोनों स्वच्छन्दवादी कवियों ने अपनी कविताओं में स्वच्छन्द-'मुक्त' छन्द का प्रयोग किया है।

"नेंजु पोरुक्कुदिल्लैये - इन्द
  निलै केट्ट मनिदरै निनैन्दु विट्टाल्,
अंजि अंजि सावार - इवर्
  अंजाद पोरुळिल्लै अवनियिले,
वंजनै पेय्कळ् एन्बार् - इन्द
  मरत्तिल् एन्बार् अन्द कुळत्तिल् एन्बार्,
तुंजुम् मुकट्टिल् एन्बार्-मिग
  तुयर् पडुवार् एण्णि भयप्पडुवार्।"(1)

— भारतीयार - नेंजु किन्द·

"आज वह याद है वसन्त,
जब प्रथम दिगंत-श्री
सुरभि वन के आकर्षित हृदय की,
दान प्रथम हृदय का
था ग्रहण किया हृदय ने,
अज्ञात भावना,
सुख-चिर-मिलन का,
हल किया प्रश्न जब सहृदय एकत्व का
प्राथमिक प्रकृति ने
उसी दिन कल्पना ने
पायी सजीवता।"(2) — सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' -मुक्त छन्द

1· भारतीयार कविताएँ- पृ·36 तत्कालीन भारतीयों की दशा का उल्लेख इन पंक्तियों में मिलता है। "भारतीय जनंगळ्ळिन तत्काल निलैमै" यह कविता गेय है।

2· परिमल - पृ· 152-153 । 1978 राजकमल प्रकाशन·

हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी आत्मपरक अनुभूतियों को सुन्दर गीतों के माध्यम से व्यक्त किया है। अतएव दोनों की कविताएँ गीतात्मकता से सिक्त हैं। उदाहरण के लिए :

1. "उठ उठ री लघु लघु लोल लहर!
करुणा की नव अंगड़ाई-सी,
मलयानिल की परछाई-सी
इस सूखे तट पर छिटक छहर।"(1) .. प्रसाद

2. "जीवन चल जीवन कल,
जीवन हिम-जल-लघु-पल!
विश्व सुखद, विश्व विषद
विश्व विकच प्रेम-कमल!"(2) .. पंत

3. "स्नेह-निर्झर बह गया है।
रेत ज्यों तन रह गया है।
× × × मैं अलक्षित हूँ, यही कवि कह
गया है।"(3) ... निराला

4. "तुम सो जाओ मैं गाऊँ!
मुझको सोते युग बीते, तुमको यों लोरी गाते,
अब आओ मैं पलकों में स्वप्नों से सेज बिछाऊँ।"(4) ..महादेवी वर्मा

5. "काक्कै चिरगिनिले, नंदलाला! निन्रन
करिय निरम तोन्रुदए, नंद लाला!

---

1. लहर - पृ. 9 VII सं. 2021 भारती भण्डार
2. ज्योत्स्ना - पृ. 33 IV 1978 राजकमल
3. अपरा - पृ. 145 XI सं. 2032 भारती भण्डार
4. याम - पृ. 202

पाल्कुम मरंगळैल्लाम नंद लाला! - निरन
पच्चै निरम् तोन्नुए नंद लाला ! "(1) .. भारती

6· " नील वानमीदु तान्नम कोलमैन सोलवेन तोळि
नीलवानमीदु ...
कालमेंगुम कुळिम ओळियुम नलगुम तिंगळअ मुद
कन्ड्रेन नीलवान मीदु .."(2) .. भारतीदासन·

इस प्रकार इन्होंने सुख-दुःख संबंधित अनुभूतियों को, सुन्दर गीतों के रूप में अभिव्यक्त किया है।

निष्कर्ष ।-

हिन्दी और तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करने के उपरान्त कुछ महत्वपूर्ण बातें हमारे सम्मुख आती हैं। जिनका उल्लेख करना अनुचित न होगा। बीसवीं शताब्दी के आरंभ होते ही राजनैतिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में स्वच्छन्द भावनाएँ उदित होने लगीं। भारतीय साहित्यिक क्षेत्र में अंग्रेजी रोमान्टिक साहित्य का प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य पड़ा। हिन्दी और तमिल का साहित्य इसका अपवाद नहीं था। इस प्रभाव के कारण दोनों भाषाओं के साहित्यकारों का दृष्टिकोण बदला, भाव और विचार, बदल गये, तदनुरूप उनकी व्यक्तिवादी चेतना में नया रंग आ गया। अतएव उनकी अनुभूतियाँ, कल्पनाएँ स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की ओर उन्मुख होने लगीं। प्रकृति की स्वतंत्रता पर जोर दी गयी। अतएव परंपरागत, मानवीय भाव श्रृंखलाओं से आबद्ध प्रकृति को इन कवियों ने मुक्त किया और उसे स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान कर दिया। आधुनिक हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में श्रीधर पाठक ने 'गुनवन्त हेमन्त' में प्रकृति को साधारण वस्तुओं जैसे मूली, मटर को प्रेम के साथ उपस्थित करके अपनी स्वच्छन्दता की घोषणा की। ठीक वैसे ही तमिल साहित्यिक क्षेत्र में प्रो· सुन्दरम्पिल्लै ने कैंचुआ और जल को अपने

1· भारतीयार कवितएँ - पृ· 146
2· तेन अरुवि - पृ·92 1978 पुरस्कार

काव्य नाट्य 'मनोनमणीयम' में रसानुभूतिपूर्वक प्रस्तुत किया। दोनों साहित्य में स्वच्छन्दता-वादी काव्य का शुभ आरंभ स्वतंत्र प्रकृति चित्रण से माना जा सकता है। दोनों भाषाओं के काव्यों में प्रकृति किसी पर आश्रित नहीं, किसी की अनुगामिनी नहीं बल्कि स्वतंत्र रूप से साम्राज्ञी बनकर, आलम्बन के रूप में विहार करती है। इसके अतिरिक्त दोनों की कविताओं में पृष्ठभूमि, उद्दीपन, अलंकार जैसे परंपरागत रूपों में भी प्रकृति का चित्रण हुआ है। दोनों भाषाओं के कवियों ने आकाश, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, रात्रि, सन्ध्या, प्रभात, पर्वत, नदी, धारा, ओस, सरोज, सूरजमुखी, कुमुदिनी, पंकज कली, तूफान, सागर, पवन, नीरव, बिजली, शक्ति, पत्थर, फूल, प्रकाश, अन्धेरा, केंचुआ, चींटी, कोकिल, जल आदि प्रकृति के उपादानों को स्वतंत्र रूप से देखकर उनके महत्व को स्पष्ट रूप से घोषित किया है। इन दोनों साहित्यकारों ने प्रायः प्रकृति को सजीव सत्ता रखनेवाली नारी के रूप में देखा है। अतः दोनों में मानवीकरण की पद्धति प्रचुर मात्रा में मिलती है। प्रमुख रूप से ऊषा, आकाश, चाँद, चाँदनी, सन्ध्या, रात्रि, अन्धेरा, सागर, दक्षिणी हवा आदि प्राकृतिक वस्तुओं को सजीव मानव-रूप प्रदान करके, उनके कार्यकलापों का, काल्पनिक वर्णन इन कवियों ने किया है। तमिल स्वच्छन्दतावादी क्षेत्र में केंचुआ और जल का जो वर्णन मिलता है वह हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में दिखायी नहीं पड़ता। 'शक्ति' पर अपार एवं अटल विश्वास करनेवाले भारती ने उसे प्रकृति का एक अंग मानकर, उसका जो वर्णन किया है, वह भी हिन्दी क्षेत्र में दिखायी नहीं पड़ता। हिन्दी कवियों ने व्याकरण के आधार पर प्रकृति के अंगों को पुल्लिंग तथा स्त्री-लिंग का प्रयोग किया है। लेकिन तमिल कवियों ने, प्रायः प्रकृति की वस्तुओं को स्त्रीलिंग (1) में ही प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ : बादल को सुरता ने स्त्रीलिंग में प्रयोग किया है तदनुरूप 'बदली' शब्द का प्रयोग यथास्थान किया गया है। 'दक्षिणी हवा' तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में महत्व-पूर्ण स्थान रखती है। चाहे वर्णन प्रेम का हो अथवा सौन्दर्य का 'तेन्रल' अवश्य घुस जाती है। हिन्दी में

---

1 व्राणीदासन ने एक स्थान पर 'तेन्रल' को नायक का रूप दिया है। इसका उल्लेख कल्पना के अन्तर्गत तृतीय अध्याय में किया गया है।
 एलिल ओवियम - पृ॰ 23

'मलयानिल पवन' और 'मधुर मारुत' का उल्लेख प्रचुर मात्रा में मिलता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य क्षेत्र में कली, बादल, ओस जैसे प्राकृतिक वस्तुओं की आत्म-कथाएँ प्राप्त हैं। उसी प्रकार तमिल काव्य क्षेत्र में धीधारा, सागर आदि अपनी आत्म कथा प्रस्तुत करते हैं। दोनों भाषाओं के कवियों के लिए आकाश, प्रभात, सन्ध्या, रात्रि, चाँदनी, नक्षत्र, बादल आदि प्रिय हैं।

तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में प्रेम के अलौकिक एवं लौकिक दोनों रूप समान रूप से मिलते हैं। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्राप्त लौकिक रूप अर्थात् प्रेम का आदर्श रूप तमिल में अपेक्षाकृत कम है। तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य के प्रेम के लौकिक पक्ष में काम की नग्न भावनाएँ मिलती हैं। भाषा-प्रेम तमिल की अपनी विशेषता है। हिन्दी कवियों ने भी खड़ी बोली का समर्थन किया था, लेकिन जिस मात्रा में तमिल का समर्थन तमिल क्षेत्र में किया गया है, उतना हिन्दी क्षेत्र में हिन्दी के प्रति नहीं। प्रेमिका के विरह में तड़प-तड़प कर आँसू बहानेवाले कवि तमिल में बहुत कम हैं। केवल भारती की कण्णमा से संबंधित कविताओं में इस प्रकार की भावनाएँ प्राप्त हैं। लेकिन प्रसाद कृत आँसू, और पन्त की 'ग्रन्थि' में जो पहुँचा हुआ विरह है वह तमिल क्षेत्र में अपेक्षाकृत कम प्रतीत होता है। तमिल कवियों में भारतीदासन और सुरता ने प्रत्यक्ष रूप से अपने लौकिक प्रेम की भावनाओं एवं चेष्टाओं को व्यक्त किया है। लेकिन हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रकृति को माध्यम बनाकर अर्थात् प्रकृति के अंगों को नायक-नायिका का पद प्रदान करके अपने लौकिक प्रेम को व्यक्त किया है। जैसे : जुही की कली और शेफालिका। तमिल काव्य क्षेत्र में प्रेम के वर्णन में साधारण जुलाहा, किसान, फूल बेचनेवाली भी को नायक-नायिका का पद दिया गया है। जैसे भारती-दासन कृत 'अलैयमधुमें'। हिन्दी क्षेत्र में इस प्रकार की प्रवृत्ति बहुत कम है। अतः समग्र रूप से भाषा-प्रेम तमिल की निजी विशेषता है। और प्रेम का उदात्त रूप हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों की नूतन देन है।

'सौन्दर्य' के प्रमुख दोनों रूप अर्थात् प्राकृतिक और नारीगत दोनों में प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य से दोनों भाषाओं के कवियों को प्रेरणा मिली थी। दोनों के लिए प्रकृति शाश्वत चिर-सुन्दरी एवं युवती है। भारती और गुरु भक्त सिंह 'भक्त' विहग-समुदाय को अपना साथी मानते थे।

रामनरेश त्रिपाठी को दक्षिण के तमिलनाडु में स्थित रामेश्वरम् के समुद्र ने आकर्षित किया था और तमिल कवि भारती को गंगा की लहरें अत्यन्त सौन्दर्यमयी प्रतीत हुईं। भारती ने गंगा में नौका विहार भी किया था और वहीं तट पर बैठे बैठे कविताएँ भी लिखी थीं। अतः दोनों भाषाओं की कविताओं में प्राकृतिक सौन्दर्य का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रातःकालीन, सन्ध्याकालीन और रात्रिकालीन सौन्दर्य दोनों काव्यों में समान रूप से मिलते हैं। इस प्रकार के सौन्दर्य-चित्रों में इन कलाकारों ने कल्पनाओं का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया है। नारी-रूप-चित्रों में तमिल कवियों की कल्पनाएँ आकाश को पारकर उस पार तक पहुँचने का प्रयत्न करती हैं। भारतीदासन के नारी-संबोधनों में भी नारी की सुन्दरता निहित है। नारी के लिए मृगनयनी, पिक बयनी, कोकिल वाणी, विद्युत् की रेखासी, उषा की अरुणाई सी आदि का प्रयोग दोनों में मिलता है। नारी के सौन्दर्यांकन में मधुर मधुर अधर, उरोज, बाहें, जंघा, अलकें, पलकें, दृग आदि पर दोनों भाषाओं के कवियों की दृष्टि खूब पड़ी है। प्रायः दोनों साहित्यकारों ने नारी के अंगों को बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन करने के लिए प्राकृतिक अंगों से उपमानों की खोज की है। कभी कभी इनकी नारियों की सुन्दरता इतनी पराकाष्ठा तक पहुँच जाती है कि प्रकृति के अंगों को ही इन कवियों की नारियाँ अपने अंगों की सुन्दरता को प्रदान कर देती हैं। जैसे : भगवतीचरण वर्मा और सुरदा की नारियाँ।

सौन्दर्य को ही देवता के रूप में कल्पना करने की एक विशेष प्रवृत्ति भारती में मिलती है। इससे प्रेरणा लेकर सुद्धानन्द भारती ने भी इस प्रकार की कविताएँ लिखी हैं। लेकिन हिन्दी के क्षेत्र में ऐसा वर्णन कदाचित् ही उपलब्ध होता है।

समानता के आधार पर निराला कृत 'तुलसीदास' की कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों में भारती की कविता सौन्दर्य-देवता की तुलना इस अध्याय में की गयी है। फिर भी इन दोनों का अपना-अपना अलग अस्तित्व है। क्योंकि भारती की कविता मुक्तक है और निराला की पंक्तियाँ प्रबन्ध काव्य का अंश मात्र है। तमिल की कविता अऴकुदेवम्' अर्थात् सौन्दर्य देवता में, अलौकिक भूमि पर दर्शन के मूलतत्व को खोजा गया है। इसका विश्लेषण[1] अन्यत्र भी किया जा चुका है कि स्वच्छन्दतावादी काव्य को सबल एवं

---

1. तृतीय अध्याय में सौन्दर्य के अन्तर्गत इसका विश्लेषण हुआ है।

प्रमुख प्रवृत्तियों का सुन्दर सम्मिश्रण इस अकेली कविता में उपलब्ध होता है। अतः इसे तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रतिनिधि कविता मानने में कोई आपत्ति नहीं है। सौन्दर्य के क्षेत्र में यह एक क्रान्तिकारी कविता है। आदर्श सौन्दर्य हिन्दी कवियों की नवीन देन है। इस प्रकार दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने सौन्दर्य के क्षेत्र में नवीन उद्भावनाओं को प्रस्तुत करके अपनी अपनी विशेषता का परिचय दिया है।

'कल्पना' के क्षेत्र में हिन्दी और तमिल के कवियों ने अत्युक्तिपूर्ण कल्पनाएँ की हैं। तमिल कवियों की कल्पनाओं में जीवन के व्यवहारिक पक्ष की विविध प्रवृत्तियाँ वर्णित हैं। जैसे : नारियों की ध्रुव गर्दन और मोरनी की दीर्घ गर्दन की कल्पना। दोनों की कल्पनाएँ प्रायः प्रकृति के उपादानों को लेकर पल्लवित होती हैं। दोनों की कल्पनाएँ नक्षत्र, बादल, उषा, सन्ध्या, रजनी, ओस, धारा, सागर, वानमपाड़ि पक्षी, इन्द्रधनुष आदि के वर्णन में उज्ज्वल हो उठी हैं। दोनों की कविताओं में प्रकट होनेवाली मानवीकरण पद्धति का आधार इन कवियों की अद्भुत कल्पनाएँ ही हैं। दोनों काव्य में कल्पना की रम्यता को देखा जा सकता है। विशेष रूप से भारती और पंत की कविताओं में यह प्रवृत्ति प्रचुर मात्रा में मिलती है। संक्षेप में रसों के स्थान पर इन कवियों ने कल्पना को मुख्यता दी है। कल्पना को आइ० ए० रिचर्ड्स ने छः अर्थों में स्पष्ट किया है। तदनुसार हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य को देखने पर दोनों के काव्य में उदाहरण मिलते हैं :

1. कल्पना यथार्थ सुस्पष्ट प्रतिमाओं को उत्पादन करती है।

ऐ अज्ञात देश के नाविक
ऐ असंख्य माध्यों के सारथ (1)

यहाँ कल्पना नक्षत्रों के लिए नाविक, सारथ जैसी स्पष्ट प्रतिमाओं को उत्पादन करती है। इसी प्रकार 'छाया' के लिए परिहित वसना, भू पतिता, विच्छिन्न लता जैसी प्रतिमाएँ मिलती हैं।

कौन, कौन तुम परिहित वसना
म्लान मना, भू पतिता सी,

---

1. पंत - पल्लव - पृ० 114 ε VIII 1977 राजकमल।
115

वात हता विछिन्न लता सी,
रति श्रान्ता ब्रज वनीता सी? (1)

तमिल कवि ने भी पर्वत के वर्णन में विभिन्न प्रतिमाएँ प्रस्तुत की हैं।

तेरा वस्त्र हरे भरे जंगल हैं,
झरना वक्षस्थल की माला है। (2)

इसी प्रकार नक्षत्रों की मोती, प्रवालों का वन, स्वर्ण प्रतिमा की खिलखलाहट — जैसी प्रतिमाओं की सृष्टि भी की गयी है। (3)

2. कल्पना सालंकार भाषा के प्रयोग से संबद्ध है — अर्थात् उपमा-रूपकों का प्रयोग करने की शक्ति है। 'छाया के लिए उपमाएँ देखिए :

तरुवर की छायानुवाद सी, उपमा सी, भावुकता सी
अविदित भावाकुल भाषा सी कटी छँटी नव कविता सी (3)

नारी के लिए तमिल कवि की उपमाएँ देखिए :

वह पूर्णचन्द्रिनी है क्या? फिरा है क्या?
मधुर मधु है क्या? हरिणी है क्या?
स्वर्ण प्रतिमा है क्या? वह नृत्यकरनेवाली
मोरनी अथवा गानेवाली कोकिला? (5)

---

1. पंत - पल्लव - पृ. 101, VIII 1977 राजकमल
2. एलिल ओवियम् - पृ. 21 - वाणीदासन। III 1977 पुदुच्चेरी
"आडैयो पसुमै काडाम, अणियो एडरुत्त मलैयिर् तुडिय माले।"
3. वाणीदासन - एलिल कूत्तम - पृ. 36 किली प्रकाशन, मद्रास - 1 1970
"कडल मुत्तो, पवळक्काडो, पोरिलैयन चिरल्ल तानो"
4. पल्लव - पृ. 102
5. भारतीदासन - कावल पाट्टुकळ - पृ. 25 - I 1977 पूम्बुकार।
"निलवे अवळ तानो? कदिर तानो? कोम्बु तेनो? पुळ्ळि मानो?
अणिर पोन्ने अवळ मैनिगो, आडुम मइलो, पाडुम कुयिलो।"

3· कल्पना दूसरे मनुष्यों की चित्तावस्थाओं का, विशेषतया, दूसरों के मनोवेगों का सहानुभूति-पूर्ण वर्णन करने की शक्ति है। उदा॰ विधवा, भिक्षुक, वेश्या, भिखारिणी। विधवा की हालत इस प्रकार है —

> हैं करुणा-रस से पुलकित इसकी आँखें
> देखा, तो भीगी मन-मधुर की पाँखें, (1)

तमिल क्षेत्र में वेश्याओं की चित्तावस्थाओं को देखिए :

> हमारे न्यायालय में ही चरित्र दण्डित होता है।
> हम नारीत्व को बेचते हैं, किसलिए
> वस्त्र खरीदने के लिए ...
> हम गुलाम हैं, इसी लिए हमारे साम्राज्य में
> सूर्य उदित भी नहीं होता, अस्त भी नहीं होता। (2)

4· चौथे अर्थ में कल्पना युक्ति कौशल की द्योतक है। इस अर्थ में जो व्यक्ति ऐसे तत्वों को सामान्यत॰ एक दूसरे से नहीं मिलाये जाते हैं, मिला देता है, कल्पनाशील कहलाता है।

> जिस निर्जन में सागर लहरी,
> अंबर के कानों में गहरी —
> निश्छल प्रेम कथा कहती हो, (3)

1· निराला – परिमल – पृ॰ 98 – I 1978 राजकमल
2· एंगळुडैय नीदिमन्दिरत्तिल तान ओळुक्कम दण्डिक्क
पडुकिरदु। नांगळ निर्वाणत्तै विट्रु वयिट्रै वळर्क्किरोम,
आडै वांगुवदर्क्काग। नांगळ अडिमैकळ अदनाल तान
एंगळ साम्राज्यत्तिल सूरियन उदिप्पदु मिल्लै,
अदु अस्तमिप्पदु मिल्लै। कप्पलोट्टिय... – पृ॰ 88, 91
ना॰ कामराजन – IV 1980 मई तमिल पुस्तकालय
3· प्रसाद – लहर 14 – VII सं 2021 भारती भण्डार·

इसमें सागर को लहरियों को अंबर से मिलाया गया है जो संभव नहीं है। कल्पना के द्वारा दोनों का संबंध स्थापित किया गया है। तमिल कवि भी अपनी इस प्रकार की कल्पना शक्ति के द्वारा सागर-पानी को अंबर से मिलाता है। देखिए।

सागर-पानी और नीलाम्बर - दोनों
हाथ मिलाते हैं। इन दोनों के बीच
उमड़नेवाली बाढ़ है - सुन्दर दीप्ति ...(1)

5• कल्पना अनुभव को निश्चित ढंगों में निर्णीत उद्देश्यों के लिए व्यवस्थित करती है अर्थात् अनुभूतियों को एकीकरण करने की क्षमता है। निम्नांकित उदाहरणों में कल्पना अनुभव को निर्णीत ढंगों में विरहानुभूतियों को व्यवस्थित करती है। अर्थात् इनमें अनुभूतियों का एकीकरण कल्पना के द्वारा हुआ है। भारती 'कण्णम्मा' के लिए तड़पते हैं और इन अनुभूतियों को व्यक्त करते हैं -

अरी, तन जल रहा है - सिर चकराने से वेदना हो रही है !
देखो री ! मन को यह श्वेत चाँदनी जले लगा रही है।
अरी, यह दुनिया निद्रा में डूबकर मौन रहती है।
केवल मुझे विरह रूपी नरक में विचरना है क्या?(2)

भारती की तरह भगवतीचरण वर्मा प्रिया के वियोग में तड़पते हैं। उनके सिर पर वियोग का भार है। इसमें भी कल्पना के द्वारा अनुभूतियों का एकीकरण हुआ है।

शशि एकाकी मिटता रहता, रवि एकाकी जलता रहता,
मन एकाकी आहें भरता, हिम एकाकी गलता रहता,

1• कडल नीरुम, नील वानुम
कै कोक्कुम ! अदनिडैयिलुम कडैत्ते सिन्दुम वेळ्ळम
— एलि वीरा•• भारतीदासन - अधिकन रिसिप्टु - पृ• 13 XVI 1980, सेन्तमिल निलैयम।

2• मैनि कोदिक्कुदड़ी ! - तलै सुट्रि वेदनै सेयगुदड़ी !
वनिनिलवत्ती एल्लाम - इन्द वैयिलाय वन्दु तळ्ळुदु पार !
मोनात्तिरुक्कुदड़ी ! - इन्द वैयकम् मूळ्गिक तुयिलिनिले,
नानोरुवन मट्टिलुम - पिरिवेन्दबदोर नरकत्तुळ्ळुववो?
— भारतीयार कवितैगळ् - पृ• 306 - 11 1978 पूम्बुकार प्रसुरम्, मद्रास•

कोयल एकाकी से देती कलि एकाकी मुस्का जाती,

एकाकीपन में बनने का, मिटने का क्रम चलता रहता ![1]

6• कल्पना विपरीत और विरुद्ध गुणों के संतुलन में प्रकट होती है। उदाहरणार्थ।

अरि व्याधि की सूत्र-धारिणी !

अरि आधि, मधुमय अभिशाप !

हृदय गगन में धूमकेतु सी

पुण्य सृष्टि में सुन्दर पाप ![2]

पुण्य और पाप विपरीत गुण हैं। इन दोनों के संतुलन में कल्पना प्रकट हुई है। तमिल कविता में प्रकाश और अन्धेरा का संतुलन कल्पना के द्वारा हुआ है।

गगन में सर्वत्र सूर्य की ज्योति,

पर्वतों के ऊपर सूर्य की ज्योति,

सागर, भूमि, वन, तटनी के तटों पर सर्वत्र सूर्य की ज्योति

आह ! आश्चर्य ! मात्र मानव मन में अन्धेरा बसा हुआ है।[3]

इन उदाहरणों में पुण्य और पाप, प्रकाश (ज्योति) और अन्धेरा जैसे विरोधी गुणों का संतुलन दिखाया गया है।

1• प्रेम-संगीत से। भगवती चरण वर्मा - कुसुमित के फूल - पृ• 161 - साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद।
2• प्रसाद - कामायनी - पृ• 13 'चिन्ता सर्ग' XIII 2.24, भारती भण्डार
3• वानमेंगुम परिधिइन ज्योति, मलैमळ मीदुम परिधिइन ज्योति,
तनि नीलक्कडल मीदिलुम अग्नि तीरत्तन मीदुम, कानकत्तिलुम
परपल आट्रिन कैयकळ मीदुम परिधिइन ज्योति,
मानव नतन उळ्ळत्तनिल मट्टुम कन्दु निरम्बि इरुक्कु केने !
— 'ओळियुम - इरुळुम' (प्रकाश और अन्धेरा) - भारतीयार कविताएँ - पृ• 226
(इरुव) — ।। 1978 पूम्पुकार

उपर्युक्त दृष्टान्तों से स्पष्ट परिलक्षित होता है कि तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों में कल्पना के विविध रूप यत्र-तत्र स्वाभाविक रूप से मिलते हैं। इन दोनों भाषाओं के साहित्यकारों की कल्पनाएँ कोरी कल्पनाएँ नहीं हैं। ये जीवन और प्रकृति से तादात्म्य स्थापित करती हैं। इनकी कल्पनाएँ श्रेष्ठ एवं उच्चतर हैं।

हिन्दी और तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य में 'अनुभूतियाँ' अत्यन्त तीव्र मिलती हैं। तमिल में मिलन, प्रेम से संबंधित सुखानुभूतियाँ और हिन्दी में दुःखानुभूतियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। भारतीदासन की प्रायः समस्त कविताएँ सुखानुभूतियों से भीगी हुई हैं। तमिल काव्य में भारती की कविताओं में प्राप्त दुःखानुभूतियाँ वैयक्तिकता से गुँथी हुई हैं। हिन्दी-क्षेत्र में कवियों ने अपनी अपनी प्रेमिकाओं के विरह में दुःखानुभूतियों को व्यक्त किया है। निराला ने अपनी शोक गीति 'सरोज स्मृति' में अपनी वेदनामयी वैयक्तिक अनुभूतियों को तीव्रता से प्रकट किया है। इनके अतिरिक्त निराला और भारतीदासन की कविताओं में विद्रोहात्मक अनुभूतियाँ भी मिलती हैं जिनके कारण इन दोनों को अपने अपने साहित्यिक क्षेत्र में 'क्रान्तिकारी' का पद मिला है। इस प्रकार दोनों भाषाओं के कवियों की अनुभूतियाँ अत्यन्त व्यापक और महत्वपूर्ण हैं जिससे ये कभी कभी कल्पनाशील भी बन गयी हैं।

तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य का मूल आधार व्यक्तिवाद है। व्यक्तिवाद इनके काव्यों से जुड़ा हुआ है। इनकी काव्यगत प्रवृत्तियों में पायी जानेवाली नवीनता और मौलिकता का कारण इन कवियों की व्यक्तिवादी भावनाएँ ही हैं। प्रायः तमिल भाषा, तमिल जाति और तमिल-नाडु का यशोगान करते समय तमिल-कवियों की व्यक्तिवादी भावनाएँ अत्यन्त तीव्र हुई हैं जैसे : भारतीदासन की भावनाएँ। भारती के राष्ट्रीय गीत एवं 'कण्णन् पाट्टु' में उनकी व्यक्तिवादी चेतना जागृत हो गयी है। हिन्दी क्षेत्र में कवियों ने अपनी दुःख भरी कहानियों का वर्णन करते समय, अपनी निराशामयी वैयक्तिक भावनाओं को प्रकट किया है — जैसे : आँसू, ग्रन्थि और सरोज स्मृति। अद्यतन कवियों में यह व्यक्तिवाद प्रायः लौकिक प्रेम से जुड़ा हुआ है जैसे 'प्रवासी के गीत' और 'प्रेम संगीत'। कहीं-कहीं व्यक्तिवादी भावनाओं की अभिव्यक्ति में समानता भासित होते हुए भी, सर्वत्र भिन्नता ही मिलती है।

नवीनता, विद्रोह और मानवतावादी भावनाएँ दोनों भाषाओं के स्वच्छन्दतावादी काव्य में सम्मिलित रूप से मिलती हैं। आदर्श नया समाज, नयी दुनिया की स्थापना और विश्व कल्याण की भावनाएँ दोनों कविताओं में मिलती हैं। कविता क्षेत्र में दोनों ने नया छन्द, नया रस, नव-लय, नव राग, नव रंग और नव कल्पना का आग्रह किया है। दोनों ने सामाजिक क्षेत्र में पुरातनता के प्रति विद्रोह करके नवीनता का प्रतिपादन करना चाहा। दोनों ने जाति-पाँति का खण्डन किया। दोनों ने विधवा, भिक्षुक, भिखारिणी के प्रति अपनी सहानुभूतिपूर्ण भावनाओं को प्रकट किया है। तमिल के क्षेत्र में सामाजिक सुधारों की ओर अधिक ध्यान दिया गया है जिसका श्रेय भारतीदासन को है। दोनों कवियों की मानवतावादी भावनाएँ कालान्तर में गाँधीवादी भावनाओं से मिल गयी हैं। पंत की गाँधीवादी कविताएँ और नामक्कल कवि की गाँधीवादी भावनाएँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

काव्य के क्षेत्र में दोनों ने खण्ड काव्यों की रचना की है। तमिल के क्षेत्र में भारतीदासन ने लघु काव्यों की रचना की है जो एक ही घटना को लेकर चलनेवाली दीर्घ कविता सी लगती हैं। जैसे पुरट्चिक्कवि, सञ्जीवि पर्वतत्तिन सारल, वीरत्ताय (वीर माता)। हिन्दी क्षेत्र में जैसे प्रलय की छाया।(1) शेरसिंह का शस्त्र समर्पण। महाकाव्य के क्षेत्र में 'कामायनी' की रचना हिन्दी में हुई है। काव्य-नाट्यों की रचनाएँ दोनों में मिलती हैं जैसे मनोन्मणीयम और उर्वशी। गीतों के प्रति अपने हृदयानुराग को दोनों साहित्यकारों ने अपनी कविताओं में व्यक्त किया है। इस दृष्टि से भारती कृत 'कण्णन पाट्टु' और निराला की 'गीतिका' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण से दोनों सुन्दर गीतियाँ हैं।

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि हिन्दी और तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का सुन्दर समन्वय हुआ है और उनके विषय-चुनाव, वर्णन पद्धति और कल्पनाओं में भी पर्याप्त समानताएँ मिलती हैं। व्यक्ति, स्थान और समय की माँग के आधार पर, कुछ असमानताएँ भी मिलती हैं। लेकिन यह सत्य उल्लेखनीय है कि दोनों के मूल तत्वों में साम्य है।

---

1. डॉ॰ प्रेमशंकर ने 'प्रलय की छाया' को दीर्घ प्रगीत न मानकर 'पूर्ण प्रगीत' की संज्ञा दी है। लेकिन प्रायः हिन्दी समीक्षकों ने इसे दीर्घ प्रगीत कहकर एक नयी विधा का रूप दिया है।
— हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य - पृ॰ 177, 178 - प्रथम संस्करण : 1974, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी - भोपाल-3

षष्ठ अध्याय

प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों एवं कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन

तुलना की आवश्यकता :—

आधुनिक तमिल और हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन तब तक पूर्ण नहीं कहा जा सकता जब तक दोनों भाषाओं के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों तथा उनके काव्यों की तुलना न हो। क्योंकि तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कविताएँ सम्बन्धित कवियों के व्यक्तित्व से जुड़ी हुई हैं। इसके अतिरिक्त काव्य को कवि के व्यक्तित्व से अलग करके देखने की प्रवृत्ति सिद्धान्त रूप में उचित प्रतीत होने पर भी व्यावहारिक पृष्ठभूमि पर संभव नहीं है। समस्त संसार का वाङ्मय इस बात को प्रमाणित करता है। क्योंकि साहित्य, साहित्यकार की वैयक्तिकता की झलक है। पूर्ण रूप से साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, उस साहित्यकार की आत्मा को समझना होगा जिसने उसका

निर्माण किया है।(1) साहित्यकार का जीवन, उनके विचारों का प्रभाव उनकी काव्य-कृतियों पर अवश्य पड़ता है। विभिन्न परिस्थितियों, कालों, स्थानों में पलने पर भी, विभिन्न रीति-रिवाजों का अनुकरण करने पर भी उनके काव्य की आत्मा एक है। यद्यपि तमिल और हिन्दी के कवियों में अधिक वैषम्य प्राप्त होता है तो भी कुछ महत्वपूर्ण स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के साम्य भी दृष्टिगोचर होते है। वैयक्तिक और साहित्यिक स्वच्छन्दता के आधार पर भारती और निराला, अपनी-अपनी साहित्यिक परंपरा पर विश्वास करनेवाले कवि एवं नाटककार होने के हेतु प्रसाद और भारतीदासन, प्रकृति चित्रण को दृष्टिकोण में रखकर पंत और वाणीदासन की तुलना यहाँ प्रस्तुत की जाती है।

सुब्रह्मण्य भारती और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

जीवन और व्यक्तित्व :

भारती और निराला अपने-अपने भाषा-साहित्य के अमर कलाकार हैं। उनके जीवन और व्यक्तित्व में कुछ समानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। दोनों का जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ था। एक का जन्म तमिलनाडु के तिरुनेलवेली जिले में स्थित एट्टयापुरम गाँव में 11·2·1882 दिनांक को हुआ और दूसरे का जन्म बंगाल के महिषादल राज्य में 21·2·1899 माघ शुक्ल एकादशी के दिन में हुआ। दोनों की माताओं को क्रूर काल ने बचपन में ही छीन लिया था। भारती के पिता चिन्नस्वामी अय्यर एट्टयापुरम राज्य सभा के दरबारी विद्वान थे। निराला के पिता बंगाल के महिषादल राज्य में नौकरी करते थे। दोनों के पिताओं ने दूसरी शादी भी कर ली थी।

1."To know a work of literature is to know the soul of the man who created it, and who created it in order that his soul should be known".

-- J. Middleton Murry
M.H. Abrams - Mirror and the Lamp - page No. 226
Romantic theory and the critical tradition
Oxford University Press Reprint 1979.

भारती को सौतेली माँ से सौभाग्यवश प्यार मिला था। लेकिन निराला को स्वयं अपने पिता के करों से बहुत मार खाना पड़ा। इसलिए जीवन के आरंभ से ही उनका स्वर विद्रोहात्मक रहा। दोनों कवि अपनी-अपनी मातृ-भाषाओं के साथ अन्य दो-तीन भाषाओं के भी ज्ञाता थे। दोनों का विवाह युवावस्था में ही हो गया था। दोनों को जीवन में स्वतंत्रता की चाह रही। सभी प्रकार के नियंत्रण का वे कठोर विरोध किया करते थे। दोनों ने अपने जीवन काल में पत्र-पत्रिकाओं का संपादन भी किया था। भारती ने इण्डिया, स्वदेशी मित्रण जैसे प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं का संपादन किया था। उसी प्रकार निराला 'समन्वय' और 'मतवाला' के संपादक रहे। दोनों अत्यन्त भावुक सरल स्वभाव वाले और सहृदय कवि थे। दोनों का जीवन स्वच्छन्द रहा। दोनों का स्वर विद्रोहात्मक रहा। दोनों कवियों को जीवन में कठोर संघर्षों का सामना करना पड़ा। निडर होकर, सहनशीलता-पूर्वक दोनों ने उन संघर्षों का सामना किया, जीवन की मंजिलों को दृढ़तापूर्वक पार किया और अपनी-अपनी अमर कृतियों से, उन्होंने अपने अपने साहित्य-भण्डार को भर दिया। तमिल स्वच्छन्दता-वादी काव्य में अपनी अमर गंध को छोड़कर, अपने भौतिक संघर्षमय जीवन को त्यागकर 11·9·1921 दिनांक को भारती की स्वच्छन्द आत्मा अमर हो गयी। हिन्दी की विद्रोही आत्मा निराला अपने दीर्घ दुःखमय जीवन को तजकर 15·10·1961 तारीख को अमर हो गये।

कृतित्व :

आधुनिक तमिल काव्य-परंपरा का नेतृत्व करते हुए भारती ने बहुत सी कविताएँ लिखी हैं। राष्ट्रीय गीत, आत्मीय कविताएँ, भक्ति-योग संबंधी कविताएँ, नये गीत, पाप्पा पाट्टु, कण्णन पाट्टु, कुयिल पाट्टु, पांचाली शपथम्, गद्य कविताएँ और मुक्तक कविताएँ इनकी देन हैं। कण्णन पाट्टु, कुयिल पाट्टु, गद्य कविताओं, पांचाली शपथम् और अन्य मुक्तक कविताओं में स्वच्छन्दता-वादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। अनामिका, परिमल, गीतिका, तुलसीदास, कुकुरमुत्ता, अणिमा, बेला, अपरा, नये पत्ते, अर्चना, आराधना और गीत-गुंज निराला की काव्य कृतियाँ हैं। इनमें अनामिका, परिमल, गीतिका, तुलसीदास, और अपरा स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। इन की अन्य काव्य कृतियों में भी स्वच्छन्दतावादी भाव-बोध यत्र-तत्र अवश्य मिलता है। दोनों

साहित्यकारों ने गद्य एवं कहानियों[1] के क्षेत्र में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भारती की काव्य कृति 'पांचाली शपथम' और निराला कृत 'तुलसीदास' खण्डकाव्य हैं जिनका संबंध अतीत से है। इस प्रकार इन दोनों ने इन काव्य कृतियों के द्वारा अपने अतीत प्रेम का परिचय दिया है।

स्वच्छन्द धाराएँ :

भारती और निराला दोनों अपने वैयक्तिक, सामाजिक, साहित्यिक जीवन में सच्चे रूप में स्वच्छन्दतावादी थे। स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी दोनों ब्राह्मणों के प्रति उदासीन रहे। भारती ने 'पापनि अय्यर एन्र कालमुम पोच्चे' (अर्थात् 'ब्राह्मण को 'अय्यर' कहकर संबोधन करने की प्रवृत्ति आज चली गयी है) कहकर उनका व्यंग्य किया है और तत्कालीन ब्राह्मणों की ढोंगी प्रवृत्तियों की ओर संकेत करते हुए उन्होंने कहा कि 'सच्चे शास्त्रों को विकसित न करके उन्हें भी भूल-कर तमिलनाडु के ब्राह्मण झूठी कहानियों को मूर्खों के सम्मुख प्रस्तुत करके अपनी जिन्दगी बिता रहे हैं।'[3] निराला ब्राह्मण समाज में अपने को अछूत समझते हैं—

"ब्राह्मण-समाज में ज्यों अछूत
मैं रहा आज यदि पार्श्वछवि"[4]

---

1. 'ज्ञान रथम्' भारती की गद्य रचना है। 'आरिल और पंगु' स्वर्ण कुमारी, भूलोक रंभा उनकी कहानियाँ हैं। नव-तन्त्रिक कथैकळ, कदैक कोत्तु इनकी कहानियों का संग्रह है। रवीन्द्र की ग्यारह कहानियों को इन्होंने तमिल में अनुवाद भी किया था।

लिली, सखी निराला की कहानियाँ हैं। 'सुकुल की बीबी' इनका कहानी-संग्रह है। प्रबन्ध प्रतिमा', 'रवीन्द्र-कविता-कला' क्रमशः इनके निबन्ध एवं समालोचना साहित्य है।

2. भारतीयार कवितायें - पृ. 57 - II 1978 पूम्बुकार प्रसुरम।

3. उन्मैयान शास्त्रिरंगळै वळर्क्कामल, अवपनवट्टुम मरन्दु विट्टु तमिल नाट्टु पारपार पोय्क्कदै कळै मूर्खरिडम काट्टि वयिर पिळैत्तु वरुकिरार्कळ। — भारतीयार कवितायें - पृ. 445

4. निराला - अनामिका - पृ. 118 VI 1979 भारती भण्डार

जाति-पाँति और वर्ण-व्यवस्था का खण्डन दोनों ने किया था। बच्चों को उपदेश देते हुए भारती कहते हैं —

"जातिकळ् इल्लैयडि पाप्पा ! कुल-
त्ताळ्च्चि उयर्च्चि सोल्लल पावम।" (1)

अर्थात् —

(जातियाँ नहीं हैं ओ बच्चे ! कुलों में
ऊँच-नीच नहीं है। ऊँच-नीच कहना पाप है।)

निराला ने प्रेयसी के द्वारा इसी प्रकार की भावना को व्यक्त किया है —

दोनों हम भिन्न-वर्ण,
भिन्न-जाति, भिन्न-रूप
भिन्न-धर्मभाव, पर
केवल अपनाव से, प्राणों से एक थे। (2)

अन्यत्र भी जाति बन्धनों को तोड़ना चाहते हैं। रंग भेद की इन्होंने निन्दा की है,

दूर हो अभिमान, संशय
वर्ण-आश्रम-गत महामय
जाति जीवन हो निरामय
वह सदाशयता प्रखर दो। (3)

साहित्यिक क्षेत्र में दोनों ने स्वच्छन्द छन्दों का प्रयोग किया है। भारती के पूर्व भी चिन्दु, कण्णि, कुम्मी जैसे स्वच्छन्द छन्दों का प्रयोग किये गये थे। उन्हें नया रंग देकर साहित्यिक क्षेत्र में

---

1. भारतीयार कवितायें - पृ. 203
2. अनामिका - पृ. 8
3. अणिमा से।

प्रचुर मात्रा में प्रस्तुत करने का श्रेय भारती को है। परवर्ती कवि जैसे भारतीदासन और कवि मणि ने इनका अनुकरण करके मुक्त छन्दों में कविताएँ लिखी हैं। वेदों में 'गायत्री' नामक जो छन्द मिलता है, वह तत्कालीन कवियों के मुक्त-स्वभाव को प्रकट करता है। उसी को नया रूप देकर नवीन ढंग से निराला ने हिन्दी क्षेत्र में मुक्त छन्द का प्रयोग सफलतापूर्वक किया था।

स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ।

स्वच्छन्दता वादी प्रवृत्तियाँ दोनों की कविताओं में समान रूप से दृष्टिगोचर होती हैं। प्रकृति के आलम्बनात्मक चित्र दोनों के काव्य में उपलब्ध होते हैं। भारती ने प्रभात, सन्ध्या कालीन वर्णन, चाँदनी, सागर, पवन, उषा, अन्धेरा, प्रकाश, शक्ति, नक्षत्र, वर्षा, तूफानी हवा जैसे प्रकृति के अंगों को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान किया है। निराला ने बादल, तरंग, जलद, वासन्ती समीर, फूल इत्यादि प्राकृतिक उपादानों का स्वतंत्र चित्र खींचा है। दोनों ने अपने अलौकिक प्रेम की भावनाओं को 'कण्णम्मा मेरी प्रेमिका' - 6 और 'तुम और मैं' में व्यक्त किया है। इन दोनों कविताओं में आत्मा और परमात्मा का संबंध स्थापित करते हुए अपनी अपनी रहस्यवादी भावनाओं को इन दोनों कवियों ने व्यक्त किया है। दोनों की कविताओं में प्राकृतिक सौन्दर्य पर्याप्त रूप में मिलता है। दोनों की कविताओं में कल्पना की अतिशयता है। कल्पना में रम्यता दोनों की विशेषता है। दोनों की कविताओं में दुःखात्मक अनुभूतियाँ चरमसीमा पर पहुँचती हैं। भारती की 'कण्णम्मा' और निराला की 'सरोज-स्मृति' में वैयक्तिक दुःखानुभूतियाँ तीव्र हो उठती हैं। अन्य स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ जैसे व्यक्तिवाद, नवीनता, विद्रोह, मानवतावाद, अतीत प्रेम दोनों में मिलती हैं। दोनों ने अपनी हृद्गत वैयक्तिक भावनाओं और उद्गारों को सुन्दर गीतों के रूप में व्यक्त किया है। इस दृष्टि से भारती कृत 'कण्णन पाट्टु', निराला कृत 'गीतिका', 'अपरा' संकलित गीत विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उदाहरण प्रस्तुत हैं —

भारती कण्णम्मा को कन्या के रूप में देखकर गाते हैं —

"किन्न चिरिक्किल्ल, - कण्णम्मा !
शैलक कन्नियमे !
एन्नैक कलि तीर्त्ते - उलगिल एट्रम पुरिय वन्दाय !

पिळ्ळै कनियमुदे, - कण्णम्मा, पेसुम पोर चित्रमे !
अळ्ळि अणैत्तिडवे - एन मुन्ने आडि वरुम तेने !
ओडि वरुगैयिले - कण्णम्मा, उळ्ळम कुळिरुदडि !"(1)

सरिता को संबोधित करके निराला गाते हैं।

"सरि, धीरे बह री !
व्याकुल उर, दूर मधुर,
तू निष्ठुर, रह री !
तृण - थर थर कृश तन-मन
दुष्कर व्रत के साधन
ले धट स्नान लगती, पथ
पिच्छल, तू गहरी !"(2)

इस प्रकार भारती और निराला की कविताओं में गीतों के सुन्दर रूप मिलते हैं।

'शक्ति' संबंधित कविताएँ।

भारती और निराला की कविताओं में 'शक्ति' संबंधित भावनाएँ उपलब्ध होती हैं। भारती की कविताएँ शिव शक्ति,(3) काणि निलम वेण्डुम,(4) नल्लदोर वीणै,(5) महाशक्तिक्कु विण्णप्पम,(6) महाशक्ति वेण्बा,(7) ओम शक्ति,(8) शक्तिक्कु कूत्तु,(10) शक्ति,(11) शक्ति

1 • भारतीयार कविताएँ - पृ• 292 II 1978 पूम्पुकार प्रसुरम्, मद्रास
2 • निराला - गीतिका - पृ• 21 VIII सं• 2030 भारती भण्डार
3 • भारतीयार कविताएँ - पृ• 110
4 • वही - पृ• 112
5 • वही - पृ• 112
6 • वही - पृ• 113
7 • वही - पृ• 114
8 • वही - पृ• 115
9 • वही - पृ• 116
10 • वही - पृ• 117
11 • वही - पृ• 118

विश्लेषण,[1] शक्ति को आत्म समर्पण,[2] शक्ति प्रशंसा,[3] महाशक्ति,[4] महा शक्ति की वंदना[5] इत्यादि कविताएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। निराला की कविताएँ 'राम की शक्ति पूजा', 'आवाहन' शक्ति से संबंधित हैं। इन कविताओं में बँगला साहित्य में प्रचलित शक्ति-काव्य का प्रभाव है। क्योंकि बंगाल और बँगला साहित्य के निकट संपर्क से निराला अवश्य शक्ति-काव्य से प्रभावित हुए। शक्ति-पूजा बहुत प्राचीन-काल से बँगाल में प्रचलित है। उन्नीसवीं शताब्दी में बँगला साहित्य में शक्ति काव्य का प्रभूत विकास हुआ था। स्वतंत्रता की प्यास के उन दिनों में यही शक्ति-पूजा देश-भक्ति-पूजा के रूप में परिवर्तित हो गयी। राष्ट्र-भक्ति को अत्यंत उत्तेजित करने का श्रेय शक्ति काव्य और उसकी पूजा को दिया जा सकता है। भारती की शक्ति संबन्धित कविताओं में बँगला की शक्ति-पूजा का प्रभाव दीख पड़ता है।

'वन्देमातरम् एन्बोम् -	"वन्दे मातरम् कहेंगे -
एंगळ मा निलत्ताय वणंगुदुम एन्बोम्'[6]	हमारी माता की पूजा करेंगे।"

जैसी पंक्तियों से प्रतीत होता है कि भारती ने बंगला[7] और महाराष्ट्र से शक्ति पूजा का प्रभाव ग्रहण किया है।[8] भारत माता एंगळ ताय (हमारी माता)[9] वेरि कोण्ड ताय[10] (उग्र-रूपिणी माता) जैसी कविताओं में 'भारत माता', 'महाशक्ति' का रूप धारण कर लेती है। अतएव

1. भारतीयार कविताएँ - पृ. 126
2. वही - पृ. 126
3. वही - पृ. 126
4. वही - पृ. 129
5. वही - पृ. 134
6. भारतीयार कविताएँ - पृ. 18 ॥ 1978 पूम्बुकार प्रसुरम, मद्रास
7. काशी में निवास करते समय अपनी चोटी को काटकर बँगाली की तरह शिखा अलंकार भारती ने कर लिया। मूँछ भी रख ली। - 'भारती चरितम्' - पृ. 30 - चेल्लम्मा भारती 1979, पारि निलैयम्
8. डॉ. के. कैलाशपति - दस महाकवि एक - पृ. 65। 1974 न्यू सेंचुरी बुक हाउस, मद्रास-2
9. भारतीयार कविताएँ - पृ. 27 व 28
10. पेयवळ काण एंगळ अन्दै - पेरम पिरत्तुवैयाळ एंगळ अन्नै - अर्थात। हमारी माता उग्र देवी है - देखो हमारी माता बड़ी मतवाली है। - पृ. 28 - उग्र देवी माता!

यह स्पष्ट है कि भारती ने 'शक्ति' सम्बन्धित धारणाओं को बँगला से ग्रहण किया है। इसका तात्पर्य यह नहीं समझना चाहिए कि भारती के पूर्व तमिल में शक्ति साहित्य परंपरा नहीं रही है। असल में बात यह है कि माता पराशक्ति को अपनी इष्ट देवी मानकर उसकी कथना एवं वर्णन अधिकतर करने का श्रेय तमिल काव्य-परंपरा में भारती को ही है।(1) इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि भारती और निराला दोनों बँगाल की 'शक्ति' चेतना से प्रभावित हुए हैं। अतएव शक्ति-भावनाएँ इन दोनों की कविताओं में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। शक्ति की महत्ता को भारती इस प्रकार गाते हैं —

"शक्ति शक्ति शक्ती शक्ती शक्ती - कहो
शक्ति शक्ति कहनेवालों को मृत्यु नहीं है।
ओम शक्ति शक्ति शक्ति ही कहो - सारी
बुरे चंचलताओं को मिटाओ
शक्ति शक्ति कहकर उसी के मन्दिर में पूजा करो
ओम शक्ति के गीत गाओ,
ओम शक्ति - ताल बजाओ,
शक्ति-धारा में जाओ ;
मृत्यु-भय को दूर करो ! (2)

निराला की शक्ति क्रान्ति बनकर श्यामा के रूप में नाचने लगती है। देखिए :

"भैरवी ! मेरी तेरी झंझा
तभी बजेगी मृत्यु लड़ायेगी जब तुझ से पंजा ;
लेगी खड्ग और तू खप्पर
उसमें रुधिर भरूँगा माँ

---

1. डॉ. के कैलाश पति - इरु महा कविकळ - पृ. 64 - IV 1974 नवंबर, न्यू सेंचुरी हाउस, मद्रास
2 'भारतीयार कविताएँ - पृ. 126 II 1978 अगस्त पुम्बुकार प्रसुरम्

मैं अपनी अंजलि भर भर,
उँगली के पोरों में दिन गिनता हो जाऊँ क्या मर —
एक बार बस और नाच तू श्यामा !"(1)

असमानताएँ :

भारती और निराला में ऐसी बहुत समानताओं के रहते हुए भी उनके वैयक्तिक जीवन और स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति में कुछ असमानताएँ भी दृष्टिगोचर होती हैं।

1. भारती का जीवन काल अल्प था किन्तु उनकी पत्नी चेल्लमा भारती और उनकी पुत्री तंगमाळ भारती दोनों का जीवन काल दीर्घ रहा। भारती की यह अकाल मृत्यु तमिल साहित्य के लिए बड़ी दुर्भाग्य की बात है। हिन्दी साहित्य के सौभाग्य, निराला के लिए बड़ी दुर्भाग्य की बात यह हुई कि उनकी पत्नी मनोहरा देवी जिसने अपने पति को हिन्दी की ओर आकर्षित किया था, अल्पकालीन दाम्पत्य के बाद पति को छोड़कर परलोक गामिनी हुई। कवि की इकलौती पुत्री 'सरोज' जिसके लिए उन्होंने सामाजिक बन्धनों को तोड़ा, वह भी कवि को छोड़कर युवत्व की संध्या में चल बसी।

2. तमिल कवि भारती का हाथ राजनैतिक क्षेत्र में अप्रत्यक्ष रूप से रहा है। ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध उसकी लेखनी सदा काम करती थी। इनकी कविताएँ राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत हैं। लेकिन निराला ने राजनीति में सक्रिय भाग नहीं लिया, फिर भी उनकी कविताओं में यत्रतत्र भारत की वन्दना मिलती है।(2) जैसे 'भारती जय!' 'विजय करे'। परन्तु भारती में स्पष्ट संकल्पित तीव्र भावनाएँ मिलती हैं। ब्रिटिश सत्ता से विमुख, तमिलनाडु को छोड़कर, पाण्डिचेरी में रहते हुए बहुत-

---

1. निराला 'परिमल' - पृ. 115 - 'आवाहन' कविता - I 1978 - राजकमल
2. (1) अनामिका - पृ. 30 - आर्त भारत ! VI 1979 भारती भण्डार
   (2) भारत के नभ का प्रभापूर्य ... 'तुलसीदास
   अस्तमित आज रे।
   (3) हिन्दुस्तान मुक्त होगा घोर अपमान से,
   दासता के पाश कट जाएँगे।
   - 'परिमल' - पृ. 182 - I 1978 - राजकमल

सा कार्य उन्होंने किया था। 'स्वतंत्रता की प्यास कब बुझेगी, कब बुझेगी' जैसी मारती की मावनाएँ निराला की कविताओं में नहीं हैं।

3• प्रकृति के प्रत्येक कण को शक्ति के रूप में देखने की प्रवृत्ति मारती में पायी जाती है।[1] निराला ने प्रकृति के कोमल अंगों में लौकिक प्रेम की मावनाओं का अनुमव किया है — जैसे — 'जुही की कली'। 'शेफालिका'[2] में वासनामय सौन्दर्य का दर्शन कवि ने किया है।

4• कहीं कहीं निराला की कविताओं में लौकिक प्रेम का वासनामय नग्न रूप मी मिलता है। जैसे 'स्मृति चुंबन' में।

"पलकों से पलक मिले,
कण्ठ से कण्ठ लगा हुआ।
बाहुओं से बाहु,
प्राण प्राणों में मिले हुए।"[3]

लेकिन मारती की कविताओं में प्रेम का वासना-मग्न रूप कहीं मी दृष्टिगोचर नहीं होता। नारियों को शक्ति, देवी, माता और यहाँ तक कि पत्नी को मी शक्ति के रूप में[4] देखनेवाले इस कवि में ~~देखनेवाले~~ प्रेम का लौकिक पक्ष सदा निर्बल रहा है।

1• काले इळवेइलिन काट्चि -अवळ कण्णोळि काट्टुकिन्र माट्चि
नील विसुम्बिनिडै इरविल - चुडर नेमि अनैत्तुम अवळ आट्चि।
(प्रमातकालीन मंद धूप में उसका दर्शन है। निशाकाल में नीले नम में उसका शासन है।)
— मारती की कविताएँ - पृ• 120
2• बन्द कंचुकी के सब खोल दिये प्यार से
यौवन उमार ने
— 'पल्लव' - पर्यंक पर सोती शेफालिके - परिमल - पृ• 146 । 1978 राजकमल
3• वही - पृ• 165
4• कादल सेय्युम मनैविए शक्ति कण्डीर, कडवुळ निलै अवळाले एय्द वेण्डुम।
(देवी प्रेम करनेवाली पत्नी ही शक्ति है। उसी से ईश्वरत्व प्राप्त करना चाहिए।)
— मारतीयार कविताएँ - पृ• 269

5. नारी के रूप-सौन्दर्य-चित्रों में भारती की अपेक्षा निराला में काम को उद्दीप्त करनेवाले चित्र मिलते हैं। जैसे : शूर्पणखा का रूप वर्णन। भारती की कविताओं में इस प्रकार रूप-चित्र नहीं के बराबर हैं। भारती का नारी-सौन्दर्य आदर्श है और अलौकिक रूप[1] धारण कर लेता है।

इस प्रकार भारती और निराला तमिल और हिन्दी के दो प्रकाशमान रत्न हैं। दोनों सत्यम् और पौरुष के कवि हैं। दोनों का जीवन विद्रोहमय रहा, दोनों ने जीवन और साहित्य में स्वच्छन्दता से विहार किया, दोनों को आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ा, दोनों ने स्वयं विष पीकर अपने-अपने साहित्य को अमर कर दिया। भारती आधुनिक तमिल साहित्य के अग्रदूत और नेता हैं और निराला आधुनिक हिन्दी काव्य के क्रान्तिकारी महान् कवि हैं।

जयशंकर प्रसाद और भारतीदासन :-

प्रसाद और भारतीदासन आधुनिक हिन्दी और तमिल साहित्य के दो महान् विभूतियाँ हैं। प्रसाद और भारतीदासन की तुलना इस दृष्टि से संभव है कि दोनों अपने अपने भाषा-साहित्य को अन्य भाषाओं के साहित्य से मुक्त करना चाहते थे। अन्य भाषा-साहित्य के प्रभाव को स्वीकार करना इनके लिए उचित नहीं प्रतीत हुआ। दोनों काव्यकार एवं सफल नाटककार थे। सरस्वती और लक्ष्मी का समान परिलालन भी इन दोनों के जीवन की महान् विशेषता है। दूसरे दृष्टिकोण से इन दोनों का आकाश-पाताल का अन्तर है। प्रसाद गंभीर एवं शान्त स्वभाव वाले व्यक्ति थे। लेकिन भारतीदासन गंभीर और विद्रोही थे। व्यक्तिवादी चेतना उनके प्रत्येक अंग में नृत्य करती थी। दोनों ने अपने अपने साहित्य को मौलिकता प्रदान की। दोनों ने अपनी अपनी प्रतिभा से बहुत कृतियाँ लिखकर अपने-अपने भाषा-साहित्य-भण्डार को भर दिया।

---

1. पेण्गैतान दैयवीकमाम कदचियड़ा (नारीत्व ही देव दर्शन है।)

— भारतीयार कविताएँ — पृ. 417. इसका विस्तृत उल्लेख तृतीय अध्याय में है।

जीवन और व्यक्तित्व :

प्रसाद का जन्म काशी में माघ शुक्ल दशमी संवत् 1946 (सन् 1889) को हुआ था। पिता का नाम देवी प्रसाद था। 'सुंघनी साहु' के नाम से इनका परिवार काशी में प्रसिद्ध है। क्योंकि परंपरा से सुरती और तमाखू का व्यापार करते थे। सातवीं कक्षा तक क्वीन्स कालेज में शिक्षा पायी और बाद में घर पर ही अंग्रेज़ी, हिन्दी, संस्कृत, उर्दू और फ़ारसी का अध्ययन किया। प्रसाद ने नौ वर्ष की अवस्था में ही कविता लिखने की शुरुआत की। आरंभ में 'कलाधर' के उपनाम से उन्होंने कविता लिखी थी। शैव सिद्धान्तों पर विश्वास रखनेवाले यह साहित्यकार घण्टों शिव मन्दिर में बैठकर, पूजन किया करते थे। प्रसाद को जीवन में कठिन से कठिन समस्याओं को सुलझाना पड़ा, अनेक मंजिलों को पार करना पड़ा और कठोराघातों को सहना पड़ा। इतना होते हुए भी अत्यन्त शान्त एवं सहनशीलतापूर्वक जीवन बिताया और अपनी वैयक्तिक दुःखानुभूतियों को स्पष्ट रूप से 'आँसू' में व्यक्त कर दिया। प्रसादजी ने हिन्दी साहित्य के अक्षय भण्डार को भरा। अन्तिम समय में उनको पर्याप्त ख्याति भी मिल चुकी थी। साहित्य में इनका नाम स्थायी हो गया। दिन के बढ़ते-बढ़ते उनका शरीर भी शिथिल पड़ता गया। उन्हें यक्ष्मा हो गया था। ऐसी विकट परिस्थिति में 15·11·1937 को प्रातःकाल आधुनिक हिन्दी काव्य के अग्रदूत, अपने अमर ग्रन्थों को छोड़कर, इस संसार से उठ गये। लेकिन उनकी आत्मा और कृत्य का सौरभ अमर हो गया। प्रसाद के प्रति 'निराला' ने लिखा था —

"किया मूक को मुखर, लिया कुछ दिया अधिकतर
पिया गरल किया जाति साहित्य को अमर।"

भारतीदासन का जन्म 29·4·1891 को बुधवार रात 10·15 बजे पाण्डिचेरी में हुआ। उनका असली नाम सुब्बुरत्तिनम है। आगे चलकर 'भारती दासन' नाम से तमिल साहित्यिक क्षेत्र में उनको ख्याति मिली। उनके पिता का नाम कनक सबै था। इनको बचपन में ही कविता लिखने की क्षमता आ गयी थी। दसवें साल से गाने और अभिनय करने में लग गये थे जिससे पुदुच्चेरी में उनका नाम बन गया था। इन्होंने तमिल साहित्य और व्याकरण का गहन अध्ययन किया था। सन् 1908 में तमिल के विद्वान परीक्षा में प्रथम आये। भारतीदासन के उपनाम पर क्रमिक रूप से पत्र-पत्रिकाओं में

कविताएँ, निबन्ध, कहानियाँ लिखने लगे। दस साल तक महा कवि सुब्रमण्य भारती के साथ अत्यन्त निकट रूप से रहने का सौभाग्य भी इनको मिला था। उस काल में हर परिस्थिति में भारती का साथ दिया करते थे। शायद लगता है कि इसीलिए उनका नाम 'भारती दासन' पड़ गया था और उस नाम को उन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में सार्थक बना दिया। क्योंकि उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है कि 'सुब्रमण्य भारती ने उनकी कविता को नयी पद्धति दी और नयी शैली प्रदान की।'(1) सन् 1909 से लेकर 1946 तक उन्होंने तमिल का अध्यापन किया था। सन् 1920 में राष्ट्रीय स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेकर खद्दर वस्त्र भी बेचा था। सन् 1928 में पेरियार के 'स्वसम्मान' (सुयमरियादै) संस्थान, जो नास्तिकता का पक्ष लेकर ब्राह्मणों का विरोध करके राजनीति में सक्रिय भाग लिया करता था, में शामिल हो गये। इसका प्रभाव उनकी परवर्ती काव्य-कृतियों पर स्पष्ट रूप से पड़ा है। सन् 1962 तक आते-आते उनका नाम तमिल क्षेत्र में ख्यात हो गया था और तमिल साहित्य को कई अमर कृतियाँ वे दे चुके थे। जीवन में उनको पर्याप्त शान्ति और तृप्ति भी मिली थी। सन् 1919 में एक बार उनको जेल जाना पड़ा, लेकिन स्वयं सरकार अपनी गलती महसूस करके उनको स्वतंत्रता दे दी और उनको पुनः नौकरी भी दिलवायी गयी। तमिल के ये विद्रोही कवि 21.4.1964 दिनांक को अपनी धधकती हुई ज्वालाओं को छोड़कर स्वर्गवासी हो गये। तमिल साहित्य में भारती के साथ इनका नाम बहुत आदरपूर्वक आज भी लिया जाता है। भारतीदासन के प्रति निम्नलिखित पंक्तियाँ तमिल में प्रसिद्ध हैं —

"वही ज्ञाता है, वही कवि है,
वही तमिल का ज्ञाता है, वही परोपकारी तमिष़न है,

---

1. 'सुब्रमण्य भारती तेन्दिरप्पन
पाट्टुक्कु पुदुमै, पुदु नडै काट्टिनार।'
— भारतीदासन की कविता - आत्मकथा के रूप में।' पृ. 5
तेन अरुवि - भारतीदासन की कविताएँ - जनवरी 1978,
एरणाकुलम् प्ररूरम्.

साम्यवादियों के लिए वही शाश्वत कोश है।"(1)

कृतित्व :

दोनों साहित्यकार सर्वतोमुखी प्रतिभा रखनेवाले थे। दोनों ने साहित्य की विविध विधाओं पर कृतियाँ लिखी हैं। उर्वशी, वन मिलन, प्रेम राज्य, शोकोच्छ्वास, चित्राधार, कानन कुसुम, प्रेम पथिक, करुणालय (गीति नाट्य), महाराणा का महत्व, झरना, आँसू, और लहर, कामायनी प्रसाद की काव्य कृतियाँ हैं। सज्जन, कल्याणी-परिणय, प्रायश्चित्त, राज्यश्री, विशाख, अजातशत्रु, जनमेजय का नागयज्ञ, कामना, स्कन्दगुप्त, एक घूँट, चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी उनके नाटक हैं। कंकाल, तितली और इरावती उनकी उपन्यास कृतियाँ हैं। छाया, प्रतिध्वनि, आकाश दीप, आँधी, और इन्द्रजाल उनकी कहानियाँ हैं। 'काव्य कला तथा अन्य निबन्ध' उनके निबन्ध संग्रह हैं। 'कामायनी' पर उनको मरणोपरान्त मंगलाप्रसाद पारितोषिक मिला। इसी प्रकार तमिल साहित्य भण्डार को अपनी अनेक कृतियों से भारतीदासन ने भी भरा है। भारतीदासन् कविता संग्रह I, II और III, इसै अमुदु I, II, अलुकिन सिरिप्पु, तमिलियक्कम, कादल निनैवुकळ और इळैञर इलक्कियम उनके कविता-संग्रह हैं। पाण्डियन परिसु, कादला - कडमैया?, तमिழच्चियिन कत्ति, कुडुम्ब विळक्कु, एदिर पाराद मुत्तम्, कण्णकी पुरट्चिक्काप्पियम, मणिमेकलै वेण्बा, कुडुंब विळक्कु I, II, III, IV, व V और इळैञर वीडु उनकी काव्य-कृतियाँ हैं। इनके अतिरिक्त कादल पाड़लकळ, तेन अरुवि और कुयिल पाडल-कळ, उनके अन्तिम कविता-संग्रह हैं। पिसिराण्डैयार, चेर तांडवम्, पड़ित्त पेण्कळ, नल्ल तीर्पु और अमैदि उनके प्रमुख नाटक हैं। उन्होंने देशीय गीत, चरखा गीति भी लिखे हैं। उनके मरणोपरान्त 'पिसिराण्डैयार' नाटक दिल्ली साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत हुआ (सन् 1969)। दोनों कवि निस्सन्देह अमर हैं।

1. 'अवने अग्नि न, अवने पूलवन,
अवने तमिழ अरिवोन - अवने
तनक्केन वाழा तमिழन, पोदुमै
इनर तुलगुम् एन्रुम इरुप्पु'
— भारतीदासन कृत कादल पाड़लकळ - पृ. 24 । 1977 अगस्त, पूम्बुकार प्रसुरम ।

प्रसाद और भारतीदासन की जीवनी, उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व तथा उनके काव्य में प्राप्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के तुलनात्मक अध्ययन करने से, इन दोनों में कुछ महत्वपूर्ण समानताएँ और असमानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

समानताएँ।

1. प्रसाद और भारतीदासन अपनी-अपनी साहित्यिक परंपरा पर विश्वास रखनेवाले कलाकार थे। प्रसाद को भारतीय संस्कृति पर अटल विश्वास था। भारतीदासन को तमिल परंपरा, संस्कृति और सभ्यता पर विश्वास था। इस दृष्टि से दोनों भारतीय संस्कृति और सभ्यता के अमर व्याख्याता थे। दोनों साहित्यकारों की पृष्ठभूमि भारतीय संस्कृति रही है।

2. दोनों ने अन्य भाषा-साहित्य के प्रभाव को स्वीकार नहीं किया। बंगला और रवीन्द्र का प्रभाव समकालीन कवियों पर होते हुए भी इन दोनों पर नहीं के बराबर है। प्रसाद पर रवीन्द्र का प्रभाव अब नहीं ढूँढा जा सकता है।[1] भारतीदासन ने दूसरी भाषाओं के अनुकरण करने की प्रवृत्ति का कठोर विरोध किया है।[2] प्रसाद ने हिन्दी साहित्य को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करना चाहा और प्रदान भी किया। भारतीदासन ने भी पूर्ण रूप से अन्य भाषाओं के प्रभाव को अपनी कविताओं पर छूने तक नहीं दिया और यहाँ तक कि अंग्रेज़ी शब्दों के स्थान पर, परिष्कृत तमिल शब्दों का प्रयोग करके अपनी स्वच्छन्दता और मौलिकता का परिचय दिया। प्रसाद पर पाश्चात्य प्रभाव थोड़ा बहुत है। भारतीदासन पर इसकी छाया तक नहीं पड़ी।

3. प्रसादजी पर बौद्ध एवं शैव दर्शन का प्रभाव है तो भारतीदासन पर तमिल दर्शन का प्रभाव है। इस प्रभाव को उनके साहित्य के कण-कण में हम देख सकते हैं। पेरियार के स्वाभिमान का प्रभाव भी इन पर है।

---

1. दिनकर : काव्य की भूमिका - पृ. 70 । 1958 जून उदयाचल।
2. भारतीदासन अधुकिन सिरपु - पृ. 4 प्राक्कथन -
। 1980 सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै (तमिलनाडु)

4· आत्मसम्मान और आत्मविश्वास की भावनाएँ दोनों में प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। दोनों का व्यक्तित्व अत्यन्त गंभीर रहा। उनका अनुकरण करना साधारण बात नहीं है।

5· विश्व कल्याण की भावनाएँ दोनों की कविताओं में मिलती हैं। दोनों शिवम् के कवि हैं।

6· दोनों की रचनाओं में दीर्घ कविताएँ मिलती हैं। पर्याप्त मात्रा में गीतात्मकता इनकी कविताओं में प्राप्त होती है। उदा : लहर, झरना, तेन अर्वि और इरैयमुदु।

7· दोनों को ऐतिहासिक ज्ञान पूर्ण रूप से था।

8· अगर प्रसाद छायावादी काव्य-धारा के प्रवर्तक हैं तो भारतीदासन ने सामाजिक कुरीतियों को नष्ट-भ्रष्ट करके मानवतावाद का प्रवर्तन किया है।

9· अपने-अपने साहित्य को मौलिकता प्रदान करने का श्रेय इन दोनों को है।

10· दोनों की कृतियों से हिन्दी और तमिल साहित्य के भण्डार भर गये। दोनों ने अपने-अपने साहित्य को नाट्य कृतियाँ भी दी हैं।

11· दोनों की विचार धाराओं में एवं चिन्तन प्रणालियों में स्वाभाविक विकास क्रम मिलता है। काव्य का सहज विकास भी दोनों में उपलब्ध होता है।

12· दोनों में प्रकृति को स्वतंत्र रूप से देखने की प्रवृत्ति पायी जाती है। इनके काव्य में प्राकृतिक सौन्दर्य सधर्मानुकूल या तो पृष्ठभूमि के रूप में काम करता है अथवा अलंकार के रूप में। दोनों कवियों ने प्रकृति के उपादानों में मानवीय भावनाओं का आरोप किया है। दोनों ने प्रकृति को स्वधर्मानुकूल आशामय एवं वेदनामय देखा है। प्रसाद को उषा जयलक्ष्मी सी प्रतीत होती है और भारतीदासन के नायक को विरह-वेदना को सहन न करके पूर्णचन्द्रिनी भी मेघों के पीछे छिप जाती है — देखिए :

"उषा सुनहले तीर बरसती जय-लक्ष्मी सी उदित हुई,
इधर पराजित काल रात्रि भी जल में अन्तर्निहित हुई।"(1.) प्रसाद

1.· प्रसाद – कामायनी – पृ· 31 XIII सं · 2024 भारती भण्डार, इलाहाबाद – आशा सर्ग·

"पूर्ण चाँदनी उमड़ती हुई वेदना को

सहन न करके श्याम मेघों के पीछे अदृश्य हो गयी।"[1] .. भारतीदासन ·

13· नारी के रूप वर्णन में बिजली फूल, विशिष्ट फूल और बिजली वस्त्र की कल्पना दोनों ने की है।[2]

14· दोनों की कविताओं में प्रभात, सन्ध्या, नीरद, रात्रि, सूर्य, चाँदनी, समुद्र, नक्षत्र, आदि प्रकृति के अंगों का वर्णन एवं उल्लेख प्रायः मिलते हैं।

15· अगर प्रसाद आध्यात्मिक धरातल पर आनन्दवाद की स्थापना करना चाहते थे तो भारतीदासन ने सामाजिक यथार्थवाद की पृष्ठभूमि पर आनन्दवाद की स्थापना करना श्रेय समझा।

इन दोनों में कुछ महत्वपूर्ण असमानताएँ भी दृष्टिगोचर होती हैं।

असमानताएँ :

1· प्रसाद को अतीत पर अपार विश्वास था। उपनिषदों एवं पौराणिक कथाओं का विश्वास करके उनको समय-समय पर अपनी कृतियों में व्यक्त किया है। लेकिन भारतीदासन को इन पर कोई विश्वास नहीं था। असल में वे इन सबका घोर विरोध करते थे।

2· प्रसाद आदर्शवादी थे। लेकिन भारतीदासन नग्न यथार्थवादी थे। प्रसाद में पुरानी परंपरा और नवीनता का सुन्दर समन्वित रूप मिलता है। लेकिन भारतीदास की कविताओं में सिर्फ विद्रोहात्मकता और नवीनता उपलब्ध होती हैं।

1· मुळु निलावुम

पोंगु तुयर कण्तुम पोरुददागि मैल्वद्वे पोयक करिय मुकिलुक्कु पिन,

— पाण्डियन परिसु - पृ· 161, इयल 85 ४V 1978 सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै।

2· इनका उल्लेख पंचम अध्याय में है।

3• प्रसाद समाज के प्रति अपेक्षाकृत मौन हो जाते थे लेकिन भारतीदासन की कविताओं में समाज सुधार संबंधित अत्यंत तीव्र भावनाएँ मिलती हैं। एक ने दलित पीड़ित व्यक्ति एवं विधवा के प्रति कोई सहानुभूति अपनी कविताओं में नहीं दिखायी, दूसरे ने उन्हीं के मूल को पकड़कर समाज में स्थित कुरीतियों और ढोंगी प्रवृत्तियों को प्रत्यक्ष रूप से निडरतापूर्वक समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया।

4• प्रसाद समग्र भारत पर विश्वास करते थे। लेकिन भारतीदासन की दृष्टि तमिलनाडु तक ही सीमित रह गयी। उनको अन्य प्रान्तों के प्रति कोई परवाह नहीं थी।

6• प्रसाद आस्तिकवादी थे। भारतीदासन ने ईश्वर का घोर विरोध करके नास्तिक पक्ष में अपना लिया था।

7• भाग्यवाद से संबंधित सिद्धान्तों में दोनों का मत भिन्न रहा। प्रसाद नियति [1] पर विश्वास रखते थे। नियति से संघर्ष करना वे उचित नहीं समझते थे और अपना सबकुछ नियति को सौंपकर, मनुष्य का निष्क्रिय होना भी अनुचित समझते थे। लेकिन भारतीदासन को भाग्यवाद पर कोई विश्वास नहीं था। उनकी कविताओं में 'नियतिवाद' जैसा कोई सिद्धान्त नहीं है। केवल उनको मानवतावाद पर अटल विश्वास रहा है। वे भाग्यवाद को चकनाचूर करके अपनी तर्कमयी बुद्धि से उस पर विजय पाना चाहते थे और मानव को भी इसी सिद्धान्त पर चलने का उपदेश दिया करते थे।

8• प्रसाद ने ब्राह्मणों का कोई विरोध नहीं किया। लेकिन भारतीदासन ने ब्राह्मणों का कट्टर विरोध किया था।

9• प्रसाद की कविताओं में (लहर) पलायनवादी वृत्ति पायी जाती है और उनकी कृतियों में दर्शन के सिद्धान्त - समय-समय पर व्यक्त होते हैं। लेकिन भारतीदासन की कविताओं में पलायनवादी

1• (1) 'कातरता से भरी निराशा देख नियति पथ बनी वहीं' .. कामायनी - पृ • 24
(2) 'उस एकान्त नियति शासन में चले विवश धीरे-धीरे ..' .. कामायनी - पृ• 42
(3) 'दो अपरिचित से नियति अब चाहती थी मेल' ... कामायनी - पृ• 89
(4) 'नियति खेल देखूँ न, सुनो अब इसका अन्य उपाय नहीं है!' ... कामायनी - पृ • 268
(5) 'कर्म-चक्र सा घूम रहा है यह गोलक बन नियति प्रेरणा,' ... कामायनी - पृ• 274
(6) 'नियति चलाती कर्म चक्र यह -' .. कामायनी पृ• 275 XIII सं• 20 24
(7) नचती नियति नटी सी,
कंदुक क्रीड़ा सी करती' .. 'आँसू' - पृ•5। अध्याय संस्करण। 1976 - प्रसाद प्रकाशन•

प्रवृत्तियाँ नहीं हैं। वे इसी दुनिया में रहकर, जीकर समस्याओं को सुलझाना चाहते थे। दर्शन की भावनाएँ भी इनकी कृतियों में अपेक्षाकृत कम प्रतीत होती हैं।

10• दोनों मूलतः प्रेम और सौन्दर्य के कवि हैं। लेकिन इनके प्रति इनकी अलग-अलग धारणाएँ रही हैं। प्रसाद की कविताओं में प्रेम का उदात्त रूप मिलता है। भारतीदासन का प्रेम नारी से संबंधित लौकिक प्रेम है। प्रसाद स्वयं प्रियतम के विरह में तड़पकर आँसू बहाते हैं और भारतीदासन की नायिकाएँ अपने नायकों को याद करते-करते पतली हो जाती हैं। प्रसाद के लिए सौन्दर्य –

" उज्ज्वल वरदान चेतना का सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं,
जिसमें अनन्त अभिलाषा के सब ने सब जगते रहते हैं। "(1)

भारतीदासन के लिए प्रायः नारी का सौन्दर्य ही वरदान सा प्रतीत होता है।

11• प्रसाद की कविताओं में दुःखानुभूतियों का तीव्र रूप मिलता है। लेकिन भारतीदासन में सुखानुभूतियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं।

12• प्रसाद की कविताओं में विस्मयपूर्ण रहस्यात्मक भावनाएँ और अलौकिक भावनाएँ मिलती हैं। लेकिन भारतीदासन में इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ बहुत कम हैं।

13• प्रसाद सदा नारी को श्रद्धा के रूप में देखा करते थे। उनके सौन्दर्यांकन में भी एक आदर्श प्रवृत्ति को प्रसाद ने अपनाया है। भारतीदासन के लिए नारी केवल शारीरिक आकर्षण और सौन्दर्य की वस्तु रही। नारियों के संबोधनों में भी उनका प्रेम की भावनाएँ और नारी की सुन्दरता अन्तर्निहित हैं। नारी की स्वतंत्रता के कट्टर पक्षपाती भारतीदासन की काव्य कृतियों और नाटकों में भी यह भावना मिलती है।

1•कामायनी – पृ• 110 लज्जा सर्ग XIII सं• 2024 – भारती भण्डार•

14· प्रसाद ने स्वयं कोई पत्र-पत्रिकाओं का संपादन नहीं किया था। लेकिन प्रसाद की योजना के अनुसार 'इन्दु' पत्रिका का समस्त कार्य होता था। क्योंकि इसके संपादक और प्रकाशन उनके भांजे अंबिका प्रसाद गुप्त[1] थे। लेकिन भारतीदासन ने स्वयं 'कुयिल' (कोकिल) नामक मासिक पत्रिका, जो उनकी अपनी थी, 'देश सेवकन', 'आत्म-शक्ति', 'कविता मण्डलम', 'मुल्लै' आदि पत्र-पत्रिकाओं का संपादन काम भी किया था।

15· प्रसाद ने अपनी कविताओं एवं नाटकों तथा अन्य कृतियों में संस्कृत गर्भित भाषा का प्रयोग किया है। भारतीदासन ने शुद्ध तमिल के कट्टर पक्षपाती थे। अतः उनकी कृतियों में परिष्कृत तमिल शब्दों का ही प्रयोग उन्होंने किया है। लेकिन इनकी कुछ रचनाओं में संस्कृत शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। इस बात को स्वयं भारतीदासन ने स्वीकार किया है।[2]

16· प्रसाद की कविताओं में प्रत्यक्ष रूप से व्यक्तिवादी भावनाएं अपेक्षाकृत कम प्रतीत होती हैं। भारतीदासन की कविताओं में यह प्रवृत्ति प्रत्यक्ष रूप से सर्वत्र पायी जाती है। विशेषकर सामाजिक भावनाओं, तमिल संस्कृति, तमिषन और तमिल भाषा संबंधित कविताओं में इनकी 'अहं' की चेतना उठ खड़ी हो जाती है।

इस प्रकार दोनों कवियों में अनेक साम्य एवं वैषम्य प्रवृत्तियों के रहते हुए भी हिन्दी और तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्यगत प्रवृत्तियों को आलोकमय रूप प्रदान करने में इनके योगदान को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता।

सुमित्रानन्दन पन्त और भारतीदासन् :

हिन्दी के कोमल एवं सुन्दरम् के कवि सुमित्रानन्दन पन्त का नाम प्रमुख रूप से प्रकृति के साथ लिया जाता है। उनकी आरंभिक काव्य कृतियों में प्रकृति अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती है। उन्होंने प्रकृति के कण-कण को अनुभव करके उसकी सुन्दरता को कविता के रूप में परिणत कर दिया है।

1· प्रेमशंकर, प्रसाद का काव्य - पृ· 35 । सं· 2. 12 भारती भण्डार·
2· भारतीदासन - इसैयमुदु II प्राक्कथन - पृ· 3 VI 1980 पारि निलैयम·

अतः हिन्दी काव्य-क्षेत्र में उन्हें 'प्रकृति का कवि' कहकर संबोधित किया जाता है। तमिल-क्षेत्र में वाणीदासन् को 'तमिल का वैर्ड्सवर्थ' की संज्ञा प्रदान की गयी है। इनसे बढ़कर किसी अद्यतन तमिल कवि ने प्रकृति का चित्र नहीं खींचा है।(1) क्योंकि इन्होंने पंत की तरह प्रकृति के प्रत्येक अंग को सूक्ष्म रूप से निरीक्षण करके उसकी सुन्दरता का वर्णन किया है। यद्यपि पंत के विशद् एवं महान् व्यक्तित्व और कृतित्व के सम्मुख वाणीदासन का काव्य तुलनीय नहीं, फिरभी प्रकृति के चित्रों तथा अन्य प्रमुख प्रवृत्तियों के आधार पर इन दोनों की तुलना संभव प्रतीत होती है।

जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व :

सुमित्रानन्दन 'पंत' का जन्म 20·5·1900 दिनांक को उत्तर प्रदेश में स्थित अल्मोड़ा से बत्तीस मील दूर कौसानी ग्राम में हुआ। सन्· 1919 में इन्होंने बनारस से मैट्रिक करके म्योर सेंट्रल कालिज - इलाहाबाद में प्रवेश किया। लेकिन सन्· 1921 में इन्होंने महात्मा गान्धी के असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर कालिज छोड़ दिया। उसके बाद इन्होंने घर पर ही हिन्दी, बँगला, संस्कृत और अंग्रेज़ी का अध्ययन किया। सन् 1917 से लेकर उनके कई प्रगीत 'अल्मोड़ा अखबार' नामक साप्ताहिक और 'मर्यादा' में क्रमिक रूप से प्रकाशित होते रहे। पल्लव, वीणा, और ग्रन्थि - उनकी आरंभिक काव्य कृतियाँ हैं जिनमें प्रकृति, प्रेम, सौन्दर्य, कल्पनानुभूति जैसी प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ प्रचुर मात्रा में दृष्टिगोचर होती हैं।

तमिल कवि वाणीदासन का जन्म 22·7·1915 दिनांक को पुदुच्चेरी में स्थित 'विल्लियनूर' नामक ग्राम में हुआ। 'एरितराजुलु' माता-पिता के द्वारा रखा गया नाम है। वाणीदासन उनका अपना उपनाम है। इन्होंने अपने गाँव में प्राथमिक शिक्षा ग्रहण की और बाद में पुदुच्चेरी कलवे कालेज में फ्रेंच का अध्ययन किया था। सन् 1938 में इन्होंने तमिल विद्वान परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। इनकी प्रथम कविता सन् 1938 में 'तमिपुन' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई। उसके बाद क्रमिक रूप से

1· डॉ· मा· रामलिंगम - तमिल साहित्य 20 वीं शताब्दी - पृ· 151 - कमदाम नुट्रन्डु तमिल इलक्कियम - पृ· 151 ॥ 1977 तमिल पुस्तकालय·

उनकी कविताएँ 'कुयिल', 'कविता', 'कावल','तमिलन' जैसी प्रमुख पत्रिकाओं में निकलती रहीं। सन् 1937 से अध्यापन कार्य संभालकर वे कारैकाल पुदिनम् कालेज और पुदुच्चेरी कलवै कालेज में तमिल का प्राध्यापक रहे। सन् 1971 में वे सेवा से निवृत्त हो गये। इन्होंने कइ कृतियों का प्रकाशन किया था। लेकिन उनकी 'एल्लि ओवियम', 'एल्लि कुरसु', 'इन्ब इलक्कियम', 'इनिक्कुम पाट्टु' जैसे कविता-संग्रह विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उल्लिखित प्रथम दोनों कविता-संग्रहों में प्रकृति के विविध चित्र मिलते हैं और 'इन्ब इलक्कियम' में प्रेम के अन्तरंग पक्ष का प्रतिपादन किया गया है। चतुर्थ कृति बच्चों के लिए है जिनमें सरल शैली में प्रकृति के कुछ साधारण चित्र मिलते हैं।

पन्त कृत 'पल्लव', 'वीणा', और वाणीदासन कृत 'एल्लि ओवियम्' (सुन्दर चित्र), 'एल्लि कुरसु' (सुन्दर कुरल) में प्रकृति और कल्पना का सुन्दर समन्वय है। 'ग्रन्थि' पंत के असफल प्रेम की काव्य कृति है जिसमें निराशामयी प्रेम की भावनाएँ और दुःखानुभूतियाँ मिलती हैं। वाणीदासन कृत 'इन्ब इलक्कियम्' (सुखी साहित्य) में प्रेम की चर्चा हुई है और नायिका की विरहानुभूतियाँ भी मिलती हैं। अतः तुलना के लिए उपर्युक्त इन काव्य कृतियों को ही यहाँ लिया जाता है।*

प्रकृति :

पन्त और वाणीदासन दोनों प्रकृति के अनन्य प्रेमी कवि हैं। दोनों प्रकृति के प्रत्येक अंग पर मुग्ध हुए। पंत को कविता करने की प्रेरणा सब से पहले प्रकृति निरीक्षण से ही मिली थी। कवि-जीवन से पहले वे घण्टों एकान्त में बैठकर प्राकृतिक दृश्यों को एकटक देखा करते थे और एक अज्ञात आकर्षण उनके भीतर एक अव्यक्त सौन्दर्य का जाल बुनकर उनकी चेतना को तन्मय कर देता था।(1) वाणीदासन का अभिमत है कि प्रकृति ही सौन्दर्य के चित्र हैं।(2) दोनों की कविताओं में

---

* अतएव पन्त की अन्य काव्य कृतियों को इस संदर्भ में नहीं लिया गया है।

1• आधुनिक कवि पंत-2 पर्यालोचन - पृ•1,2,3 । 1964 -हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

2• 'इयर्कैए एल्लि ओवियम' वाणीदासन् - अपनी ओर से एल्लि ओवियम - पृ• 3- पुदुवै तमिल कविञर मन्रम् प्रकाशन •

नक्षत्र, चाँदनी, बादल, प्रभात और सन्ध्या का वर्णन हुआ है। स्वतंत्र रूप से प्रकृति को देखने की प्रवृत्ति दोनों में पायी जाती है। दोनों में प्रकृत प्रकृति के आलम्बनात्मक चित्र मानव-भाव श्रृंखलाओं से मुक्त हैं। दोनों कवियों ने अपनी-अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के अनुसार नक्षत्रों की कल्पना की है। इस प्रकार विषय के चुनाव में समानता मिलती है। नक्षत्रों के प्रति इन दोनों की कल्पनाएँ अत्यन्त नवीन हैं। पंत नक्षत्रों को शाश्वत स्मिति और ज्योतित स्मृति कहकर संबोधित करते हैं –

'ऐ शाश्वत स्मिति, ऐ ज्योतित स्मृति,
स्वप्नों के गति हीन विमान,
जागो हे, हाँ, व्योम विटप से
गाओ खग ! निज नीरव गान !'(1)

लेकिन वल्लीदासन विण्मीनों (नक्षत्रों) से प्रश्न करने लगते हैं –

'पत्थर उदित होकर मिट्टी जन्म लेकर लोग पैदा होकर,
सागर से वेष्टित दुनिया में उनको (हमने) जीते हुए, देखा है,
उनके पूर्व ही नभ में उत्पन्न होकर, उजाला करनेवाले
हे सुन्दरतम नक्षत्र ! आपका जीवन काल –
अनेक युग बता रहे हैं !
सुसंस्कृत विद्वानों का जन्म इस देश में हुआ
और वे चले गये ! लेकिन, आप
नभोज्योति में किस प्रकार जी रहे हैं?"(2)

---

1 'पल्लव – पृ॰ 115 VIII 1977 राजकमल प्रकाशन

2 'कल एलुन्दु मण तोन्रि मक्कळ तोन्रि
कडल चूळन्द उलकत्तिल वाळ्दल कण्डोम्;
अल्लेळुन्दु वान तोन्रि आदिचि सेव्युम
अणुकुमिन्नु विण्मीनकाळ! उंगळ वाळ्वु

पल्लूळि कालमेन उरैक्कुतय्या
पण्पट्ट पेरियोरम इन्द नाट्टिल
पुलमुळैक्क पोनार कळ! अनाल, नींगळ
पूदुम पोलिविल एप्पडि सान वाळ्किन्रीरो?

5 ... 'एळिलकुरतम' – पृ॰ 37 1970 किल्ली प्रकाशन, मद्रास॰

इसी प्रकार पंत और वाणीदासन दोनों ने 'बादल' को अत्यन्त नवीन ढंग से देखा है। इनके 'बादल' की कल्पनाओं में समता है क्योंकि दोनों ने 'बादल' को लोगों के प्राण कहा है। पंत के बादल स्वयं अपना परिचय इस प्रकार देते हैं —

'हम सागर के धवल हास हैं,
जल के धूम, गगन की धूल,
अनिल फेन, ऊषा के पल्लव
वारि वसन, वसुधा के मूल, '(1)

'बादल के इस आत्म-परिचय में उनका महत्व अन्तर्निहित है। लेकिन वाणीदासन ने बादल की प्रशंसा करते हुए उनके महत्व को स्पष्ट किया है। कवि बादल से कहते हैं —

'दक्षिणी हवा के प्राण हो तुम !
कुन्द की लता के जीवन-धन हो तुम !
नभ में विचरनेवाले चन्द्र-सूर्य के प्राण हो तुम !
लोगों के जीवन तुम्हीं हो !
तुम्हीं मूल हो ! असीम सुख भी
तुम्हीं हो ! जग के प्राण तुम हो !
तुम जियो !'(2)

पंत और वाणीदासन की कविताओं में इस प्रकार के अनेक स्वतंत्र प्रकृति चित्र मिलते हैं।

---

1. 'पल्लव' पृ. 126 – बादल VIII 1977 राजकमल प्रकाशन

2. 'तेन्रलुक्कु उयिर नी ! मुल्लै
चिरकोडिक्कु उयिर नी ! वानमदिले
तिकळुम तिंगळ् कतिरुक्कु उयिर नी !
मक्कळ्ओन्रिय वाळ्वुम नीए !
कवम कुन्रिला वळमुम नीए !
उडिक्कुबर नीए ! वाळी !

— 'एलिल ओवियम' – पृ. 25 – 'मुकिल' III 1977, पुदुवै तमिल कविञर मन्रम का प्रकाशन, पाण्डिच्चेरी

प्रेम और सौन्दर्य :

पंत की 'ग्रन्थि' और वाणीदासन कृत 'कूब इलक्कियम' में प्रेम और नारी-रूप सौन्दर्य का वर्णन मिलता है। 'ग्रन्थि' एक प्रणय मूलक खण्ड काव्य है। लेकिन 'कूब इलक्कियम' मुक्तक कविताओं का संग्रह है। मुक्तक होते हुए भी इस संकलन की बारह कविताओं में प्राप्त वर्णन में एक प्रकार का क्रम मिलता है। इसमें प्रेम का विश्लेषण, प्रियतम का परिचय, प्रेमी-प्रेमिका की भावनाएँ, नायक-नायिका की मिलन-अनुभूतियों का वर्णन, धन कमाने के लिए प्रियतम का गमन, प्रियतम के विरह में प्रेयसी की वेदना, नायक का आगमन और मिलन का वर्णन आदि मिलते हैं। 'ग्रन्थि' और 'कूब इलक्कियम' दोनों में प्रेम का विश्लेषण मिलता है। 'ग्रन्थि' का प्रेम आदर्श है, लेकिन 'कूब इलक्कियम' का प्रेम लौकिक है। बिना सोचे जहाँ हृदय का अर्पण होता है वहीं शुद्ध प्रेम पलता है। प्रेम के आदर्श रूप को महत्व देते हुए पंत कहते हैं —

'बस, बिना सोचे, अचानक, प्रेम को
हृदय जिसने हो न अर्पण कर रखा;
प्रेम ही का नाम जप, जिसने नहीं
रात्रि के पल हों गिने, प्रतिशब्द से
चौंककर, उत्सुक नयन जिसने उधर
हो न देखा, - प्यार क्या उसने किया?'(1)

वाणीदासन प्रेम को अत्यन्त व्यापक मानते हैं। इनके अनुसार जगत् का मूल ही प्रेम है। प्रेम के महत्व को उन्होंने निम्नांकित शब्दों में व्यक्त किया है —

'प्रेम नहीं है तो दुनिया निर्जीव रहेगी।
प्रेम नहीं है तो जीव-जन्तु नहीं जिएँगे।
प्रेम नहीं है तो उदधि की लहरें नहीं गरजेंगी !

---

1. वीणा - ग्रन्थि - पृ. 119 - नवीन संस्करण 1972 - राजकमल प्रकाशन.

प्रेम नहीं है तो ज्वाला सूर्य शास्वत न होगा।

इसलिए —

प्रेम पर्वत से ऊँचा है, नभ से विशाल है, सागर से विस्तृत है

सूरज से बड़ा है। अतः प्रेम तुम जियो !

प्रेम प्रेम प्रेम मधुर है ! प्रेम तन मन नेत्र के लिए

मधुर है ! प्रेम नहीं है तो मरण मधुर है। "(1)

दोनों कवियों ने अपनी-अपनी नायिकाओं का रूप-सौन्दर्य-वर्णन भी किया है। पंत के वर्णन में नारी-सुलभ सौन्दर्य का स्वाभाविक चित्र मिलता है।

"लाज की मादक सुरा सी लालिमा

फैल गालों में, नवीन गुलाब-से,

छलकती थी बाढ़ सी सौन्दर्य की

अधखुले सस्मित गढ़ों से, सीप से। "(2)

लेकिन तमिल कवि वाणीदासन् अपने पूर्ववर्ती कवियों का अनुकरण करते हुए नायिका के प्रत्येक अंग की सुन्दरता को बढ़ाने के लिए प्रकृति से उपमाओं को ढूँढ-ढूँढकर, अंकन करते हैं —

"सुन्दर पत्थर से बनी प्रतिमा-सी;

पूर्ण चन्द्रिका-सी; सरोवर के फूल-सी;

---

1. कादल इल्लैएल उलगमुम उरिक्काद्!

कादल इल्लैएल उयिरिनम पिरक्काद्।

कादल इल्लैएल कड़लले मुळक्काद् कादल इल्लैएल काय कदिर निलैक्काद् !

अदनाल — मलैयिनुम पेरिदाम, वानिनुम पेरिदाम,

कडलिनुम पेरिदाम कादल ! कदिरिनुम पेरिदाम कादल वाधियवे ! ... कवि इलक्कियम-पृ. 10

कादल ! कादल ! कादल ! इनिद् ! कादल उड़ल उयिर कण्णुक्कु इनिद् !

— कादल इल्लैएल सावल इनिदे ! - वही - पृ. 12

2. वीणा - ग्रन्थि - पृ. 102 - नवीन संस्करण 1972, राजकमल.

हंस पक्षी-सी, सुन्दर हथिनी-सी,
छोटी मोरनी के हाव भाव-सी
बिजली-सी आँखें, शुभ्र दाँत कुंद-फूल-सी,
पतली कमरवाली नायिका ! "(1)

इनसे स्पष्ट होता है कि पंत का प्रेम उदात्त अशरीरी और आदर्श है। लेकिन वाणीदासन के द्वारा वर्णित प्रेम अंतरंग है, इसलिए शरीरी और परम्परागत है।

कल्पना :

पंत और वाणीदासन की कविताओं में स्वच्छन्दतावादी कल्पना के वैभव को हम देख सकते हैं। पंत कृत पल्लव इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। अति कल्पना के वैभव को इन पंक्तियों में हम देख सकते हैं —

"धधकती है जलदों से ज्वाल,
बन गया नीलम व्योम प्रवाल;
आज सोने का सन्ध्या काल;
जल रहा जतुगृह-सा विकराल; "(2)

अन्य स्थल पर 'मुस्कान' की कल्पना अत्यन्त नवीन है।

"कल्पना के ये शिशु नादान
हँसा देते हैं मुझे निदान। "(3)

कवि को 'छाया' कवियों की गूढ़ कल्पना सी, और कर्मों के सुतले भय सी लगती है :
" गूढ़ कल्पना सी कवियों की अज्ञाता के विस्मय सी
ऋषियों के गंभीर हृदय सी, कर्मों के सुतले भय सी"(4)

1. इन्ब इलक्कियम - पृ. 27, 28 II 1979 - पुदुवै तमिल कविञर मन्रम, पांडिच्चेरी-6 5 I I I
2. पल्लव - पृ. 63 III 1977 राजकमल।
3. वही - पृ. 94
4. वही - पृ. 101, 102

इसी प्रकार वाणीदासन की कल्पनाएँ भी अत्यन्त नवीन हैं। इनकी कल्पनाएँ इन-की कविताओं की आँखें हैं। सरोवर में पुष्पित सरोज फूलों को देखकर कवि को अतीत की याद आ जाती है और कल्पना करते हैं - वे तमिल राजाओं की भीड़ है।

" कुविस्तिनिले तामरेकळ तमिल मन्नर कूट्टम "(1)

अर्थात — सरोवर के सरोज तमिल राजाओं की भीड़ सी प्रतीत होते हैं।

रात्रि के लिए वाणीदासन ने नयी-नयी कल्पनाएँ की हैं। कवि को रात्रि काग के रंग सी, सुखहीन दुनिया सी, और शाश्वत कन्या सी लगती है।

" काक्कै निर नळ्ळिरवे ! कदिरिल्ला उलगे! "(2)

अर्थात् — काग के रंग सी अर्धरात्रि ! सुख हीन दुनिया !

कहकर रात्रि को संबोधन करते हैं — ' हे रात्रि ! इस दुनिया में कई करोड़ वर्षों से रहती हो ' तुम शाश्वत कन्या सी प्रतीत होती हो। (3)

इस प्रकार पंत और वाणीदासन का कल्पनाएँ हिन्दी और तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में नवीनता के प्रतीक हैं।

अनुभूति :

पंत और वाणीदासन की प्रणयमूलक कविताओं में मिलन की अनुभूतियाँ मिलती हैं। मिलन की अनुभूति सुखात्मक अनुभूति का एक अंग है। दुःखानुभूतियाँ दोनों की कविताओं में मिलती हैं फिर भी पंत की कविताओं में जो तीव्रता है वह वाणीदासन में नहीं। 'ग्रन्थि' और 'कूव इलक्कियम' प्रेम से संबंधित होने के कारण दोनों में मिलन की अनुभूतियाँ मिलती हैं। पंत ने

---

1. 'एलिल कूत्तम - पृष्ठ 40 । 1970 दिल्ली प्रकाशन'
2. वही - पृ० 45
3. अलंगिल एण्णिल्लद पल कोडि आण्डुकळाय इरुवे
   कविकन्राय, कन्नियेय पोल इरुक्किन्राय निलैत्ते !
   वही - पृ० 45

अपने प्रथम मिलन की अनुभूतियों को अत्यन्त सरस ढंग से इस प्रकार व्यक्त किया है —

> " शीश रख मेरा सुकोमल जाँघ पर,
> शशि कला सी एक बाला व्यग्र हो
> देखती थी म्लान मुख मेरा, अचल,
> सदय, भीरु, अधीर, चिन्तित दृष्टि से। "(1)

'सुकोमल जाँघ', 'शशि कला सी' जैसे प्रयोगों से सुखात्मक अनुभूति का दूसरा अंग सौन्दर्यानुभूति भी यहाँ मुखर उठी है। क्योंकि इसमें प्रिया का रूप चित्रण भी मिल जाता है।

वाणीदासन की नायिका, अपने नायक का आगमन, उसके हाव-भाव, नायक से उसका वार्तालाप - इत्यादि बातों का उल्लेख करते हुए अपने मिलन की अनुभूतियों को आनन्दपूर्वक अभिव्यक्त करती है। नहाने के लिए नायिका सरोवर तक पहुँचती है। इस समय नायिका पर दृष्टि डालते हुए नायक भी वहाँ आ पहुँचता है। मिलन का वर्णन देखिए —

नायिका घड़े को उतारकर सिर नीचा कर रही थी,

> तत्काल अचानक वह आ पहुँचा, वहीं पर रहा,
> आह ! अलकों के फूलों में कितने भौंरे? कितने भौंरे?
> कहकर हँसने लगा, मेरी नजरों को छीन लिया।
> अलकों को छूने का सा अभिनय करके मेरे तन को स्पर्श किया।
> आग की जलन सी, ज्वाल शब्द मैंने कहा,
> पर पता नहीं मैंने क्या कहा !
> हँसा, जोर से आलिंगन कर लिया
> छोड़ो ! छोड़ो ! मैंने कहा, नफरत से। लेकिन
> हृदय ने कहा — स्पर्श करने दो, स्पर्श में रहने दो !
> इसे मैं, — क्या कहूँ? कैसे कहूँ। "(2)

---

1. पंत - वीणा-ग्रन्थि - पृ. 100 नवीन संस्करण 1972, राजकमल प्रकाशन
2. वाणीदासन - कम्ब इलक्कियम - पृ. 13, 14 - II 1979 पुदुवै तमिळ कविञर मन्रम, पांडिच्चेरी - 605001।

उल्लिखित दोनों कविताओं में शारीरिक मिलन की अनुभूतियाँ मिलती हैं। वाणीदासन के वर्णन में प्रेम के सुख का वासनामय रूप मिलता है, लेकिन पंत के वर्णन में प्रेम का आदर्श रूप झलकता है। प्रेम और वीरता तमिल लोगों की प्रमुख प्रवृत्तियाँ मानी जाती हैं। प्रेम और मिलन में जो सुख मिलता है उसे अनुभव करना और करवाना तमिल कवि वाणीदासन का मुख्य ध्येय है।(1) 'ग्रन्थि' में सुखद, स्वच्छ प्रेम की स्थापना करके अपनी दुखानुभूतियों को तीव्र रूप से व्यक्त करना ही पंत का उद्देश्य है।

इस प्रकार दोनों की कविताओं में प्रेम सौन्दर्य, प्रकृति, कल्पना अनुभूति जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं फिरभी उनकी अभिव्यक्ति, उनके भाव, विचार, कल्पना और अनुभूतियों में अवश्य असमानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में ही नहीं, हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में पंत का नाम बहुत ही आदरपूर्वक लिया जाता है। लेकिन वाणीदासन का नाम भारती और भारतीदासन के बाद लिया जाता है। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में पंत को प्रथम पंक्ति में बैठने का अधिकार है। तमिल काव्य-क्षेत्र में भारती और भारतीदासन को जो स्थान मिला है वह वाणीदासन को नहीं मिला। फिरभी पंत और वाणीदासन प्रकृति के कोमल एवं सुन्दरतम कवि हैं। इसीलिए यहाँ वाणीदासन को पंत के निकट लाने का प्रयत्न किया गया है।

<u>प्रमुख काव्य कृतियों की तुलना :</u>

आधुनिक हिन्दी और तमिल काव्य में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। लेकिन इन दोनों में ऐसी कृतियाँ नहीं दिखायी पड़ती जिनमें साम्य प्रवृत्तियाँ हों। फिरभी स्वच्छन्दतावाद के दृष्टिकोण से प्रसाद कृत 'कानन कुसुम', 'झरना', और भारतीदासन कृत 'अषकिन सिरिप्पु', 'तेन अरुवि' में कुछ ऐसे तत्व मिलते हैं जिनके आधार पर इन कृतियों की तुलना यहाँ की जाती है। ये चारों कृतियाँ हिन्दी और तमिल के स्वच्छन्दतावादी काव्य को आगे बढ़ाने में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान देती हैं।

---

1. वाणीदासन् का प्राक्कथन। कवि इलक्कियम - पृ० 1 - 11 संस्करण 1979, पुदुवै तमिल कविञन मन्रम, पाण्डिचेरी, 605001

'कानन कुसुम' और 'अपकिन सिस्पि' (सौन्दर्य की मुस्कराहट)।

'कानन कुसुम' और अपकिन सिस्पि' दोनों में स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण से प्रकृति का स्वतंत्र चित्रण प्रस्तुत किया गया है। दोनों मुक्तक कविताओं के संकलन हैं जिन में कानन के विविध रंगीन कुसुम भरे पड़े हैं। 'कानन कुसुम' की रचना सन् 1913 में हुई और अपकिन सिस्पि सन् 1944 में प्रकाशित हुई। दोनों कृतियों में प्रकृति की सुन्दरता मुस्कराती है। इनमें दोनों कवियों ने अंग्रेज़ी के रोमान्टिक कवियों की भांति प्रकृति को स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान किया है। प्रकृति स्वयं एक स्वतंत्र सुन्दरी है। वह दोनों कृतियों में कभी 'सरोज' के रूप में, कभी प्राची के रूप में और कभी-कभी मध्याह्न के रूप में प्रकट हुई है। कानन कुसुम में संकलित कविताएँ महा क्रीड़ा, नव वसन्त, ग्रीष्म का मध्याह्न, जलद-आह्वान, रसनी गधा, सरोज, जल विहारिणी, कोकिल, एकान्त में, और ललित कुसुमिनी इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। 'अपकिन सिस्पि' में सागर, दक्षिणी पवन, कानन, पर्वत, नदी, लाल सरोज, सूरज, आकाश, कबूतरें, शुक और अन्धेरे का वर्णन अत्यन्त चमत्कारपूर्ण ढंग से किया गया है। प्रातःकालीन वर्णन दोनों कृतियों में मिलता है। लेकिन वर्णन का ढंग कवियों की रुचि के अनुसार बदल गया है। 'कानन कुसुम' की प्राची का वर्णन देखिए —

> "सुन्दरी प्राची, विमल उषा से मुख धोने को है
> पूर्णिमा की रात्रि का शशि अस्त अब होने को है
> तारका का निकर अपनी कान्ति सब खोने को है
> स्वर्ण-जल से अरुणा भी आकाश-तल धोने को है।" (1)

उदित होती हुई उषा का वर्णन 'अपकिन सिस्पि' में इस प्रकार किया गया है।

> "तुम प्रकाश-स्तंभ हो!
> तुम विश्व की इकलौती पुत्री हो!

---

1. कानन कुसुम - पृ० 15 VIII सं० 2033 - भारती भण्डार

आओ ! हृद्गत सन्तोष को उद्दीप्त करनेवाली !
सागर के अन्तरंग से उदित हुई हो !
आह ! गगन भर स्वर्ण किरणों को बिखराती हो !
उमरती हुई सागर की लहरों को ध्वनि देती हो।"(1)

दोनों कृतियों में 'सौन्दर्य' सम्बन्धित कविताएँ मिलती हैं। प्रसाद के अनुसार प्रियदर्शन स्वयं सौन्दर्य है। सब जगह उसकी प्रभा को देखते हैं।

"लोग प्रिय-दर्शन बताते इन्दु को
देखकर सौन्दर्य के इक बिन्दु को
किन्तु प्रिय-दर्शन स्वयं सौन्दर्य है
सब जगह इसकी प्रभा ही वर्य है।"(2)

भारतीदासन ने 'अषकु' (सौन्दर्य) नामक कविता में प्रकृति के प्रत्येक कण में सौन्दर्य का अनुभव किया है। प्रातःकालीन उषा, सागर, प्रकाश, उपवन, फूल, अंकुर, दिशाएँ, आकाश, चल,

---

1. ओळि पोळ्नो ! नी अल्ल
तोन्पोळ्, वाराय ! नेंजत्
कळिप्पिनिल कूत्तै नेस्कूम
कनर पोळ्, आळ् नीरिल
वेळि पड़ एळुदाय; ओहो
विण्णेल्लाम पोन्नै अळ्ळि
तोळिक्किन्राय, कडलिर पोंगुम
तिरैयेल्लाम ओलियाक्क चेय्दाळ्!
— कि अपैकिन रिसिष् — पृ. 36 XVI 1981, रेस्तभिस निलैयम

2. कानन कुसुम — पृ. 57 VIII 2033 भारती भण्डार।

अचल आदि सभी वस्तुओं में प्रकृति की सुन्दरता को देखते हैं। यह प्रकृति सुन्दरी प्राचीनता के कारण मरनेवाली नहीं है। अतः कवि कहते हैं —

"प्राचीनता से न मरनेवाली युवती को देखो !
हँस-मुख से देखो रे ! सर्वत्र यह सुन्दरी रहती है।"[1]

प्रसाद की अन्तिम पंक्ति 'सब जगह इसकी प्रभा ही वर्य है' भारतीदासन की अन्तिम पंक्ति 'सर्वत्र यह सुन्दरी रहती है' से मिलती जुलती है। दोनों का मूल तत्त्व एक प्रतीत होता है। दोनों कृतियों में कव्यकारों की वैयक्तिक भावनाएँ प्रस्फुटित हुई हैं। 'कानन कुसुम' में प्रसाद की हृदय-वेदना और मर्म व्यथा भी मिलती है। 'अष्किन सिरिप्पु' में भारतीदासन ने अपने तमिल-भाषा-प्रेम को व्यक्त किया है।

इस प्रकार इन दोनों कविता-संग्रहों में कवियों की व्यक्तिवादी भावनाएँ, कल्पना की अतिशयता, प्रकृति को सौन्दर्य के रूप में देखने की प्रवृत्ति, प्रकृति का स्वतंत्र चित्र — जैसी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं।

झरना और तेनरुवि : (मधु झरना)

कृतियों के नामकरणों में पर्याप्त समानता मिलती है। लेकिन भाव-विचार-विषय प्रतिपादन में बहुत कुछ असमानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। दोनों मुक्तक कविताओं के संग्रह हैं। जिस शैली की कविता को हिन्दी साहित्य में आज दिन छायावाद का नाम मिल रहा है उसका आरंभ[2] झरना के द्वारा ही हुआ था। 'तेन अरुवि' संग्रह भारतीदासन का एक ऐसा कविता-संग्रह है जो सुन्दर गीतों से ओत-प्रोत है। 'चिन्दु' नामक स्वच्छन्द छन्द का प्रयोग इसमें हुआ है। संग्रह की 634[3]

---

1. पपमैइनाल साकाद ळकैयवळ काण !
नगैयोडु नोक्कडा एंगुम उळ्ळाळ! (सर्वत्र विराज है।)
— अष्किन सिरिप्पु - पृ. 5 XVI 1986 - सेन्तमिल निलैयम.
2. झरना - पृ. 5 प्रथम 1976 प्रसाद प्रकाशन
3. डॉ. मा. सेन्दराजन : भारतीदासन ओर पुरट्चिक्कवि‍ञर - पृ. 452 । संस्करण, कम्ममलर प्रकाशन, मद्रास.

पंक्तियाँ इस बात को प्रमाणित करती हैं। अतः इन दोनों में रचना पद्धति और शैली की दृष्टि से नवीनता मिलती है। सन् 1918 में सर्वप्रथम 'झरना' का प्रकाशन हुआ और 'तेनअर्वि' का प्रकाशन काल सन् 1956 है। स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण से 'झरना' में संकलित झरना, पावस प्रभात, वसन्त, किरण आदि में प्रकृति का स्वतंत्र वर्णन मिलता है। बिखरा हुआ प्रेम, प्रियतम, निवेदन, खोलो द्वार, मिलन — जैसी कविताएँ प्रेम के उदात्त और अलौकिक रूप को व्यक्त करती हैं। उपेक्षा करना, वेदने ठहरो जैसी कविताएँ कवि की वेदनामयी तीव्र दुःखानुभूतियों को सूचित करती हैं। इस प्रकार प्रेम, प्रकृति और अनुभूति का त्रिवेणी-संगम 'झरना' में मिलता है। भारतीदासन् की 'तेन-अर्वि' में प्रमुख रूप से प्रेम और प्रकृति से संबंधित कविताएँ मिलती हैं। इनके अतिरिक्त इस कृति में तमिषन तथा विविध विषयों से संबंधित कवि की वैयक्तिक भावनाओं का एक समन्वय मिलता है। दोनों सुन्दर गीतों के संकलन हैं। झरना के गीतों में कवि की आशा-निराशा, सुख-दुःख, उत्थान-पतन आदि विविध भावनाएँ मिलती हैं। प्रसाद की वैयक्तिक दुःखानुभूतियाँ भी इसमें मिलती हैं। उसी प्रकार 'तेन अर्वि' में भारतीदासन की व्यक्तिवादी भावनाएँ, प्रेम की विरहानुभूतियाँ, समाज-सुधार संबंधित उनकी भावनाएँ, विधवा-विवाह का समर्थन आदि मिलते हैं।

स्वच्छन्दतावादी तथ्यों में प्रेम, प्रकृति और गीतात्मकता जैसी प्रवृत्तियाँ प्रमुख रूप से इन दोनों कृतियों में उपलब्ध होती हैं। अगर हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में 'झरना' गीतों की दृष्टि से एक प्रयोगशाला है[1] तो 'तेनअर्वि' तमिल-क्षेत्र में विकसित गीतों का एक सुन्दर उदाहरण है। दोनों कृतियों के गीतों में संगीत की वृद्धि भी हुई है। देखिए :

"रे मन !
न कर तू कभी दूर का प्रेम
निष्ठुर हो रहना, अच्छा है, यही करेगा क्षेम॥
देख न,[2]

---

1. डॉ० प्रेमशंकर प्रसाद का काव्य - पृ० 22। । सं० 2012 - भारती भण्डार
2. झरना - पृ० 76 - प्रसाद प्रकाशन - 1976

"दुःख उलगिल तुडिक्कुम
नान अवनै
कब उलगिल एप्पोदु काण्पेन?
दुःखउलगिल ..."(1)

अर्थात –

दुख की दुनिया में तड़पनेवाली
मैं उसे
सुख की दुनिया में कब देखूँगी?
दुख की दुनिया में ...

इस प्रकार प्रमुख कवियों तथा कृतियों की तुलना स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को दृष्टिकोण में रखकर की गयी है। भारती और निराला में बहुत समानताएँ मिलती हैं, प्रसाद और भारतीदासन में साम्य एवं वैषम्य का मिश्रित रूप मिलता है। पंत और वाणीदासन में प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से समानता मिलती है। कृतियों में कुछ समानताओं के रहते हुए भी उनका अलग-अलग अस्तित्व है। प्रकृति की दृष्टि से 'कानन कुसुम' एवं 'अऴकिन सिरिप्पु' और गीतों की दृष्टि से 'झरना' एवं 'तेन्नरुवि' में पर्याप्त समानताएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

* * *

1 'भारतीदासन – तेन अरुवि – पृ• 41 – 1978 जनवरी – किरुत्त संस्करण पूम्बुकार प्रसुरम, मद्रास'

सप्तम अध्याय

निष्कर्ष और मूल्यांकन

अ· स्वच्छन्दतावादी काव्य का व्यापक प्रभाव और योगदान।—

साहित्यकार का संबंध सदा राजनीति और समाज से रहता आ रहा है। इनके कारण उसका व्यक्तिगत दृष्टिकोण बदलता रहता है। तदनुसार साहित्य के रूप में परिवर्तन होता रहता है। असल में साहित्यिक धाराओं की प्रवृत्तियों का प्रभाव राजनीति और समाज पर अत्यन्त व्यापक रूप में पड़ता है। साहित्य को पुत्र नहीं, पिता माना जाता है। पिता का प्रभाव पुत्र पर असंदिग्ध है। इसलिए समाज को उतना महत्व नहीं दिया गया है जितना साहित्य को। साहित्य प्रधान है और समाज गौण।(1) इस दृष्टि से तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्यों ने राजनैतिक, सामाजिक क्षेत्रों में अपना व्यापक प्रभाव डालकर, उनमें अपने योगदान के महत्व को सिद्ध किया है।

---

1 · डॉ· रामकुमार वर्मा - 'साहित्य चिन्तन' - पृ· 29 - प्रथम संस्करण 1965, किताब महल, इलाहाबाद·

स्वच्छन्दतावादी कवि और भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन :

इस विषय के साथ यह प्रश्न अत्यन्त घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है कि भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों का क्या योगदान रहा और किस प्रकार इनका प्रभाव तत्कालीन राजनीति पर पड़ा। आधुनिक तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी युग की कृत एवं विकासकालीन कविताएँ भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के इतिहास के साथ-साथ समान रूप से चल रही थीं। अर्थात् सन् 1890 से लेकर सन् 1940 तक ये दोनों जुड़वाँ बहिनों की तरह भारत के लोगों के बीच गुजर रही थीं। प्रायः इसी समय प्रमुख तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों का जन्म हुआ था और उनकी स्वच्छन्दतावादी धाराएँ भी धीरे-धीरे विकसित हो रही थीं। तिलक के निधन (1920) के पश्चात् भारत की राजनैतिक बागडोर संपूर्ण रूप से गांधी के हाथों में आ गयी थी। ठीक इसी समय से स्वच्छन्दतावादी काव्य धारा का विकसित रूप छायावाद धीरे-धीरे अपना पैर जमा रहा था। तब तक तमिलनाडु में भारती अपनी विद्रोही लीलाओं को समाप्त करके अपने अंतिम दिनों को गिन रहा था। (सन् 1921) उत्थान-पतन की इन परिस्थितियों में तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपनी अमर कृतियों के माध्यम से स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया और कई साहित्यिक शलाका पुरुषों ने गांधीजी की राजनैतिक प्रवृत्तियों से प्रेरणा भी ली थी।

तमिल क्षेत्र में भारती, भारतीदासन, कविमणि और नामक्कल कवि ने भारतीय स्वतंत्रता के आन्दोलन में अपना महत्वपूर्ण योगदान अदा किया। जिस प्रकार साहित्यिक क्षेत्र में भारती स्वच्छन्दतावादी थे उसी प्रकार राजनीति और राष्ट्रीयता के मंच पर अपनी स्वतंत्र भावनाओं को उन्होंने व्यक्त किया और राष्ट्रीयता के आवेश में राजनीति में अप्रत्यक्ष रूप से भाग लेकर तत्कालीन ब्रिटिश सत्ता का घोर विरोध किया। इस दृष्टि से उनके राष्ट्रीय गीत विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

वन्दे मातरम् - जय - वन्दे मातरम्
जय जय भारत जय जय भारत
जय जय भारत जय जय जय ![1]

---

1. 'भारतीयार कवितायें' - पृ. 19 - वन्देमातरम् ॥ 1978 पूम्बुकार प्रसुरम

और उन्हें स्वतंत्रता की प्यास है, अतः कहते हैं –

'एन्न तणियुम इन्द सुदन्दिर तागम्?
एन्न मडियुम एंगळ अडिमैयिन मोहम्?'[1]

अर्थात् –

'स्वतंत्रता की प्यास कब बुझेगी?
हमारी परतंत्रता का मोह कब मिटेगा?'

इनके अतिरिक्त भारती ने गोखले, गांधीजी, दादाभाई नौरोजी, बाल गंगाधर तिलक, लाला लजपत राय आदि विभूतियों को अपनी राष्ट्रीय कविताओं में स्थान दिया है। उनकी काव्यकृति 'पांचाली शपथम्' की नायिका द्रौपदी साक्षात् भारत-माता का प्रतीक है। भारतीदासन अपने साहित्यिक जीवन के प्रारंभ में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लिया। सन् 1920 में स्वयं अपनी भुजाओं में खद्दर वस्त्रों को लेकर गली-गली घूमकर उन्हें बेचा था। इसके सिलसिले में उन्होंने बच्चों के राष्ट्रीय गीत, खद्दर और चरखा संबंधित, कविताएँ लिखी हैं। कविमणि देशिक विनायकं पिल्लै ने राष्ट्रीय झंडे की महत्ता, कांग्रेस की नाव, खद्दर, स्वतंत्रता और महात्मा गांधी जैसी कविताएँ लिखकर भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अपना योगदान दिया। कांग्रेस नाव की प्रशंसा करते हुए वे लिखते हैं –

"वीर तिलक जैसे लोगों से बनायी हुई नाव –
हृदय में उत्पन्न हीरों से बनायी हुई नाव –
भारत-माता के द्वारा प्रशंसा की हुई नाव –
आज इसे बाबू राजेन्द्र प्रसाद चलाते हैं।"[2]

---

1. 'भारतीयार कवितैगळ्' – पृ॰ 54 – ब ॥ 1978 पूम्बुहार प्रसुरम्
2. कविमणि – मलरुम मालैयुम – पृ॰ 184 XV 1977 पारि निलैयम्

तमिल के अन्य कवियों में नामक्कल कवि रामलिंगम पिल्लै ने प्रचुर मात्रा में राष्ट्रीय एवं गांधीवादी कविताएँ लिखकर भारत और गांधीजी का यशोगान किया है।(1) राष्ट्रीय भावनाओं को जाग्रत करने में निम्नलिखित उनका गीत तमिलनाडु में आज भी अत्यधिक प्रचलित है।

'कत्तिइन्द्री रत्तमिन्द्री युद्धम ओन्रु वरुगुदु,
सत्तियत्तिन नित्तियत्तै नंबुम यावरुम सेरुवीर।'(2)

अर्थात् —

बिना तलवार, बिना रक्त के एक युद्ध आ रहा है,
शाश्वत सत्य पर विश्वास करके सभी एकत्रित हो जाइए।

यह युद्ध भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के कर्णधार महात्मा गांधीजी ही का है। इस प्रकार आधुनिक स्वच्छन्दतावादी तमिल कवियों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के राजनैतिक कार्यों में अपनी कविताओं के माध्यम से भाग लेकर उन कार्यों को प्रभावित किया और स्वयं भी प्रभावित हुए।

हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रमुख रूप से रामनरेश त्रिपाठी, प्रसाद, पंत और निराला की कृतियों में भारत और भारतीयों की कल्पना की कविताएँ मिलती हैं। अतएव अप्रत्यक्ष रूप से इन कवियों ने अपनी कृतियों के द्वारा भारतीय स्वतंत्रता युद्ध में भाग लिया। रामनरेश त्रिपाठी ने पराधीनता का घोर विरोध करते हुए, 'उससे बड़ा दुःख इस जग में नहीं है' कहकर तत्कालीन लोगों में नवीन जागृति उत्पन्न की। वे लोगों को अपना शासन आप करने का आदेश देते हैं —

'अपना शासन आप करो तुम, यही शान्ति है, सुख है।
पराधीनता से बढ़ जग में नहीं दूसरा दुःख है।'(3)

53-112

1. नामक्कल कवि की कविताएँ - पृ. ++5/- राष्ट्रीय फूल - 1960 लिफ्को, मद्रास
पृ. 115-160 गांधी फूल

2. वही - पृ. 115

3. रामनरेश त्रिपाठी - पथिक

स्वच्छन्दतावादी कवि को स्वतंत्रता की प्यास लग गयी है। एक घड़ी की परवशता भी कोटि नरक के समान उन्हें लग रही है। पलभर की स्वतंत्रता को सौ स्वर्गों से उत्तम मानता है।

'एक घड़ी की परवशता भी कोटि नरक के सम है।
पल भर की स्वतंत्रता सौ स्वर्गों से उत्तम है।'(1)

प्रसाद ने अपने काव्य एवं नाटकों द्वारा अपनी राष्ट्रीय भावनाओं को व्यक्त किया है। विशेषकर उनका 'चन्द्रगुप्त' नाटक इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। प्रसाद की स्वतंत्रता की प्यास इन पंक्तियों में मिलती है।

'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती –
स्वयं प्रभा समुज्वला स्वतंत्रता पुकारती –'(2)

देश की दुर्दशा देखकर प्रसाद सह नहीं पाये, अतः उनका कथन है –

'देश की दुर्दशा निहारोगे,
डूबते को कभी उबारोगे।
हारते ही रहे, न है कुछ अब,
दांव पर आपको न हारोगे।'(3)

प्रसाद ने 'कामायनी' में भी श्रद्धा के द्वारा तकली तकवाकर अपनी राष्ट्रीय भावना का परिचय दिया और गांधीवादी सिद्धान्तों को जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया –

'तुम दूर चले जाते हो जब
तब लेकर तकली यहाँ बैठ,
मैं उसे फिराती रहती हूँ
अपनी निर्जनता बीच बैठ !

---

1. रामनरेश त्रिपाठी – 'पथिक'
2. प्रसाद संगीत – पृ. 13। ॥ 1972 भारती भण्डार। (चन्द्रगुप्त नाटक से)
3. प्रसाद संगीत – पृ. 111 – ॥ 1972 भारती भण्डार (स्कन्द गुप्त से)

मैं बैठी गाती हूँ तकली के प्रतिवर्त्तन में स्वर विभोर —
चल री तकली धीरे धीरे प्रिय गये खेलने को अहेर। "(1)

निराला ने भारती की वंदना करके अपनी राष्ट्रीय भावनाओं का परिचय दिया। शायद लगता है कि ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध मातृभूमि की विजय की कामना करते हैं —

'भारती, जय, विजय करे !
कनक-शस्य-कमल धरे ! '(2)

निराला भारत के महान् पूर्वजों के पुण्य-कृत्यों को स्मरण करते हैं। अतएव उनके अनुसार यहाँ के देशवासी को हीनता से ग्रस्त रहने की कोई आवश्यकता नहीं है। कवि अतीत की याद करते हुए तत्कालीन भारत की स्थिति की ओर संकेत करते से प्रतीत होते हैं —

'आर्त भारत ! जनक हूँ मैं ...
जैमिनि-पतंजलि-व्यास ऋषियों का;
मेरी ही गोद पर शैशव-विनोद कर
तेरा है बढ़ाया मान
राम-कृष्ण-भीमार्जुन-भीष्म-नरदेवों ने।

'आर्त भारत ! जनक हूँ मैं ...
कर्मों आशीष, हे पुण्य-पुञ्ज,
तव चरणों में प्रणाम है। '(3)

अतीत की याद करते-करते निराला स्वर्णिम भविष्य की कल्पना करते हैं। तत्कालीन निराशा और अन्धकारपूर्ण परिस्थितियों का चित्रण करके, अपना शासन, अपना नियम, अपने कानून और हर क्षेत्र में अपना शासन का आग्रह करते हैं। पराधीन मन को क्षुब्ध करनेवाले विचारों को नाश करना चाहते हैं और ब्रिटिश सत्ता से मुक्त भावी भारत की कल्पना करते हैं —

'जितने विचार आज
मारते तरंगें हैं
साम्राज्यवादियों की भोग-वासनाओं में,
नष्ट होंगे चिर काल के लिए।

---

1. कामायनी - पृ. 158 - ईर्ष्या XIII सं. 2024 भारती भण्डार
2. निराला - गीतिका - पृ. 73 VIII सं. 2030 - भारती भण्डार
3. निराला - अनामिका - पृ. 30 VI 1979 - भारती भण्डार.

आयेगी माल पर
भारत की गयी ज्योति,
हिन्दुस्तान मुक्त होगा घोर अपमान से,
दासता के पाश कट जाएंगे।'[1]

अन्यत्र भी निराला ने भारत की दयनीय स्थिति का संकेत करके तत्कालीन भारत के लोगों में जागृति लाने का प्रयत्न किया है —

'भारत के नभ का प्रभापूर्ण
शीतलच्छाय सांस्कृतिक सूर्य अस्तमित आज रे —'[2]

निराला अस्त होते हुए सूर्य को नव जीवन देना चाहते थे। अतः ओज स्वर में इस प्रकार कहते हैं —

जागो फिर एक बार ! क्या यह वही देश है?
भारती जय विजय करे।
नव जीवन के स्वार्थ सकल बलि हों तेरे चरणों पर माँ !'[3]

पंत ने भारत माता की वन्दना करते हुए कहा है —

'ज्योतित देश, जय भारत देश !
भारत माता ग्रामवासिनी !'[4]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि तमिल और हिन्दी के प्रमुख स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपने समकालीन स्वतंत्रता-आन्दोलन में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से भाग लिया। इनकी कृतियों में प्राप्त राष्ट्रीय विचार और भाव इस बात को प्रमाणित करते हैं। इन कवियों का प्रभाव तत्कालीन राजनीति पर अवश्य पड़ा है और समय-समय पर इन्होंने अपनी कृतियों के द्वारा ब्रिटिश सत्ता का विरोध भी किया है।

---

1. निराला - परिमल - पृ. 181-182 । 1978 राजकमल।
2. निराला - तुलसीदास
3. निराला
4. पंत

सामाजिक अन्धविश्वास और स्वच्छन्दतावादी कवि :-

भारतीय सामाजिक विचार धाराओं में अन्धविश्वास, कुरीतियाँ, रूढ़िगत प्रवृत्तियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती थीं। जैसे बाल विवाह का समर्थन, विधवा विवाह का खण्डन, वृद्ध-विवाह का समर्थन, नारियों के प्रति निम्न दृष्टिकोण। तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवियों ने इन परंपरावादी प्रवृत्तियों का कठोर विरोध करके उन्हें निर्मूल करने का प्रयत्न अपनी अपनी कविताओं के द्वारा किया। इन रूढ़िगत प्रवृत्तियों को तोड़ने में भारती, भारतीदासन और निराला की कविताएँ बहुत जोर से काम करती रहीं। प्रसाद, पन्त जैसे कवियों में इस प्रकार की समस्याएँ और उनका विरोध करने की भावनाएँ बहुत कम हैं। भारती ने अपनी कविताओं में नारी को उच्च स्थान दिया है। बलात् नारियों को शादी करवाने की प्रवृत्ति का इन्होंने विरोध किया है।

'बलात् नारी को शादी करवाने की रीति को
पैरों में कुचल देंगे।'(1)

अतः अनमेल विवाह का भारती ने विरोध किया है। नारी के प्रति निम्न दृष्टिकोण को चकनाचूर करने का वे आदेश देते हैं। उनकी दृष्टि में पुरुष और नारी समान हैं।

'पुरुष और नारी-समान समझने से
यह भूमि विकसित होगी ज्ञान से।'(2)

नारी को परंपरागत रूढ़ियों से मुक्त करके स्वतंत्रता प्रदान करना चाहते हैं —

'पेण विडुदलै वेण्डुम
पेरिय कडवुळ काक्क वेण्डुम्'(3)

अर्थात् —

'नारी को स्वतंत्रता चाहिए
देवता उनकी रक्षा करें।'

---

1. 'वलुक्कट्टायप् पेण्णै मणम् कट्टिक्कोडुक्कुम्
वपक्कत्तै तळ्ळि मिदित्तिडुवोम — पृ. 211 - भारतीयार कविताएँ - II 1978 पुस्तकार।
2. आणुम् पेण्णुम् निगरएन कोळ्वदाल
अरिविल ओंगी इव्वैयम तळैक्कुमाम। - भारतीयार कविताएँ - पृ. 2/8 - II 1978 पुस्तकार.
3. वही - पृ. 182

भारतीदासन ने सामाजिक समस्याओं और उसमें प्रचलित कुरीतियों को अत्यन्त निकटतम रूप से निरीक्षण किया है। उन समस्याओं को सुलझाने के लिए उन्होंने अपनी कृतियों को माध्यम बनाया। उन्होंने बाल और वृद्ध विवाह का खण्डन किया है। अगर पुरुष को अपनी पत्नी के मरणोपरान्त दूसरी शादी करने के लिए वधु को ढूंढने में कोई आपत्ति नहीं है तो नारी को भी अपने पति के मरने के बाद दूसरी शादी के लिए वर चुनने का अधिकार देना चाहिए। आखिर नारी-समुदाय ने क्या पाप किया? उनको क्यों इस प्रकार अनावश्यक दण्ड दे रहे हो? — कहकर विधवा-विवाह का समर्थन उन्होंने किया है। भारतीदासन कविता संग्रह । में संकलित 'पेण्णुलगु' (नारी दुनिया) [1] नामक अलग अध्याय में नारी को विविध समस्याओं एवं उनके प्रति समाज में प्रदत्त अन्यायों का उल्लेख करके, उन पर तीखा व्यंग्य किया है। बेमेल - वृद्ध विवाह का कठोर विरोध करते परंपरागत नियमों और कानूनों को वे तोड़ना चाहते हैं। अतः कहते हैं —

'मिट्टी में मिल जाए ! मिट्टी में मिल जाए !
बेमन, बेमेल विवाह मिट्टी में मिल जाए
हे समाज के नियम ! हे समाज की रीतियाँ !
आप सब मिट्टी में मिल जाइए !
ताकि लोग सब, दुखित न होवें ! सुखी रहें। '[2]

वे नारी को स्वतंत्रता चाहते हैं।[3] उनके विचार में वर को चुनने में नारी को स्वतंत्रता देनी चाहिए।[4] सामाजिक कुरीतियों, ढोंगी प्रवृत्तियों एवं अन्ध विश्वासों का यथार्थ ढंग से वर्णन करने के कारण ही उनको पुरट्चिक्कवि का पद मिल गया है।

---

1. भारतीदासन कविता संग्रह । - पृष्ठ 105-121 - 24 वाँ 1980 सेन्तमिल निलैयम
2. मण्णाय् पोग ! मण्णाय्पोग ! मनम पोरुन्दा मनम मण्ण् पोग।
   समूह चट्टमे ! समूह वळक्कमे।
   नींगळ, मक्कळ अनैवरुम एगाधिकळ मण्णाय्पोगवे !
   भारतीदासन कविताएँ - । पृ॰ 111 24 वाँ 1980 सेन्तमिल ।
3. नारियों को शिक्षा देनी चाहिए। नारियों को स्वतंत्रता चाहिए। सभी क्षेत्रों में नारियों को स्वतंत्रता चाहिए। — नाटक । पडित्त पेण्कळ (शिक्षित नारियाँ) पृ॰ 123 IV 1978 पारि निलैयम
4. भारतीदासन कविताएँ । - पृ॰ 113

निराला ने समाजगत जाति-पाँति और वर्ण-भेद का विरोध करते हुए अपने वर को स्वतंत्र रूप से चुनने का अधिकार 'प्रेयसी'(1) को दिया है। उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से द्वितीय विवाह की प्रथा का सरोज स्मृति में विरोध किया है। अपनी पत्नी के मरणोपरान्त स्वयं सास ने दूसरी शादी करने का प्रस्ताव निराला के सम्मुख रखा, लेकिन निराला ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया।(2)

इस प्रकार तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने समाज में स्थित परंपरागत कुप्रथाओं एवं अन्धविश्वासों का विरोध किया। स्वयं निराला ने दूसरी शादी न करके परंपरावादको तोड़ दिया।

सामाजिक क्षेत्र में भारतीदासन की भावनाएँ अत्यन्त विद्रोहात्मक रही हैं।

साहित्यिक क्षेत्र

(क) 'स्वच्छन्दतावाद' 'छायावाद' के रूप में :-

स्वच्छन्दतावादी काव्य का प्रभाव न केवल तत्कालीन राजनीति और समाज पर पड़ा बल्कि साहित्यिक क्षेत्र में स्वयं एक अलग साहित्यिक धारा के रूप में, हिन्दी के क्षेत्र में परिवर्तित होकर, विकसित होने लगा। स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ साहित्य में ओझल नहीं होतीं। क्योंकि एक काल की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ दूसरे युग में परंपरागत बन जाती हैं और वही कालान्तर में पुनः स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के रूप में जनता और साहित्यकारों के सम्मुख उपस्थित होती हैं। स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ अत्यन्त प्राचीन काल से नदी के प्रवाह के समान, समय की माँग के अनुसार अपना रूप-रंग बदलती हुई साहित्य में अभिव्यक्त होती आ रही हैं। हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में इसी ने कालान्तर में छायावाद का रूप धारण कर लिया था। तमिल साहित्यिक क्षेत्र में स्वच्छन्दतावाद अथवा छायावाद का

---

1. अनामिका - 'निराला' - पृ. 8 VI 1978 भारती भण्डार

2. "आये ऐसे अनेक परिणय, पर विदा किया मैंने सविनय", "सासु ने कहा 'वे बड़े भले जन हैं, भय्या, एन्ट्रन्स पास हैं लड़की वह, ... सरोज स्मृति।"
— अनामिका - पृ. 127, 128 VI 1979 भारती भण्डार

कोई प्रश्न नहीं है। लेकिन प्रवृत्तियाँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। इसका प्रधान कारण अंग्रेज़ी रोमाण्टिक काव्य-धारा का प्रभाव तमिल की अपेक्षा हिन्दी पर बहुत ज़्यादा पड़ा।

छायावाद के प्रवर्तक जयशंकर प्रसाद ने छायावाद को एक स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान करते हुए उसे हिन्दी के वर्तमान युग की प्रधान प्रवृत्ति[1] स्वीकार किया है। उनके अनुसार कविता के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश विदेश की सुन्दरी के बाह्य वर्णन से भिन्न जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी, तब हिन्दी में उसे छायावाद के नाम से अभिहित किया गया। प्राचीन साहित्य में छायावाद अपना स्थान बना चुका था। हिन्दी ने आरंभ के छायावाद में अपनी भारतीय साहित्यिकता का ही अनुसरण किया। इसके अतिरिक्त प्रसाद की धारणा यह है कि प्रकृति से संबंध रखनेवाली कविता को ही छायावाद नहीं कहा जा सकता। उनके अनुसार छाया भारतीय दृष्टि से अनुभूति और अभिव्यक्ति की भंगिमा पर अधिक निर्भर करती है। ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौन्दर्यमय प्रतीक विधान तथा उपचार वक्रता के साथ स्वानुभूति की विवृत्ति छायावाद की विशेषताएँ हैं।[2] प्रसाद के विचारों से पता चलता है कि छायावाद का मूल स्व-अनुभूति ही है और प्रकृति का स्थान गौण है। यद्यपि छायावाद की प्रारंभकालीन कविताओं में भारतीयता का रंग रहा, लेकिन कालान्तर में रोमाण्टिक कवियों के प्रभाव से उसमें नया रंग आने लगा।

अतः स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि कल्पनाओं का नवीन प्रयोग आधुनिक हिन्दी-काव्य में पाश्चात्य प्रभाव के कारण ही हुआ है। इस प्रकार कल्पनाओं के नवीन प्रयोग के कारण कविता की प्रवृत्तियों में भी नवीनता आ गयी। अतः प्रवृत्तियों के आधार पर छायावाद को विभिन्न दृष्टिकोण से देखा जाने लगा। उसके संबंध में अनेक भ्रान्तियाँ हिन्दी आधुनिक साहित्य में फैलने लगीं। छायावाद को स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह अथवा आत्म और अभिव्यंजना की शैली की संज्ञा दी गयी। सिर्फ उसमें

---

1. काव्य कला तथा अन्य निबन्ध - प्रसाद VII सं. 2032 - पृ. 117 - भारती भण्डार

2. वही - पृ. 121, 125, 126

शैली की लाक्षणिकता, उक्ति का वैचित्र्य पूर्ण अलंकारिकता का अनुभव किया गया। कभी-कभी केवल बाह्य साम्य के आधार पर छायावाद को यूरोप के रोमांटिक काव्य से अभिन्न माना गया। स्वयं महादेवी ने भी छायावाद के ऊपर सर्वात्मवाद का भारी बोझ लाद दिया। उपर्युक्त प्रसाद के वक्तव्यों के आधार पर स्वयं नगेन्द्र ने स्पष्टतः घोषित किया कि छायावाद प्रकृति-काव्य नहीं है।[1] और उसे मूलतः भारतीय अद्वैतवाद का ही प्रोद्भास[2] माना है। उन्होंने उसे मूलतः रोमानी कविता कहा है।[3] निष्कर्ष रूप में छायावाद को एक विशेष प्रकार की भाव-पद्धति स्वीकार किया है, जो 'जीवन के प्रति एक विशेष भावात्मक दृष्टिकोण है।[4]

इस प्रकार की मत-विभिन्नता के कारण पंत जैसे कवियों ने रोमांटिक कवियों से अत्यधिक प्रभाव ग्रहण किया और रोमांटिक कल्पनाओं से प्रकृति को सजाने-सँवारने लगे। इस दृष्टि से पंत की काव्य-कृति 'पल्लव' विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिसमें संकलित 'आँसू', 'अनंग', 'छाया', 'नक्षत्र', 'सोने का गान', 'बादल' जैसी कविताएँ अति कल्पनाओं से वेष्टित हैं। 'छाया' 'सोने का गान', 'स्वप्न' जैसी कविताओं में विशेषण विपर्यय[5] का प्रयोग अत्यन्त स्वाभाविक बन पड़ा है। इस प्रयोग का कारण कल्पना की अतिशयता है। इस प्रकार आधुनिक हिन्दी कविताओं में उपलब्ध प्रवृत्तियों में नवीनता के आने के कारण स्वच्छन्दतावाद को भी विविध दृष्टिकोण से देखा जाने लगा। किसी ने उसे व्यक्तिवाद कहा और किसी ने उसके मूल में विद्रोह और स्वतंत्रता की लालसा का अनुभव किया और एक अन्य आधुनिक आलोचक ने 'राष्ट्रीय सांस्कृतिक संघर्षों तक को स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के अन्तर्गत रखा। इसी प्रकार स्वच्छन्दतावाद में कल्पना का वैभव, आवेग-

---

1. नगेन्द्र : आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ। पृ. 17 - 1979 - नेशनल V
2. वही - पृ. 18
3. वही - पृ. 20
4. वही - पृ. 21
5. 'मूढ़ कल्पना सी कवियों की' .. 'छाया' से
   'कलियों के तुतले भय सी' .. 'छाया' - पृ. 102
   'शैशव की निद्रित स्मृति सी' .. 'छाया' - पृ. 102
   'तुम्हारे स्वर्णस्वाल-सी तान' - 'सोने का गान - पृ. 117
   'निद्रा के उस अलसित वन में' - 'स्वप्न' - पृ. 89
   — पल्लव : VIII - 1977 राजकमल.

नयी अनुभूति का वर्णन भी किया गया। एक आधुनिक अनुसंधाता ने स्वच्छन्दतावाद को ज्यों का त्यों अंग्रेज़ी का रोमाण्टिसिज़्म मानकर उसकी प्रवृत्तियों, कवियों और काव्यों की तुलना छायावादी प्रवृत्तियों, कवियों एवं काव्यों से की है।(1)

इतना होते हुए भी प्रसाद के द्वारा उल्लिखित छायावादी प्रवृत्तियाँ स्वच्छन्दतावाद के व्यापक परिवेश में समाहित हो जाती हैं। अतः निष्कर्ष के रूप में यही कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में समस्त स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों का सुन्दर समन्वय जिस विकास काल में मिलता है उसको आज छायावाद की संज्ञा दी गयी है। असल में सन् 1920 के बाद पूर्ण रूप से पुष्पित होकर, बिलकुल नये रूप में, एक अलग काव्य धारा के रूप में स्वच्छन्दतावाद परिणत हो गया जिसको आज छायावाद नाम से हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में अभिहित किया जा रहा हैं। वास्तव में छायावाद कोई अलग काव्य धारा नहीं है बल्कि स्वच्छन्दतावाद की एक उप-धारा मात्र है। क्योंकि हिन्दी का छायावादी काव्य स्वच्छन्दतावाद की भूमिका पर ही लिखा गया है और हिन्दी का समस्त रहस्यवादी काव्य भी स्वच्छन्दतावाद के व्यापक परिवेश में समाहित हो जाता है। अतः छायावादी काव्य मूलतः स्वच्छन्दतावादी है, नई भूमियों को छूने और नयी कलात्मकता के लिए प्रयोग का कार्य जिस काव्य में होता है उसके लिए हिन्दी में 'छायावाद' नाम निश्चित हुआ। प्रत्येक छायावादी काव्य स्वच्छन्दतावादी काव्य है, पर प्रत्येक स्वच्छन्दतावादी काव्य छायावादी काव्य नहीं। इसके अतिरिक्त छायावादी काव्य शैली भी स्वच्छन्दतावादी काव्य की एक शाखा मात्र है।(2)

फिर भी हिन्दी साहित्य के इतिहास में छायावाद को 'हिन्दी साहित्य का उत्कर्ष काल' स्वीकृत किया गया है जिसकी समृद्धि की समता हिन्दी का केवल भक्ति-काव्य ही कर सकता है। स्वच्छन्दतावाद की चरम परिणति छायावाद होते हुए भी उसे एक अलग धारा के रूप में मानकर उसका मूल्यांकन भी किया गया है। छायावाद की कालावधि अत्यन्त सीमित (1918-38) होने पर भी

---

1. डॉ॰ शिवकरण सिंह - स्वच्छन्दतावाद एवं छायावाद का तुलनात्मक अध्ययन।
2. वाजपेयी - आधुनिक काव्य रचना और विचार - पृ॰ 36, 37, 40 IV 1966 साथी प्रकाशन, सागर॰

उसने हिन्दी साहित्य के अक्षय भण्डार को कई अमर कृतियों से भर दिया। प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी वर्मा इस धारा के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। इन्होंने छायावादी दृष्टिकोण से 'झरना', 'आँसू', 'लहर', 'कामायनी', 'वीणा', 'पल्लव', 'ग्रन्थि', 'गुंजन', 'ज्योत्स्ना', 'अनामिका', 'परिमल', 'तुलसीदास', 'यामा' जैसी अमर काव्य कृतियाँ प्रदान की हैं। छायावादी काव्य-क्षेत्र में प्रमुख रूप से मुक्तक रचनाएँ ही उपलब्ध हैं जिनमें महाकाव्य के रूप में 'कामायनी' ही है। इसमें मानव जीवन के विकास को मानव मन की वृत्तियों के द्वारा दिखाया गया है। 'आँसू' की विरहानुभूतियाँ छायावाद की अनमिल विशेषता है। इन कवियों ने हिन्दी काव्य को नया रूप, अभिव्यक्ति, को नयी भंगिमा प्रदान की। संक्षेप में इन्होंने काव्य को नयी चेतना प्रदान की। प्रेम, सौन्दर्य, कल्पना, और प्रकृति के क्षेत्र में नयी मान्यताएँ दीं। प्रेम को शरीर की भूख न समझकर उसको एक रहस्यमयी चेतना[1] मानते हुए इन कवियों ने अपने आदर्श-प्रेम की भावनाओं को व्यक्त किया। सौन्दर्य इनकी कविताओं का जीवन है। प्रसाद और पंत छायावादी काव्य में सौन्दर्य के महाकवि माने जाते हैं। मानवीय भावनाओं को प्रकृति में आरोप और कल्पना का नूतन प्रयोग इन कवियों की देन है। कला के क्षेत्र में इन कवियों का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। छायावादी काव्य-कलाओं में चमत्कार, सौन्दर्य और प्राण देने का श्रेय इन कवियों को है। कविताओं में प्रतीक, बिंबों का सफल प्रयोग इन्होंने किया है। मानवीकरण, विशेषण विपर्यय, ध्वन्यर्थ व्यंजना जैसे अलंकारों का प्रयोग इनकी कविताओं में सफलतापूर्वक किया गया है। सूक्ष्म परिमार्जित खड़ीबोली की चित्रमयी और सांकेतिक भाषा— इन कवियों की उपलब्धियाँ हैं। इस प्रकार यह छाया-वादी काव्य धारा निश्चय ही हिन्दी-काव्य की चरम समृद्धि और परिष्कृति का युग है। किसी भी युग का कला-मर्मज्ञ जब हिन्दी काव्य की उपलब्धियों का आकलन करने बैठेगा तो यह कालखण्ड निश्चय ही उसे सब से अधिक आकृष्ट करेगा।[2]

---

1. 'आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ' - पृ. 17 v 1979 - नगेन्द्र - नेशनल पब्लिशिंग हाउस

2. 'हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास - दशम भाग - पृ. 507 - 1 2028, नागरिणी प्रचारिणी सभा।

(ख) विशेष दिशाओं से प्राप्त साहित्यिक मान्यताएँ।

तमिल और हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की तुलना करने से, उनको विशेष दिशाओं में कतिपय महत्वपूर्ण साहित्यिक मान्यताएँ प्राप्त होती हैं। वे निम्नलिखित हैं —

1. स्वतंत्रता की लालसा,
2. व्यक्तिवादी दृष्टिकोण
3. प्रेम और सौन्दर्य के प्रति उनकी मान्यताएँ
4. कल्पना संबंधी धारणाएँ।

(1) स्वतंत्रता की लालसा। — स्वच्छन्दतावादी काव्य-धारा के मूल में स्वतंत्रता की लालसा है। इन कवियों के भाव, विचार और संवेदनाएँ सर्वदा विद्रोहमयी रहती हैं। इस धारा का कवि सभी परंपरागत बन्धनों को तोड़कर स्वतंत्रतापूर्वक रहना चाहता है। इस मान्यता को मुख्य स्वच्छन्दतावादी कवियों ने अपना जीवन, समाज और साहित्यिक क्षेत्र में पालन किया था। इस सिद्धान्त को इन्होंने फ्रान्स की राज्य क्रान्ति की तीन भावनाएँ 'समत्व, स्वातंत्र्य, भ्रातृत्व' से ग्रहण किया था। तमिल कवि भारतीदासन का जन्म फ्रेंचों के अधीन पाण्डिच्चेरी में होने के कारण, उनको सीधे वहाँ से प्रेरणा मिली थी। दोनों भाषाओं के कवियों ने इस मान्यता को स्वीकृत किया है। भारती का जन्म-सिद्ध अधिकार स्वतंत्रता ही है और भारतीदासन् की कविताओं में भी इस भावना को प्रचुर मात्रा में देख सकते हैं। निराला बन्धनों से मुक्त होना चाहते थे और कविता को भी छन्दों के बन्धनों से मुक्त कर दिया। क्योंकि मनुष्यों की मुक्ति कर्मों के बन्धन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाना है। प्रकृति को भी मानव की भाव-श्रृंखलाओं से मुक्त करना इन कवियों का ध्येय रहा। प्रकृति के उपादानों की स्वतंत्रता इन कवियों की क्रान्ति है और मान्यता भी है। इन कवियों की प्रकृति अपनी ओर से अपनी भावनाओं को व्यक्त करती है। कवि भी प्रकृति संबंधी भावनाओं को स्वतंत्र अस्तित्व देकर उसका वर्णन करता है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावाद में कवि, काव्य और प्रकृति को स्वतंत्रता दी गयी है। अतएव स्वतंत्रता की लालसा इस धारा की प्रमुख साहित्यिक मान्यता है।

(2) व्यक्तिवादी दृष्टिकोण :— परंपरावादी काव्य में भी व्यक्तिवादी भावनाएँ मिलती हैं, लेकिन वे कविता की प्रवृत्तियों के साथ समाहित हुआ करती हैं। स्वच्छन्दतावादी काव्य में कवि अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों, आशा एवं निराशामयी भावनाओं को प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त करता है। इसमें व्यक्तिवाद का अलग अस्तित्व रहता है। कभी-कभी इनकी कविताओं में कवि की वैयक्तिकता ही बोला करती है। निराला की 'सरोज स्मृति' और भारतीदासन की तमिल-तमिलन संबंधित कविताएँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। वैयक्तिकता को उल्लिखित कविताओं से अगर विलग किया जाए तो कविता का कोई अस्तित्व नहीं रहेगा। स्वच्छन्दतावादी काव्य के पूर्व उपलब्ध कवि की व्यक्तिवादी भावनाएँ पात्रों की निज संपत्ति हैं, लेकिन स्वच्छन्दतावादी काव्य में कवि की अपनी संपत्ति है। इन कवियों ने अपनी वैयक्तिक भावनाओं को दो रूपों में व्यक्त किया है। एक पात्रों के द्वारा और दूसरा स्वयं व्यक्त करता है। यहाँ कवि पात्रों के द्वारा अपनी वैयक्तिक भावना को व्यक्त करता है —

'जीने दे सब को फिर तू भी सुख से जी ले'(1)

प्रस्तुत उदाहरण में स्वयं प्रत्यक्ष रूप से अपनी वैयक्तिक भावनाओं को कवि सम्मुख रखता है :

'मुझे न अपना ध्यान,
कभी रे रहा, न जग का ज्ञान।
गान ही मेरे मेरे प्राण
अखिल प्राणों से मेरा गान'(2)

'वियोगी होगा पहिला कवि, आह से उपजा होगा गान; ।'(3)

स्वच्छन्दतावादी कवियों ने इस प्रकार की भावनाओं को अन्य कृतियों(4) में भी व्यक्त किया है। तमिल काव्य क्षेत्र में सुरता की कविताओं में इस प्रकार की वैयक्तिक भावनाएँ प्रचुर मात्रा में

---

1. प्रसाद - 'कामायनी' - पृ. 209 इड़ा के द्वारा कहा गया है। 'संघर्ष सर्ग' - XIII सं. 2024,
2. पन्त - गुंजन, पृ. 106 - X सं. 2018 - भारती भण्डार [भारती भण्डार.
3. पन्त - पल्लव - पृ. 62 - VIII 1977 राजकमल
4. (1) सच्चा कवि वह है, जो अपने सुखम प्रेम से अपना निर्माण कर सकता है। अपने को जीवन के सत्य और सौन्दर्य की प्रतिमा बना लेता है। कवि का सब से बड़ा काव्य स्वयं कवि है। — कुमार के द्वारा - पंत - ज्योत्स्ना - पृ. 73-74 IV 1978, राजकमल
(2) यह क्या पुराने ढंग की साड़ी तुमने पहन ली है? यह तो समय के अनुकूल नहीं, और मैं तो कहूँगा, सुरुचि के भी प्रतिकूल है। ... — लाल के द्वारा - प्रसाद - एक घूँट V सं. 2022 - पृ. 15, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद.

मिलती है। अतएव व्यक्तिवाद स्वच्छन्दतावादी काव्य संबंधी प्रमुख मान्यता है।

(3) प्रेम और सौन्दर्य के प्रति स्वच्छन्दतावादी कवियों की मान्यताएँ :— स्वच्छन्दतावादी कवियों ने प्रेम को, श्रृंगारी भावनाओं और नायक-नायिका के शरीर की भूख से मुक्त करके उसके आदर्श रूप को अपने काव्य में रखा। इन कवियों के सामने प्रियतम आता नहीं, बल्कि एक छाया के रूप में एक रहस्यमयी चेतना के रूप में प्रकट होता था और अदृश्य हो जाता था। लौकिक प्रेम की याद करते करते उनका प्रेम मानसिक बन गया। अतः स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रमुख रूप से प्रेम का आदर्श रूप मिलता है। आदर्श प्रेम इन कवियों का जीवन है। स्वच्छन्दतावादी कवि प्रेम की स्वतंत्र आत्मा को कदी-गृह में डालना नहीं चाहता। जीवन को सफल बनाने के लिए स्वच्छन्द प्रेम सीखना और सिखाना चाहता है।[1] अतः स्वच्छन्द प्रेम अर्थात् प्रेम का उदात्त रूप हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य की एक विशेष मान्यता है। प्रेम का आदर्श रूप केवल तमिल कवि भारती में उपलब्ध होता है।[2] भारती की मान्यता है कि मानव का कर्म प्रेम पूर्ण व्यवहार करना है।[3] इस प्रकार आधुनिक हिन्दी और तमिल की स्वच्छन्दतावादी कविताओं में प्रेम का रूप बदल गया है।

आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों के पूर्व सौन्दर्य प्रायः नारी की रूपस्ता का पर्याय रहा। भक्तिकालीन कवियों ने उस अलौकिक परमात्मा और प्रकृति में सौन्दर्य की कल्पना की थी। रीति-काल में सौन्दर्य का क्षेत्र अत्यन्त सीमित होकर मधुर का पर्याय बन गया। लेकिन स्वच्छन्दतावादी कवि के

---

1. प्रसाद - एक घूंट - पृ. 18, 34 - Vसं. 2022 भारती भण्डार.

2. कादलै वेण्डिक् करैकिन्रेन, इल्लैएनिल
   सादलै वेण्डिर् तविक्किन्रेन - तृयिल् पाट्ट से।
   भारतीयार कवितायें - पृ. 398 ॥ 1978 पूम्बुकार।
   अर्थात् - प्रेम की प्रार्थना करके पिघलता हूँ,
   नहीं तो मरण की प्रार्थना करके तड़पूँगा।

3. उंगळुक्कु तोळिल् इंगे अन्बु सेयदल् कण्डीर !
   - वही - पृ. 193

लिए 'सौन्दर्यपूर्ण वस्तु सदा सन्तोष प्रदान करनेवाली'[1] बन गयी। अतः उसने आदर्श सौन्दर्य की कल्पना की। उसने मन और चेतना के सौन्दर्य पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। हिन्दी स्वच्छन्दतावादी कवि जीवन का लक्ष्य सौन्दर्य मानता है। प्रेम और सौन्दर्य पर अपना विचार प्रकट करते हुए प्रसाद कहते हैं कि प्रेम की उपासना का एक केन्द्र होना चाहिए, एक अन्तरंग होना चाहिए। स्वास्थ्य, सरलता और सौन्दर्य में प्रेम को भी मिला देने से इन तीनों की प्राण-प्रतिष्ठा हो जाएगी।[2] पंत भी मनुष्य की रुचि को मार्जित कर उसे आदर्श सौन्दर्य और आदर्श प्रेम सिखाना चाहते हैं।[3] तमिल क्षेत्र में सिर्फ भारती ने सौन्दर्य को देवता रूप में देखकर एक नयी मान्यता स्वच्छन्दतावादी काव्य में प्रस्तुत की है। इस प्रकार हिन्दी-तमिल स्वच्छन्दतावादी काव्य-क्षेत्र में सौन्दर्य के प्रति यही मान्यताएँ उपलब्ध होती हैं।

(4) कल्पना संबंधी मान्यताएँ :— तमिल और हिन्दी की दीर्घ साहित्यिक परंपराओं में कल्पना प्रकृति और नारी की सुन्दरता का वर्णन करने में प्रयुक्त हुई। लेकिन उनमें प्रायः कल्पना के सत्य का अभाव है। स्वच्छन्दतावादी काव्य में इस प्रकार की कल्पनाओं के रहते हुए भी इन कवियों ने कल्पना के सत्य को सब से बड़ा सत्य माना है। इसे उन्होंने काव्य का एक अंश स्वीकृत किया है और 'ईश्वरीय प्रतिभा का एक अंश भी जोड़ दिया। इन्होंने प्रकृति के विशाल मंच पर प्रस्तुत उपादानों को सूक्ष्म रूप से निरीक्षण करके उनका काल्पनिक वर्णन किया है। इस प्रकार के वर्णन में सत्यता की मात्रा पर्याप्त मात्रा में मिलती है। इनकी कविताओं में से कल्पना को विलग कर देने से काव्य का अंश भी कम हो जाता है। अतः तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावाद में कल्पना की सत्यता एक विशेष मान्यता के रूप में स्वीकृत है। इस दृष्टि से भारती और पंत का योगदान महत्वपूर्ण है।

---

1. A thing of beauty is a joy for ever .JOHN KEATS
 - FROM ENDYMION.

2. प्रसाद - एक दृष्टि - पृ. 19, 29 और 26 ४ सं. 2022, भारती भण्डार
3. पंत - ज्योत्स्ना - पृ. 28, १४ 1978 राजकमल।

आ• स्वच्छन्दतावादी काव्य (तमिल और हिन्दी) का परवर्ती काव्य धाराओं पर प्रभाव और उनकी अनुस्मृति ।

स्वच्छन्दतावाद के प्रमुख कवि और काव्य की प्रधान प्रवृत्तियों का प्रभाव परवर्ती कवि और काव्य धाराओं पर पड़ा है। विश्व का कोई भी साहित्यकार क्यों न हो, अपने पूर्ववर्ती साहित्य से अवश्य प्रभावित होता है और परवर्ती साहित्यकारों के लिए कुछ न कुछ छोड़कर भविष्य के लिए नया साहित्यिक मंच तैयार करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है। भारती और भारतीदासन ऐसे प्रमुख कलाकार हैं जो अपने पूर्ववर्ती कवि और उनके काव्यगत प्रवृत्तियों से प्रभावित हुए हैं और परवर्ती काव्यकारों के लिए भी अपना प्रभाव छोड़कर गये हैं। इन दोनों का महत्व इतना बढ़ गया है कि उनके नाम पर अलग-अलग परंपराएँ तमिल में प्रस्तुत हैं। काव्यधाराओं के स्थान पर तमिल साहित्य में कवियों को प्रमुखता देकर, उन्हीं के नाम पर कविताएँ विकसित हो रही हैं। भारती और भारतीदासन आधुनिक तमिल साहित्य के बहुत बड़े प्रकाश पुंज हैं। उन्होंने राजनैतिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में अपनी अपनी विद्रोहात्मक प्रवृत्तियों का परिचय दिया है। अतएव तमिल में 'भारती परंपरा' और 'भारतीदासन परंपरा' नाम के दो परंपराएँ चल रही हैं। इनका अनुकरण करते हुए अनेक कवियों ने कविताएँ लिखी हैं और आज भी लिखते आ रहे हैं। भारती की परंपरा में कविमणि, नामक्कल कवि, सुद्धानन्द भारती और रघुनाथ का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जिन्होंने भारती के काव्यों से प्रभाव ग्रहण किया है। नामक्कल कवि और कविमणि की राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविताओं में भारती का प्रभाव स्पष्ट है। प्रकृति के अंगों को प्रियतम के पास दूत के रूप में भेजने की प्रवृत्ति तमिल काव्य में पायी जाती है। ईश्वर मुरुगन को निमंत्रण देते हुए भारती ने शुक को दूत बनाकर उनके पास भेजा है।(1) इसका अनुसरण करते हुए अन्य कवियों की नायिकाएँ अपने-अपने नायकों को विभिन्न प्राकृतिक वस्तुओं को दूत बनाकर भेजती हैं। इस दृष्टि से 'मुडियरसन' का

1• भारतीयार कविताएँ : पृ• 106 ।। 1978 पूम्बुकार प्रसुरम।

'मेघदूत', 'साले इव्लिन्तेरयन' का 'काग दूत' और 'राय रो' का 'मीरा दूत' उल्लेखनीय है।[1] भारती ने बादल, वर्षा, प्रकाश, अंधेरा, बिजली, चांदनी, आकाश, सागर, सन्ध्या, प्रभात आदि पर कविताएँ लिखी हैं। इसी का अनुगमन करते हुए भारतीदासन, कविमणि, सुरदा, वाणीदासन, कामराजन आदि कवियों ने प्रकृति के इन्हीं अंगों का स्वतंत्र चित्रण किया है। भारती की नारी, समाज और मानवतावाद से संबंधित भावनाएँ, परवर्ती कवियों की कविताओं में विकसित हो गयीं। भारती की नवीनता, विद्रोह जैसी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ भारतीदासन की कविताओं में प्रचुर मात्रा में स्थान पाने लगीं। भारती के अलौकिक प्रेम की भावनाओं का प्रभाव परवर्ती कवियों पर अपेक्षाकृत कम है। सौन्दर्य को देवता के रूप में देखने की प्रवृत्ति को शुद्धानन्द भारती ने भारती से ग्रहण किया है। उनके राष्ट्रीय एवं भक्ति संबंधित काव्य में भारती का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। भारती की तरह सरल शैली का प्रयोग भावी कवियों ने किया है। भारती की 'वसन कविते' अर्थात् गद्य-कविता का प्रभाव भारतीदासन, पेरिय सामी तूरन, कण्णदासन, कामराजन जैसे कवियों पर पड़ा है। भारती के द्वारा नवीन रूप से प्रस्तुत 'चिन्दु' नामक स्वच्छन्द छन्द का प्रयोग परवर्ती कवियों ने किया है।

संक्षेप में भारती के काव्य और उनकी काव्यगत प्रवृत्तियों का प्रभाव प्रायः सभी परवर्ती कवियों पर पड़ा। क्योंकि आधुनिक तमिल साहित्य में भारती का ही एक ऐसा विशाल व्यक्तित्व है जिसमें आज तक के कवियों तथा उनकी सभी प्रवृत्तियों का समावेश हो गया है। अतः निस्सन्देह तमिल में नवयुग का उद्भव महान् कवि भारती के नेतृत्व में ही हुआ और अभिनव साहित्य निरन्तर प्रगति की ओर अग्रसर है।[2] तमिल साहित्य के इतिहास के बीसवीं शताब्दी को भारती युग से विभूषित करना सर्वथा समीचीन लगता है। आजकल की कविताएँ प्रायः भारती का अनुगमन करती हैं। आजकल के कवि अपने को 'भारती की परंपरा' कह लेने में गर्व का अनुभव कर रहे हैं। आजकल जो सरल एवं सुबोध शैली तमिल कविता में मिलती है उसका श्रेय भारती को ही दिया गया है। वे ही उसका

---

1. डॉ॰ मा॰ रामलिंगम : इरुपदाम नूट्राण्डु तमिल इलक्कियम - पृ॰ 182 - II 1977 - तमिल पुस्तकालय।

2. डॉ॰ मु॰ वरदराजन का लेख से भारतीय वाङ्मय पृ॰ 40 - I सं॰ 2015 साहित्य सदन, झाँसी॰

कर्णधार भी हैं। अतएव कविता, गद्य, उपन्यास, छोटी कहानियाँ और निबन्धों की यह बीसवीं शताब्दी भारती की शताब्दी ही है।(1)

भारतीदासन ने प्रारंभ में भारती के कविता-मण्डल में रहकर उनका अनुगमन करते हुए कविताएँ लिखीं थीं। इसीलिए 'भारती' का 'दासन' कहे गये और उनका यही नाम साहित्य में अमर हो गया। कालान्तर में 'भारतीदासन' ने अपनी प्रतिभा से तमिल साहित्यिक क्षेत्र में मौलिकता लाने के लिए नयी-नयी उद्भावनाएँ प्रस्तुत कीं। इस प्रकार उन्होंने अपना रास्ता अलग कर लिया और अपने लिए एक अलग क्षेत्र बना लिया। "भारती को केवल 'एक दासन' मिला, लेकिन 'दासन' के लिए कई दास मिलते गये।"(2) और वे भारतीदासन की परंपरा को अत्यन्त तीव्रता से विकसित करते आ रहे हैं। विशेषकर भारत की स्वतंत्रता के बाद भारतीदासन की यह परंपरा गतिशीलतापूर्वक साहित्यिक क्षेत्र में प्रगति करती आ रही है। इस परंपरा में सुरदा, वाणीदासन और मुडियरसन प्रमुख हैं। प्रकृति वर्णन में वाणीदासन, पेरुञ्चित्तिरनार, माणिक्कम जैसे कवियों ने भारतीदासन की कविताओं से प्रेरणा पायी है। इनके अतिरिक्त कंबदासन, कण्णदासन जैसे कवियों ने भारतीदासन की लोक भावना, समाज-सुधार और मजदूरों की समस्याओं को लेकर कई कविताएँ लिखी हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि तमिल के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवि भारती और भारतीदासन का प्रभाव परवर्ती कवियों पर पड़ा है।

हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में स्वच्छन्दतावाद के अनेक रूप उपलब्ध होते हैं। स्वच्छन्दतावाद का पूर्ण विकसित रूप छायावाद में मिलता है। छायावाद का विछेद सन् 1938-40 के आस पास हो गया था। इसके बाद हिन्दी साहित्यिक क्षेत्र में प्रगतिवाद, हालावाद, प्रयोगवाद, नयी कविता जैसी प्रमुख काव्य धाराओं का आविर्भाव हुआ। असल में सन् 1940 के बाद की इन काव्य-धाराओं में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के रूप-रंग बदल गये। इन काव्य धाराओं की समस्त प्रवृत्तियाँ स्वच्छन्दता-

---

1. डॉ मु. गोविन्द स्वामी- भारती कवितिरन - पृ. 9 V 1976 पारिनिलैयम, मद्रास.
2. डॉ मा. रामलिंगम : इक्कालत्तमिऴ्‌ इलक्कियम - पृ. 149 - II 1977 तमिल पुत्तकालयम, मद्रास.

वादी काव्य के व्यापक परिवेश में समाहित हो जाती हैं। इन काव्य धाराओं पर स्वच्छन्दतावाद की अमिट छाप है। छायावादी कविता में प्रयुक्त कल्पना की अतिशयता, अस्पष्ट भावना और असमाजिकता के प्रति स्वच्छन्दतावाद ने प्रगतिवादी आवरण लेकर विद्रोह किया। स्वयं छायावादी कवि प्रगतिवादी कविताएँ लिखने लगे। पंत और निराला की कविताएँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। 'युगान्त' छायावाद का अन्त और 'युगवाणी' प्रगतिवाद के आरंभ को सूचित करती हैं। प्रगतिवाद के अंतर्गत शोषित, दलित मानव का चित्रण, पूँजीवाद – साम्राज्यवाद और शोषक प्रवृत्तियों का कट्टर विरोध, पुरातनता के प्रति विद्रोह, मानवतावाद का समर्थन – जैसी प्रवृत्तियों की गणना की जाती है। ये सब प्रवृत्तियाँ स्वच्छन्दतावाद के लिए कोई नयी नहीं हैं। नारी का स्वातंत्र्य पुकार, प्राचीन मान्यताओं का विरोध और यथार्थवादी प्रवृत्तियाँ, प्रगतिवाद के लिए स्वच्छन्दतावाद की देन हैं। प्रगतिवादी कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की विद्रोही भावना स्वच्छन्दतावाद का विद्रोह ही है। दिनकर और शिवमंगल 'सुमन' की कविताओं में उपलब्ध प्रगतिवादी प्रवृत्तियों की मूल चेतना स्वच्छन्दतावाद है। बच्चन के 'हालावाद' का आध्यात्मिक विद्रोह, मानवतावाद, व्यक्तिवादी विचार आदि स्वच्छन्दतावाद की याद दिलाते हैं। सन् 1943 में स्वच्छन्दतावाद ने अपना वेश बदलकर प्रयोगवाद का रूप धारण कर लिया। प्रयोगवादियों का विचार है कि उनकी कविताओं में प्राचीनतम जर्जर रूढ़ियों, सड़ी-गली मान्यताओं के प्रति विद्रोह की भावनाएँ मिलती हैं। इन्हीं मान्यताओं को स्वच्छन्दतावाद में भी दर्शन कर सकते हैं। 'व्यक्तिवाद' को प्रयोगवाद का केन्द्र-बिन्दु माना जाता है। स्वयं व्यक्तिवाद स्वच्छन्दतावादी काव्य का मूल है। साधारण विषय अथवा वस्तु को महत्व देने की प्रवृत्ति को प्रयोगवाद और नयी कविता धाराओं ने स्वच्छन्दतावाद से ग्रहण कर लिया है। इसके अलावा प्रकृति के कुछ स्वतंत्र चित्रों का वर्णन सप्तक कवियों ने किया है — जैसे, फूटा प्रभात,[1] डूबती सन्ध्या,[2] अनुपस्थिति।[3] उपर्युक्त सभी धाराओं की प्रवृत्तियाँ हमें

---

1. भारत भूषण अग्रवाल – तारसप्तक – पृ. 98, III भारतीय ज्ञानपीठ।
2. नेमिचन्द्र – तारसप्तक – पृ. 56, 57, III 1970 भारतीय ज्ञानपीठ
3. कीर्ति चौधरी – तीसरा सप्तक – पृ. 50 III 1967 भारतीय ज्ञानपीठ

स्वच्छन्दतावाद की याद दिलाती हैं। दूसरे शब्दों में इन धाराओं के कवि स्वच्छन्दतावाद से प्रभावित हुए हैं।

छायावाद, प्रगतिवाद, हालावाद, प्रयोगवाद — जैसी काव्य धाराओं का आरंभ और समाप्ति के उपरान्त भी स्वच्छन्दतावाद का सोतालुप्त नहीं हुआ। वह मोती की कान्ति की तरह आज भी चमक रहा है। इस बात को पुष्ट करने के लिए नयी कविता युग में लिखित काव्य कृति आत्म जयी[1] से एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किया जाता है। पौराणिक पृष्ठभूमि पर लिखित इस काव्य में पुत्र - पिता के प्रति जो विद्रोह करता है, वह परंपरा के विरुद्ध स्वच्छन्दता का प्रतीक है। अपने पिता की दृष्टि में नचिकेता विद्रोही है। रूढ़ियों को तोड़नेवाला स्वच्छन्दतावादी है। देखिए :

'सत्य, जिसे हम सब इतनी आसानी से
अपनी-अपनी तरफ़ मान लेते हैं, सदैव
विद्रोह-सा रहा है
तुम्हारी दृष्टि में मैं विद्रोही हूँ
क्योंकि मेरे सवाल तुम्हारी मान्यताओं का उल्लंघन करते हैं।
नया जीवन बोध सन्तुष्ट नहीं होता
ऐसे जवाबों से जिनका संबंध
आज से नहीं, अतीत से है
तर्क से नहीं रीति से है।'[2]

परंपरागत अतीत जवाबों से नचिकेता सन्तुष्ट नहीं होता। तर्कपूर्ण उत्तर का आग्रह करता है। विद्रोहमय प्रश्नों के कारण पिता की दृष्टि में पुत्र विधर्मी हो जाता है। अतः अगर पिता वाजश्रवा परंपरावाद का प्रतीक है तो पुत्र नचिकेता स्वच्छन्दतावाद का द्योतक है।

---

1. स्वनाकाल 1965 : कुँवर नारायण।
2. आत्म जयी - पृ. 9, 10 चतुर्थ संस्करण 1977 - भारतीय ज्ञानपीठ

इस प्रकार छायावाद, प्रगतिवाद, हालावाद, प्रयोगवाद और नयी कविता धारा स्वच्छन्दतावादी परंपरा के विकास की विभिन्न सीढ़ियाँ हैं, उससे विच्छिन्न वस्तुएँ नहीं है।

तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य के प्रभाव के कारण भारत के राजनैतिक, सामाजिक, क्षेत्रों में जो अनुभूतियाँ आ गयी हैं, वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। राजनैतिक क्षेत्र में भारतीय संविधान में स्वतंत्रता और मानवतावाद के सिद्धान्तों को महत्व दिया गया है। भारतीय नागरिकों को सभी क्षेत्रों में स्वतंत्रता दी गयी है जो स्वच्छन्दतावाद की मूल चेतना है। सर्वत्र मानवतावाद की स्थापना करना भारतीय सरकार का प्रधान ध्येय हो गया है। सामाजिक क्षेत्र में बाल विवाह को अवैधानिक घोषित किया गया है। जाति-पाँति का खण्डन, हरिजनोद्धार सरकार के प्रमुख कार्य हो गये हैं। विधवा विवाह को प्रोत्साहित करते हुए विशेष प्रकार की सुविधाएँ तमिलनाडु में दी जा रही हैं। इस विषय में तमिलनाडु में भारतीदासन के सपने आज सत्य सिद्ध हो गये हैं। स्वच्छन्दतावादी कवि भारती और भारतीदासन को गौरवान्वित करने के लिए शिक्षा-क्षेत्र में भारतीयार और भारतीदासन विश्व विद्यालयों की स्थापना भी यहाँ की गयी है। आशा है कि तमिल और हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी काव्य भविष्य में भी मानव की प्रगति में अपना महत्वपूर्ण योगदान देंगे।

ङ॰ आधुनिक तमिल और हिन्दी की स्वच्छन्दतावादी काव्य की उपलब्धियाँ।

भारतीय वाङ्मय की प्रमुख दो भाषा - तमिल और हिन्दी - के आधुनिक काव्य में प्रकट प्रमुख स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों तथा उनका तुलनात्मक अध्ययन एवं अन्य महत्वपूर्ण विषयों के विश्लेषण के उपरान्त, उनकी संपूर्ण उपलब्धियों पर विचार करना आवश्यक है।

स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मानव की चित्त वृत्तियों से संबंधित हैं। मानव की चित्तवृत्तियाँ सदा एक सी नहीं रहतीं। दिन के बदलते-बदलते उसकी प्रवृत्तियाँ भी बदलती जाती हैं। आदिकालीन कवियों की कविताओं में भी उनकी चित्तवृत्तियों के अनुरूप प्रेम और सौन्दर्य मिलते हैं। लेकिन इन प्रवृत्तियों का संबंध उस काल में नारी से समझा गया। आदिकालीन कवि की प्रकृति भी नायक-नायिका की प्रेम-भावनाओं को उद्दीप्त करती थी। नायक ने विरह में प्रकृति के अंगों में भी नारी के अंगों की सुन्दरता को देखा। अतः प्रकृति सदा गौण रही। मानव की भाव शृंखलाओं के बन्धन में रही। कालान्तर में

समय की माँग के अनुसार प्रेम, सौन्दर्य और प्रकृति के प्रति कवियों का दृष्टिकोण बदला। प्रेम भक्ति के रूप में परिणत हो गया। भक्त कवि ने परमात्मा के प्रेम को ही सच्चा माना। प्राकृतिक सौन्दर्य में उसने ईश्वरत्व का अनुभव किया। बीसवीं शताब्दी के आरंभ होते-होते इन प्रवृत्तियों का रूप भी धीरे-धीरे बदल गया। आधुनिक कवियों ने प्रेम और सौन्दर्य को नवीन रूप से देखा। प्रेम को वासना से मुक्त करके इन्होंने स्वच्छन्द प्रेम की कल्पना की। आदर्श प्रेम की तरह इनका सौन्दर्य भी आदर्श बन गया।[1] अनेक युगों से मानव की भावनाओं के अनुसार नृत्य करनेवाली प्रकृति को, आधुनिक स्वच्छन्दतावादी कवियों ने मुक्त किया। प्रकृति को स्वतंत्र रूप से देखा। उनकी प्रकृति कवियों की तरह स्वच्छन्द रूप से विहार करने लगी। कवि प्रकृति में मानवीय भावनाओं को आरोप करके उसके कार्यकलापों का भी वर्णन करने लगा। उसका प्राकृतिक सौन्दर्य भी मानुषिक सौन्दर्य बन गया और स्वयं प्रकृति मानवी और सुन्दरी बन गयी। इन्होंने अपनी कल्पनाओं में सत्यता का ध्यान रखा।

जनता की चित्त वृत्तियाँ परिवर्तित होती रहती हैं। अतः प्रवृत्तियों में भी परिवर्तन हो रहा है। अभिनव काव्य में प्रकृत प्रेम और सौन्दर्य, नवीन छन्द, शैली, लोक-गीतों में प्रयुक्त साधारण लोक प्रचलित शब्द आदि प्राचीन की याद दिलाते हैं। क्योंकि प्राचीनता की परिणति नूतनता में है और नूतनता का अंकुर प्राचीनता में।[2] भविष्य में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के रूप-रंग क्या होंगे? इसका उत्तर भावी साहित्य के विश्लेषण से ही संभव है। इस प्रकार स्वच्छन्दतावादी चक्र, काल चक्र के साथ-साथ घूम रहा है और समय-समय पर कालचक्र के आदेशानुसार वह भी अपना रूप बदलकर साहित्य, समाज और राजनीति में अभिव्यक्त होता आ रहा है।

---

1. इस प्रकार के प्रेम और सौन्दर्य तमिल में केवल भारती की कविताओं में मिलते हैं।
2. शान्तिप्रिय प्रिय द्विवेदी - कवि और काव्य - पृ. 18 - तृतीय संस्करण नवंबर सन् 1949, इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद।

बीसवीं शताब्दी की अत्यधिक आधुनिकता और प्रगति ने तत्कालीन स्वच्छन्दतावादी कवियों को समाज और राष्ट्र की याद दिलायी। इस दृष्टि से तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी प्रमुख कवियों की देन महान समझी जाएगी। इनका जीवन पराधीन भारत में गुज़र रहा था। इन्होंने अपनी कृतियों के द्वारा भारतीय जनता के बीच जागृति उत्पन्न की। इन्होंने ब्रिटिश सत्ता की कड़ियों में जकड़ी हुई भारत-माता की वन्दना की। समय-समय पर भारत की तत्कालीन स्थितियों का अत्यन्त मार्मिक वर्णन भी इन कवियों ने किया है। राष्ट्रीय सांस्कृतिक भावनाओं को जगाने में भारती की कविताएँ सब से अधिक जोशपूर्ण काम करती रहीं। उनकी जैसी स्वतंत्रता की प्यास अन्य कवियों में नहीं रही।(1) इस प्रकार इन्होंने भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया और उनको इस कार्य में पर्याप्त सफलता भी मिली है।

अंग्रेज़ी की रोमाण्टिक काव्य धारा में विलियम ब्लेक, कॉलरिज, वर्ड्सवर्थ, शेली और कीट्स पाँच महान कवि हैं। इसी प्रकार आधुनिक तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी काव्य को भारती, प्रसाद, भारतीदासन, निराला और पंत ने खूब सजाया एवं सँवारा। अतः इन्हें पंच महा कवि नाम से विभूषित किया जा सकता है। इन पंच महा कवियों ने न केवल स्वच्छन्दतावादी काव्य में, बल्कि दोनों भाषाओं की साहित्यिक परंपराओं को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। युग विशेष और स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के विशेष पक्षों को लेकर मौलिक उद्भावनाओं को प्रदान करने का श्रेय इन पंच महा कवियों को प्राप्त है। इन कवियों का वैयक्तिक जीवन भी अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। अपने-अपने क्षेत्र में इन्होंने अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया है। भारतीय स्वच्छन्दतावादी परंपरा को इनकी देन महान है। इन्होंने कई प्रबन्ध काव्य और मुक्तक काव्य दिये हैं। प्रबन्ध काव्य के क्षेत्र में 'पथिक', 'मिलन', 'स्वप्न', 'पांचाली शपथम्', 'तुलसीदास', 'ग्रन्थि', 'कामायनी' उल्लेखनीय हैं। 'कामायनी' एकमात्र स्वच्छन्दतावादी महाकाव्य है जिसमें प्रायः सभी स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। प्रबन्ध काव्यों की अपेक्षा मुक्तक कविताएँ ही तमिल और हिन्दी स्वच्छन्दतावादी

---

1. इसका विस्तृत उल्लेख इस अध्याय के आरंभ में किया जा चुका है।

काव्य को प्रेरणा देती हैं। भारती की प्रकृति संबंधी कविताएँ और उनकी मुक्तक कविताएँ, जैसे : 'सौन्दर्य देवता', 'मन कुरी नारी' (अपकृष्टवम् और मनत्पेण्) सच्चे रूप में स्वच्छन्दता-वादी प्रवृत्तियों के दीपस्तंभ हैं। भारती कृत 'कोकिला गीत' (कुयिल पाट्टु), 'प्रकृति', 'प्रेम' सौन्दर्य और रोमाण्टिक कल्पनाओं की सुन्दर दीपशिखाएँ हैं। उनके 'कण्णन पाट्टु' (कण्णन गीत) इस क्षेत्र की अमूल्य रचना है। भारतीदासन कृत 'भारतीदासन कविता संग्रह' - I, II, 'कादल पाडलकळ', 'कुयिल पाडलकळ', 'तेन्नवि', प्रसाद कृत 'कानन कुसुम', 'झरना', 'लहर' पंत की 'वीणा', 'पल्लव', 'गुंजन' और निराला कृत 'अनामिका', 'परिमल', 'गीतिका' स्वच्छन्दतावादी दृष्टिकोण से प्रमुख रचनाएँ हैं। प्रसाद कृत 'आँसू', भारतीदासन कृत 'अषगिन सिरिप्पु' (सौन्दर्य की मुस्कराहट), स्वच्छन्दतावाद की विभूतियाँ हैं। वैयक्तिक अनुभूतियों को सुन्दर गीतों के रूप में व्यक्त करने में कण्णन पाट्टु, तेन्नवि, इसैयमुदु, झरना, लहर और गीतिका उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। इस प्रकार इन पंच महा कवियों ने भारतीय स्वच्छन्दतावादी परंपरा के विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

निष्कर्ष :

दक्षिण की द्रविड़ भाषाओं में प्राचीनतम तमिल और आधुनिक आर्य भाषा हिन्दी के आधुनिक स्वच्छन्दतावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों, उनके मुख्य कवियों और उनकी प्रमुख काव्य कृतियों की तुलना करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि दोनों साहित्यकारों की व्यक्तिवादी भावनाएँ, अनुभूतियाँ, कल्पनाएँ, प्रेम-सौन्दर्य के प्रति उनकी धारणाएँ, प्रकृति के प्रति उनका दृष्टिकोण आदि विषयों में विविधता और अभिव्यक्ति का माध्यम भिन्न होते हुए भी, उनकी मूलवर्ती चेतना एक है।

* * *

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थों की सूची

(अ) हिन्दी

तुलसीदास :	1. रामचरित मानस	..	XIII संवत् 2020 गीता प्रेस, गोरखपुर
मैथिली शरण गुप्त :	2. साकेत	..	सं. 2028 वि. साहित्य सदन, चिरगांव (झांसी)
	3. पंचवटी	..	इकत्तरवां संस्करण 2035 वि. साहित्य-सदन, झांसी
जयशंकर 'प्रसाद' :	4. कानन कुसुम	..	VIII सं. 2033 भारती भण्डार
	5. प्रेम पथिक	..	VIII 1976 भारती भण्डार
	6. कंकालय	..	I 1979 प्रसाद प्रकाशन
	7. महाराणा का महत्व	..	V सं. 2030 भारती भण्डार
	8. झरना	..	I 1976 प्रसाद प्रकाशन
	9. आंसू – अध्ययन संस्करण	..	I 1976 प्रसाद प्रकाशन, वाराणसी
	10. लहर	..	VII सं. 2021 भारती भण्डार
	11. कामायनी	..	XIII सं. 2024 भारती भण्डार
	12. प्रसाद-संगीत	..	II 1972 भारती भण्डार
	13. एक घूंट	..	V सं. 2022 भारती भण्डार
	14. स्कन्द गुप्त	..	XV सं. 2021 भारती भण्डार
	15. चन्द्रगुप्त	..	XII सं. 2017 भारती भण्डार
	16. काव्य कला तथा अन्य निबन्ध	..	VII संवत् 2032, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला':	17· अनामिका ··	VI सन् 1979 भारती भण्डार·
	18· परिमल ··	प्रथम बार 1978 राजकमल प्रकाशन
	19· गीतिका ··	VIII सं· 2030 भारती भण्डार·
	20· अपरा ··	XI सं· 2032 भारती भण्डार
	21· आराधना ··	III सं· 2031 भारती भण्डार
	22· गीति-गुंज ··	II परिवर्द्धित सं· 2016 – हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी
सुमित्रानन्दन 'पंत':	23· पल्लव ··	VIII 1977 राजकमल प्रकाशन
	24· वीणा-ग्रन्थि ··	नवीन संस्करण 1972 राजकमल।
	25· गुंजन ··	X सं· 2018 भारती भण्डार
	26· ज्योत्स्ना ··	IV आवृत्ति 1978 राजकमल
	27· पल्लविनी ··	IV परिवर्द्धित सं· 2020 राजकमल
	28· युगवाणी ··	IV सन्· 1959 राजकमल प्रकाशन
	29· उत्तरा ··	II संवत् 2012 भारती भण्डार·
	30· युग-पथ ··	II 1964 भारती भण्डार·
	31· साठ वर्ष: एक रेखांकन ··	I 1960 राजकमल।
	32· लोकायतन ··	1964 राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
महादेवी वर्मा:	33· यामा ··	V 1971 भारती भण्डार
रामकुमार वर्मा:	34· अंधेरे तारों वाले ··	I 1966 किताब महल
	35· साहित्य चिन्तन ··	I 1965 किताब महल, इलाहाबाद
भगवतीचरण वर्मा:	36· विस्मृति के फूल ··	साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद
	37· मधुकण ··	साहित्य केन्द्र, इलाहाबाद
नरेन्द्र शर्मा:	38· प्रवासी के गीत ··	IV सं· 2009 भारती भण्डार, लीडर प्रेस
	39· कदली वन ··	I 1954 किताब महल, इलाहाबाद
	40· पलाशवन ··	II 1946 भारती भण्डार
	41· मनोकामिनी ··	I 1978 नेशनल पब्लिशिंग हाउस

रामधारीसिंह 'दिनकर' :	42· हुंकार	..	उदयाचल प्रकाशन, पटना-4
	43· उर्वशी	..	V 1973 उदयाचल प्रकाशन, पटना-16
	44· कोयला और कवित्व	..	I 1964 उदयाचल प्रकाशन
कविता संग्रह	45· काव्य की भूमिका	..	I 1958 जून – उदयाचल
आधुनिक कवि :	46· सुमित्रानन्दन पंत	..	सम्मेलन प्रकाशन
	47· महादेवी वर्मा	..	सम्मेलन प्रकाशन
	48· रामकुमार वर्मा	..	सम्मेलन प्रकाशन
	49· जानकी वल्लभ शास्त्री	..	सम्मेलन प्रकाशन
	50· गुरु भक्त सिंह 'भक्त'	..	सम्मेलन प्रकाशन
	51· रामनरेश त्रिपाठी	..	सम्मेलन प्रकाशन
आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि :	52· महादेवी वर्मा	..	राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली
	53· माखनलाल चतुर्वेदी	..	राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली
	54· बच्चन	..	राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली
	55· रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'	..	राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली
	56· शिवमंगल सुमन	..	राजपाल एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली
कवि श्री :	57· सुब्रह्मण्य भारती	..	सेतु प्रकाशन, झाँसी
	58· रामकुमार वर्मा, 'बच्चन', 'नवीन'	..	सेतु प्रकाशन, झाँसी
	59· शिवमंगल सुमन	..	सेतु प्रकाशन, झाँसी
सं· रामकुमार वर्मा :	60· आधुनिक काव्य संग्रह	..	IX शक 1881 साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
सं· रामानन्द शर्मा :	61· प्राचीन पद्य संग्रह	..	II 1963 दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास
सं· रूद्रनाथ मदान :	62· कविता और कविता	..	प्रथम संस्करण 1967 राजकमल।
सं· अज्ञेय :	63· तार सप्तक	..	III 1970 भारतीय ज्ञान पीठ
	64· तीसरा सप्तक	..	III 1967 भारतीय ज्ञान पीठ
कुँवर नारायण :	65· आत्मजयी	..	IV 1977 भारतीय ज्ञान पीठ प्रकाशन, वाराणसी

रवीन्द्रनाथ ठाकुर :	66. गीतांजलि – अनुवादक : हंस कुमारी तिवारी ..	संवत् 2018	मानसरोवर प्रकाशन, गया
महावीर प्रसाद द्विवेदी :	67. आलोचनांजलि ..	1927 जुलाई –	इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद
रामचन्द्र शुक्ल :	68. हिन्दी साहित्य का इतिहास ..	XVIII सं. 2035	नागरि प्रचारिणी सभा, काशी.
श्यामसुन्दर दास :	69. साहित्यालोचन ..	XVIII 1973	इण्डियन प्रेस, इलाहाबाद
शान्तिप्रिय द्विवेदी :	70. कवि और काव्य ..	III 1949	इण्डियन प्रेस
	71. साकल्य ..	I 1955	हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस
	72. युग और साहित्य ..	III 1958	इण्डियन प्रेस
	73. वृत्त और विकास ..	I 1959	भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी
आचार्य नंददुलारे वाजपेयी :	74. आधुनिक काव्य : रचना और विचार ..	IV 1966	साथी प्रकाशन, सागर.
	75. आधुनिक साहित्य ..	V सं. 2031	भारती भण्डार
	76. जयशंकर प्रसाद :	III 1976	भारती भण्डार.
	77. नया साहित्य : नये प्रश्न	III 1963	विद्या मन्दिर ब्रह्मनाल, वाराणसी
	78. हिन्दी साहित्य : 20 वीं शताब्दी ..	नवीन संस्करण 1963	लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद
डॉ. नगेन्द्र :	79. अरस्तू का काव्य शास्त्र ..	III सं. 2031	भारती भण्डार.
	80. आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ ..	V 1979	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली.
	81. नयी समीक्षा : नये संदर्भ ..	I 1970	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली :
	82. भारतीय वाङ्मय (सं) ..	साहित्य सदन चिरगाँव झाँसी	I 2035 वि
	83. विचार और विश्लेषण ..	III 1966	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दि

डॉ॰ किरण कुमारी गुप्त :	84॰ हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण ..	II	सं॰ 2014	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
डॉ॰ सुवेश :	85 ॰प्रकृति और काव्य ..	II	1960	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
डॉ॰ केसरी नारायण शुक्ल :	86॰ आधुनिक काव्य धारा ..	IV	1961	नंद किशोर एण्ड सन्स, वाराणसी
डॉ॰ कृष्णलाल :	87 ॰आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास ..	III	1952	हिन्दी परिषद, विश्व विद्यालय प्रकाशन, प्रयाग
डॉ॰ सुधीन्द्र :	88 ॰हिन्दी कविता में युगान्तर ..	II	1957	आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली-6
डॉ॰ प्रेमशंकर :	89॰ प्रसाद का काव्य ..	I	सं॰ 2012	भारती भंडार
	90 ॰हिन्दी स्वच्छन्दता-वादी काव्य ..	I	1974	मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल-3
डॉ॰ रामविलास शर्मा :	91॰ आस्था और सौंदर्य ..	I	1883	किताब महल
डॉ॰ शैलकुमारी :	92॰आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी ..	I	1951	हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद॰
डॉ॰ प्रेमनारायण शुक्ल :	93 ॰हिन्दी साहित्य में विविध वाद ..	II	1970	लोक भारती प्रकाशन
डॉ॰ कंचन सिंह :	94॰ क्रान्तिकारी कवि निराला ..	II	1961	
डॉ॰ लीलाधर गुप्त :	95॰ पाश्चात्य साहित्यालोचन के सिद्धान्त ..	II	1967	हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद
डॉ॰ त्रिभुवन सिंह :	96॰आधुनिक हिन्दी कविता की स्वच्छन्द धारा ..		सन्॰ 1979	हिन्दी प्रचारक प्रकाशन, वाराणसी
डॉ॰ रामअवध द्विवेदी :	97 ॰साहित्य का रूप ..	II	सं॰ 2023	भारती भण्डार, लीडर प्रेस
डॉ॰ नरेन्द्र देव शर्मा :	98॰ हिन्दी स्वच्छन्दतावाद पुनर्मूल्यांकन ..		1968	साथी प्रकाशन, सागर
डॉ॰एन॰ ई॰विश्वनाथ अय्यर :	99॰आधुनिक हिन्दी काव्य और मलयालम काव्य ..	I	1970	नेशनल पब्लिशिंग हाउस

डॉ॰ पी॰आदेश्वरराव : 100॰ स्वच्छन्दतावादी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन (हिन्दी और तेलुगु) .. I 1972 प्रगति प्रकाशन, आगरा-3

डॉ॰ रामचन्द्र मिश्र : 101॰ श्रीधर पाठक तथा हिन्दी का पूर्व स्वच्छन्दतावादी काव्य .. I 1959 राजीव-प्रिंटर्स, दिल्ली

डॉ॰ केदारनाथ सिंह : 102॰ आधुनिक हिन्दी कविता में बिंब विधान .. I 1971 भारतीय ज्ञान पीठ, वाराणसी

डॉ॰ लक्ष्मीनारायण दुबे : 103॰ बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' व्यक्ति और काव्य .. प्रथम 1964 हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद

डॉ॰ शिवकरण सिंह : 104 स्वच्छन्दतावाद और छायावाद का तुलनात्मक अध्ययन .. किताब महल, इलाहाबाद॰

डॉ॰ रामेश्वर दयाल मिश्र : 105॰ आधुनिक हिन्दी कविता और रवीन्द्र .. 1973 प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-6

डॉ॰ अजब सिंह : 106॰ आधुनिक काव्य की स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियाँ .. I 1975 विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

इतिहास

1॰ हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - दशम भाग उत्कर्ष काल .. I सं॰2028 नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

2॰ हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास - चतुर्थ भाग .. I सं॰2027 "

पत्र-पत्रिकाएँ

1॰ 'सरस्वती' हीरक जयन्ती विशेषांक का परिशिष्टांक .. जनवरी 1963 प्रकाशक : इण्डियन (प्रा॰ लि॰,) इलाहाबाद॰

2॰ 'साहित्य सन्देश' .. जनवरी 1968 ..
फरवरी 1968
मार्च 1968

'साहित्य सन्देश' .. अप्रैल 1968
मई 1968
जून 1968
जुलाई–अगस्त 1968 साधना विशेषांक
सितंबर–अक्तूबर 1968 'संयुक्तांक'
नवंबर 1967 – 'कचन' विशेषांक

3· 'सम्मेलन पत्रिका' : कला अंक शकाब्द 1880 .. संपादक : रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री

(आ) तमिल काव्य कृतियाँ

प्रो· सुन्दरम् पिळ्ळै : 1· 'मनोन्मणीयम्' (काव्य नाट्य) ..III मल्लिका प्रकाशन, कोयम्बत्तूर। सन्· 1968

सुब्रह्मण्य भारती : 2· 'भारतीयार कवितैकळ्' .. II 1978 पूम्बुकार प्रसुरम्, मद्रास 13 (समस्त कविताओं का संकलन)

भारतीदासन : 3· भारतीदासन कवितैकळ् (प्रथम भाग) .. I 24 वाँ संस्करण 1980 सेन्तमिल निलैयम, पुदुक्कोट्टै

4· इसैयमुदु (प्रथम भाग) .. परिवर्द्धित 1980 पारि निलैयम, मद्रास

5· पाण्डियन परिसु .. XV 1978 सेन्तमिल निलैयम

6· अळगिन सिरिप्पु .. परिवर्द्धित 1979 पारि निलैयम

7· कादल निनैवुकळ् .. XI 1978 सेन्तमिल निलैयम

8· अळगिन सिरिप्पु .. XVI 1980 सेन्तमिल निलैयम

9· कुटुम्ब विळक्कु – I, II भाग .. IX 1979 पारि निलैयम

10· तमिलियक्कम् .. VIII 1978 सेन्तमिल निलैयम

11· कुटुम्ब विळक्कु 3, 4, 5 .. V 1979 पारि निलैयम

12· भारतीदासन कवितैकळ् (द्वितीय भाग) .. VIII 1977 पारि निलैयम

13· इसैयमुदु (द्वितीय भाग) .. VI 1980 पारि निलैयम

भारती दासन :	14· भारतीदासन कवितैकळ (तृतीय भाग)	VII	1978	पारि निलैयम
	15· तेनरुवि (विस्तृत संस्करण)		1978	जनवरी पूम्बुकार प्रसुरम, मद्रास
	16· इळैञर इलक्कियम	VI	1978	पारि निलैयम
	17· कुरिंजि तिट्टु	IV	1977	पारि निलैयम
	18· कण्णकि पुरट्चिक्क काप्पियम्	III	1979	पारि निलैयम
	19· मणिमेकलै वेण्पा :	III	1979	पारि निलैयम
	20· कादल पाडलकळ्	I	1977	पूम्बुकार प्रसुरम
	21· कुयिल पाडल्कळ	I	1977	पूम्बुकार प्रसुरम
	22· पडित्त पेण्कळ् (नाटक)	IV	1978	पारि निलैयम्
कविमणि देशिक विनायकम् पिळ्ळै :	23· मलरुम मालैयुम	XV	1977	पारि निलैयम
	24· आशिय ज्योति	XV	1979	पारि निलैयम्, मद्रास
नामक्कल रामलिंगम् पिळ्ळै :	25· नामक्कल कविञर पाडलकळ	I	सन्· 1960	लिफ्को, मद्रास-1
	26· अवळुम अवनुम	VII	1980	पलनियप्पा ब्रदर्स, मद्रास
शुद्धानन्द भारती :	27· पुदुमै पाडल	I	1977	शुद्धानन्द पुस्तकालय, मद्रास-20
	28· कविक्कनवुकळ्		1978	शुद्धानंद पुस्तकालय, मद्रास-20
वाणीदासन् :	29· एलिल ओवियम्	III	1977	पुदुवै तमिल कविञर मन्रम प्रकाशन, पांडिचेरी
	30· एलिल वृत्तम्	I	1970	विरिल प्रकाशन, मद्रास
	31· कुम्म इलक्कियम	II	1979	पुदुवै तमिल कविञर मन्रम
	32· इनिक्कुम पाट्टु	I	1965	विरिल प्रकाशन, मद्रास
सुरदा :	33· तेनमलै	IV	1977	सुरदा पदिप्पकम्, मद्रास 7
	34· तेरमुखम्	II	1978	सुरदा पदिप्पकम्

कण्णदासन :	35• कण्णदासन् कवितैकळ् IV भाग	..	V	1978 वानती पदिप्पकम्, मद्रास-17
मुडियरसन :	36• कवियरंगिल	..	III	1976 वळ्ळुवर पदिप्पकम् पुदुक्कोट्टै
पल्लडम माणिक्कम :	37• आइरम पू	..	I	1963 पारि निलैयम
सालै इळन्तिरैयन :	38• पूत्तदु मानुडम	..	I	1968 सालै प्रकाशन, नई दिल्ली 5
	39• उरैवीच्चु	..	I	1977 सालै प्रकाशन
न• का मरुजन :	40• कम्ब मलरकळ्	..	IV	1980 तमिल पुस्तकालय, मद्रास 5

आलोचना ग्रंथ

प्रो• वैय्यापुरि पिल्लै :	41• इलक्किय विळक्कम	..	II	1965 तमिल पुस्तकालय, मद्रास
	42• इलक्किय उदयम् (प्रथम भाग)	•	IV	1965 तमिल पुस्तकालय, मद्रास
डॉ• मु• वरदराजन :	43• इलक्किय मरबु	..		1979 तायकम् प्रकाशन, पारि निलैयम
	44• इलक्कियत् तिरन	..		1979 " "
	45• पल तमिल इलक्कियत्तिल इयल्बै	..	II	1979 पारि निलैयम
डॉ• मु• गोविन्द स्वामी :	46• भारती कवित्तिरन	..	V	1976 पारि निलैयम
	47• भारतीदासन कवित्तिरन	..	III	1978 वासुकी प्रकाशन, पारि निलैयम
अ• मु• परम शिवानंदम :	48• कवितैयुम वाळ्क्कैयुम	..	III	1977 तमिल कलै पदिकम्, म:
डॉ• कैलासपति :	49• इरु महाकविकळ (भारती और रवीन्द्र)	..	IV	1974 न्यू सेंचुरी बुक हाउस, मद्रास-2
डॉ• प• अरुणाचलम् :	50• कवियरसर भारती	..	II	1976 तमिल पुस्तकालय, मद्रास

डॉ॰ सालै इळन्तिरैयन :	51· पुदुक्कविच मुळक्कम्	..	I	1978 पूम्बुहार प्रसुरम्, मद्रास
	52· अलगर् तमिल	..	I	1968 सालै प्रकाशन, दिल्ली
डॉ॰ व॰ शुप॰माणिक्कम:	53· तमिल कादल	..	III	1981 पारिनिलैयम
डॉ॰ मा॰ रामलिंगम:	54· इरुपदाम नूट्राण्डु तमिल इलक्कियम	..	II	1977 तमिल पुस्तकालय, मद्रास·
डॉ॰ इरा॰ दण्डायुतम्	55· तरकाल तमिल इलक्कियम	..	II	1976 तमिल पुस्तकालय, मद्रास
डॉ॰ मा॰ सेलवराजन :	56· भारतीदासन और पुदुक्कविच कविहार	..	I	1979 कण्णमलर प्रकाशन, पारिनिलैयम
मा॰ षण्मुख सुब्रह्मण्यम:	57· भारती और मानव कवि	..	I	1979 तमिल पुस्तकालय, मद्रास 5
मु॰ षण्मुखम् पिल्लै :	58· कविमणि कवितै	..	I	1977 पारिनिलैयम, मद्रास
डॉ॰ सु॰ बालचन्द्रन :	59· कविमणि देशिक विनायक पिल्लै	..	I	1978 अणियकम, मद्रास-30
डॉ॰ एस॰ वी॰ सुब्रमणियन	60· इलक्किय उणर्वुकळ्	..	I	1978 तमिल पतिप्पकम्, मद्रास 20
	61· आराय्च्चि नेरिमुरैकळ्	..	II	1977 अन्तर्राष्ट्रीय तमिल शोध संस्थान, मद्रास-20 (उलगत् तमिल आराय्च्चि निरुवनम्, मद्रास 20
	62· तमिल इलक्कियक कोळ्गै	..	III अंग	1978 प्रथम उलगत् तमिल आराय्च्चि निरुवनम्, मद्रास
	63· तमिल इलक्कियक कोळ्गै	..	IV	भाग प्रथम संस्करण 1979 उलगत् तमिल आराय्च्चि निरुवनम्, मद्रास-20
डॉ॰ पोन॰ कोदण्डरामन:	64· तमिलुम तमिळरुम	..	I	1976 उलगत् तमिल आराय्च्चि निरुवनम्, मद्रास
डॉ॰ अगस्तिय लिंगम्:	65· द उलग मोळिकळ् (V भाग) द्रविड मोळिकळ् II प्रथम संस्करण	..		अन्नैत्तिन्दिय तमिल मोळियियर कळकम् अण्णामलै नगर, चिदंबरम्
डॉ॰ अरवाणन :	66· कवितैयिन उयिर उडल उरुप्पु	..	I	1976 पारिनिलैयम, मद्रास

इतिहास

क॰ सुब्रमणियम पिल्लै :	67• तमिल साहित्य का इतिहास प्रथम भाग ..	VII	1979 आसिरियर नूल्‌ पदिप्पुक कळगम, मद्रास-1
	68• तमिल साहित्य का इतिहास द्वितीय भाग ..	VII	1973 ,,
डॉ॰ मु॰ वरदराजन :	69• तमिल साहित्य का इतिहास..	IV	1980 साहित्य अकादमी, नई दिल्ली
डॉ॰ मु॰ गोविंद स्वामी:	70• इलक्कियत्‌ तोट्टम ..		1960 पारि निलैयम, मद्रास
चेल्लम्मा भारती :	71• भारतीयार चरित्रम् ..		1979 पारि निलैयम
मु॰ षण्मुखम् पिल्लै :	72• कविमणि वाळ्कै ..	I	1977 पारि निलैयम
प्रो॰ विमलानंदन :	73• तमिल साहित्य का इतिहास.. (तमिल इलक्किय वरलारु)		प्रथम संस्करण 1979 – मीनाक्षी पुस्तक निलयम्, मदुरै.
	74• कलैक्कळंजियम् ..	I	1954 तमिल वळर्चिक कळगम् तमिलनाडु मद्रास.

(ब) अंग्रेज़ी ग्रन्थ

M.H.Abrams:	1. The Mirror and the lamp Romantic theory and critical Tradition. ..	Reprint 1979 . Oxford University Press.
C.M.Bowra:	2. The Romantic Imagination ..	Eighth Impression 1978 Oxford University Press, London.
Mario Praz:	3. The Romantic Agony.	Reprint 1978 -Oxford University Press
R.A.Scot-James:	4. The Making of Literature.	Martin Secker & War Burg London, reprinted 1967.
A.G.George:	5. Studies in Poetry..	Heine Mann Educational Books Ltd.,New Delhi.1(1971

C.D.Hazen: 6. Modern Europe upto 1945 — IV 1974 S.Chand & Co., New Delhi.55

Prof.Sathiyanatha Iyer: 7. A political and Cultural History of India.Volum No.I — Reprint 1972. S.Viswanathan & Printers & Publishers,Madras.

Dr.N.Subrahmenian: 8. History of Tamil-Nad(Ad.1565-1956) — 1977 - Koodal Publishers, Madurai 625 001

Prof.K.Meenakshi Sundaram: 9. A Study on the Poetical works of Subramanya Bharathi — I 1965 Pari Nilayam, Madras.1

Hindu -Daily - Madras. (13.12.1981 .. Weekly Edition II